

Peer reviewed Journal

Impact Factor:7.265

ISSN-2230-9578

Journal of Research and Development

Multidisciplinary International Level Referred Journal

December-2021 Volume-12 Issue-26

*Mahatma Phule, Rajarshi Shahu Maharaj and Dr.
B. R. Ambedkar – Thoughts and works*

Chief Editor

Dr. R. V. Bhole

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot
No-23, Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102

Editor

Mr. Shashikant Jadhwar

I/C, Principal,
Chhatrapati Shivaji Mahavidyalaya,
Kalamb, Dist. Osmanabad (MS) India

Executive Editor

**Dr. Anant Narwade
Dr. Raghunath Ghadge
Mr. Anil Jagtap**



Address

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot, No-23, Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102

Journal of Research and Development

A Multidisciplinary International Level Referred and Peer Reviewed Journal

December-2021 Volume-12 Issue-26

On

*Mahatma Phule, Rajarshi Shahu Maharaj and
Dr. B. R. Ambedkar – Thoughts and works*

Chief Editor Dr. R. V. Bhole 'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot No-23, Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102	Editor Mr. Shashikant Jadhwar I/C, Principal, Chhatrapati Shivaji Mahavidyalaya, Kalamb, Dist. Osmanabad (MS) India
Executive Editor Dr. Anant Narwade Dr. Raghunath Ghadge Mr. Anil Jagtap	

EDITORIAL BOARD

Prof. R. J. Varma ,Bhavnagar [Guj] Dr. D. D. Sharma, Shimla [H.P.] Dr. Abhinandan Nagraj, Benglore[K] Dr. Venu Trivedi ,Indore[M.P.] Dr. Chitra Ramanan Navi ,Mumbai[M.S]	guyen Kim Anh, [Hanoi] Virtnam Prof. Andrew Cherepanow, Detroit, Michigan [USA] Prof. S. N. Bharambe, Jalgaon[M.S] Dr. C. V. Rajeshwari, Pottikona [AP] Dr. S. T. Bhukan, Khiroda[M.S]	Dr. R. K. Narkhede, Nanded [M.S] Prof. B. P. Mishra, Aizawal [Mizoram] Prin. L. N. Varma ,Raipur [C. G.] Prin. A. S. Kolhe Bhalod[M.S] Prof.Kaveri Dabholkar Bilaspur [C.G]
--	--	---

Published by- Mr. Shashikant Jadhwar, I/C, Principal, Chhatrapati Shivaji Mahavidyalaya, Kalamb, Dist. Osmanabad (MS) India

The Editors shall not be responsible for originality and thought expressed in the papers. The author shall be solely held responsible for the originality and thoughts expressed in their papers.

© All rights reserved with the Editors

CONTENTS

Sr. No.	Paper Title	Page No.
1	महात्मा ज्योतिबा फुले की शिक्षा नीति डॉ. चंदा सोनकर	1-3
2	राजर्षि शाहू महाराज और आर्य समाज डॉ. विनोदकुमार विलासराव वाय 'वेदार्य'	4-6
3	महात्मा फुले, राजर्षि छत्रपती शाहू महाराज, डॉ. आंबेडकर यांनी मांडलेली सामाजिक, आर्थिक स्वातंत्र्याची संकल्पना डॉ. श्रीनिवास भोंग	7-9
4	डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे शैक्षणिक विचार डॉ. अरूण चांगदेव खर्डे, कु. साडेकर राधिका गणेश	10-11
5	डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या आर्थिक विचारांची प्रासंगिकता सा.प्रा.बी.एच.मगर	12-15
6	आंबेडकर की विचारधारा Dr. Rajashekhar U Jadhav	16-18
7	महात्मा जोतीराव फुले यांची अभंग रचना डॉ. एकनाथ श्रीपती फुटाणे	19-23
8	डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे आर्थिक विचार – एक अभ्यास प्रा. डॉ. सुरेश वसंतराव खोंड	24-26
9	डॉ. भिमराव आंबेडकर के शिक्षा संबंधी विचार और कार्य प्रा. डॉ. राजकुमार पंडितराव जाधव	27-29
10	माडिया आदिवासींच्या समस्या सोडविणारी एकमेव संस्था – लोकबिरादरी प्रकल्प प्रा. संजय उत्तमराव उगेमुगे	30-33
11	डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे आर्थिक विचार डॉ. चेतना दत्तात्रय जगताप	34-36
12	डॉ. राममनोहर लोहिया यांचे समाजवादाविषयीचे विचार प्रा. डॉ. सिद्राम सलवदे	37-40
13	महात्मा फुले वाङ्मय व कार्य विजयकुमार रामदास घोडके	41-44
14	उच्च शैक्षणिक ग्रंथालयासमोरील आव्हाने प्रा. सरडे दिलीप निवृत्ती	45-47
15	सामाजिक क्रान्ति के प्रणेता महात्मा ज्योतिराव फूले प्रो. डॉ. गायकवाड मुकुन्द	48-49
16	म. फुले यांनी शेतकऱ्यांच्या, कष्टकऱ्यांच्या दुःखस्थिती विषयी मांडलेले विचार व त्याचा मराठी साहित्यावर झालेला परिणाम प्रा. डॉ. चंदनशिव राजेश नारायण	50-52
17	अर्थतज्ञ: डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर डॉ. भागवत सुभाष गजधाने	53-55

18	राजर्षी छत्रपती शाहू महाराजांचे शाश्वत शेती विकासाचे कार्य प्रा.डॉ. श्रद्धानंद बा. माने	56-59
19	दलितांचे मानवी हक्क,जातीव्यवस्था आणि डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर प्रा. डॉ. रुपराव उकंडराव गायकवाड	60-62
20	डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – सामाजिक विचार आणि दलित साहित्य डॉ. भारत शिंदे	63-65
21	डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे राजकीय विचार प्रा. चौधरी प्रदीप विनायक	66-68
22	गरीब मजदूरों और किसानों की सहायता-ज्योतिबा फुले प्रा. डॉ. कदम एस. एस.	69-71
23	डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर धार्मिक विचार प्रा.शफीक लतीफ चौधरी	72-73
24	छ. शाहू महाराज व ब्राल्लेतर स्त्री सुधारणा डॉ. थोरे किशोर धोंडीबा	74-78
25	डॉ बाबासाहेब आंबेडकरांचे सामाजिक न्याय विषयक विचार प्रा.डॉ रमेश शेवाळे	79-82
26	क्रांतीयोद्धा महात्मा जोतीराव फुले प्रा.सचिन पोपट सवने	83-86
27	शाहू महाराजांच्या अस्पृश्य निर्मूलनाच्या कार्याचा आढावा प्रा. डॉ. युवराज गुंडू सुरवसे	87-88
28	डॉ बाबासाहेब आंबेडकर यांचे संसदीय लोकशाहीसंबंधी विचाराची प्रासंगिकता श्री. समाधान विठ्ठल लोंढे	89-91
29	महात्मा फुले यांचे मराठी साहित्याला योगदान डॉ. अनिल बळीराम बांगर	92-96
30	दलित कवितेवर डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या विचारांचा प्रभाव प्रा. डॉ.सारिका विष्णूदास मोहीते	97-100
31	महात्मा फुलेंचे स्त्री विषयक कार्य एक दृष्टीकोन प्रा. ज्योतीराम लोखंडे	101-103
32	राजर्षी शाहू महाराज यांचे खेळा प्रतीचे योगदान शिवकुमार शामराव खबाले	104-106
33	डॉ. बी. आर. आंबेडकरांचे आर्थिक विचार आणि योगदान डॉ. दीपक एम भारती ,साखरे ज्योती जालंदरराव	107-109
34	दलित साहित्य पर म.फुले और डॉ.अम्बेडकर के विचारों का प्रभाव (सुषीला टाकभौर के साहित्य के संदर्भ में) प्रा.डॉ.संगीता विश्णु भोसले	110-113
35	महात्मा जोतीराव फुले यांचे राजकीय विचार प्रा.घाडगे सोमनाथ व्यंकटी	114-116

36	महात्मा फुले यांचे कृषि विकासविषयक चिंतन डॉ.जयदेवी पवार	117-119
37	प्रेरणाप्रद चरित्र : राष्ट्रपुरुष छत्रपति शाहू महाराज प्रा. डॉ. बंग नरसिंगदास ओमप्रकाश	120-121
38	थोर समाज सुधारक राजर्षी छत्रपती शाहू महाराज डॉ.सुधीर ब गायकवाड	122-125
39	हिंदी उपन्यास और दलित जीवन डॉ. सय्यद अमर फकीर	126-128
40	महिलांचे प्रश्न आणि डॉ बाबासाहेब आंबेडकर प्रा.डॉ.घोलप के जी	129-131
41	डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे आर्थिक विचार डॉ. घन आनंद लक्ष्मीकांत	132-136
42	थोर समाजशास्त्रज्ञ, सर्वांगपूर्ण राष्ट्रपुरुष:राजर्षी शाहू महाराज डॉ. हिराचंद्र रोहिदास मोरे	137-141
43	सामाजिक क्रांतीचे प्रणेते : महात्मा जोतीबा फुले प्रा. डॉ. अभिमन्यू गेना ओहळ	142-145
44	महात्मा फुले यांचे शेती व शेतकऱ्याविषयाचे सद्यस्थितीशी पूरक असे विचार प्रा.डॉ.मधूकर बाबूराव अनंतकवळस	146-151
45	छ. शाहू महाराजांचे आरक्षण धोरण आणि सद्यस्थिती डॉ.दत्ता कुंचेलवाड	152-154
46	प्रजातंत्र भारत में विद्रोह का आगाज :आंबेडकरवाद डॉ.सुरेश शेळके	155-157
47	राजर्षी शाहू महाराजांच्या कृषि विषयक विचारांचे विश्लेषण प्रा. डॉ. ज्ञानेश्वर आनंदराव पुपलवाड	158-159
48	डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांचे राजकीय विचार डॉ.प्रा.लोखंडे बी.बी.	160-162
49	महात्मा ज्योतिबा फुले मराठी साहित्यातील क्रांतीयोद्धा प्रा. डॉ. विशाल प्रकाश लिंगायत	163-166
50	राजर्षी शाहू महाराज : सामाजिक समता व न्यायाचे पुरस्कर्ते प्रा. डॉ. नवनाथ राजाराम दणाणे	167-171
51	राजर्षी शाहू महाराज : एक समाजसुधारक प्रा. नीलेश सर्जेराव साळवे	172-174
52	राजर्षी शाहू महाराजांचे आर्थिक व सामाजिक योगदान प्रा. डॉ साबळे बालाजी आनंदा	175-176
53	राजर्षी शाहू महाराज यांनी केलेल्या प्रशासकीय सुधारणा श्री नवथर सोपान लक्ष्मण	177-179
54	डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांचे जीवन व कार्य आवारे प्रतिक चंद्रसेन	180-182

55	आधुनिक भारताचे शिल्पकार डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर आणि त्यांचा कुंटुबा संबंधीचा वैज्ञानिक दृष्टिकोन सा. प्रा.रमेश बापूराव जोगदंड	183-185
----	--	---------

महात्मा ज्योतिबा फुले की शिक्षा नीति

डॉ. चंदा सोनकर

सहायक प्राध्यापक हिंदी विभाग शिवाजी विश्वविद्यालय कोल्हापुर।

भारतवर्ष को आधुनिकता एवं प्रगतिशील विचारों की ओर उन्मुख कराने वाले महामानवों में महाराष्ट्र के महात्मा ज्योतिबा फुले अग्रणी हैं। केवल महाराष्ट्र ही नहीं बल्कि संपूर्ण भारत के वे समाजसुधारवादी क्रांतिकारी रहे हैं। उनकी क्रांति उनकी सक्रिय शिक्षा नीति थी, जिसने तत्कालीन सनातनी समाज व्यवस्था में स्त्री पुरुष समानता के पूर्व गामी विचारों के बीज अंकुरित किए। आगे चलकर डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर जैसे विदुषी ने फुलेजी की इस पहल को कानून का सुरक्षाकवच पहनाया। डॉ. आंबेडकर महात्मा फुले को अपना गुरु मानते थे। अंग्रेजी शासन काल में शिक्षा का द्वार पूरे भारतीय समाज के लिए जरूर खुला था लेकिन भारतीयों की पुरुषप्रधान समाज व्यवस्था की धारणा ने समाज को अज्ञान के अंधकार एवं पिछड़े विचारों में लीन रखा था। यह भी एक कारण था कि अंग्रेजों की विदेशी हुकूमत के आगे हमने हार मान ली थी। यह राजनीतिक गुलामी, मानसिक गुलामी के ही कारण थी। ब्रिटिशों के समय देश का आर्थिक शोषण तथा महाराष्ट्र में दलितों का सामाजिक शोषण चरम सीमा पर पहुंच गया था। ज्योतिबा फुले की दलित श्रेणी में उच्च वर्णियों द्वारा घोषित अछूत, स्त्री एवं किसान जैसे उपेक्षित जीव थे। इस संदर्भ में अपने स्वतंत्र विचारों को व्यक्त करने वाले ज्योतिबा फुले प्रथम बागी समीक्षक थे ऐसा कहना अनुचित नहीं होगा। सामाजिक शोषण को केवल आर्थिक दुर्बलता से जोड़ने वाले बुद्धिजीवियों का उन्होंने साफ विरोध किया। उनके अनुसार शिक्षा और साक्षरता इन मूल्यों के आधार पर ही समाज में दलितों का शोषण रुक सकता है।

परंपरागत संस्कृति का चश्मा पहन कर यह परिवर्तन कतई नहीं होगा, यह वास्तव सुनवाकर शेठजी और भटजी दोनों को उन्होंने फटकारा। ऐसी जुल्मी व्यवस्था को बदलने हेतु उन्होंने 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना की। ज्योतिबा फुले स्वयं एक अच्छे लेखक एवं कवि थे। उनके द्वारा लिखे निबंध, वैचारिक लेख, काव्य रचनाएं अत्यधिक मौलिक हैं। ब्राह्मणों द्वारा दलितों एवं स्त्रियों के उत्पीड़न के खिलाफ उन्होंने अपनी कलम से आवाज उठाई। गुलामी 'गुलामगिरी', 'किसान का कोड़ा' (शेतकर्याचा आसूड), ब्राह्मणों की धूर्तता, सार्वजनिक सत्य धर्म, कैफियत, दीनबंधु इन पुस्तकों एवं पत्रिकाओं के विचार उनकी प्रत्यक्ष कृति में थे। विधवा पुनर्विवाह, जाति उन्मूलन और किसानों के कल्याण का जयघोष इन किताबों में गूंजता है। उनकी कलम ने समाज की उपेक्षित इकाइयों का मानसिक प्रबोधन कर उनमें अन्याय के प्रति लड़ने का हौसला बढ़ाया। "ज्योतिबा फुले ने अपनी शिक्षा का काम दो तरह से करने का तरीका अपनाया। प्रथम तरीके में स्कूल खोल कर लिपि के माध्यम से किताबों को पढ़ने-लिखने का तरीका और दूसरा मौखिक शिक्षा जो तत्काल की हालात से निपटने की शिक्षा। स्कूल में पढ़ने की शिक्षा बच्चों को दी जाती थी और हालात से निपटने की शिक्षा नौजवानों एवं गृहस्थों को दी जाती थी।" 1 लार्ड मैकाले की तत्कालीन अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली को यह फुले की शिक्षाप्रणाली एक जबरदस्त टक्कर थी। उनकी शिक्षा नीति और ग्रंथ के रूप में ज्ञानखोत सामाजिक सुधार से जुड़े थे, जो मनुष्य को इन्सान के रूप में जीने का अधिकार देने की मांग रखते थे। जब तक समाज का सर्वहारा वर्ग अनपढ़ रहेगा तब तक सभी स्तरों पर उनका शोषण जारी रहेगा यह महत्वपूर्ण संकेत उन्होंने दिए थे। शिक्षा का अधिकार समाज के विशिष्ट जाति के वर्ग तक सीमित न रहकर शिक्षा नीति सर्वसमावेशक होनी चाहिए यह उनका आग्रह मानवतावादी समाज के निर्माण हेतु था। "जेव्हा सगळे शिक्षण तज्ञ 'फिल्टरेशन थिअरी' उचलून धरीत होते त्या काळात एकट्या फुल्यांनी या सिद्धांताचे वाभाडे काढले. प्राथमिक शिक्षण सार्वत्रिक व सक्तीचे असले पाहीजे

अशी मागणी करणारे फुले हे पहिले भारतीय होय. उच्चशिक्षणावर अवास्तव खर्च होत असल्याचे फुल्यांनी स्पष्टपणे सरकारच्या नजरेस आणून दिले होते. शिक्षणाच्या आमूलाग्र पुनर्रचनेची फुल्यांची मागणी आजच्या घडीलाही आपल्याला खूप काही शिकवणारी आहे" 2

अर्थात ,फिल्टरेशन थिअरी का समर्थन करने वाले तथाकथित विद्वानोंको इस सिद्धांत के खोखलेपन को समझानेवाले ज्योतिबा फुले ने 'प्राथमिक शिक्षा के बल पर ही समाज का बुनियादी विकास' इस सूत्र को उनके सामने प्रस्तुत किया। प्राथमिक शिक्षा को सार्वजनिक और अनिवार्य स्तर पर देने की मांग करने वाले फुले प्रथम भारतीय थे। तकरीबन डेढ़- पावणे दो सौ साल पूर्व उनके द्वारा बनायी गयी शिक्षा नीति आज भी आदर्शवादी है।

स्त्रियों के लिए शिक्षा का प्रवर्तन: एक महत्वपूर्ण पहल-

19वीं सदी के मध्य में ही 'पुरोगामी विचारों का महाराष्ट्र ' ऐसी पहचान ज्योतिबा फुले के कारण महाराष्ट्र को मिली थी। सन 1948 में महाराष्ट्र के पुणे के बुधवार पेठ में प्रथम महिला पाठशाला की शुरुआत ज्योतिबा फुले ने की और देश में साक्षरता अभियान सही मायने में उसी साल शुरू हुआ था। उनकी पत्नी सावित्रीबाई ने उनका जमकर साथ दिया जोतिबाने सावित्रीबाई को साक्षर बनाकर स्त्रीशिक्षा का झंडा अपने ही आंगन में प्रथमतः फहराया। स्त्रियों को शिक्षा का अधिकार दिलवाकर यह दोनों पत्नी -पति स्त्री पुरुष समानता के अग्रदूत बन गए। जुलाई 1951 को आण्णासाहेब चिपलुनकर के बुधवार पेठ में स्थित मकान में अन्य विद्यालय भी फुले ने खोल दिए, जिसमें सावित्रीबाई मुख्य अध्यापिका बनी। इसी वर्ष सितंबर में रास्ता पेठ में एक और विद्यालय उन्होंने शुरू किया जिसमें भी सावित्रीबाई ने मुख्य अध्यापिका के रूप में कार्य संभाला। इस प्रकार उन्होंने कुल 18 विद्यालय खोले। हालांकि ब्रिटिश शासन की तरफ से उनके कार्य की प्रशंसा भी हुई लेकिन ब्राह्मण वर्ग के लिए वे घृणा के पात्र बन गए। ब्राह्मणवादी वर्ग ने उनकी इस कृति का डटकर विरोध किया। उनपर अत्याचार किए। लेकिन ज्योतिबा अपनी भूमिका पर अड़े रहे। स्त्री शिक्षा ही समाज को बहुमुखी उन्नति की ओर मोड़ देती है, इस विचार का उन्होंने विरोधियों के सामने आत्मविश्वास के साथ मंडन किया और धर्म जाति के ठेकेदारों का विरोध नरम हो गया। "प्रथम मनात आले की आईच्या योगाने मुलांची जी सुधारणूक होते ती फारच चांगली असते. जे लोक देशाच्या सुखाची व कल्याणाची काळजी बाळगतात त्यांनी हा देश उत्तमावस्थेत यावा यासाठी इकडील बायकांच्या स्थितीकडे अवश्य लक्ष दिले पाहीजे व हर एक प्रयत्न करून यांस विद्या शिकवली पाहीजे म्हणून मुलींची शाळा प्रथम घातली". 3 अर्थात ,उनका मानना था कि एक शिक्षित माँ ही अपनी संतान का भविष्य बना सकती है। जिन लोगों को समाज की, देश के भविष्य की सचमुच चिंता है वह स्त्रियों की वर्तमान दशा पर ध्यान दें। उसे शिक्षित बनाने में अपना योगदान दें। उनके द्वारा महिलाओं के लिए पाठशाला खोलने का प्रयोजन ही यह था। ज्योतिबा फुले की यह दूरदर्शी सोच, तत्कालीन समाज के स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण को बदलने में बहुत ही कारगर साबित हुई। हंटर कमीशन आयोग के सामने उन्होंने अपनी शिक्षा नीति को मिले तत्कालीन सरकारी समर्थन का भी जिक्र किया था। हजारों वर्षों तक जिस समाज व्यवस्था ने निशुल्क शिक्षा का समर्थन तो दूर बल्कि उसकी कल्पना से भी परहेज किया था, उस समाज में ज्योतिबा ने प्रथम महिला पाठशाला खोलकर स्त्री शिक्षा अभियान क्रियान्वित किया। इस अभियान के लिए उन्होंने किसी सरकारी सहयोग की अपेक्षा नहीं की जबकि अपने पास उपलब्ध साधनों पर ही संघर्ष की शुरुआत की। उनकी हमसफर सावित्रीबाई ने उनका आजीवन साथ दिया। भविष्य में डॉ बाबासाहेब आंबेडकर ने इसे कानून की व्यवस्था में बांधकर अगली सैकड़ों पीढ़ियों पर अनगिनत एहसान किए और महाराष्ट्र पुरोगामी विचारों का महत्वपूर्ण प्रारंभिक केंद्र बना रहा।

दलितों के लिए शिक्षा : समाज परिवर्तन की एक महत्वपूर्ण पहल-

महात्मा ज्योतिबा फुले ने दलितों के लिए भी पाठशालाएं खोली। वर्ण पर आधारित जातिगत व्यवस्था को टुकराकर दलितों को शिक्षा अर्जित करने के लिए प्रेरित किया। शिक्षा और ज्ञान ही मनुष्य को गुलामी की जंजीरों से मुक्ति दिलवा सकती है यह विश्वास उनमें निर्माण किया। सनातनी तथा उच्चवर्णिय भटों ने इस गतिविधियों को अपने सामाजिक अस्तित्व पर खतरा मानकर ज्योतिबा के पिता पर दबाव डाला और ज्योतिबा- सावित्री को बेघर भी किया। लेकिन इस संकट से यह दोनों थोड़े ही टूटने वाले थे ? उन्होंने और भी उत्साह से दलितों को ज्ञान और शिक्षा देने का अपना कार्य जारी रखा। द्वेषवश होकर ज्योतिबा को जान से मार देने का षडयंत्र भी रचा गया। लेकिन ज्योतिबा के विचार एवं कार्य के सामने वह भी टूट गया। "ऐसे थे ज्योतिबा! कबीर की तरह निर्भय और निस्पृह! उन्हे नाराजगी की कोई परवाह नहीं थी। हजारों साल अज्ञान के अंधकार में और गरीबी की दलदल में सड़ी हुई हिंदुस्तान की मूक जनता की आवाज बुलंद करने का ऐतिहासिक उत्तरदायित्व ज्योतिबा ने निभाया। सभी प्रकार की अधोगति का मूल कारण अज्ञान और अविद्या है, यह सत्य उन्होंने डंके की चोट पर कहा। उनके अनुसार "विद्या के बिना मति गई, मति के बिना नीति गई, नीति के बिना गति गई, गति के बिना वित्त गया, वित्त कि बिना शूद्रों की अधोगति हुई इतने सारे अनर्थ एक अविद्या के कारण हुए। (गुलामगिरी)"⁴ यह विद्रोह मतलब अपनी योजनाओं को मूर्त रूप देने का उनका महत्वपूर्ण प्रयास था। उनकी इस शैक्षिक क्रांति में उपेक्षितों को तत्कालीन हालातों से निपटने की शक्ति प्रदान की। सदियों से स्थापित रूढ़ीवादी परंपराओं और धार्मिक मान्यताओं के खिलाफ समाज सुधार के विचारों का आग्रह करते हुए लड़ना एक तरह का युद्ध ही होता है। अनेक कठिनाइयां एवं जोखिम इसमें होती है। ऐसे माहौल में वंचितों को, दलितों को शिक्षा के अधिकार से रूबरू कराने वाले महानायक ज्योतिबा फुले थे। थॉमस स्पाइन की 'राइट्स ऑफ मैन' इस पुस्तक का ज्योतिबा फुले पर अत्यधिक प्रभाव था। उससे प्रेरणा लेकर प्रत्यक्ष जीवन में उन्होंने अपनी शैक्षिक क्रांति के माध्यम से 'एजुकेशन इज फंडामेंटल राइट ऑफ मैन' इस नारे को बुलंद किया।

ज्योतिबा फुले की शिक्षा नीति केवल पुरोगामी विचारों तक सीमित नहीं थी। बल्कि कृतिशीलता के बल पर समाज में सफलता से स्थापित भी हो गई। क्रांति केवल विचार ही नहीं बल्कि क्रांतिकारी का बलिदान भी मांगती हैं। ज्योतिबा और सावित्रीबाई नामक दंपति ने समाज परिवर्तन की क्रांति में अपने व्यक्तिगत दांपत्य जीवन के भौतिकवादी सुखों को और प्रसंगवश अपने आत्मसम्मान को भी त्याग दिया। उनका बलिदान दिया। इक्कीसवीं सदी में जारी वैश्वीकरण की होड़ में बदलती शिक्षा नीति को भी ज्योतिबा की बुनियादी शिक्षा नीति की चौखट में रहकर ही अपने में परिवर्तन लाने होंगे इतनी उनकी शिक्षा नीति कालजयी है।

संदर्भ:-

- 1 ज्योतिराव फुले का शिक्षा में क्रांतिकारी कदम, रजनीश मौर्य, ई पत्रिका अपनी माटी अंक -21, जनवरी 2016
- 2 महात्मा फुले रचनावली संपादक : डॉ.एल.पी. मेश्राम, पृ. 10
- 3 शोधाच्या च्या नव्या वाटा, संपादक: हरी नरके पृ.23
- 4 सामाजिक समता के दो अग्रदूत, प्रो. चंद्रकांत पाटगावकर, पृ.9

राजर्षि शाहू महाराज और आर्य समाज

डॉ. विनोदकुमार विलासराव वायचळ 'वेदार्य'

अध्यक्ष, हिंदी विभाग, व्यंकटेश महाजन वरिष्ठ महाविद्यालय, उस्मानाबाद एवं शोध-निर्देशक एवं निमंत्रित
सदस्य, हिंदी अध्ययन मंडळ, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद

vvvinvay3@gmail.com

"यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।

ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च।

प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिहभुयासमयं मे कामः समृध्यतामुप मादो नमतु॥१

अर्थात् वेदों के वक्ता ईश्वर कहते हैं कि, "क्योंकि इस कल्याणकारिणी वेदवाणी को सभी जनों के लिए मैं उपदेश कर रहा हूँ। ब्राह्मण और क्षत्रिय के लिए भी, जन्म से शूद्र के लिए भी और वैश्य के लिए भी अपनों के लिए भी और परायों के लिए भी अरण्य में रहनेवालों के लिए भी, अतः इस संसार में विद्वानों का और वेदों का दान अन्यों को देनेवाले का प्यारा होऊँ। अब विद्यार्थी कहता है कि, यह मेरी इच्छा पूर्ण हो कि यह वेद ज्ञान मुझे समीपता से प्राप्त रहे।" आधुनिक भारत के इतिहास में प्रगतिशील प्रान्त के रूप में महाराष्ट्र की पहचान है। महाराष्ट्र के इतिहास में जो समाज सुधारक आन्दोलन हुए उनमें मानव धर्म सभा (प्रवर्तक - दादोबा पांडुरंग तर्खडकर, स्थापना - १८४४), परमहंस सभा (प्रवर्तक - दादोबा पांडुरंग तर्खडकर, स्थापना - १८४८), प्रार्थना समाज (प्रवर्तक - दादोबा पांडुरंग तर्खडकर, स्थापना - १८६७), सत्यशोधक समाज (प्रवर्तक - महात्मा ज्योतिराव फुले, स्थापना - १८७३) आदि प्रमुख आन्दोलन हैं। किन्तु आर्य समाज (प्रवर्तक - महर्षि दयानंद सरस्वती - १८७५) आन्दोलन इन सभी आंदोलनों से भिन्न आन्दोलन है। राजर्षि शाहू महाराज का मूल रूप से इसी सामाजिक आन्दोलन के प्रशंसक और समर्थक रहे हैं। सच तो यह है कि महात्मा ज्योतिराव फुले जी, राजर्षि शाहू महाराज जी और डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर जी इन तीनों समाजसुधारकों पर 'आर्य समाज' का बहुत बड़ा प्रभाव था। बड़ोदा नरेश सयाजीराव गायकवाड भी इस प्रभाव से अछूते नहीं रहे।

आर्य समाज का सर्वप्रथम परिचय राजर्षि शाहू महाराज को उनमें राज्याभिषेक से बहुत ही पूर्व अर्थात् इ. स. १८८२ में ही हुआ था। इस समय उनकी अवस्था मात्र ८ वर्ष की थी। इस समय वे उत्तर भारत का शैक्षिक दौरा कर रहे थे। मथुरा स्थित आर्य समाज ने उनका सत्कार सम्मानपत्र देकर किया गया था। इस प्रवास में राजर्षि शाहू महाराज ने उत्तर भारत विशेष कर उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा और राजस्थान आदि के आर्य समाजों द्वारा संस्थापित अनौपचारिक विद्यालयों का निरीक्षण किया था। इनमें सभी जाति-सम्प्रदायों के छात्रों को बिना किसी भेद-भाव के वेद-उपनिषद्-शास्त्रों की निःशुल्क दी जानेवाली शिक्षा का जाने-अनजाने प्रभाव बालक शाहू पर अवश्य पड़ा।

इस घटना के १२ वर्ष बाद राजर्षि छत्रपति शाहू महाराज का राज्याभिषेक हुआ। इ. स. १८९४ में उनका करवीर अथवा कोल्हापुर के मराठा रियासत के महाराज के रूप में राज्यारोहण हुआ। मात्र २० वर्ष की अवस्था में उन्होंने बहुत बड़ी जिम्मेदारी का सम्यक वहन किया। स्थानिक समस्याओं के समाधान के लिए बहुत सा समय दिया।

राज्यारोहण के ८ वर्ष बाद इ. स. १९०२ में इंग्लैंड की जलपोत यात्रा में राजर्षि शाहू महाराज का परिचय इदार रियासत के महाराजा प्रतापसिंह राठोड जी से हुआ। महाराजा प्रतापसिंह जी ने आर्य समाज का पूरी तरह से स्वीकार किया था। बचपन में शैक्षिक यात्रा के दौरान आर्य समाज के शैक्षिक आर्यों से शाहू महाराज परिचित हो चुके थे। इस बीच १८८५ में महर्षि दयानंद के शिष्य लाला हंसराज जी ने लाहौर में दयानंद एंग्लो वैदिक कॉलेज और इ. स. १९०२ में महर्षि दयानंद सरस्वती जी के शिष्य स्वामी श्रद्धानन्द जी ने हरिद्वार में गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की थी। शिक्षाप्रेमी शाहू महाराज जी ने इदार के महाराजा प्रतापसिंह जी से आर्य समाज के शैक्षिक और सामाजिक कार्यों से सम्पूर्ण परिचय प्राप्त किया। राजर्षि शाहू महाराज आर्य समाज के कार्यों से बहुत प्रभावित हुए।

ब्राह्मण पुरोहितों के स्थान पर मराठा पुरोहित, क्षत्रियों के स्वतंत्र शंकराचार्य और सत्यशोधक समाज के स्थान पर आर्य समाज का अनुगमन यह राजर्षि शाहू महाराज जी की अपनी नीति विशेषता है। ब्राह्मण समाज की पोंगाशाही को चुनौती देने के लिए और हिन्दू धर्म में व्याप्त ब्राह्मणों का वर्चस्व समाप्त करने के लिए राजर्षि शाहू महाराज जी ने जिन उपक्रमों की योजना की थी, उनमें मराठा समाज के लिए अलग से मराठा शंकराचार्य भी

महत्वपूर्ण योजना थी। 'वेदोक्त प्रकरण' के विवाद के समय ही अर्थात् मार्च १९०५ में राजर्षि शाहू महाराज जी ने अपने एक मित्र को पत्र में लिखा था कि, "हमें अपनी जाति के ही पुरोहित नियुक्त कर ब्राह्मण जाति का जंजाल फेंक देना चाहिए और जैन तथा सुनार समाज की तरह ही अपना भी उद्धार कर लेना चाहिए।"^२ किन्तु इस धार्मिक स्वाधीनता की योजना का विरोध ब्राह्मण नौकरशाही की साथ-साथ सत्यशोधक समाज के सदस्यों ने भी किया। राजर्षि शाहू महाराज जी ने सत्यशोधक समाज की सहायता तो ली पर धर्म की अनिवार्यता के बारे में वे कुछ अधिक सहायता नहीं कर पाए। ऐसे में आर्य समाज ही एक मात्र मार्ग रहा गया था जिसका स्वीकार राजर्षि शाहू महाराज जी ने किया।

आर्य समाज के प्रमुख सिद्धांतों में वेदों को प्रमाण मानना, वेदों के अनुकूल ग्रंथों का स्वीकार करना, वेदों के प्रतिकूल ग्रंथों का अस्वीकार करना, सभी वर्णों और जातियों के लिए वेदों के अध्ययन और उपनयन का अधिकार, स्त्रियों के लिए वेदाध्ययन और उपनयन का अधिकार, प्राचीन गुरुकुल एवं कन्या गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का पुनरुद्धार, काल्पनिक स्वर्ग-नरक की अवधारणा का अस्वीकार, मूर्तिपूजा और अवतारवाद का अस्वीकार, प्राचीन धार्मिक ग्रंथों में हुए प्रक्षेप का अस्वीकार, जन्मना जातिप्रथा स्थान पर कर्मणा वर्णाश्रम व्यवस्था का स्वीकार, बाल विवाह निषेध, अंतरजातीय विवाह समर्थन आदि हैं।

राजर्षि शाहू महाराज जी को उक्त सारे सिद्धांत अच्छे और समाज के लिए कल्याणकारी लगे और उन्होंने इन सिद्धान्तों का स्वीकार किया। किन्तु इस बारे में उन्हें सबसे अधिक विरोध 'ब्राह्मण ब्युरोक्रेसी' से हुआ। राजर्षि शाहू महाराज अपने मित्र वूडहाउस को पत्र में लिखते हैं – "सत्यशोधक समाज की कोई नींव नहीं है, किन्तु आर्य समाज को वेदों का आधिष्ठान प्राप्त है। ब्राह्मणोत्तर जातियों को वेद पढ़ाने का अर्थात् जो ब्राह्मणों को अप्रिय है, ऐसा उनका धर्म सीखाने का मेरा विचार है.....सर प्रतापसिंह की तरह ही मेरी भी वेदों पर श्रद्धा है और मैं आर्य समाज के सिद्धांतों का प्रशंसक हूँ।"^३

राजर्षि शाहू महाराज जी के आश्रय में जनवरी १९१८ में कोल्हापुर में आर्य समाज की स्थापना हुई। इस कार्य में उन्हें पं. आत्माराम जी की सहायता हुई। इससे पूर्व ही आगरा से पधारे स्वामी परमानंद जी के मार्गदर्शन में कोल्हापुर में आर्य समाज का कार्य आरम्भ हो चुका था। १९१८ में ही स्वामी परमानन्द जी ने कोल्हापुर के निकट स्थित केरले नामक गाँव में प्राथमिक विद्यालय और गुरुकुल की स्थापना की थी। इस गुरुकुल में पढ़नेवाले ३० ब्रह्मचारियों के भोजन के व्यय के लिए ५ हजार रुपये प्रदान करना स्वयं राजर्षि शाहू महाराज जी ने एक आदेश में स्वीकार किया था। इस आदेश में यह अपेक्षा की गयी थी कि "ब्रह्मचारियों का भोजन और वस्त्र सीधे-सादे होनी चाहिए और शिक्षा का लक्ष्य उच्च होना चाहिए, जिससे इस गुरुकुल के ब्रह्मचारी उत्तम नागरिक सिद्ध होंगे।"^४

इसके उपरांत राजर्षि शाहू महाराज जी के ही आदेश से आर्य समाज ने मई १९१८ में दयानंद एंग्लो वैदिक कॉलेज की तर्ज पर 'फर्स्ट ग्रेड एंग्लो वैदिक स्कूल' की स्थापना की गई। इससे जुड़कर ही एक और गुरुकुल की भी स्थापना की गयी। इस स्कूल और गुरुकुल के लिए भूमि और ईमारत भी प्रदान की गयी। गुरुकुल के ब्रह्मचारियों के लिए साडी सुविधाएँ मुफ्त थीं। इनका सारा कार्य संयुक्त प्रान्त की 'आर्य प्रतिनिधि सभा' की ओर सौंपा गया था। इतना ही नहीं तो बाद में 'राजाराम कॉलेज' और 'राजाराम स्कूल' का प्रबंधन भी 'आर्य प्रतिनिधि सभा' को ही सौंपा गया। आर्य समाज के स्कूल और गुरुकुलों में तथाकथित अस्पृश्यों और अन्य सभी जातियों के बालकों को प्रवेश दिया जाता था। अस्पृश्य जातियों के बालक अन्य बालकों के साथ वेदों की शिक्षा ग्रहण करते थे। राजर्षि शाहू महाराज ने अपनी रियासत में पटवारियों की परीक्षा में महर्षि दयानंद सरस्वती लिखित अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' का अध्ययन अनिवार्य कर दिया था। उनके द्वारा स्थापित छात्रावासों के ब्रह्मचारियों के लिए भी 'सत्यार्थ प्रकाश' का अध्ययन अनिवार्य कर दिया था।

आर्य समाज का स्वीकार करने के कारण के रूप राजर्षि शाहू महाराज जी ने अपने एक मित्र को १९१८ में लिखे एक पत्र में स्पष्ट स्वीकार किया है कि – "उस हेतु के लिए मैं इस समय सत्य शोधक समाज और आर्य समाज की सहायता ले रहा हूँ। मैं स्वयं अंतःकरण से आर्य समाजी हूँ और यह कभी प्रकट रीति से न बोलने पर भी आर्य समाज के सिद्धांतों का गौरव करता हूँ। ब्राह्मणों ने मेरे साथ बहुत बुरा व्यवहार किया। विशेषकर खामगाव में आयोजित मराठा शिक्षण परिषद में मेरे व्याख्यान के उपरांत उन्होंने मेरे साथ जो व्यवहार किया, वह व्यवहार ही मेरे आर्य समाज के सिद्धांतों के प्रकट गौरव और स्वीकार के लिए तत्कालीन कारण सिद्ध हुआ है। आर्य समाज वेदों से चिपककर रहता है और ब्राह्मणों द्वारा रचे गए पुराणों को नहीं मानता।"^५

दुर्भाग्य से राजर्षि शाहू महाराज जी की मृत्यु ६ मई १९२२ को हो जाने के कारण उनके प्रयासों को एक प्रकार से धक्का लगा। साथ ही आर्य समाजी विद्वानों की हिंदी बातचीत को मराठी लोग ठीक ढंग से समझने के कारण कोल्हापुर और महाराष्ट्र में पुनः सत्यशोधक समाज की प्रतिष्ठा हुई।

सन्दर्भ सूची

1. यजुर्वेद अध्याय २६ मन्त्र २
2. छत्रपती शाहू महाराज : एक अभ्यास – प्रा. शेषराव मोरे
3. (द्रष्टव्य राजर्षी शाहू महाराज आणि आर्य समाज – सं. डॉ. शिवाजीराव शिंदे, पृ. क्र.१७)
4. राजर्षी शाहू महाराज आणि आर्य समाज – डॉ. जयसिंगराव पवार
5. (द्रष्टव्य राजर्षी शाहू महाराज आणि आर्य समाज – सं. डॉ. शिवाजीराव शिंदे, पृ. क्र.१४)
6. राजर्षी शाहू महाराज आणि आर्य समाज – डॉ. जयसिंगराव पवार
7. (द्रष्टव्य राजर्षी शाहू महाराज आणि आर्य समाज – सं. डॉ. शिवाजीराव शिंदे, पृ. क्र.१५)
8. छत्रपती शाहू महाराज : एक अभ्यास – प्रा. शेषराव मोरे
9. (द्रष्टव्य राजर्षी शाहू महाराज आणि आर्य समाज – सं. डॉ. शिवाजीराव शिंदे, पृ. क्र.१९)

संदर्भ ग्रन्थ :-

१. आर्यधर्म विश्वव्यापी धर्म बनेल ! - राजर्षी शाहू महाराज
(८ मार्च १९२०, सौराष्ट्र के भावनगर में आयोजित अखिल भारतीय आर्यधर्म परिषद के समापन सत्र के प्रमुख अतिथि के रूप में व्याख्यान)
२. मी आर्य समाज मताचा कसा झालो - राजर्षी शाहू महाराज
(२४ नवम्बर १९१८, मुम्बई के परेल में आयोजित सभा में व्याख्यान)
३. हा विद्येचा समय आहे - राजर्षी शाहू महाराज
(१९ अप्रैल १९१९, उत्तर प्रदेश के कानपुर में अखिल भारतीय कुर्मी क्षत्रियों की १३ वीं सामाजिक परिषद के अध्यक्ष पद से व्याख्यान)
४. धनगर मराठा विवाह योजना – मामासाहेब महागावकर
५. अंतर्जातीय व आन्तर्धर्मीय विवाहास व नोंदणी पद्धतीस मान्यता देणारा कायदा (१२ जुलाई १९१९)
६. राजाराम कॉलेज व राजाराम हायस्कूल आर्य प्रतिनिधी सभा यांना देण्याचा वटहुकूम (१९१९)
६. तलाठ्यांना प्रशिक्षणात 'सत्यार्थ प्रकाश' अनिवार्यकरणाचा व अस्पृश्यांना प्राधान्य देणारा वटहुकूम (२२ अगस्त १९१९)
७. कोल्हापूर राज्यात गोवध बंदी करणारा शाहू महाराजांचा हुकूम (१६ अगस्त १९१९)
८. राज्यातील तलाठ्यांना प्रशिक्षण व नेमणुका याविषयीचे नियम सांगणारा शाहू महाराजांचा जाहीरनामा (३० अगस्त १९१९)
९. तलाठ्यांच्या नेमणुकीसंबंधीचा जाहीरनामा प्रत्येक तलाठ्याने 'सत्यार्थ प्रकाश' पुस्तकाचा अभ्यास करून त्याची परीक्षा दिली पाहिजे म्हणून शाहू महाराजांचा हुकूम (१० अगस्त १९१८)
१०. राजर्षी शाहू महाराज आणि विरोधकांच्या काकगर्जना – डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर
११. सर्च लाईट विझला – प्रबोधनकार केशव सीताराम ठाकरे
१२. राजर्षी शाहू : एक चिंतन – प्रा. नरहर कुरुंदकर
१३. राजर्षी शाहू स्मारक ग्रंथ – सं. डॉ. जयसिंगराव पवार
१४. राजर्षी शाहू महाराज आणि आर्य समाज – डॉ. जयसिंगराव पवार
१५. छत्रपती शाहू महाराज : एक अभ्यास – प्रा. शेषराव मोरे
१६. राजर्षी शाहू महाराज आणि आर्य समाज – सं. डॉ. शिवाजीराव शिंदे

महात्मा फुले, राजर्षी छत्रपती शाहू महाराज, डॉ आंबेडकर यांनी मांडलेली

सामाजिक, आर्थिक स्वातंत्र्याची संकल्पना

डॉ श्रीनिवास भोंग

सहाय्यक प्राध्यापक राज्यशास्त्र विभाग संगमनेर महाविद्यालय संगमनेर, जिल्हा अहमदनगर

सारांश

सदर निबंधात भारताच्या सामाजिक, आर्थिक स्वातंत्र्य लढ्यातील महात्मा फुले, राजर्षी छत्रपती शाहू महाराज, डॉ आंबेडकर यांचे योगदान स्पष्ट केले आहे. भारतीय स्वातंत्र्यलढा म्हणजे केवळ राजकीय स्वातंत्र्यलढा नाही ही या निबंधाची पायाभूत संकल्पना आहे. कोणतीही लोकशाही तेव्हाच यशस्वी होऊ शकते जेव्हा सामाजिक व आर्थिक लोकशाही खऱ्या अर्थाने यशस्वी होऊ शकते. महात्मा ज्योतीराव फुले व राजर्षी शाहू महाराज यांनी सामाजिक समतेच्या संकल्पनेची मांडणी केली. महात्मा फुले, राजर्षी शाहू महाराज व डॉ बाबासाहेब आंबेडकर यांनी भारताच्या सामाजिक व आर्थिक पारतंत्र्याची केलेली चिकित्सा सदर शोधनिबंधात स्पष्ट करण्यात आली आहे.

स्वातंत्र्य म्हणजे काय

स्वातंत्र्य म्हणजे व्यक्तीविकासासाठी आवश्यक असलेली परिस्थिती. ही परिस्थिती राज्याने उपलब्ध करून देणे आवश्यक असते. नैसर्गिक स्वातंत्र्याची संकल्पना जॉन लॉकने मांडली. स्वातंत्र्याचे 'नकारात्मक स्वातंत्र्य' आणि 'सकारात्मक स्वातंत्र्य' असे दोन प्रकार आहेत. नकारात्मक स्वातंत्र्य म्हणजे स्वातंत्र्याच्या मार्गात निर्माण झालेले अडथळे दूर करणे. सकारात्मक स्वातंत्र्य म्हणजे आपल्या स्वातंत्र्याचा व अधिकाराचा वापर करून त्याच्या कक्षा रुंदावणे.

भारतीय राज्यघटना आणि स्वातंत्र्याची संकल्पना

भारतीय राज्यघटनेने भारतीय नागरिकांना भाषण आणि अभिव्यक्ती, निःशस्त्र सभासंमेलन, संघटनांचे स्वातंत्र्य, संचार स्वातंत्र्यनिवास करण्याचे व स्थायिक होण्याचे स्वातंत्र्य, व्यवसाय स्वातंत्र्य दिलेले आहे. धर्म श्रद्धा, आचरण, प्रसार करण्याचे स्वातंत्र्य भारतीय नागरिकांना आहे.

सामाजिक स्वातंत्र्य म्हणजे काय

सामाजिक स्वातंत्र्य म्हणजे समाजात निर्वेधपणे वावरण्याचे स्वातंत्र्य. भारतात अस्पृश्यता प्रथेमुळे हे शक्य नव्हते. भारतीय राज्यघटनेद्वारे अस्पृश्यता नष्ट केली आहे. सामाजिक स्वातंत्र्य म्हणजे सर्वच व्यक्तींना प्रतिष्ठेची वागणूक मिळाली पाहिजे.

महात्मा फुले आणि डॉ आंबेडकर : धर्मस्वातंत्र्य

महात्मा फुले यांनी सत्यशोधक समाजाची स्थापना केली व डॉ बाबासाहेब आंबेडकर यांनी आपल्या लाखो अनुयायांसह बौद्ध धर्मात प्रवेश केला. आजही अनेक जण सत्यशोधक पद्धतीने विवाह करतात. डॉ आंबेडकर यांनी ज्या दिवशी बौद्ध धर्मात प्रवेश केला तो दिवस धर्मचक्र परिवर्तन दिन म्हणून ओळखला जातो.

राजर्षी शाहू महाराज आणि धार्मिक स्वातंत्र्य

शाहू महाराज म. फुल्यांच्या सत्यशोधक विचारसरणीकडे आकृष्ट झाले. सत्यशोधक तत्त्वांना त्यांचा पाठिंबा होता. त्यांच्या प्रोत्साहनामुळे महाराष्ट्रात सत्यशोधक समाजाचे पुनरुज्जीवन झाले. त्यांनी कोल्हापुरात ब्राह्मणेतर पुरोहितांची निर्मिती करण्यासाठी 'श्री शिवाजी वैदिक स्कूल' ची स्थापना केली आणि मराठ्यांसाठी स्वतंत्र 'क्षात्रजगद्गुरु' पद निर्माण करून त्यावर सदाशिवराव पाटील या उच्चविद्याविभूषित तरुणास नेमले.

महात्मा फुले आणि सामाजिक स्वातंत्र्य

अठराव्या शतकात बालपणी विवाह करण्याची पद्धत होती. अनेकदा कॉलरा, पटकी, देवी, गोवर, एनफ्लूएन्झा अश्या आजारांच्या साथी येत. त्यात होणाऱ्या पतीच्या मृत्यूमुळे अनेक मुली विधवा होत.

या विधवा स्त्रियांचे अनेक प्रश्न होते . विधवांच्या केशवपनाची पद्धत होती .ती बंद व्हावी म्हणून महात्मा फुले यांनी प्रयत्न केले . त्याकरता त्यांनी केशकर्तनकारांचा संप घडवून आणला.दलितांना पिण्याच्या पाण्यासाठी महात्मा फुले यांनी आपल्या वाड्यातील पाण्याचा हौद खुला केला.

“विद्येविना मति गेली

मतीविना नीति गेली

नीतीविना गति गेली!

गतीविना वित्त गेले

वित्ताविना शूद्र खचले

इतके अनर्थ एका अविद्येने केले.”

या शब्दात महात्मा फुले यांनी शिक्षणाचे महत्व स्पष्ट केले .

शाहू महाराज आणि सामाजिक स्वातंत्र्य

राजर्षी छत्रपती शाहू महाराज हे देशातील प्रागतिक संस्थानिकांपैकी अग्रणी होते.त्यांनी कोल्हापूर संस्थानातील ५०% शासकीय नोकऱ्या मागासलेल्या वर्गासाठी राखीव ठेवल्या.सार्वजनिक ठिकाणी अस्पृश्यता पाळण्यास कायद्याने प्रतिबंध केला. महार व्यक्तींची वेठबिगारीतून मुक्तता केली .गुन्हेगार मानल्या गेलेल्या जातींची 'हजेरी' पद्धतीतून मुक्तता केली. फासेपारधी, कोरवी, माकडवाले यांसारख्या भटक्या व विमुक्त जातींना जवळ करून त्यांचे जीवन स्थिर केले. त्यांना आपले रक्षक म्हणून नेमखेड्यापाड्यांतील बलुतेदारांना त्यांच्या बलुतेपद्धतीतून मुक्त करून त्यांना समाजातील सर्व उद्योगधंदे खुले केले .जोगिणी व देवदासी प्रथेस प्रतिबंध करणार कायदा जारी केला.आंतरजातीय लग्नावर भर दिला . स्वतः पुढाकार घेऊन अनेक आंतरजातीय (धनगर-मराठा) विवाह घडवून आणले. बालविवाहास प्रतिबंध केला . नोंदणी विवाहाचा कायदा केला. घटस्फोटास व विधवापुनर्विवाहास कायदेशीर मान्यता दिली.कुटुंबात होणाऱ्या शारीरिक व मानसिक छळांपासून स्त्रीला संरक्षण देणारा कायदा त्यांनी मंजूर केला. मागासलेल्या वर्गातील मुलींना व स्त्रियांना मोफत शिक्षणाची सुविधा निर्माण केली. ग्रामीण भागातील विद्यार्थ्यांना उच्चशिक्षणाची सोय व्हावी , म्हणून राजर्षी छत्रपती शाहू महाराजांनी कोल्हापुरात वसतिगृहे स्थापन केली.

सामाजिक समता आणि स्वातंत्र्य प्रस्थापनेसाठी राजर्षी छत्रपती शाहू महाराजांचे डॉ आंबेडकराना सहाय्य

राजर्षी छत्रपती शाहू महाराजांची डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्याशी भेट झाली. बाबासाहेबांच्या मूकनायक या वृत्तपत्रास त्यांनी मदत केली. बाबासाहेबांच्या इंग्लंडमधील उच्चशिक्षणास राजर्षी छत्रपती शाहू महाराजांनी अर्थसाहाय्य केले. माणगाव येथील अस्पृश्यता निवारण परिषदेत ते बाबासाहेबांबरोबर सहभागी झाले .

डॉ बाबासाहेब आंबेडकरांचे सामाजिक स्वातंत्र्य व समता प्रस्थापनेसाठी योगदान

भारतीय राज्यघटनेचे शिल्पकार ,भारतरत्न डॉ बाबासाहेब आंबेडकरानी१९२७ मध्ये महाडच्या चवदार तळ्यावर हजारो कार्यकर्त्यांसह सत्याग्रह केला. मनुस्मृतिचे दहन केले. काळराममंदिर प्रवेश सत्याग्रह केला.बहिष्कृत भारत, जनता, समता, ही नियतकालिके सुरु केली. १९२६ साली सातारा जिल्ह्यातील रहिमतपूरला भरलेल्या महार-परिषदेत डॉ बाबासाहेब आंबेडकर यांनी अस्पृश्य बंधूंना वतनदारी व गावकीचे हक्क सोडून देण्यास सांगितले . १९२८ साली भारतात आलेल्या सायमन आयोगासमोर डॉ आंबेडकरांनी निवेदन दिले .दलित वर्गाच्या विकासासाठी सरकारने काय करावयास पाहिजे, हे या निवेदनात स्पष्ट केले . डॉ आंबेडकरानी'पीपल्स एज्युकेशन सोसायटी' स्थापन केली.मुंबईला सिध्दार्थ व औरंगाबादला मिलिंद महाविद्यालय सुरु केले . स्वतंत्र मजूर पक्ष व शेड्यूल कास्ट फेडरेशन हे राजकीय पक्ष स्थापन केले .मंत्री असताना त्यांनी कोकणातील खोती पद्धती बंद केली कामगार कल्याण कायदे केले. डॉ आंबेडकर यांनी स्वतंत्र भारताच्या राज्यघटनेची निर्मिती केली.सर्व भारतीय नागरिकांना समतेचा व स्वातंत्र्याचा मुलभूत हक्काची तरतूद केली.

आर्थिक स्वातंत्र्य म्हणजे काय

प्रत्येकाला त्याच्या आवडीचे नोकरी रोजगार व्यवसाय करण्याचे स्वातंत्र्य मिळाले पाहिजे .यात समाजाचा अडथळा नसावा .आर्थिक स्वातंत्र्यासाठी सामाजिक स्वातंत्र्य असावे.जाती धर्म ही बंधने गळून पडली पाहिजेत .तसे झाले तर आर्थिक स्वातंत्र्याच्या मार्गातील अडथळे दूर होतील .

शेती ,ग्रामीण उद्योग आणि आर्थिक स्वातंत्र्यासाठी महात्मा फुले यांनी केलेले प्रयत्न शेतकऱ्यांचा असूड या निबंधामध्ये महात्मा जोतीराव फुले यांनी भारतीय कुटिरोद्योग ब्रिटिश साम्राज्यशाहीच्या आर्थिक धोरणाने कसे ढासळले आहेत, याचे वर्णन केले आहे. शेती आणि ग्रामीण उद्योग आधुनिक तंत्रज्ञानाच्या आधारे करण्याची योजना महात्मा जोतीराव फुले यांनी सुचविली. १८८८ साली इंग्लंडच्या राजपुत्राच्या पुण्यात भरलेल्या सभेत महात्मा फुले शेतकऱ्यांच्या वेशात उपस्थित राहिले . भारतीय जनतेला मोफत प्राथमिक शिक्षण द्या असे मत त्यांनी या सभेत मांडले .

डॉ आंबेडकर यांचे भारताच्या आर्थिक स्वातंत्र्यातील योगदान

डॉ आंबेडकर यांनी एम.ए. पदवीकरिता लिहिलेल्या प्रबंधाचा विषय 'प्राचीन भारतातील व्यापार होता. द इव्होल्यूशन ऑफ प्रॉव्हिन्सिअल फायनान्स इन ब्रिटिश इंडिया या विषयावरील त्यांचा प्रबंध १९२४ मध्ये प्रकाशित झाला .या प्रबंधात त्यांनी ब्रिटिश सरकारचे आर्थिक धोरण ब्रिटनमधील उद्योगधंद्यांच्या हिताच्या दृष्टीनेच आखले जाते, हे स्पष्ट केले. द प्रॉब्लेम ऑफ द रुपी हा प्रबंध डॉ बाबासाहेब आंबेडकरांनी लिहिला . रूपयाचे पौंडाशी प्रमाण बसवून इंग्रजांनी स्वहित कसे साधले आहे हे त्यांनी या प्रबंधात स्पष्ट केले. यामुळे भारताचेच नुकसान झाले हे त्यांनी स्पष्ट केले.

समारोप

सामाजिक स्वातंत्र्य आणि समता प्रस्थापनेशिवाय राजकीय स्वातंत्र्य व समता अर्थहीन असते .त्यामुळे राजकीय स्वातंत्र्याची पूर्वतयारी म्हणून समाजात सामाजिक स्वातंत्र्य व समता प्रस्थापित होण्यासाठी महात्मा जोतीराव फुले ,राजर्षी छत्रपती शाहू महाराज व डॉ बाबासाहेब आंबेडकर यांनी आपल्या उक्ती व कृतीने प्रयत्न केले .ब्रिटीश राजवट भारताचे आर्थिक शोषण कसे करत होती हे महात्मा फुले व डॉ आंबेडकर यांनी सिद्धांत मांडून स्पष्ट केले .भारताच्या सामाजिक आणि आर्थिक स्वातंत्र्याच्या लढ्यामध्ये महात्मा फुले ,राजर्षी छत्रपती शाहू महाराज व डॉ बाबासाहेब आंबेडकर यांचे कार्य पायाभूत स्वरूपाचे आहे .

संदर्भ

- १.Keer, Dhananjay, Shahu Chhatrapati, A Royal Revloutionary, Bombay, Popular Publsheer, 1976.
- २.Keer, Dhananjay, Mahatma JotiraoPhooley :Father of our Social Revolution,Bombay, Popular Publsheer,1974.
- ३ . कीरधनंजय, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, पॉप्युलर प्रकाशनमुंबई. १९६६
४. चौसाळकरअशोक,व्यक्तिस्वातंत्र्य, मराठी विश्वकोश,खंड १७,<https://vishwakosh.marathi.gov.in/>
- ५.साठे, सत्यरंजन , मूलभूत अधिकार, मराठी विश्वकोश,खंड १३,<https://vishwakosh.marathi.gov.in/>
- ६.जाधव अजीतानंद (संपादक)डॉ बी आर आंबेडकर यांचे राजकीय विचार ,दूरशिक्षण केंद्र,शिवाजी विद्यापीठ, कोल्हापूर,२०१९

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे शैक्षणिक विचार

डॉ. अरूण चांगदेव खर्डे^१ कु. साडेकर राधिका गणेश^२

^१अर्थशास्त्र विभाग प्रमुख, एस. जी. आर. जी. शिंदे महाविद्यालय, परांडा.

^२संशोधक विद्यार्थिनी एस. जी. आर. जी. शिंदे महाविद्यालय, परांडा.

भारतीय आर्थिक विचारांच्या पध्दतशीर मांडणीला ख—या अर्थाने १९ व्या शतकापासून आरंभ झाला. भारतातील आर्थिक विचारांच्या विकासाचा सखोल अभ्यास करताना डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या लिखाणाचा विचार करावा लागतो. भारतीय राज्यघटनेचे शिल्पकार, दलितांचे उध्दारक, थोर कायदेपंडित, शिक्षणतज्ञ, राजकीय विचारवंत, समाजसुधारक अशा बहुविध विशेषांनी प्रचीलित असलेले व्यक्तिमत्व म्हणजे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर. त्यांचे बहुविध विचार व कार्य समाजाला उपयोगी पडले. त्यापैकी प्रस्तुत लेखन कार्यात त्यांच्या शैक्षणिक विचारांचा आढावा घेण्याचा प्रयत्न करण्यात आला आहे.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी शिक्षणवंचित दलित समाजाच्या शिक्षणासाठी पिपल्स एज्युकेशन सोसायटीची स्थापना केली. ज्ञानाअभावी व्यक्ती आणि समाजाचे नुकसान जसे होते, तसेच एखादी व्यक्ती वा समूहाला शिक्षण नाकारणे म्हणजे माणूस म्हणून त्याचे अस्तित्व नाकारून त्याच्या क्षमता मारून टाकणे होय. अशी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची शिक्षण विषयक धारणा होती. बाबासाहेबांना उच्च शिक्षणाद्वारे समता, स्वातंत्र्य, बंधुभाव ही मानवी मूल्ये स्वीकारलेला एक स्वाभिमाना आधारित समाज निर्माण करायचा होता. बाबासाहेबांच्या शैक्षणिक चळवळीचा हाच खरा मूलाधार होता.

संशोधन विषयाचा उद्देश :-

- १) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे शिक्षण विषयक विचारांचा अभ्यास करणे.
- २) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे शिक्षण विषयक समस्यांचा अभ्यास करणे.
- ३) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी शिक्षण सुधारण्यासाठी सुचवलेल्या शिफारशीचा अभ्यास करणे.

संशोधन पध्दती :-

सदर शोधनिबंध लिहिण्यासाठी दुय्यम साधनाचा आधार घेण्यात आला असून त्यामध्ये डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची भाषणे, त्यांच्या चरित्रकार्यावर प्रकाश टाकणारे संदर्भ ग्रंथ, वर्तमानपत्रातील लेख, विविध नियत कालिके इत्यादींचा वापर करण्यात आला आहे.

आंबेडकरांचे शैक्षणिक विचार :-

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या मते, शिक्षण ही महाशक्ती आहे. दारिद्र्य, बेकारी व वाढती लोकसंख्या या समस्या सोडविण्यासाठी त्यांनी शिक्षणावर भर दिला. शिक्षणामुळे जनतेची उत्पादक शक्ती व कार्यक्षमता वाढते, बेकारी दूर होते, सामाजिक व आर्थिक समानता प्राप्त करण्यासाठी सर्व प्रथम शैक्षणिक समानता निर्माण केली पाहिजे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी दलित समाजाला उपदेश करताना शिक्षण हे वाघिणीचे दूध आहे ते दूध जो कोणी प्राशन करेल तो एक दिवस डरकाळी फोडल्या— शिवाय राहणार नाही. एवढी जबरदस्त ताकद शिक्षणात सामावलेली आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे अस्पृश्य व दलितांचे उध्दारक नेते होते. अस्पृश्यांना परंपरागत सामाजिक व धार्मिक गुलामगिरीतून सुटका करण्यासाठी त्यांना जागृत करणे असे डॉ. बाबासाहेबांना आवश्यक वाटत होते. त्यामुळेच प्रारंभीच्या काळापासून अस्पृश्य समाजात शिक्षणाचा प्रसार करण्याच्या कार्यावर त्यांनी भर दिला. अस्पृश्य समाजाचे योग्य शिक्षण झाल्यास तो समाज आपल्या हक्कांविषयी जागरूक राहिल व ते हक्क प्राप्त करण्यासाठी प्रयत्न करील असा त्यांना विश्वास होता. आपल्या समाजाच्या शैक्षणिक प्रगतीसाठी त्यांनी १९२४ रोजी ' बहिष्कृत हितकारणी सभा ' या संस्थेची स्थापना केली. " शिक्षणप्रसार करणे, वाचनालये थापणे, विद्यार्थी वसतिगृहे काढणे, हुशार विद्यार्थ्यांस शिष्यवृत्त्या देणे, समाज जागृतीसाठी किर्तने किंवा मॅजिक लॅटर्नच्या द्वारे व्याख्याने वगैरेची व्यवस्था करणे, आर्थिक उन्नतीच्या जरूर त्या योजना व सूचना तयार करून योग्य अधिका—यांस सादर करणे " हे या संस्थेचे उद्देश होता.

अस्पृश्यांच्या विकासासाठी त्यांना विशेष सवलती मिळणे आवश्यक आहे, याची डॉ. बाबासाहेबांना जाणीव होती. त्यामुळेच गव्हर्नरच्या कार्यकारी मंडळाचा सदस्य म्हणून काम करताना किंवा पुढील काळात घटना समितीमध्ये सदस्य म्हणून काम करताना अस्पृश्य वर्गाला आपल्या सर्वांगीण प्रगतीसाठी आवश्यक त्या सर्व सवलती मिळतील याविषयी त्यांनी विशेष दक्षता घेतली. १९४६ मध्ये त्यांनी ' पिपल्स एज्युकेशन सोसायटीची ' स्थापना केली. या संस्थेचा उद्देश असा होता की, भारतामध्ये

बौद्धिक, सामाजिक आणि नैतिक लोकशाहीचे प्रचलन करणे. या संस्थेच्या वतीने मुंबई येथे सिध्दार्थ महाविद्यालय व औरंगाबाद येथे मिलिंद महाविद्यालयाची स्थापना केली. तसेच विविध वसतिगृहांची स्थापना करून दलित विद्यार्थ्यांच्या शैक्षणिक समस्या सोडविण्याचा त्यांनी प्रयत्न केला. डॉ. बाबासाहेबांनी विद्यार्थ्यांना दिलेला सल्ला अत्यंत महत्वाचा आहे. त्यांच्या मते विद्यार्थी आपले कर्तव्य आणि जबाबदारी कशी पार पाडतात यावर त्या समाजाचे भवितव्य अवलंबून असते. यामुळे ते म्हणतात “ विद्यार्थ्यांनी आपल्या बुद्धीला चालना देऊन बौद्धिक शक्तीचे संवर्धन केले पाहिजे. तसेच विद्यार्थ्यांनी ज्ञानार्जनात खंड पडू देता कामा नये.” कारण ज्ञान हा मनुष्याचा जीवनाचा पाया आहे. या विश्वात ज्ञानाशिवाय असे काहीही नाही असे समजून एज्युकेशन सोसायटीच्या कार्यालाच त्यांनी वाहुन घेतले.

निष्कर्ष :-

- १) डॉ. बाबासाहेब आंबडकर म्हणतात त्याप्रमाणे शिक्षण हे समाज प्रबोधनाचे महत्वाचे माध्यक आहे.
- २) डॉ. बाबासाहेब आंबडेकरांच्याम ते शिक्षित झालेला हा समाज आपल्या हक्कासाठी जागृत होऊन संघर्ष करतो.
- ३) डॉ. बाबासाहेब आंबडेकरांनी शिक्षण प्रसारासाठी बहुविध मार्गांचा अवलंब सांगितला, व त्या मार्गांना टिकवून ठेवण्यासाठी संस्था, सभा—संमेलने इत्यादींचा माध्यमांच्या स्वरूपाने विचार केला.
- ४) डॉ. बाबासाहेब आंबडेकरांच्या मते ज्ञान हा मनुष्याच्या जीवनाचा पाया आहे. या विश्वात ज्ञानाशिवाय असे काहीही पूजनीय नाही.

सारांश :-

शिक्षण हे कोणत्याही एका व्यक्तीची मक्तेदारी न बनता सर्वांना शिक्षण मिळावे, शिक्षणाचा प्रसार होऊन ज्ञान व विचारांची वृद्धी व्हावी, यासाठी डॉ. बाबासाहेब आंबडेकरांनी सिध्दार्थ आणि मिलिंद अशा महाविद्यालयाची स्थापना केली. विविध वसतिगृहांची स्थापना केली. शैक्षणिक प्रगतीसाठी त्यांनी ‘ बहिष्कृत हितकारणी सभा ’ या संस्थेची स्थापना केली. या संस्थेच्या वतीने वाचनालये प्रौढांसाठी रात्रीच्या शाळा सुरू केल्या. विद्यार्थ्यांनी आपले कर्तव्य आणि जबाबदारी कशा पार पाडाव्यात, विद्यार्थ्यांनी आपल्या बुद्धीला कशी चालना देऊन बौद्धिक शक्तीचे संवर्धन केले पाहिजे याबद्दल डॉ. आंबडेकरांनी मौलिक विचार मांडले आहेत, त्यांच्या विचारांचा सर्वांनी अंगिकार करावा हेच अपेक्षित आहे.

संदर्भ :-

- १ श्री. विकास कदम :- “ महाराष्ट्रातील समाज सूधारणेचा इतिहास,”
१ण अरूण प्रकाश लातूर,
- २ बी. डी. कुलकर्णी :- “ आर्थिक विचारवंत,” कैलास पब्लिकेशन्स,
२ण औरंगाबाद.
- ३ पी. आर. कुमानाचे :- “ अर्थशास्त्रीय विचारांचा इतिहास,”
३ण कैलास पब्लिकेशन, औरंगाबाद जून १९९९.
- ४ बी. डी. कुलकर्णी, एस. व्ही. दमढेरे :- “ आर्थिक विचार व विचारवंत,”
४ण डायमंड पब्लिकेशन, पुणे ऑगस्ट २००८.
- ५ पी. आर. कुमानाचे व विलास खंदारे :- “ आर्थिक विचार इतिहास,”
५ण कैलास पब्लिकेशन, औरंगाबाद ऑगस्ट २००५.

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांच्या आर्थिक विचारांची प्रासंगिकता

सा. प्रा. बी. एच. मगर

असिस्टंट प्रोफेसर इतिहास विभाग योगेश्वरी शिक्षण संस्थेचे, स्वामी रामानंद तिर्थ कला व वाणिज्य

महाविद्यालय, अंबाजोगाई, बीड ४३१५१७

प्रस्तावना :-

आजच्या अधुनिक काळातील भारतीय अर्थव्यवस्थेचा पाया रचण्याचे महान कार्य डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या लेखनात असल्याचे दिसून येते. आज भारत हा जागतिक दहा मोठ्या अर्थव्यवस्थेमध्ये गणला जातो. पण हा विकास होण्यासाठी बराच काळ आपणाला लागला. त्या विकासाची मुहुर्त मेढ हि स्वातंत्र्य प्राप्ती नंतर रोवल्याची दिसून येते. भारताने परराष्ट्रीय धोरण कृषी, सिंचन उद्योग व नियोजन या सर्वांबाबतची डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांचे लिखाण हे अत्यंत महत्वाचे ठरते मागील काही दिवसाचा विचार केला असता. रुपयाचे अवमुल्यण व डॉलरच्या किमतीत सतत वाढ या गोष्टीचा ऊहापोह हा डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांच्या भारतीय रुपयांचा प्रश्न या लेखात असल्याचे दिसून येते त्याच बरोबर शोषित वर्गाचे अर्थव्यवस्थेमधील कमतरता असण्याचे स्थान आणि त्या पाठीमागील त्यांचा उद्येश याचे भारतीय देशाच्या अर्थव्यवस्थेबरोबरच शोषित वर्गाचे अर्थव्यवस्थेतील स्थान आर्थिक विषमता नष्ट करण्याचे त्यांचे प्रयत्न या शोध निबंधाच्या आधारे त्यांच्या विचारातून स्पष्ट करता येईल. त्याच बरोबर दुसऱ्या महायुद्धानंतर जगातील जवळपास सर्वच अर्थव्यवस्था ह्या डबघाईस आल्या होत्या त्यामुळे जागतिक मंदीमुळे उद्योग व व्यावसाय यात उत्साह नव्हता त्याला भारतही अपवाद नव्हता स्वातंत्र्य युद्धात डबघाईस आलेली भारतीय अर्थव्यवस्था पुन्हा उभी करणे आवश्यक होते. युद्ध, अशांतता, बेरोजगारी, उद्योगाची वाताहत जागतिक मंदी आंतरराष्ट्रीय व्यापार हस्तकलाउद्योगाचा ऱ्हास त्यामुळे कृषीवरचा वाढता तान सोबतच भारताची फाळणी त्यामुळे उद्योगाचे झालेले विस्तारपण या सोबतच स्वतंत्र भारताची गरिब कामगार, कष्टकरी, शेतकरी, यांच्या आपेक्षा वाढल्या होत्या या सर्व बाबींना भारताला तोंड द्यावे लागत होते. या सर्व बाबींचा विचार करता डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी एक अर्थशास्त्रज्ञ म्हणून प्रत्येक बाबींवर असलेल्या लिखाणातून त्यांच्या कृतीतून प्रकाश टाकल्याचे दिसून येते. त्यांचे आर्थिक घटकासंबंधीचे विधान हे संपुर्ण जगासाठी प्रेरणादायी होते. अनेक देशांनी आपल्या देशाच्या उन्नतीसाठी त्याचा वापर केला त्याची आर्थिक निती समजावून घेऊन देशाची प्रगती साधली त्यांचे अनेक लेख प्रबंध या मधुन त्यांचे आर्थिक विचार प्रगट होतात. त्याचा लाभ आधुनिक भारताच्या अर्थव्यवस्थेच्या बाबतीत आजही आपल्याला जाणवतो. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांचा आर्थिक विचारांचा मागोवा सदर लेखात करण्यात आला आहे.

अभ्यासाची उद्दीष्टे :-

1. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांच्या आर्थिक विचारांची माहिती घेणे.
2. भारताच्या आर्थिक समस्या सोडविण्यात बाबासाहेबांच्या विचारांची भूमिका अभ्यासणे
3. शोषित पिडीत वर्गातील सर्व सामान्य जनतेच्या आर्थिक विकासात बदल करण्यासाठी खोती पद्धतीला घातलेला पायबंद.

संशोधन पद्धती :-

सदर शोधनिबंधाची माहिती ही दुय्यम साधन सामुग्रीवर अवलंबून आहे.

कोणत्याहीदेशात सामाजिक समता प्रस्तावित करावयाची असल्यास आर्थिक समता सुद्धा महत्वाची असते आणि हे कार्य सरकारच्या हस्तक्षेपाने केल्या गेले पाहिजे कारण देशातील सरकार हे सर्वोच्च व सर्वश्रेष्ठ सत्ता असते आणि जनतेला स्वातंत्र्य, समता, बंधुता,बहाल करणे हे त्याचे आदय कर्तव्य असते त्यामुळे डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांना सरकारी हस्तक्षेप असलेली अर्थव्यवस्था अपेक्षित होती त्याशिवाय काही जटील प्रश्नाची सोडवणुक होणार नाही असे त्यांचे मत होते.

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांचे आर्थिक विचार अभ्यासातुन त्यांच्या विचारांची प्रासंगिकता धोरणाचा अभ्यास आपणाला करावा लागेल. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी अमेरिकेचा कोलंबीया विद्यापिठातुन सन १९१५ मध्ये अर्थशास्त्रात एम.ए.ची पदवी आणि १९१७ मध्ये त्यांना लंडन स्कुल आफ अकॉनॉमिक्स या संस्थेने डी.एस.सी ही पदवी प्रदान केली ती सुद्धा अर्थशास्त्र या विषयात होती. त्यांनी तीन महत्त्वपूर्ण ग्रंथ लिहले

1. भारतीय रुपयाचा प्रश्न – उदगम आणि विकास
2. इस्ट इंडिया कंपनी – प्रशासन आणि अर्थनिती
3. ब्रिटीश भारतातील प्रातिक वित्ताची उत्क्रांती

त्यांचे हे सर्वच लिखान आर्थिक विचारांशी सांगड घालणारे होते.

भारतीय रुपयाचा प्रश्न :-

रुपयाचा प्रश्न उदगम आणि विकास या ग्रंथात भारतीय चलन पद्धती संदर्भात विचार मांडले दि. प्राब्लेम ऑफ रुपी मध्ये आंबेडकरांनी भारतीय रुपयाचा ऐतिहासीक मीमांसा भरुन भारतीयांसाठी आदर्श चनल पद्धती कोणती चलन निर्मितीच्या क्षमतेवर परिणाम कारक अंकुश ठेवण्यासंदर्भातील त्यांचे प्रतिपादन आजच्या काळासाठी तितकच उपयुक्त आहे. सुवर्ण विनिमय परिमाणात अर्थव्यवस्थेत किती चलन निर्मिती व्हावी हे सर्वस्वी सरकारच्या मर्जीवर अवलंबुन असते त्यामुळे राज्यकर्ते बेजबाबदार असतील तर निरंकुश चलन निर्मिती होण्याची शक्यता असते. त्यातुन चलन फुगवठा व भाववाढ होऊन सामान्य माणुस भरडला जाऊ शकतो त्यामुळे सुवर्ण विनिमय परिणाम ऐवजी सुवर्ण मानकासारखी चलन पद्धती योग्य ठरते असे त्यांचे मत होते आजही चलन फुगवठ्यामुळे जास्त पैसा लोकांच्या हाती येवुन अतिरिक्त भाव वाढ होते याचा परिणाम सामान्य नागरिकांना सहन करावा लागतो. त्यामुळे चलन निर्मितीवर नियंत्रण असावयास पाहिजे.

कृषी विषयक विचार :-

भारतात त्या काळात अनेक भागात जमीनदारी अस्तित्वात होती जमीन कसण्यासाठी कुळाकडे दिल्या जाऊन त्या बदल्यात मोठ्या प्रमाणात शेतसारा वसुन केला जात होता. याला त्यांनी विरोध केला. जमिनीचे समान प्रमाणात विभाजन करुन शेतकऱ्याचे शोषण कुळाचे शोषण थांबविणे शक्य होईल असे त्यांचे मत होतो सोबतच जमिनीचे तुकडीवर आणि विभाजन करुन शेतकऱ्याचे शोषण कुळांचे शोषण थांबविणे शक्य होईल असे त्यांचे मत होते सोबतच जमिनीचे तुकडीकरण आणि विभाजन होणार नाही याची सुद्धाते काळजी घेतात तसेच शेतीचे राष्ट्रीयकरण करणे शेतीला जोड धंद्याची सोय करणे यावर ते भर देतात. आज शेतकऱ्यांसाठी शेतसारा हा मोठा प्रश्न आहे.आणि त्यात घट करुन शेतीला जोड धंद्याची सांगड घालुन शेती व्यवसायाची भरभराट करता येईल. हे मात्र निश्चित आहे. आजही आपल्या भारत देशातील ६० टक्के लोकसंख्या प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष कृषी व कृषी संदर्भातील व्यवसायावर अवलंबुन आहे. त्या सर्वांना जर विकासाच्या मार्गावर आणावयाचे असल्यास कृषी व्यवसायाला जोडधंद्याची सांगड घालावी लागणार आहे.

जलविकास :-

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर हे १९४२ ते १९४६ या काळात भारताचे मजुर मंत्री होते याच काळात त्यांच्याकडे बांधकाम, पाटबंधारे उर्जा या खात्याचा कार्यभार देयात आला जलविकास आणि उर्जा विकास खात्याचा कार्यभार सांभाळताना त्यांनी जल ही संपत्ती आहे असा विचार सर्वप्रथम मांडला आणि जलवितरण निश्चित झाले पाहिजे असे त्यांचे मत होते अशा तऱ्हेने महापुर व अतिरिक्तेच्या समस्येकडे वेगळा दृष्टीने पाहिले गेले. डॉ.आंबेडकर हे दामोदर, भाकरानांगल, हिराकुड प्रकल्पाचे उद्गाते होते. आजही जलनियोजनातील अनेक त्रुटीमुळे भारतातील अनेक भागात जलव्यवस्थापन न झाल्यामुळे शेतीसाठी जलसिंचनासाठी पाणी उपलब्ध नाही काही भ्रजागात तर पिण्याचा पाण्याचा प्रश्न मोठ्या प्रमाणात उदभवत असतो यात सुधारणा करण्यासाठी डॉ. आंबेडकरांच्या जलविकास धोरणाची आवश्यकता आहे.

उर्जा धोरण आणि नियोजन :-

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी उर्जा विषयक राष्ट्रीय धोरण प्रथमच आखले होते. त्यांच्या मते भारतात विजेची हमी असावी कमी दरात व मुबलक प्रमाणात विजपुरवठा व्हावा विजनिर्मिती आणि विजवितरणासंदर्भात केंद्राची भूमिका महत्वपूर्ण असावी असे त्यांचे मत होते. उर्जा व तिचे नियोजन या संदर्भात सर्वप्रथम त्यांनी विचार व्यक्त केले आजही या विचारांची प्रासंगिकता असल्याची दिसून येते. पाण्यापासून विज निर्मिती, शेतीसाठी विजपुरवठा या संदर्भातील संपुर्ण नियोजन व त्याची अमलबजावणी करण्यात डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांची कामगिरी अतुलनीय आहे. आणि आज या क्षेत्रातील विकास व नियोजन हे त्यांच्या दूरदृष्टी धोरणामुळेच असल्याचे दिसून येते.

कामगारासंबंधीचे कार्य :-

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर ज्यावेळी मजुर मंत्री म्हणून कार्यरत होते.त्या वेळी त्यांनी कामगार हिताचे अनेक कायदे पास करून घेतले. विमा संरक्षण कायदा, स्त्रीपुरुष वेतन समानता कायदा स्त्रीयांना प्रसुतीच्या वेळेस सुट्टी देणे व कामाच्या ठिकाणी योग्य वागणुक देण्याच्या संदर्भात अनेक कायदे केले. कामाच्या ठिकाणी कामगारांना योग्य वागणुक असेल तर त्यांच्या कार्यक्षमतेत वाढ होते. त्याचा फायदा उद्योगालाच होतो. आणि कामगारांचे संप, ताळेबंदी, कामगार आंदोलन या सारख्या समस्यांपासून उद्योगाला वाचविता येते. आणि उद्योगाची भरभराट होऊन आर्थिक विकासात एक महत्वपूर्ण घटक असलेल्या कामगारांना प्रोत्साहन देऊन त्यांच्या कामाप्रतिची निष्ठा वाढविता येते. असे त्यांचे मत होते. आजही अशा प्रकारच्या वागणुकीची आवश्यकता असल्याची दिसून येते.

उद्योगविषयक विचार :-

खाजगी क्षेत्रातील उद्योगांवर अवलंबून भारताचे जलद औद्योगिकीकरण होणार नाही अशी त्यांची धारणा होती. खाजगी उद्योगांमुळे आर्थिक विषमता निर्माण होण्याची भीती त्यांनी व्यक्त केली होती. औद्योगिक क्रांती करण्यासाठी खाजगी उद्योगापेक्षा सार्वजनिक उद्योगांवर भर देण्याची आवश्यकता असल्याचे मत डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी व्यक्त केले. आज उद्योगाचे खाजगीकरण करण्यावर भर दिला जात आहे. त्यात अनेक समस्या अडचणी निर्माण होताना आपण पाहतो त्यामुळे अति महत्वाचे उद्योगआजही सरकारच्या मालकीचे आहेत. त्यामुळे उद्योगाच्या भरभराटीसाठी सार्वजनिक क्षेत्रातील उद्योगांवर भर देण्याची आवश्यकता आहे.

खोती पद्धतीवर घातलेली बंदी :-

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांनी १९३७ साली कायदानुसार खोती पद्धतीला पायबंद घालण्याचे काम केले होते. खोती पद्धतीमध्ये खोत हा इंग्रज सरकारकडून शेत सारा गोळा करण्यासाठी नेमलेला एक अधिकारी वर्ग होता. त्यालाच सरंजामदार किंवा जमिनदार हे कुळांकडून जमीनीकसून घ्यायचे त्यामुळे उत्पन्नाचे मालक सरंजामदार हे होते. व यामध्ये शेतकरी व सर्वसामान्य वर्ग आर्थिक चणचणीमध्ये सापडत होता. या उदाहरणातुन असे सांगता

येईल की, संपुर्ण भारत देशाच्या आर्थीक विकासावर प्रकाश टाकताना भारतातील सुक्ष्म पद्धतीने खोती पद्धतीवर विचार करुन सर्व सामान्य वर्गाला देखील आर्थीक गटात बसवण्याचे काम डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांनी खोती पद्धतीला विरोध करुन दाखवुन देण्याचे काम केलेले दिसुन येते.

निष्कर्ष :-

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांचे आर्थीक विचार केवळ सार्वजनिक वित्तीय धोरणापुरते मर्यादीत नसुन हे समता, स्वातंत्र्य आणि बंधुता या त्रिसुत्रीवर आधारित आहेत. त्यांचे लिखान कल्याणकारी अर्थशास्त्रावर भर देणे श्रमाचे अर्थशास्त्र यात मोलाची भर घातली आहे. त्यांनी खाजगीकरणापेक्षा राष्ट्रीय करणाला महत्व दिले उर्जा, कृषी, जल, चलनविषयक उद्योगनियोजन यांसारख्या महत्वाच्या क्षेत्रात अमुलाग्र बदल करुन आधुनिक भारतीय अर्थव्यवस्थेची खऱ्या अर्थाने मुहूर्तमेढ रोवली. भारत आर्थीक दृष्ट्या महासत्ता होण्याच्या उंबरठयावर आहे. यासाठीचे महत्वपूर्ण कार्य डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी केले असुन त्यांच्या विचारांची प्रासंगिकता आज सुद्धा महत्वाची असल्याची दिसुन येते.

संदर्भ :-

१. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांचे आर्थीक विचार आणि तत्वज्ञान - डॉ.नरेंद्र जाधव
२. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांचे जल व विद्युत विकास, भुमिका व योगदान - डॉ.सुखदेव थोरात
३. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांचे आर्थीक विचार - डॉ.भालचंद्र मुगेकर
४. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांचे आर्थीक विचार - डॉ.एस.एन.खंडारे
५. अनंत पैलुंचा सामाजिक योद्धा. दलितांसाठी डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर -डॉ.प्रल्हाद लुलेकर.

अंबेडकर की विचारधारा

Dr. Rajashekhar U Jadhav

Assistant Professor Department of Hindi Vishwa Bharati First Grade College Turnur

Tq: Ramdurg Dist: Belagavi State: Karnataka

Email Id: rajjadav123@gmail.com

डॉ भीमराव रामजी अंबेडकर आधुनिक भारत के विधि वेत्ता, समाज सुधारक, दार्शनिक, अर्थशास्त्री, राजनीतिक चिंतक, बुद्धिजीवी, मानवतावादी दलितों के मसीहा तथा सामाजिक न्याय के संघर्षशील योद्धा थे। उन्होंने सामाजिक भेदभाव और विषमता का सामना कदम-कदम पर किया है। अपने अध्ययन तथा परिश्रम के बल पर उन्होंने अछुतों को नया जीवन व सम्मान दिया। उन्होंने हिंदुओं में अस्पृश्य मानी जाने वाली जातियों को संगठित करके सामाजिक तथा राजनीतिक न्याय हेतु संघर्ष करने के लिए प्रेरित किया। जातिवाद तथा छुआछूत के कारण बाल्यकाल से ही उन्हें अपमान तथा उत्पीड़न का सामना करना पड़ा, जिसका प्रभाव बाद में उनके विचारों पर पड़ना स्वाभाविक ही था। उनका जन्म जिस जाति में हुआ उसे हिंदू वर्ण व्यवस्था में सबसे निम्न माना जाता है। इसलिए समानता के लिए उनको जन्म से ही संघर्ष करना पड़ा। उन्होंने जीवन भर सामाजिक संघर्ष किया और अपने समाज के स्वाभिमान के लिए लड़ते रहे। उनके सामाजिक विचारों में हमें दलित वंचित समाज के लिए सामाजिक न्याय को प्राप्त करने का प्रयत्न दिखाई देता है। वह एक ऐसे आदर्श समाज का निर्माण करना चाहते थे, जो समानता, स्वतंत्रता और बंधुता के विचारों पर आधारित हो। उनके अनुसार जाति व्यवस्था आदर्श समाज के निर्माण में घातक है। उनका संपूर्ण जीवन भारतीय समाज में सुधार के लिए समर्पित था। उन्होंने सदियों से दलित वर्ग को सम्मानपूर्वक जीने के लिए मार्ग दिखाया। उन्होंने अपने विरुद्ध होने वाले अत्याचारों, शोषण, अन्याय तथा अपमान से संघर्ष करने की शक्ति प्रदान की। दलित उद्धार के लिए उनके द्वारा किए गए प्रयास किसी भी दृष्टिकोण से आधुनिक भारत के निर्माण में भुलाए नहीं जा सकते।

जाति व्यवस्था का विरोध

अंबेडकर ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि जाति व्यवस्था भारतीय समाज की एक बहुत बड़ी विकृति है। जाति व्यवस्था के कारण समाज में एकता की भावना का अभाव दिखाई देता है। उनके अनुसार जाति व्यवस्था न केवल हिंदू समाज को दूषित कर देता है बल्कि भारत की राजनीतिक, आर्थिक और नैतिक जीवन में भी जहर घोल देता है। वे समानता और तर्कसंगतता पर समाज को पुनर्गठित करना चाहते थे, इसलिए सामाजिक संरचना के आधार पर जाति का विरोध किया। समाज वर्गीकृत असमानताओं में बँटा था। अंबेडकर के अनुसार, हिंदू समाज, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र नाम के चार वर्गों से बना था। ये वर्ग जाति नामक एक संलग्न इकाई बन गए और अपने साथ लाभों और विशेषाधिकारों का असमान वितरण लाए। उनका दृढ़ विश्वास था कि समानता और बंधुत्व के आधार पर समाज बनाने के लिए जाति व्यवस्था को समाप्त करना होगा, इसलिए इस तरह के भेदभाव का शिकार होने के कारण, उन्होंने इस व्यवस्था के खिलाफ लड़ाई लड़ने के लिए अपना जीवन देने का फैसला किया। अंबेडकर के अनुसार जाति व्यवस्था और अस्पृश्यता के बीच घनिष्ठ संबंध था। इसलिए एक को समाप्त किए बिना दूसरे को समाप्त करना संभव नहीं था। दोनों के बीच कोई अलगाव नहीं हो सकता क्योंकि अस्पृश्यता जाति व्यवस्था का विस्तार है। इसलिए उन्होंने जाति व्यवस्था के उन्मूलन और समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के आधार पर समाज को पुनर्गठित करने का निर्णय लिया और ऐसा करने पर ही सामाजिक न्याय प्राप्त किया जा सकता था। "उनके सामाजिक विचारों का केंद्रबिंदु मनुष्य है। वे कभी भी कहीं पर भी किसी जाति या वर्ग के विरोधी नहीं थे। वे वर्णवाद और जातिवादी व्यवस्था के विरोध में थे। वे एक ऐसी समाज व्यवस्था के लिए प्रयत्नशील थे, जहाँ मनुष्य मनुष्य के प्रति आदर रखता हों, जहाँ मनुष्य मनुष्य का शोषण न करता हो"।¹

अस्पृश्यता का विरोध

बाबा साहेब अंबेडकर ने दलितों के प्रति सामाजिक भेदभाव के खिलाफ अभियान चलाया। जातिविहीन भारतीय समाज के निर्माण के लिए पहल की। हिंदू समाज में प्रचलित अस्पृश्यता का प्रबल विरोध किया उनके अनुसार ब्राह्मणों और शूद्र शासकों में अंतर्द्वंद के कारण शूद्र का जन्म हुआ जबकि प्रारंभ में ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य वर्ण ही

हुआ करते थे शनैः शनैः ब्राह्मणवाद का समाज में वर्चस्व स्थापित होने लगा और समाज को उनके द्वारा प्रतिपादित नियमों को मानना आवश्यक हो गया। उन्होंने इस व्यवस्था का खंडन किया है। उनका मानना था कि यदि हिंदू समाज का उत्थान करना है, तो अस्पृश्यता को जड़ से निकाल फेंकना अत्यावश्यक है। उन्होंने अस्पृश्यता निर्मूलन के लिए सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, नैतिक तथा शैक्षणिक आदि स्तरों पर रचनात्मक कार्यक्रम तथा संगठित अभियान करने के लिए आग्रह किया। 1927 में अंबेडकर ने अस्पृश्यता के खिलाफ सक्रिय आंदोलन शुरू करने का फैसला किया। 25 दिसम्बर 1927 को बाबासाहेब ने महाड में मनुस्मृति जला दी। वर्णव्यवस्था को शास्त्रशुद्ध सिद्ध करनेवाले इस ग्रंथ को जलाकर उन्होंने पूरे देशभर के सवर्णों को हिला दिया। उन्होंने लिखा – “मनुस्मृति विषमता का समर्थन करती है, शूद्रों की निंदा करती है। स्वयं निर्णय के सिद्धांत को स्वीकार करनेवाले व्यक्तियों को यह ग्रंथ कभी भी स्वीकार्य नहीं हो सकता”¹²

दलितों की शिक्षा संघर्ष और संगठन पर बल

शिक्षा प्रगति और उत्थान का स्तम्भ है। यह लोगों की जागरूकता और सामाजिक चेतना को बढ़ाता है। वे अच्छी तरह जानते थे कि शिक्षा जितनी अधिक होगी, प्रगति की संभावना उतनी ही अधिक होगी और उनके लोगों के लिए अवसर उतने ही आसान होंगे। अंबेडकर का विश्वास था कि दलितों के उत्थान में केवल उच्च वर्णों की सहानुभूति और सद्भावना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उनका मानना था कि दलितों का तो वास्तव में तब उत्थान होगा जब वह स्वयं सक्रिय तथा जागृत होंगे। इसलिए उन्होंने घोषणा की कि ‘शिक्षित बनो, आंदोलन चलाओ और संगठित रहो’।

नारी गरिमा का समर्थन

अंबेडकर भारतीय समाज में स्त्रियों की हीन दीन दशा से काफी क्षुब्ध थे। उन्होंने उस साहित्य की कटु आलोचना की, जिसमें स्त्रियों के प्रति भेद-भाव का दृष्टिकोण अपनाया गया था। समाज के शोषित, उत्पीड़ित और दमित वर्ग को लेकर जितना सोचा, उतना ही महिलाओं के उत्थान, मान-सम्मान के बारे में भी सोच-विचार किया है। उन्होंने स्त्री-शिक्षा को विशेष कर महत्व दिया और स्त्री को पुरुषों के बराबर अधिकार दिलाने का प्रावधान संविधान निर्माण के संदर्भ में किया। उन्होंने दलितों के उत्थान एवं प्रगति के लिए भी नारी समाज का उत्थान आवश्यक माना। उनका मानना था कि स्त्रियों की प्रगति के लिए, सम्मानपूर्वक तथा स्वतंत्र जीवन के लिए, महिलाओं का शिक्षित होना अत्यावश्यक है। महिलाओं के अधिकार के लिए अंबेडकर का दृष्टिकोण ज्योतिबा फुले, राजा राम मोहनराय, जैसे समाज सुधारकों से बिलकुल भिन्न था। उनका लक्ष्य सामाजिक न्याय पर आधारित समाज का निर्माण करना था। इस लक्ष्य को सुरक्षित करने के लिए अंबेडकर ने भारतीय संविधान में कई प्रवधान प्रदान करके महिलाओं को पुरुषों के बराबर का दर्जा दिलाया। भारतीय संविधान की भूमिका में महिलाओं को सामाजिक और आर्थिक न्याय का विश्वास देते हैं, यह अंबेडकर के कारण ही हो पाया है। दलित महिलाओं को सुशिक्षित बनने के लिए आग्रह करते हैं ताकि वे पुरुषों व समाज से उत्पीड़ित न हों।

आंतर्जातीय विवाह का समर्थन

भारतीय वर्ण व्यवस्था के कारण ही भारतीय समाज में जातीय भेदभाव को देखते हैं। जाति व्यवस्था पर विचार करने से पूर्व हिंदू सामाजिक संगठन में अंतर्निहित मूल अवधारणा को समझना आवश्यक है। “हिंदुओं के बीच प्रचलित सामाजिक संगठन की अवधारणा हमारे वर्णों के उद्भव के साथ प्रारंभ होती है, जिसमें हिंदू समाज विभाजित माना जाता है। ये चार वर्ण हैं 1. ब्राह्मण: पुरोहित तथा शिक्षित वर्ग 2. क्षत्रिय, सैनिक वर्ग 3. वैश्य, व्यापारी वर्ग और 4. शूद्र सेवक वर्ग। किसी समय ये केवल वर्ण थे। कुछ समय बाद, जो वर्ण थे वे ही जातियाँ हो गईं और चार जातियाँ चार हजार हो गईं। इस प्रकार आधुनिक जाति व्यवस्था प्राचीन वर्ण व्यवस्था का विकास है”¹³ जो आगे चलकर समाज में जाति व्यवस्था, छूआछूत जैसे परिस्थिति का निर्माण करते हैं। सदियों से चली आ रही ऐसी समाज घातक परिस्थिति से मुक्त होने के लिए अंबेडकर ने आंतर्जातीय विवाह का समर्थन किया। उनके अनुसार जाति-अंतर्गत विवाह ही जाति व्यवस्था को सुरक्षित रखती है। अगर समाज को इस जाति व्यवस्था के बंधन से मुक्त कराना हो तो आंतर्जातीय विवाह को प्रोत्साहित करना होगा। वे अपने ग्रंथ में सुझाते हैं कि “आंतर्जातीय विवाह यही एक मात्र उपाय जाति व्यवस्था को तोड़ने के लिए है। रक्त संबंधों के कारण ही आत्मीयता की भावना तैयार होती है। इसी कारण आंतर्जातीय विवाह अधिकाधिक हों तो जाति के बंधन कमज़ोर होते जाएँगे”¹⁴ जातिव्यवस्था से मुक्त समाज निर्माण में अंबेडकर के ये विचार सटीक तथा सराहनीय हैं।

अंबेडकर हिन्दू समाज में व्याप्त पाखण्ड और जातीय दंभ के विरोधी थे। उन्होंने समाज में फैले जातीय मतभेद, छूआछूत, शोषण आदि का विरोध किया। दलित समाज को संगठित कर उन्हें शिक्षित बनाने, संघर्ष संगठन

पर बल देने का आग्रह किया। समाज की तथा देश की प्रगति के लिए सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक परिवेशों में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने के लिए समाज में फैले जातिव्यवस्था का विरोध, अस्पृश्यता का विरोध किया और महिला तथा दलित महिला शिक्षा को समर्थन, आंतरजातीय विवाह का समर्थन किया। जिससे दमित, कुंठित, शोषित, उत्पीड़ित दलित समाज का उत्थान हो। उनका मानना था कि यदि हिन्दू समाज का उत्थान करना है तो अस्पृश्यता को जड़ से निकाल फेंकना होगा। समाज में समानता और बंधुत्व जैसे विचारों को स्थापित करने के लिए उन्होंने अथक प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ

1. बीसवीं सदी में नवजागरण, पृ सं-60
2. वही , पृ. सं-57-58
3. अस्पृश्यता, डॉ. भीमराव आंबेडकर, पृ . सं- 32
4. बीसवीं सदी में नवजागरण, पृ सं-60

महात्मा जोतीराव फुले यांची अभंग रचना

डॉ. एकनाथ श्रीपती फुटाणे

मराठी विभागप्रमुख, मशिसे. गट—अ शासकीय ज्ञान विज्ञान महाविद्यालय, औरंगाबाद.

प्रस्तावना :

महात्मा जोतीराव फुले हे महाराष्ट्रातीलच नव्हे तर भारत देशातील द्रष्टे विचारवंत, कर्ते सुधारक व समाजक्रांतीचे जनक होत. जीवनातील प्रत्येक क्षेत्रातील त्यांचे विचार हे काळाच्या कितीतरी पुढे होते. शेती, उद्योग, शिक्षण, जातीनिर्मूलन, स्त्रियांचे प्रश्न, शुद्रादि अतिशूद्रांचे प्रश्न, जातीनिर्मूलन, वंचितांचे प्रश्न समाजसुधारणा या आणि इतर सर्वच क्षेत्रातील त्यांनी सुधारणासाठी साहित्य हे माध्यम उपयोगात आणले. साहित्यामधून फक्त त्यांनी प्रश्न मांडले नाही तर त्यांनी ते आपल्या कार्यातून सत्यात उतरविले.

महात्मा फुले यांची कथनी जितकी श्रेष्ठ होती, तितकीच 'करनी' देखील होती. म्हणून त्यांना कर्ते सुधारक म्हटले जाते, ते या अर्थानेच होय. त्यांचे सर्वच वाङ्मय स्वातंत्र्य, समता, बंधुता व मानवता या वैश्विक मूल्यांचा हिरारीने पुरस्कार करणारे आहे. जोतीरावांनी थॉमस पेन यांचा 'राइट्स ऑफ मॅन' ग्रंथ, जॉर्ज वाशिंग्टन, छत्रपती शिवाजी महाराज, नेपोलियन बोनापार्ट, यांचे चरित्र वाचले होते. या वाचनाने त्यांच्या पुढील कार्याला दिशा मिळाली. 'थॉमस पेन' यांचा 'राइट्स ऑफ मॅन' हा ग्रंथ त्यांच्या पुढील विचार आणि कार्यासाठी मैलाचा दगड ठरला. त्यांनी आपल्या साहित्यामधून सर्वकष समाजक्रांतीचे तत्त्वज्ञान मांडले. मात्र प्रस्थापितांनी त्यांच्या काही ग्रंथाना किंबहुना एकूणच साहित्याला जाणीवपूर्वक प्रकाशात आणले नाही किंबहुना येऊ दिले नाही असे म्हटले तर वावगे ठरू नये. जोतीराव फुल्यांची काव्यरचना त्यांच्या हयातीत व नंतरही उपेक्षित का राहिली या संदर्भात प्रभाकर वैद्य लिहितात, "फुल्यांबद्दल आणि त्यांच्या लिखाणाबद्दल इतका अखंड बोलबाला सतत चालू असतो, पण जोतीबा नामक कोणी कवी होते त्यांनी बऱ्याच मोठ्या प्रमाणावर जन्मभर काव्यरचना केलेली आहे. आपल्या दृष्टीने जोतीबा त्या रचनेला विशेष महत्त्व देत होते. या गोष्टीकडे त्यांच्या अनुयायांनी किंवा विद्वानांनीसुद्धा 'अगदी' संपूर्ण दुर्लक्ष केलेले आहे. कवी म्हणून फुल्यांचे नाव अनुल्लेखाने पुसून टाकण्याच्या कामी, त्यांचे विरोधक—अनुयायी त्याचप्रमाणे विद्वान, संशोधक या सर्वांचेच व्यवहारतः तरी एकमत असलेले दिसते." एकूणच महात्मा जोतीराव फुले यांचे साहित्याची तर उपेक्षा झालीच त्यातही त्यांच्या काव्यसंपदेची प्रभाकर वैद्य म्हणतात त्याप्रमाणे शंभर टक्के उपेक्षा केली गेली.

महात्मा फुले यांच्या कवितेचा लेखनकाळ हा केशवसूतपूर्व आहे. १८१८ ला पेशवाईचा अस्त झाला. इंग्रजी राजवट सुरू झाली. पेशवाईचा अस्त ही फार मोठी राजकीय घडामोड होती. समाजातील मूल्यव्यवस्थाच बदलली गेली. परिवर्तनाची पहाट येणार असे वाटू लागले, मात्र हे सर्व फार कठीण होते. या संदर्भात शाहिर परशुराम लिहितो,

"जुने कायदे अगदी मोडले जधीपुत झाली इंग्रजी।"^१

साधारण १८४० च्या दशकात पोवाडा आणि लावणी यांची जादू कमी झाली होती. सगणभाऊ (१९४०), परशुराम (१८४४) हे नामांकित शाहीर मृत्यू पावले होते. मराठी साहित्य भाषांतराचे धडे गिरवत होते. प्रस्तुत काळ हा मराठी कवितेचा संक्रमण स्थितीत वाटचाल करीत होता. अशा काळात खऱ्या अर्थाने कवितेचे अंतरंग व बहिरंग या दोन्हीमध्ये बदल घडवून आणणारा समर्थ कवी म्हणजे महात्मा फुले होय. आधुनिक कवितेचा केशवसूतापूर्वी भक्कमपणे पायाभरणी करणारे कवी म्हणून महात्मा फुले यांचा गौरव करावा लागतो. या संदर्भात यशवंत मनोहर लिहितात, "आधुनिक कवितेचे जनक जर केशवसुत ठरत असतील तर आधुनिक काव्यक्रांतीचे अग्रदूत म्हणून, आधुनिक काव्यासाठी वैचारिक भूमी तयार करणारे कवी म्हणून जोतीबा फुल्यांचे कार्य टाकले जावू नये."^२ केशवसुतांनी १९८५ ला काव्यलेखनास सुरुवात केली. म्हणजे जोतीराव फुल्यांचे काव्यलेखन केशवसुतांच्या कितीतरी पूर्वी झाले हे निर्विवाद आहे. महात्मा फुले यांची कविता ही प्राचीन किंबहुना मध्ययुगीन रचनाप्रकार आणि आधुनिक जीवनदृष्टी याचा सुंदर संगम आहे.

महात्मा जोतीराव फुले यांचे काव्यलेखन :

- १) छत्रपती शिवाजी राजे भोसले यांचा पवाडा (१८६९)
- २) 'ब्राह्मणांचे कसब' यामध्ये ७ अभंग आहेत तसेच प्रारंभीच १ अभंग आहे, असे एकूण १२ अभंग.
- ३) दस्यूचा पवाडा

- ४) भटकामगार इंजिनिअर खात्यात कशी पेंढारगर्दी करितात याविषयीचा पवाडा
- ५) अखंडादि काव्यरचना
- ६) याशिवाय आरत्या, आर्या, दिंडी आणि काही पद्यात्मक पत्रे असे त्यांचे काव्यलेखन आहे.

जोतीरावांच्या काव्यलेखनाचा विचार करण्यापूर्वी या काव्यलेखनाचा हेतू लक्षात घ्यावा लागेल. तत्कालीन मराठी कवी मंडळीत आपल्याला स्थान मिळावे, आपला नावलौकिक व्हावा, किंबहुना 'यशसे—अर्थकृते' यासाठी देखील त्यांनी काव्यरचना केली नाही. 'फुल्यांनी जी काव्यरचना केली ती आपल्या जीवनकार्याच्या सिद्धीसाठी ज्या हेतूने त्यांनी वाणी व लेखणी गद्यामध्ये अखंड झिजविली, त्याच हेतूने त्यांनी पद्यरचनाही केली. त्यांच्या इतर लिखाणाप्रमाणेच त्यांची काव्यरचनाही त्यांच्या एकूण जीवनाचा अंगभूत भाग होता.'^३ अर्थात महात्मा फुले यांनी एक जीवनव्यापी प्रेरणा घेवून कविता लिहिली. आत्मविष्काराची भावना असणे दुरापास्त होते. त्यांची वैचारिक भूमिका मांडणे हे एक प्रयोजन होते. मुख्यत्वे त्यांची जी सर्वव्यापी मानवता, समता—बंधुता व स्वातंत्र्य याच्याशी बांधिलकी साधणारी जी विचारप्रणाली होती, त्यामधून सम्यक परिवर्तन घडावे, जगात मानवतेची प्रतिष्ठापणा व्हावी या उदात्त हेतूंनी त्यांची कविता लिहिली. प्रभाकर वैद्य महात्मा फुले कवितेचे आणि संतांच्या कवितेचे अंतरिक नाते, त्यांच्या प्रेरणा याचा अन्वय शोधतात. ते म्हणतात, 'ज्ञानोबापासून तुकोबापर्यंत साऱ्या संत कवींचा जो हेतू होता, व त्यामागील जी प्रेरणा होती, तिच्याशी जोतीबाच्या अखंड काव्यरचनेचे नाते नक्की जुळण्यासारखे आहे. '^४ म्हणूनच महात्मा फुले यांना संत तुकोबाच्या धर्तीवर 'तुका म्हणे' ऐवजी 'ज्योती म्हणे' हे नामाभिधान वापरले. भले अशयात्मक वैद्यम्य असेल मात्र अभिव्यक्तीत बरेच साधर्म्य आहे.

अभंग आणि अखंड :

महात्मा फुले यांनी जी कविता लिहिली त्यामध्ये शिवाजीराजे भोसले यांचा पोवाडा, अभंग, अखंडरचना, ब्राह्मणाचे कसब व काही मंगलाष्टके यांचा उल्लेख करावा लागेल. त्यांचे एकूण १९४ 'अखंड' उपलब्ध आहेत. महात्मा फुले यांनी प्रारंभी काही अभंगरचना केली. त्यांचे एकूण आज १२ अभंग उपलब्ध आहेत. साधारण १९८५ नंतर त्यांनी अखंड लिहिले. महात्मा फुले यांनी संतांचा 'अभंग' हा रूपबंध जसे प्रारंभी स्वीकारला तरी त्याचा आशय हा अध्यात्मिक नसून लौकिक आहे. 'अभंग' हा शब्द (अ + भंग) ज्याचा कधीही भंग होत नाही असा होय. महात्मा फुले यांनी जे साहित्यप्रकार वापरले त्यामागे त्याला तात्त्विक व वैचारिक अधिष्ठान होते, एक व्यापक दृष्टी होती. अगदी अभंगाच्या बाबतीत जरी विचार केला तर काही गोष्टी पटकन नजरेत भरतात. अभंग छंद हा रचनासुलभ तसेच उच्चार सुलभ आहे. पाठांतरासाठी सोपा आहे, समाजात इतर रचनाप्रकारापेक्षा कितीतरी लोकप्रिय आहे. जनसामान्यात रूजलेला, रुळलेला आहे. हे महात्मा फुले यांनी पूर्णपणे जाणलेले होते. म्हणून जाणीवपूर्वक 'अभंग' या देशी छंदाची त्यांनी आपल्या रचनासाठी निवड केली. या संदर्भात प्रभाकर वैद्य लिहितात, 'अगदी सामान्यांतल्या सामान्य निरक्षर माणसाला, समाजातील अगदी शेवटल्या थरातील शेवटल्या माणसालासुद्धा समजेल, त्याच्या अंतःकरणाला थेट जावून भिडेल इतकी त्याची रचना आणि भाषा सोपी होती. म्हणूनच केवळ फुल्यांना 'अभंग' हा पद्यप्रकार पसंत पडला असावा आणि म्हणूनच फुल्यांनी तो स्वीकारला आणि वापरला असावा.'^५

जोतीराव फुले यांच्या साहित्याविषयी काही गोष्टी स्पष्ट होत नाहीत. त्या संदर्भात केवळ अनुमानच करावेलागते. प्रारंभी त्यांनी आपल्या रचनांना अभंग म्हटले व नंतर त्याला अभंग हे नाव दिले. याची काही संगती लावता येत नाही. या संदर्भातील यशवंत मनोहर यांचे विचार काही अशी पटण्यासारखे आहेत ते म्हणतात, 'अभंग लेखनास पुढे अखंड हे नाव दिले यामागचे एक कारण तर स्पष्ट आहे की, जोतीबा फुले यांना काही कल्पना क्रमाने स्पष्ट होत चाललेल्या होत्या. आपले आपल्या व्यक्तिमत्त्वाचे, भावना विचारांचे आपल्या दृष्टिकोनाचे संतांच्या भावविचारांच्या अनुषंगाने संभवणारे निराळेपण त्यांच्या क्रमाने स्पष्टपणे लक्षात येवू लागले.'^६

महात्मा फुले यांच्या साहित्याचा अभ्यास करणारे श्रीराम गुंदेकर यांच्या मते महात्मा फुले यांनी 'अभंग' ऐवजी अखंड ही संज्ञा पद्यरचनेसाठी हेतुतः किंबहुना जाणीवपूर्वक वापरलेली आहे. समाजजीवनात 'अभंग' या रचनाप्रकाराला अनन्यसाधारण महत्त्व होते आणि आजही आहे. हे जाणून देखील महात्मा फुले यांना अभंगाऐवजी 'अखंड' हे नाव द्यावे लागले याविषयी श्रीराम गुंदेकर लिहितात, 'अभंगाला चिकटलेले पारंपरिक अर्थ व संदर्भ आशयाला मारक ठरतील, अर्थाचा विपर्यास केला जाईल, संतांच्या अभंगाप्रमाणे यांचीही देव्हान्यावर पूजा होईल आणि कृतिप्रणवता या प्रयोजनावर पोतारा फिरेल अशी शक्यता त्यांना वाटली असावी. आपल्या समाजाला व्यक्तिपूजा, व्यक्तिमहात्म्य यांचे स्तोम माजवणे फार आवडते. यामुळे कृती टाळून नवी बुवाबाजी करण्याची सोय होते, ही शक्यताही जाणवली असावी.'^७ थोडक्यात अखंड म्हणजे ज्याचे खंडण होत नाही, खंडण करता येत नाही, ज्यामध्ये प्रवाहीतपणा आहे. अशी रचना म्हणजे 'अखंड' साधारण १८८५ च्या पूर्वी महात्मा फुले यांनी अभंगरचना केली व १८८५ नंतर 'अखंड' लिहिले.

त्यांच्या काव्यरचनेचे किंवा पद्यलेखनाचे वर्गीकरण वेगळ्या पद्धतीने देता येईल. त्यामध्ये पोवाडे, अभंग—१२, अखंडादी काव्यरचना—१९४, स्फुटपद्यरचना —२७ आणि ब्राह्मणाचे कसब हे एक खंडकाव्य त्यामध्ये अंतर्भूत आहे.

अभंग रचना :

महात्मा जोतीराव फुले यांनी समाजाच्या दुःखाचे मूळ हे वर्णजातिस्त्रीदास्यव्यवस्थेत आहे हे पुरते ओळखले होते. याला ज्ञानाच्या प्रकाशमय जोतीनेच नाहीसे करता येईल. त्यासाठी समाजात जागृती होणे गरजेचे आहे. म्हणून त्यांनी आपली लेखणी चालविली. साहित्य हे माध्यम वापरले. प्रारंभी 'अभंग' हा समाजमान्य व रूढ रुढलेला हा रचनाप्रकार कामी आणला. मागे उल्लेख केल्याप्रमाणे इ. स. १८८५ पूर्वी ज्या रचना केल्या त्यांना 'अभंग' हे नाव दिले आहे. महात्मा फुले यांचे 'अभंग' व संताचे अभंग यातील वेगळेपण सांगताना श्रीराम गुंदेकर लिहितात, "महात्मा फुले यांनी अभंग हा रूपबंध स्वीकारला असला तरी आशय पारंपरिक वेदान्ती किंवा अध्यात्मिक नाही. संतांना पारलौकिक सुखाची ओढ होती; निवृत्तीपर जीवनदृष्टी होती. संतांच्या अभंगात समाजाची दुःखे, वेदना, अन्याय, आक्रोश यांचे ध्वनी—प्रतिध्वनी उठले आहेत. माणसाची सुखदुःखे त्यांना दिसली. त्यांचे अंतःकरणही हेलावले परंतु त्यांच्या निवृत्तीपर व पारलौकिक जीवन दृष्टीची मर्यादा आशयविषयाला पडली आहे. एवढेच नव्हे तर, वर्णजातिव्यवस्थेचे जोखडही ते झुगारू शकले नाहीत. व्यवस्थाशरण अशी त्यांची रचना आहे." महात्मा फुले यांच्या आणि संतांच्या अभंगातील साम्यभेद पाहत असताना संतांच्या रचनांची अभिव्यक्ती महात्मा फुले यांनी स्वीकारली. मात्र आशय आणि विषय यांमध्ये मुळात दोन्ही अभंगात फरक आहे.

महात्मा फुले यांच्या उपलब्ध एकूण १२ अभंगांपैकी 'छत्रपती शिवाजी राजे भोसले यांचा पोवाडा यामध्ये शेवटी 'अभंगरचना' आहे. यामध्ये राणीच्या राज्यात सगळीकडे ब्राह्मणशाही कशी आहे याचे वर्णन करताना जोतीराव फुले म्हणतात,

'सत्ता तुझी राणीबाई। हिंदुस्थानी जागृत नाही।

चहूंकडे भटशाही। कुणब्याची दाद नाही

खेडेगावी कुळकर्णी। आहे लेखणीचा धणी।

जोती म्हणे धाव घेई। दुष्टापासोनी सोडवी।।'^{१९}

तत्कालीन ब्रिटिश साम्राज्यात कुणब्याची स्थिती हलाखीची आहे. भटशाहीमुळे कुणब्यांना न्याय मिळत नाही. भट—कुलकर्णी हे सर्व लेखणीचे मालक आहेत. भट—कुलकर्णी, मामलेदार मुजोर बनले आहेत हे आवाहन जोतीराव ब्रिटिश सम्राज्यीला करतात. आर्यभट्ट हे कावा करून शूद्रांना फसवितात, धनद्रव्य लुबाडतात. अगदी अमानुष अवस्थेत जीवन जगणाऱ्या अतिशूद्रांसाठी काही चांगले करण्याची ब्राह्मण वर्गाची बिलकूल इच्छा नाही. उलट ते जमेल तेवढा त्रासच देतात. धर्म, वर्ण आणि जातिव्यवस्था यांचा आधार घेवून स्त्री शूद्रांचे सर्वकष शोषण केले.

ब्राह्मणापाठोपाठ 'मारवाडी' जातीतील समाजाने शूद्रातिशूद्र लोकांचे आर्थिक शोषण केले. हा समाज म्हणजे शूद्रातिशूद्र समाजाच्या आर्थिक परिस्थितीला लागलेला भुंगा होता. रिकाम्या हाती महाराष्ट्रात आलेली ही व्यापारी —सावकारी जात कमी काळात श्रीमंत झाली, त्याचे कारण म्हणजे व्याजामध्ये पैसा, दागिने, घर, भांडी, जनावरे, शेती इत्यादी घेवून त्यांनी संपत्ती वाढविली. यांनी शेतकऱ्यांना देशोधडीला लावले असे महात्मा फुले पोटतिडकीने सांगतात,

'कायापुरती लंगोटी। फिरती नांगराचे पाठी।।

एका घोंगड्याचूननी। स्त्रिया नसे दुजे शयनी।।

ढोरामागे सर्व काळ। पोरे फिरती रानोमाळ।।

ताककण्या पोटभरी। धन्य म्हणे संसारी।।'^{२०}

शरीराला झाकण्यासाठी पुरेसा कपडा नाही. लंगोटोवर रात्रंदिवस नांगर हाकणारा शेतकरी, एका घोंगड्याचून दुसरे वस्त्र नाही, ढोरामागे मुले—मुली, रानोमाळ फिरतात, ताककण्या देखील त्यांना वेढेला मिळत नाहीत अशी स्थिती शेतकऱ्यांची होती. भिक्षूकवर्ग हा धर्माच्या नावाखाली द्रव्य—धन लुबाडून शेतकरी, गरीब शूद्रादिशूद्रांना कंगाल करित होता. जे जोतीरावांनी जाणले होते. खोटे नाटे व्यवहार, ढोंग, कपटधर्मनतीती यावर जोतीरावांनी कडाडून हल्ला केला. भटांच्या मतलबी ग्रंथाच्या कसबाविषयी त्यांनी १७ चरणाचा अभंग लिहिला आहे. भट—ब्राह्मण सुखी, चैनी, विलासी जीवन जगतात. त्यांच्या या 'लीळा' एका चरणात सांगतात ते म्हणतात,

'स्नानसंध्या नित्य टिळाटोपीवरी। घेती मांडीवर जारीणीस।।

नेसोनि सोवळे विटाळसा झाला। शिवेना शूद्राला शुद्ध कैसा।।

शूद्राला भोजन दुरून वाढिती। मद्यपान घेती शाक्तमिसे।।

पाय धुववणी शूद्रा तीर्थ देती। मुखरस पिती यवनीचा।।'^{२१}

इंग्रजी राजवटीत सामाजिक, आर्थिक विषमतेत कळस गाठला होता. कष्टकऱ्यांचे जीवन दयनीय झाले. खालून ते वरपर्यंत सर्व नोकऱ्या ब्राह्मणांना मिळालेला होत्या. न्यायाधिश, मामलेदार, शिरस्तेदार, बेलीफ, इंजिनीअर, शिक्षक, शिक्षणाधिकारी, फौजदार, कारकून इत्यादी सर्व जागावर ब्राह्मणाची मक्तेदारी होती. त्यामुळे शुद्र शेतकऱ्यांवर प्रचंड अन्याय होत होता. या संदर्भात डॉ. अशोक चौसाळकर लिहितात, 'महात्मा जोतीराव फुले यांनी साम्राज्यशाही शोषण कसे होत होते यांचे चांगले विवेचन केले होते. भारतातील शेतकऱ्यांवर शेतसारा व इतर पडूच लादून त्यांची लूट करणे, देशभर दुष्काळ असताना अन्न—धान्य व कच्चा माल यांची निर्यात करणे, पक्का माल आयात करून येथील कारागिरास कंगाल करणे.'^{१२} असा अन्याय शेतकऱ्यांवर होत होता. याचे वर्णन महात्मा फुले करतात,

'लेपाच्या डबीत आंगमोड देई। झोप येत नाही। आळशास।।

दंव थबथबी शेती बांधावरी। बैलास चारी। शुक्रोदयी।।

ऊन—पाणी नित्य सोवळ्याचा थाट। संध्येसाठी पाट। मौन्यसुख।।

निटनेट करी गाड्या आऊतासी। तुटक्या दोरासी। चार घाली।।'^{१३}

प्रस्तुत अभंगात तत्कालीन काळात विषमता कशी विकोपाला गेलेली होते, याचे चित्रण महात्मा फुले करतात. दोन आर्थिक स्तर आणि त्यातील प्रचंड विसंगती अगदी नेमकेपणाने येथे मांडली आहे. महात्मा फुले यांना समाजातील प्रश्नांविषयी प्रचंड आकलन होते. शेतकऱ्यांविषयी त्यांची लेखणी अधिक धारदार होते. निर्मिकाने अवयवबुद्धी मानवास समान दिलेली असताना ब्राह्मण सुखी कसा? शेतकरी, शुद्रादिशुद्र दुःखी कसा? असे प्रश्न ते व्यवस्थेला विचारतात व वाचकांना अंतर्मुख करतात. 'भटांचे कसब व शुद्राचा देवभोळेपणा' या विषयी त्यांचा एक अभंग आहे. ते म्हणतात,

'रडू लागे शेजाऱ्याशी। आसू नाही डोळे पुसी।।

मोल घेई रडू लागे। बहुरूपी आणि सोगे।।'^{१४}

भारतीय इतिहासात शुद्रादिशुद्रांचे, स्त्रियांचे जे शोषण होत आले आहे, ते धर्माच्या गारूडामुळे झाले. आर्यांनी अनार्यांना जिंकून घेतले व त्यांच्यावर अन्याय सुरू केला. धर्मसत्तेच्या मदतीने त्यांनी शुद्रांची विद्या बंद केली. मग शुद्र अज्ञान आणि अंधश्रद्धेत धर्मभोळेपणात गुरफटून गेला. 'ब्राह्मणी कावा' हा शुद्रातिशुद्रांना समजत नसे. अज्ञानामुळे शुद्र कसा या कावेबाजपणाला बळी पडतो. त्यांचे नाटक किंबहुना नौटंकी कळण्याइतपत ज्ञान शुद्रांना आणि येथील स्त्रियांना नाही. मग ही मंडळी कुशलतेने दलाली करून अज्ञानी जनांना फसवितात हे महात्मा फुले यांनी कळवळीने सांगितले आहे. त्राता सर्वांना सारखा आहे तो कुणालाही परखा नाही म्हणून या ब्राह्मण दलालांवर बिलकूल विश्वास ठेवू नका; अशा मध्यस्थीची देवापर्यंत जाण्यासाठी आवश्यकता नाही, हे पावलोपावली ठणकावून सांगितले. 'सत्सार अंक—१' च्या आरंभी एका अभंगात आर्य कशी ढोंगी कृत्ये करीत आहे, त्यांचे धर्मप्रेम हे थोतांड असून कृत्रिम आहे हे सांगताना ते लिहितात,

'धूर्त आर्याची मती खुंटली। रमा पंडिता बरी बाटली।।'^{१५}

एकूणच महात्मा फुले अभंग, अखंड व पोवाडा इत्यादी काव्यप्रकारातून आयुष्यभर लेखन करित होते. शुद्रांना, स्त्रियांना ते 'विद्याशिका' म्हणून अगदी तळमळीने सांगत होते. 'आता तरी तुम्ही मागे घेऊ नका। धिक्कारूनी टाका। मनूमता। विद्या शिकताच पावाल ते सुख। घ्यावा माझा लेख। जोती म्हणे।।' विद्येमुळेच माणसांच्या अंगी शक्ती येते, आत्मविश्वास येतो ज्या व्यक्ती जीवनात यशस्वी झाल्या आहेत, त्यांनी विद्येचाच आश्रय घेतला आहे. 'विद्या शिकताच पावल ते सुख, घ्यावा माझा लेख' हा महात्मा फुले यांचा मंत्र आणि डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचा 'शिका लढा व संघटित व्हा' हा मंत्र यातील साधर्म्य वेगळे सांगायला नको. महात्मा फुले यांच्या अभंगात आणि संत तुकारामाच्या अभंगात बरेच रचनेच्या किंबहुना अभिव्यक्तीच्या दृष्टीने कमालीचे साधर्म्य आहे हे गो.पु. देशपांडे यांनी (सत्यशोधक) नाटकांमधून, प्रभाकर वैद्य, श्रीराम गुदेकर, नागनाथ कोत्तापल्ले आदि अभ्यासकांनी हे दाखवून दिले आहे. महात्मा फुले यांच्या विचारमंथनाचा केंद्रबिंदू हा 'सत्य' हा आहे. 'अखंड'मधून त्यांनी सत्याची खऱ्या अर्थाने हाक दिली आहे. या संदर्भात भालचंद्र फडके लिहितात, 'नामदेव—तुकोबाची अभंगवाणी बहुजन समाजाच्या काळजाला जावून थेट भिडणारी, या संतांची पारमार्थिक तळमळ जशी या अभंगवाणीतून आविष्कृत होत होती तशी त्यांची दंभ, ढोंग, बुवाबाजी, अंधश्रद्धा इत्यादी विषयी चीड अभंगातून व्यक्त होत होती.'^{१६} अशाच प्रकारे जोतीराव फुले यांनी आपल्या अभंगातून ब्राह्मणांचा ढोंगपणा, संधीसाधूपणा, थोतांड, स्त्री व शुद्रातिशुद्र यांची फसवणूक करणाऱ्या भटशाहीविरुद्ध चीड व्यक्त केली आहे.

बाबा आढाव म्हणतात, मानवी बुद्धीचे स्वातंत्र्यप्रेम, समता, बंधुभाव, श्रमप्रतिष्ठा, सारासार विवेक या मूल्यांवर आधारलेला नव्या संस्कृतीचे उदगान फुल्यांनी केले आणि सामाजिक आर्थिक शोषण व्यवस्थेविरुद्ध सत्यशोधनाचे आंदोलन सुरू केले.'^{१७} तर डॉ. गेल ऑम्ब्रेट लिहितात, 'जुनी धार्मिक परंपरा संपूर्णपणे फेकून कष्ट करणाऱ्या जातीमध्ये असणारी बळीराजासारखी समतावादी परंपरा पुढे आणून नवीन

लुटविरहित समताधारित, प्रेम व न्यायधिष्ठित समाजव्यवस्था आणण्याचे ध्येय.'^{१८} यासाठी त्यांची लेखणी काम करीत होती. तर भा. ल. भोळे म्हणतात, 'जन्मसिद्ध श्रेष्ठत्वाला जोतीरावांनी कडाडून विरोध केला आहे. 'जहाँ मर्दी—नामर्दी ही कधीही पिढीजादा नसते हे त्यांनी अनेक उदाहरणे देवून सिद्ध केले.'^{१९}

त्यांनी आपल्या अभंगातून सम्यक परिवर्तनवादी मानवमुक्तीचा विचार व्यक्त केला. शुद्ध ज्ञानोपासना, विज्ञाननिष्ठा व विवेकवादाचा पुरस्कार केला. आशयाच्या दृष्टीने महात्मा फुले यांच्या अभंगाची जातकुळी ही संताच्या अभंगापेक्षा मूलतः वेगळी आहे

थोडक्यात जोतीराव फुले यांनी प्रारंभी जे अभंग लिहिले त्या संदर्भात काहीएक विचार व्यक्त करण्याचा प्रयत्न प्रस्तुत लेखात केला आहे. त्यांचे भले १२ अभंग असतील त्याचे मोल कोणत्याही पठडीतील 'महाग्रंथापेक्षा' मोठे आहे. महात्मा जोतीराव फुले यांची कविता ही भारतीय समाजक्रांतीच्या जनकाची कविता आहे. प्राचीन काव्य आणि केशवसूतांचे काव्य यांना जोडणारा एक समर्थ दुवा म्हणून महात्मा फुले यांच्या कवितेकडे पाहता येईल.

संदर्भ सूची :

1. अदवंत म. ना. (संपा.), पैजण, साहित्यप्रसार केंद्र सीताबर्डी, नागपूर, चौथी आवृत्ती, जुलै २०००, पृ. ८२
2. मनोहर यशवंत, संग्रामनायक जोतीराव फुले, सनय प्रकाशन, पुणे, द्वितीयावृत्ती, १९ फेब्रुवारी २०२१, पृ. ८४
3. वैद्य प्रभाकर, महात्मा फुले आणि त्यांची परंपरा (प्रेरणा—शिकवण—विपर्यास) लोकवाङ्मय गृह, प्रथमावृत्ती ऑक्टो १९७४, पृ. २४६
4. तत्रैव, वैद्य प्रभाकर, पृ. २४६
5. तत्रैव, वैद्य प्रभाकर, पृ. २४८
6. तत्रैव, मनोहर यशवंत, पृ. ८८
7. गुंदेकर श्रीराम, महात्मा जोतीराव फुले : विचार आणि वाङ्मय भाग १ आणि २, प्रतिमा प्रकाशन, प्रथमावृत्ती १५ ऑगस्ट १९९२, पृ. १७९
8. तत्रैव, पृ. १७३
9. महात्मा फुले समग्र वाङ्मय, (संपा.) कीर धनंजय, मालशे स. ग., १९६९, पृ. ३८
10. तत्रैव, पृ.
11. तत्रैव, महात्मा फुले समग्र वाङ्मय, पृ. ५२
12. चौसाळकर अशोक, महात्मा फुले आणि शेतकरी चळवळ, लोकवाङ्मय गृह, प्रथमावृत्ती, १९९०, पृ. ३०
13. तत्रैव, गुंदेकर श्रीराम, पृ. १७६
14. तत्रैव, पृ. १७७
15. तत्रैव, पृ. १७७
16. फडके भालचंद्र, डॉ. आंबेडकर आणि दलित साहित्य, प्रचार प्रकाशन, कोल्हापूर, प्रथमावृत्ती, १९८९, पृ. १३
17. तत्रैव, पृ. १४
18. गेल ऑम्ब्रेट, जोतीबा फुले आणि स्त्री—मुक्तीचा विचार, लोकवाङ्मय गृह, प्रथमावृत्ती नोव्हें १९९०, पृ. ३२
19. भोळे भा. ल., जोतीरावाची समता संकल्पना, लोकवाङ्मय गृह, प्रथमावृत्ती, नोव्हेंबर १९९०, पृ. १७

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे आर्थिक विचार – एक अभ्यास

प्रा. डॉ. सुरेश वसंतराव खोंड

संशोधन मार्गदर्शक व अर्थशास्त्र विभाग प्रमुख शरदचंद्र महाविद्यालय, शिराडोण ता. कळंब जि. उस्मानाबाद.

प्रस्तावना:—

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचा जन्म १४ एप्रिल १८९१ मध्ये झाला. डॉ. आंबेडकर हे भारतीय न्यायशास्त्रज्ञ, अर्थशास्त्रज्ञ, राजनितिज्ञ, तत्वज्ञ आणि समाजसुधारक होते. त्यांनी दलित बौद्ध चळवळीला प्रेरणा दिली आणि अस्पृश्य लोकांविरुद्ध होणारा सामाजिक भेदभाव नष्ट करण्यासाठी चळवळ उभारली. तसेच महिलांच्या आणि कामगारांच्या हक्कांचे समर्थन केले. ते ब्रिटिश भारताचे मजूरमंत्री, स्वतंत्र भारताचे पहिले कयदेमंत्री, भारतीय संविधानाचे शिल्पकार, भारतीय बौद्ध धर्माचे पुनरुज्जीवक होते. देशाच्या विविध क्षेत्रांत दिलेल्या योगदानामुळे त्यांना 'आधुनिक भारताचे शिल्पकार' किंवा 'आधुनिक भारताचे निर्माते' असेही म्हणतात. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी कोलंबिया विद्यापीठ आणि लंडन ऑफ इकॉनॉमिक्स या शिक्षण संस्थांमधून अर्थशास्त्र विषयात पीएच्. डी. पदव्या मिळवल्या. तसेच त्यांनी कायदा, अर्थशास्त्र आणि राज्यशास्त्र या विषयांवर संशोधन केले. त्यांच्या सुरुवातीच्या कारकीर्दीत, ते एक अर्थशास्त्रज्ञ, प्राध्यापक आणि वकील होते. त्यानंतर त्यांनी सामाजिक व राजकीय क्षेत्रांत काम केले ते भारताच्या स्वातंत्र्यासाठी प्रचारांमध्ये व चर्चांमध्ये सामील झाले, वृत्तपत्रे प्रकाशित केली, दलितांसाठी राजकीय हक्कांचा व सामाजिक स्वातंत्र्याचा पुरस्कार केला, तसेच आधुनिक भारताच्या निर्मितीत मोलाचे योगदान दिले. इ. स. १९५६ मध्ये त्यांनी आपल्या अनुयायांसह बौद्ध धर्म स्विकारला. धर्मांतरानंतर काही महिन्यांनीच त्यांचे निधन झाले. इ. स. १९९० मध्ये त्यांना मरणोत्तर भारतरत्न हा भारताचा सर्वोच्च नागरी सन्मान प्रदान करण्यात आला. इ. स. २०१२ मध्ये "द ग्रेटेस्ट इंडियन" नावाच्या सर्वेक्षणात आंबेडकरांनी 'सर्वश्रेष्ठ' भारतीय म्हणून निवड करण्यात आली होती.

अर्थशास्त्रात परदेशात डॉक्टरेट पदवी मिळवणारे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे पहिले भारतीय होते. त्यांनी अर्थशास्त्राचे प्राध्यापक म्हणूनही अध्यापनाचे कार्य केले होते. अर्थशास्त्रज्ञ म्हणून त्यांनी असा युक्तीवाद केला की, औद्योगिकीकरण आणि कृषीवाढ भारतीय अर्थव्यवस्थेत वाढ करू शकतात. त्यांनी भारतातील प्राथमिक उद्योग म्हणून शेतीमधील गुंतवणूकीवर भर दिला. शरद पवार साहेब यांच्या मते, आंबेडकरांच्या दृष्टीकोनाने सरकारला अन्न सुरक्षा उद्दिष्ट साध्य करण्यास मदत केली. आंबेडकरांनी राष्ट्रीय, आर्थिक आणि सामाजिक विकासाचे समर्थन केले. शिक्षण, सार्वजनिक स्वच्छता, समुदाय स्वास्थ्य, निवासी सुविधांना मूलभूत सुविधा म्हणून जोर दिला. त्यांनी ब्रिटिश शासनामुळे होणाऱ्या विकासाच्या नुकसानाची गणना केली. त्यांनी अर्थशास्त्रावर तीन पुस्तके लिहिली. 'इस्ट इंडिया कंपनीचे भारतातील प्रशासन आणि अर्थकारण', 'ब्रिटिश भारतातील प्रांतीय अर्थिक उत्क्रांती' आणि 'द प्रॉब्लम ऑफ रूपी: इट्स ओरीजीन अँड इट्स सोल्यूशन' या पुस्तकांत त्यांचे भारताच्या आर्थिक व्यवस्थेसंबंधीचे मूलगामी चिंतन अंतर्भूत आहे. १९२१ नंतर आंबेडकरांनी अर्थशास्त्रज्ञ सोडून राजकारण पत्करले.

संशोधनाचे महत्त्व:—

प्रस्तुत संशोधनात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे आर्थिक विचार मांडण्याचा प्रयत्न करण्यात आलेला आहे. आंबेडकरांचे नाव 'घटनाकार' म्हणून जास्त प्रचलित आहे. मात्र एक अर्थशास्त्रज्ञ म्हणून आंबेडकरांची ओळख फारशी नाही. लोकांना एक अर्थशास्त्रज्ञ म्हणून आंबेडकरांची ओळख या लेखामधून होणार आहे. त्यांचे अर्थशास्त्रातील योगदान फार महत्त्वपूर्ण आहे. त्यांनी अर्थशास्त्रातच पीएच् डी पदवी प्राप्त केली होती. त्यांचे अर्थशास्त्रातील योगदान हे आजही महत्त्वपूर्ण आहे.

संशोधन पध्दती:—

कोणतेही संशोधन करण्यासाठी संशोधन साहित्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण असते. संशोधनाच्या दोन पध्दती आहेत. ज्या संशोधनात संशोधनासाठी आवश्यक माहिती संशोधन हा स्वतः गोळा करतो त्या संशोधन पध्दतीस प्राथमिक संशोधन पध्दती असे म्हणतात. तर ज्या संशोधनात संशोधक उपलब्ध असलेल्या संशोधन साहित्याचा वापर संशोधनासाठी करतो त्या संशोधनास द्वितीयक संशोधन पध्दती असे म्हणतात. प्रस्तुत संशोधनासाठी संशोधनाची द्वितीयक पध्दती वापरण्यात आलेली आहे. ज्यामध्ये संशोधनाशी संबंधीत ग्रंथ, पुस्तके, त्रैमासिके, साप्ताहिके, वर्तमानपत्रे, इंटरनेटवरील उपलब्ध असलेल्या माहितीचा अधार घेण्यात आलेला आहे.

संशोधनाची उद्दिष्ट्ये:—

1. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे आर्थिक विचार अभ्यासणे.
2. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे चलनविषयक विचार अभ्यासणे.
3. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे श्रमविभाजनाबाबत विचार अभ्यासणे.
4. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे शेती संबंधी विचार अभ्यासणे.
5. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे स्वदेशी—विदेशी मालाबद्दल विचार अभ्यासणे.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे आर्थिक विचार:—

आर्थिक लोकशाहीचा पुरस्कार:—

भारताला स्वातंत्र्य मिळाल्यानंतर भारताचे पहिले कायदामंत्री म्हणून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची नेमणूक करण्यात आली. १९४८.४९ मध्ये घटना समितीचे अध्यक्ष म्हणून भारतीय राज्यघटनेला आकार देतांना त्यांच्यातील अर्थतज्ञ आपणास दिसून येतो. मानवी अधिकारांचे मूलतत्त्व म्हणून त्यांनी लोकशाही राज्यव्यवस्थेचा ताकदीने पुरस्कार आणि पाठपुरावा केला. समता, स्वातंत्र्य आणि बंधुभाव या तीन लोकशाही तत्वांचा केवळ राजकीय हक्क अस संकुचित अर्थ लावला जाऊ नये, असे त्यांनी म्हटले आहे. सामाजिक आणि आर्थिक लोकशाहीचे ते खडे पुरस्कर्ते होते आणि सामाजिक आर्थिक लोकशाहीकडे दुर्लक्षून राजकीय लोकशाही टिकू शकणार नाही, असा इशाराही द्यायला ते विसरले नाहीत. डायरेक्टिव्ह प्रिन्सिपल्स ऑफ दि स्टेट पॉलिसी हा अनुच्छेद घटनेत समाविष्ट करून त्यांनी आर्थिक लोकशाहीचा हेतू विषद केला आहे.

डॉ. आंबेडकरांचे चलनविषयक विचार:-

भूमिहीन शेतमजूर, लहान ममिनी, खेतीपध्दती, सामुदायिक शेती, जमीनमहसूल आणि जमीनदारशाहीचे उच्चटन या विषयावर त्यांनी निरनिराळ्या वेळी विचार प्रकट केले होते. अशुभ समाजात भूमिहीन मजुरांचाच भरणा अधिक असल्याने त्यांनी त्या विषयावर मतप्रदर्शन केले होते. तसेच उद्योगांचे राष्ट्रीयीकरण, धान्य प्रश्न, समाजवाद, सामाजिक समता या विषयांवरही त्यांनी प्रासंगिक लिखाण केले होते. विद्यापीठात असताना पदवी वरीक्षेसाठी त्यांनी जे प्रबंध लिहिले तेच तेवढे त्यांचे अर्थशास्त्रावरील गंथिक लेखन त्यांच्याशिवाय स्वतंत्र मजूर पक्ष, अखिल भारतीय शोडयुल कास्ट फेडरेशन निवडणुकीच्या वेळचे जाहीरनामे आणि भारतीय घटनेवरील भाषणात प्रसंगानुरूप त्यांनी केलेले विवेचन यातून त्यांच्या अर्थशास्त्रीय विचारांचा मागोवा घेता येतो. वेवेचानाच्या सोयीसाठी त्यांचे लिखाण जमीन प्रश्न चलनविषयक प्रश्न, सार्वजनिक आय व्यय आणि संकिर्ण प्रश्न असे विभागले आहेत. शेवटी गांधीवादाचे अर्थशास्त्र यावरील त्यांचे विचार सांगून अर्थशास्त्रज्ञ म्हणून त्यांची योग्यता अजमावण्याचा प्रयत्न केला आहे. अतिउच्च उत्पादन क्षमतेचा विचार करुण लोकांच्या आर्थिक जीवनाचे नियोजन करणे तसेच खासगी उत्पादकांना कोणतीही आडकाठी न करता आणि संपत्तीचे वाटप होईल. अशा रीतीने आर्थिक नियोजन करणे हे सरकारचे दायित्व आहे. असे त्यांनी नमूद केले होते. डॉ. आंबेडकरांच्या म्हणण्यानुसार आर्थिक लोकशाही प्रस्थापित करण्यासाठी आर्थिक धोरण आणि कार्यक्रम हे राज्य घटनेचा अविभाज्य भाग असला पाहिजेत. शेतीचे मोठ्या उद्योगांचे राष्ट्रीयीकरण, प्रत्येक नागरिकांसाठी सक्तीची विमा योजना आणि आर्थिक प्रगतीला हातभार लावण्यासाठी खासगी उद्योगकांना वाव देण्याच्या आवश्यकतेचा अंतर्भाव असायला हवा. हे कार्यक्रम शाश्वत होण्यासाठी त्यांना राज्यघटनेत मूलभूत गोष्टींचा दर्जा असायला हवा. म्हणजे अशा कार्यक्रमांना विरोध असलेला राजकीय पक्ष सत्तेवर आला, तरी त्याला हे कार्यक्रम रद्द करता येणार नाहीत. या योजनेला डॉ. आंबेडकरांनी “घटनात्मक शासकीय समाजवाद” असे नाव दिले.

श्रमविभाजन बाबात विचार:-

जाती व्यवस्था आणि अस्पृश्यतेसारख्या सामाजिक आजारांचे आर्थिक पैलू उलगडून दाखविणे, हे डॉ. आंबेडकरांचे आणखी एक विद्वत्तापूर्ण कार्य होय. श्रमविभागाच्या तत्त्वानुसार महात्मा गांधींनीही जाती व्यवस्थेचे अस्तित्व स्वीकारले होते. मात्र आंबेडकरांनी ‘जातींचा उच्छेद’ या आपल्या पुस्तकात त्यावर त्यांनी कडाडून टिका केली होती. जाती व्यवस्थेमुळे केवळ श्रमाची विभागणी केली गेली नसून, श्रमिकांचीच विभागणी केली गेली आहे. हे त्यांनी निदर्शनास आणून दिले. डॉ. आंबेडकरांचा जाती व्यवस्थेवरील हल्ला हे केवळ उच्चवर्णीयांच्या वर्चस्ववादाला दिलेले आव्हान नव्हते, तर आर्थिक विकासाशी त्यांच्या मांडणीचा जवळचा संबंध होता. जाती व्यवस्थेमुळे श्रमाची आणि भांडवलाची गतिशीलता कमी झाली असून, त्याचा देशाच्या अर्थव्यवस्थेवर आणि विकासावर प्रतिकूल परिणाम झाला आहे. असे डॉ. आंबेडकरांचे मत होते.

शेती संबंधी विचार:-

शेती व्यवस्थेचा संबंध त्यांनी समाजव्यवस्थेशी जोडला होता. ग्रामिण भागातील जातीवर अधारित समाज व्यवस्थेचे कारण त्यांनी ग्रामीण आर्थिक व्यवस्थेमध्ये शोधले होते. त्यामुळेच जातीवर अधारित समाजव्यवस्था बदलायची, तर त्यासाठी शेतीमध्ये परिवर्तन घडवायलागे. शेतीला उद्योग मानून पायाभूत सुविधा पुरवून शेतकऱ्यांचा आर्थिक विकास झाला पाहिजे. शेतकरी आर्थिक समृद्ध झाला तर शेतमजूर आणि शेतीशी निगडित सर्वस घटकाला या आर्थिक सक्षमतेचा फायदा होईल. आर्थिक स्रोत तळागाळापर्यंत झिरपले म्हणजे ग्रामीण भागाच्या मानसिकतेत सकारात्मक बदल घडतील. हे बदल सामाजिक परिवर्तनासाठी पोषक ठरतील. आर्थिक विषमता ही जातीय व्यवस्थेला पूरक व पोषक ठरते. आर्थिक विषमता जितकी कमी होईल, तितकी जातीय भेदभावाची दरी कमी होईल, असे त्यांना वाटत होते. शेतीसाठी जमीन व पाणी हे मुख्य घटक आहेत. पाण्याशिवाय शेतीचा विकास अशक्य आहे. शेतकऱ्याला शाश्वत पाणी मिळणे गरजेचे आहे. पाण्याशिवाय उत्पादकता वाढणे अशक्य आहे. शेतकऱ्यांचा आर्थिक स्तर उंचावणे शक्य नाही. हे त्यांनी ब्रिटीश सरकारच्या निदर्शनास आणून दिले होते. शेतीला शाश्वत पाणी पुरविण्यासाठी नदीच्या पाण्याचे नियोजन झाले पाहिजे. देशात घडणारे दुष्काळ हे मानवनिर्मित आहेत. दुष्काळ हटवायचा तर दुष्काळात पाण्याचे नियोजन करावे. जिरायत शेती, बागायती करण्याचे प्रयत्न वाढवावेत. शेती व शेतमजूर समृद्ध झाला तरच देश समृद्ध होईल. असे मौलिक विचार त्यांनी मांडले. पाण्यासंदर्भात केवळ विचार व्यक्त न करता त्यांनी ब्रिटीश सरकारला, नदीच्या खोऱ्यातील पाण्याच्या नियोजनाची योजना सादर केली. ही योजना ‘दामोदर खोरे परियोजना’ म्हणून ओळखली जाते. आपल्या शासनाने १९९६ मध्ये कृष्णा, तापी, गोदावरी, तापी, नर्मदा अशी खोऱ्यांची विभागणी केली. यावरून डॉ. बाबासाहेब यांच्या दूरदर्शीपणाची लांबी व खोली लक्षात येते.

चलनाच्या सुवर्ण विनिमय पध्दतीवरील विचार:-

आपल्या “प्रॉब्लेम ऑफ द रुपी” या पुस्तकात रुपयाच्या अवमूल्यनावर आंबेडकरांनी त्यांचे विचार मांडलेले आहेत. स्वतंत्र भारताचे चलन हे सोन्यात असावे. असा अर्थतज्ञ लॉर्ड कान्स यांनी केलेला दावा आंबेडकरांनी खोडून काढला होता. त्याऐवजी सुवर्ण विनिमय परिमाण अमलात आणावे, अशी शिफारस आंबेडकरांनी केली. त्यासंदर्भात सन १९२५ साली स्थापन केलेल्या हिल्टन यंग आयोगापुढे त्यांनी साक्षही दिली. त्यानंतर सन १९३५ साली भारतीय रिझर्व बँकेची स्थापना करण्यात आली. भारताच्या मूलभूत आर्थिक विचारांचा पाया देखील आंबेडकरांच्या आर्थिक विचारांवर घातला गेला.

लंडन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स येथे त्यांच्या ‘द प्रॉब्लेम ऑफ द रुपी’ प्रबंधावरून प्रा. जॉन केन्स यांच्याशी मतभेद झाले होते. चलन आणि संबंधित विषयावर त्यावेळी प्रा. केन्स हे जागतिक पातळीवरील अंतिम अधिकारी समजले जात. प्रा. केन्स हे चलनाच्या मूल्यासाठी सुवर्ण विनिमय पध्दतीचाच अवलंब करायचास हवा. या मताचे होते. सुवर्ण विनिमय पध्दतीत देशाच्या चलनाच्या मूल्याची सांगड ही सोन्याच्या मूल्याशी घातली जाते. या पध्दतीचा अवलंब करणारे देश आपल्या कागदी चलनाचे रुपांतर निश्चित दराने सोन्यामध्ये करून ठवतात. तसेच अशा देशांत सोन्याची किंमत सरकार निर्धारित करते. परंतु सुवर्ण प्रमाण पध्दतीत मात्र प्रत्यक्ष चलनात काही प्रमाणात सोने वापरले जाते. पारतंत्र्यातील भारतात सुवर्ण विनिमय पध्दतीने रुपयाची हाताळणी केली जावी असे ब्रिटीश सरकार आणि प्रा. केन्स व इतरांचे मत होते. आंबेडकरांचे म्हणणे होते की, सुवर्ण विनिमय प्रमाण पध्दतीत चलनस्थैर्य येऊ शकत नाही. प्रा. केन्स आणि त्यांच्या मताचा पुरस्कार करणाऱ्या इतरांना वाटत होते की सुवर्ण विनिमय प्रमाण पध्दतीत रुपयाची किंमत आपोआपच स्थिर होऊ शकेल. आंबेडकरांना ते अमान्य होते. आपले मत सिध्द करण्यासाठी बाबासाहेबांनी इ. स. १८०० ते १८९३ या काळातील चलनमूल्यांचा धांडोळा घेतला. त्यातून

मिळालेल्या दाखल्यांच्या आधारे त्यांनी साधार दाखवून दिले की, भारतासारख्या अविकसित देशात सुवर्ण विनिमय पध्दती अयोग्य आहे. शिवाय या वध्दतीत चलनवाढीचाही धोका असतो असा युक्तिवाद त्यांनी केला आणि ब्रिटिश सरकारवर थेट आरोप केला. आंबेडकरांच्या मते सुवर्ण विनिमय पध्दतीचा अवलंब करून ब्रिटिश सरकार रुपयाची किंमत कृत्रिमरित्या चढी ठेवत आहे. आंबेडकरांनी रुपयाच्या अवमूल्यनाची मागणी केली. रुपयाची सर्वसाधारण क्रयशक्ती जोपर्यंत आपण स्थिर करीत नाही तोपर्यंत रुपयाची किंमत अन्य कोणत्याही मार्गाने स्थिर होऊ शकत नाही. विनिमय पध्दतीत चलनाच्या दुखण्याची लक्षणे तेवढी कळू शकतात, तीत उपचार होऊ शकत नाहीत. ब्रिटिश सरकारने चलनाचा तिढा सोडवण्यासाठी रॉयल कमिशनची स्थापना केली. या कमिशनसमोर बाबासाहेबांनी दिलेल्या साक्षीत आपल्याला दोनच गोष्टी विचारात घ्याव्या लागतील. एक म्हणजे आपला विनिमयाचा दर आपण निश्चित करावा का? आणि केला तर अन्यांच्या तुलनेत त्याचे गुणोत्तर काय असावे? हे दोन प्रश्न मांडले. या वादात बाबासाहेबांनी विनिमय दरनिश्चितीपेक्षा भाववाढ नियंत्रणास महत्व दिले. बाबासाहेबांनी त्यावेळी यासंदर्भात जे काही लिखाण केले, प्रश्न उपस्थित केले, त्यातूनच अर्थव्यवस्थेच्या अत्यंत केंद्रस्थानी असलेली 'रिझर्व बँक ऑफ इंडिया' ही एक संस्था जन्माला आली. भारतीय रिझर्व्ह बँकेची स्थापना डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या विचारांवर झालेली आहे.

स्वदेशी-विदेशी मालाबद्दल विचार:-

स्वदेशी माल उत्पन्न करून हा दरिद्र देश सधन होईल अशी प्रवचने सांगणाऱ्या तारवठलेल्या स्वदेशी अर्थशास्त्रज्ञांनी लक्षात घ्यायला हवे की, परदेशी माल आयात होते याचे कारण तो कमी किमतीत मिळतो. तसाच माल स्वदेशात उत्पन्न होत नाही. याचे कारण तो अधिक भावाचा पडल्यामुळे व्यापारात परदेशी मालापुढे त्याचा टिकाव लागत नाही. त्याचा टिकाव लागणारा म्हणून परदेशी मालास अटकाव करा. या महातंत्राचा जप चालला आहे. पण परदेशी मालास अटकाव झाल्यास लोकांस अधिक भावाचा स्वदेशी माल विकत घेणे भाग पडेल याचा विचार करावा कोणी? असे केल्याने देशाचे कल्याण होईल, असे म्हणण्याऐवजी देशातील भांडवलवाल्यांचे कल्याण होईल. कारण अनियंत्रित व्यापार पध्दतीत मिळत. असलेला स्वल्प भावाचा माल नियंत्रित व्यापक पध्दतीत गोरगरीबांना अधिक दाम देउन घ्यावा लागणार आहे. यात त्यांची होणारी नागवण 'स्वदेशी' या लाडक्या शब्दाने भरून निघेल असे मानून ते समाधान पावतील असे संभवत नाही.

कर निर्धारण आणि कर उत्पन्नांचे वाटप:-

ब्रिटिश राजवटीतील सरकार आणि प्रांतीय सरकारांमधील कर निर्धारण आणि कर उत्पन्नांचे वाटप या विषयावर आंबेडकरांनी पीएन्. डी. शोधप्रबंध कोलंबिया विद्यापीठात सादर केला होता. त्या प्रबंधात त्यांनी कर उत्पन्न वाटपात कशी सुधारणा करता येईल त्यावर विचार मांडले होते. त्यांच्या या संशोधनाच्या आधारावरच भारतीय करनिर्धारण आणि कर उत्पन्नांचे केंद्र आणि राज्यातील वाटपाचे सूत्र तयार करण्यात आले होते. १३ व्या योजना आयोगाने सुध्दा आंबेडकरांच्या कर उत्पन्न वाटपाच्या तत्वावर धोरणे आखली आहेत.

सारांश:-

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे राजकीय विचार आज सर्वांना ज्ञात आहेत. पात्र बाबासाहेबांचे आर्थिक विचार देखील देशाच्या अर्थव्यवस्थेला पुढे आणण्यासाठी खूप महत्वाचे आहेत. शेतकऱ्याबाबत मांडलेले विचार मोलाचे आहेत. शेतकऱ्यांबाबत विचार मांडतांना त्यांनी आपल्या समोर सर्वसामान्य शेतकऱ्यांचा व शेतमजुरांचा विचार करून मांडलेले आहेत. त्यांचे चलनाच्या सुवर्णमानाबाबतचे विचारही खूप मोलाचे आहेत.

संदर्भसूची:-

1. आर्थिक विचारांचा इतिहास — प्रा. रायखेलकर.
2. महामानव डॉ. भिमराव रामजी आंबेडकर — डॉ. राजवंश गायकवाड, डॉ. ज्ञानराज काशिनाथ
3. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी स्थापन केलेला स्वतंत्र मजूर पक्ष जडण घडण आणि धोरण — प्रा. कीर्ती विमल.
4. महामानव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर — प्रा. सुरवाडे विजय.

डॉ. भिमराव अंबेडकर के शिक्षा संबंधी विचार और कार्य

प्रा. डॉ. राजकुमार पंडितराव जाधव

हिंदी विभाग, वसंतराव काले महाविद्यालय, ढोकी ता.जि. उस्मानाबाद

प्रास्तविक :-

मनुष्य जीवन में शिक्षा का स्थान सर्वोपरि है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है। अगर शिक्षा लक्ष्य की पूर्ति नहीं करती तो वह शिक्षा किस काम की। शिक्षामनुष्य की तीसरी आंख कहलाती है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य अज्ञान से ज्ञानी होता है, अंधकार से प्रकाशमय में हो जाता है। डॉ. अंबेडकर के स्पष्ट विचार थे कि, "जो शिक्षा आदमी को योग्य ना बनाए, समानता और नैतिकता ना सिखाए, वह सच्ची शिक्षा नहीं है। सच्ची शिक्षा तो समाज में मानवता की रक्षा करती है, आजीविका का सहारा बनती है, आदमी को ज्ञान और समानता का पाठ पढ़ाती है।" डॉ. भिमराव अंबेडकर को विश्व स्तर पर पहचान दिलाने में उनके लेखन का अहम योगदान है। उस समय एक दलित समाज के कार्यकर्ता तथा महानायक के रूप में सिर्फ दलित समाज ही उनको देख रहा था।

शिक्षा का उद्देश्य :-

डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर के सामाजिक तथा दार्शनिक विचार मानवता पर आधारित है। उनके सामाजिक विचारों में मानवीय गरिमा और आत्मसम्मान का स्थान सर्वोपरि है डॉ. अंबेडकर शिक्षा के माध्यम से ही समाज में न्याय समानता, बंधुभाव, स्वतंत्रता और निर्भयता स्थापित करना चाहते थे। उनका कहना था कि नैतिक मूल्यों का विकास अच्छी शिक्षा के माध्यम से ही संभव है। शिक्षा समाज में स्थिरता लाने के लिए महत्वपूर्ण सहयोगी साबित होती है। वे बौद्ध दर्शन से प्रभावित थे लेकिन सभी मनुष्यों में नैतिकता के विकास के पक्षधर थे। उन्होंने शिक्षा के उन्हीं उद्देश्यों को सही बताया जो मानवीय सुख, समृद्धि और सामाजिक विकास की तार्किक प्रसंगिकता में सहयोगी हो। शिक्षा को रोजगार से जोड़ने में भी पक्षधर थे। व्यक्ति का अच्छा चरित्र व्यवहार तार्किक समझ शिक्षा पर ही आधारित है। उनके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य वही है जो स्वयं उनके जीवन और सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विचारों में है वे तार्किक और वैज्ञानिक शिक्षा की पक्षधर हैं।

डॉ. अंबेडकर के शिक्षा संबंधी विचार :-

डॉ. भिमराव अंबेडकर ने दलितों के लिए हमेशा कार्य किया है। दलितों की शिक्षा के बारे में वे हमेशा चिंतित रहते थे। उन्होंने अपने कार्यों से आधुनिक भारत के इतिहास को प्रभावित किया। आधुनिक भारत के शिक्षाविदों में रविंद्रनाथ टैगोर, महात्मा गांधी, महर्षि अरविंद, स्वामी दयानंद, मदन मोहन मालवीय आदि विद्वान हैं। मैं 1924 बहिष्कृत हितकारिणी सभा का गठन हुआ। उस समय से डॉक्टर अंबेडकर ने शिक्षा के क्षेत्र में काम करना शुरू किया। बहिष्कृत हितकारिणी सभा में खासकर पिछड़े वर्गों की शिक्षा को प्राथमिकता दी और उनके लिए कॉलेज, हॉस्टेल, पुस्तकालयों का निर्माण किया। सभा ने छात्रों के लिए कॉलेज, हॉस्टेल, पुस्तकालयों का निर्माण किया। सभा ने छात्रों के लिए 'सरवस्ती बेलास' नामक मासिक पत्रिका का निर्माण किया। बेलगांव और सोलापुर में छात्रावास का निर्माण किया साथ ही साथ मुंबई में मु 1925 फ्त अध्ययन केंद्र, हॉकी क्लब, और दो छात्रावास खोले। उन्होंने 1928 'डिप्रेशन क्लास' एजुकेशनल सोसायटी का निर्माण किया। समाज में पिछड़े लोगों के लिए मैं उच्च शिक्षा का प्रचार प्रसार करने के लिए लो 1945 कशैक्षिक समाजकी स्थापना की। लोक शैक्षिक सामाजिक संस्था ने अनेक स्कूल और कॉलेज खोले। अनेक छात्रावासों के लिए इस संस्था ने अर्थसहाय्य भी किया है।

डॉ. अंबेडकर ने केवल शिक्षा के क्षेत्र में ही काम नहीं किया बल्कि विधि, अर्थशास्त्र, संविधान, राजनीति आदि क्षेत्रों में भी मौलिक कामकाज किया है। उनका कहना था कि लोगों का जीवन स्तर सुधारने के लिए शिक्षा ही सबसे महत्वपूर्ण है। उनका मूलमंत्र ही था कि शिक्षित बनो, संगठित रहो, संघर्ष करो, उनके शिक्षा संबंधी सभी सिद्धांतों का

प्रयोग उन्होंने निर्माण किए सभी शैक्षिक संस्थाओं में देखने के लिए मिलता है। पढ़ा-लिखा व्यक्ति ही अपने वर्ग जाति के लिए तथा उनके हितों के लिए प्रयत्नरत रहता है। शिक्षित व्यक्ति अपने वर्गीय लोगों को संगठित करता है परिणाम स्वरूप वहां पर संघर्ष के लिए प्रेरणा भी मिलती है। डॉ. भिमराव अंबेडकर ने कहा कि, "शिक्षा वह है जो व्यक्ति को निडर बनाए, एकता का पाठ पढ़ाए, लोगों को अधिकारों के प्रति सचेत करें, संघर्ष की सीख दे और आजादी के लिए लड़ना सिखाए।" ² शिक्षा अगर उपरोक्त लक्ष्यों को पूरा नहीं करती तो वह निरर्थक है। शिक्षा के बारे में उनके स्पष्ट विचार थे कि, "जो शिक्षा आदमी को योग्य न बनाए, समानता और नैतिकता न सिखाए, वह सच्ची शिक्षा नहीं है, सच्ची शिक्षा तो समाज में मानवता की रक्षा करती है, आजीविका का सहारा बनाती है, आदमी को ज्ञान और समानता का पाठ पढ़ाती है।" ³ सच्ची और सही शिक्षा ही समाज में जीवन का सृजन करती है।

स्त्री शिक्षा :-

डॉ. अंबेडकर ने ब्राह्मणवाद को भारतीय समाज की समस्या माना है। स्त्रियों की खराब स्थिति को ब्राह्मणवादी ही जिम्मेदार है। ऐसा उनका मानना था। सती प्रथा भी ब्राह्मणवाद की देन है। विधवा पुनर्विवाह को भी रोकने का काम ब्राह्मणवाद ने किया। वैदिक काल खंड में महिलाओं को अनेक अधिकार थे तत्पश्चात उनकी स्थिति खराब होती गई। मनुस्मृति ने औरतों का दर्जा नौकरों से भी नीचे कर दिया। महिलाओं को शिक्षा से वंचित रखा गया। इसके बारे में प्रशांत कांबले लिखते हैं, "लड़के ने शिक्षा ली तो वह अकेला शिक्षित होता है किंतु लड़की शिक्षा लेते हैं तो वह परिवार तथा पास-पड़ोस में रहने वाले लोगों को शिक्षित बना देती है।" ⁴ उन्होंने महिलाओं के समान अधिकारों को लेकर वकालत भी की। उन्होंने एक ही विवाह को अनुमति देने का हिंदू विवाह अधिनियम बनाया, इसी अधिनियम के तहत महिलाओं को संपत्ति के अधिकार एवं उत्तराधिकार के अधिकार का प्रावधान किया गया। इसके अनुसार स्त्री और पुरुष को कानून के सामने हमेशा समान माना जाएगा उन्होंने सभी रीतिरिवाजों की भर्त्सना की जो स्त्री की - समानता के विरोधी थे।

डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी और मदन मोहन मालवीय द्वारा हिंदू विवाह अधिनियम का विरोध किया। इसके बावजूद यह बिल पास हुआ और यह स्त्री-पुरुष समानता के लिए किये जा रहे महिला संघर्ष के इतिहास की सबसे बड़ी जीत थी। हिंदू विवाह अधिनियम के कारण डॉ. अंबेडकर भारत में स्त्रियों के सबसे बड़े हितैषी कहे जाते हैं। जिसके कारण भारतीय संविधान में महिलाओं के साथ भेदभाव के खिलाफ उचित प्रबंध किए गए हैं, उन्हें समानता का दर्जा देने का प्रावधान किया गया है। महिलाओं को अनिवार्य रूप से शिक्षा मिलनी चाहिए ऐसा उनका कहना था। उनका कहना था कि महिला और पुरुष दोनों को अलग-अलग प्रकार की शिक्षा देनी चाहिए-। महिलाओं को मैट्रिकुलेशन तक की शिक्षा देनी चाहिए, ऐसा उनका मानना था शिक्षा के बाद महिलाएं गृह विज्ञान की चीजें पढ़ें। जिसके कारण वह घर परिवार अच्छा-खासा चलाएं। संविधान सभा के वे जब अध्यक्ष थे तब उन्होंने स्त्री पुरुष समानता के प्रति अनेक प्रावधान किए हैं। जिसके कारण आजाद भारत में आज स्त्री-पुरुष समानता मजबूती से पेश आ रही है।

धार्मिक शिक्षा :-

आधुनिक भारत के अधिकांश शिक्षाविदों ने धर्म और धार्मिक शिक्षा के बारे में अपने विचार स्पष्ट रूप से सामने नहीं रखे हैं, किंतु डॉ. अंबेडकर का रुख कुछ अलग ही था। अपने समय में हिंदू समाज के सबसे विवादित व्यक्तित्व के रूप में वे उभर चुके थे। स्वयंके प्रति जीवन भर उन्होंने आलोचनाएं भी सुनी लेकिन कभी उनकी ज्यादा चिंता तक नहीं की। डॉ. अंबेडकर हमेशा सही बात करते रहे। उन्हें भगवान की सत्ता पर भरोसा नहीं था। वे भारतीय समाज को धर्म के स्थान पर समता स्वतंत्रता और बंधुत्व के स्थान पर पुनर्गठित करना चाहते थे। उन्होंने सभी धर्मों की अच्छाइयों को स्वीकार किया है लेकिन बौद्ध धर्म के प्रति उनकी दिलचस्पी अधिक थी। डॉक्टर अंबेडकर ने यह स्वीकार भी किया कि मैंने सभी सिद्धांत अपने गुरु गौतम बुद्ध से लिए हैं। उनके दर्शन में स्वतंत्रता और समानता के लिए जगह सुरक्षित है किंतु आगे चलकर उन्होंने कहा कि असीमित स्वतंत्रता समानता का नाश कर देती है और असीमित समानता में स्वतंत्रता के लिए कोई जगह नहीं बचती। वे मानते थे कि सिर्फ कानून स्वतंत्रता और समानता सुनिश्चित नहीं कर सकता। समानता और स्वतंत्रता के असली रक्षक के रूप में उन्होंने बंधुत्व को सबसे ऊपर रखा बंधुत्व सिखाने में धर्म से अच्छा कोई माध्यम नहीं। इसी कारण शिक्षा में इन मूल्यों को शामिल किया जाना जरूरी है।

दलित शिक्षा पर विशेष बल :-

डॉ. आंबेडकर ने मुंबई लेजिस्लेटिव काउंसिल में दलितों की शिक्षा के बारे में कहा, प्रेसीडेंसी की जनगणना रिपोर्ट ने विभिन्न जातियों में शिक्षा के विकास की तुलना के लिए जनसंख्या को चार वर्गों में बांटा है। पहले वर्ग में विकसित हिंदू आते हैं। दूसरे वर्ग में मध्यवर्ती हिंदू आते हैं। इस वर्ग में ब्राह्मण तथा अन्य जातियां आती है इसके आगे वे कहते हैं, "तीसरा वर्ग पिछड़ी जातियों का है जिसमें दलित वर्ग, पहाड़ी आदिम जातियां और अपराधी आदिम जातियां शामिल है। चौथे वर्ग में मुसलमान आते हैं शिक्षा के मामले में इन विभिन्न जातियों की तुलनात्मक प्रगति में बहुत भारी असमानता है।" ⁵ देश में व्याप्त सामाजिक समानता को लेकर डॉ. आंबेडकर बहुत ही चिंतित थे। उनका कहना था कि भारत देश विभिन्न जनजातियों से बना है इन सभी जातियों का समाज में स्थान और विकास एक जैसा नहीं है आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से पिछड़ी जनजातियां जिस तरह बाधित है वैसे दूसरी नहीं शिक्षा के बारे में डॉ. शैला चौहान लिखती है, " व्यक्ति, समाज से ही देश के निर्माण में चार चांद लगते हैं। हमारी पहचान भी तो हमारा देश होता है। समाज और राष्ट्रहित के हित में आदर्श संस्कारित विकसित नागरिकों का निर्माण करना है यह सब विद्यालयों के माध्यम से ही होगा।" ⁶ दलित छात्रों के लिए उच्च शिक्षा मिलनी चाहिए इस पर डॉ आंबेडकर ने विशेष बल दिया साथ ही साथ दलित विद्यार्थियों के लिए तकनीकी शिक्षा छात्रवृत्ति तथा आरक्षण के लिए अनेक कार्य अंबेडकर ने किये है। डॉ. गजानन हेराळे लिखते हैं, " डॉ. बाबासाहेब से बारम्बार कि बार प्रश्न पूछा जाता-, आपने इतनी उच्च शिक्षा कैसे प्राप्त की तब वे कहते हैं, इसकी प्रमुख वजह है मेरे ऊपर हुए संस्कार।" ⁷

निष्कर्ष :-

शिक्षा व्यक्ति को अज्ञान से ज्ञानी बनाती है अंधकार से प्रकाश में बनाती है प्राथमिक शिक्षा तथा उच्च शिक्षा को लेकर डॉक्टर अंबेडकर ने अनेक कार्य किए है परिणाम स्वरूप आज दलित पिछड़ी जनजातियों में हम देखते हैं कि पढ़े लिखे लोगों की संख्या ज्यादातर मात्रा में देखने को मिलती है-

संदर्भ सूची :-

- 1) आंबेडकर : हाशियाकृतसमाज के शिक्षा शास्त्री (फॉरवर्ड प्रेस)
- 2) आंबेडकर : हाशियाकृतसमाज के शिक्षा शास्त्री - मीनाक्षी मीणा (21 Oct. 2021)
- 3) आंबेडकर : हाशियाकृतसमाज के शिक्षा शास्त्री - मीनाक्षी मीणा (21 Oct. 2021)
- 4) बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर, संपूर्ण वांग्मय, खंड - 3, पृष्ठ 58
- 5) बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर, संपूर्ण वांग्मय, खंड - 3, पृष्ठ 57
- 6) महामानवाचा महाग्रंथ- संपादक डॉ दुष्यंत कटारे, पृष्ठ 87
- 7) महामानवाचा महाग्रंथ पृष्ठ ,संपादक डॉ दुष्यंत कटारे -38

माडिया आदिवासींच्या समस्या सोडविणारी एकमेव संस्था – लोकबिरादरी प्रकल्प

प्रा.संजय उत्तमराव उगेमुगे

चिंतामणी महाविद्यालय पोंभुर्णा डॉ. प्रकाश आर शेंडे एस.पी. कॉलेज, चंद्रपूर जि.चंद्रपूर पिन
sanjayugemuge80@gmail.com

सारांश : –

महारोगी सेवा समितीचाच एक भाग म्हणजे लोकबिरादरी प्रकल्प होय. हा प्रकल्प माडिया आदिवासींच्या उद्दारासाठी २३ डिसेंबर १९७३ रोजी हेमलकसा या ठिकाणी परम पुंज्य बाबा आमटेनी स्थापन केला. भामरागड परीसरातील माडिया आदिवासींमध्ये कुपोषण, रोगराई आणि कमालिची दारीद्रता ही पाचविला पुजलेली होती. ही माडिया जमात आजच्या युगाच्या ५० वर्षे मागे असलेली जमात होती. त्यांना मुख्य प्रवाहात आणण्याचे प्रमुख काम लोकबिरादरीने केलेले आहे. त्यांनी माडिया समाजाच्या उद्धार करण्याचा विडा उचलेला होता. त्यासाठी लोकबिरादरीतील संपूर्ण कार्यकर्त्यांनी आपल्या भौतिक सुखाला तिलाजंली देऊन या जमातिला मुख्य प्रवाहात आणण्यासाठी संपूर्ण जीवन खर्ची घातले. त्यासाठी संपूर्ण कार्यकर्त्यांनी आपल्या संसारावर मुळसीपत्रे ठेवून हे कार्य केले. हे संपूर्ण कार्यकर्ते हे बाबा आमटे यांच्या प्रेरणेतून नवनिर्माण झालेले कार्यकर्ते होते. त्यांनी केलेले कार्य हे इतिहासात आज अजराअमर झालेले आहे. त्याकाळी आदिवासी जमातीला शिक्षणाचा गंध नसल्यामुळे त्यांना पांढरपेक्षा लोकांकडून अक्षरशः नागावले गेले. त्यांचे मोठ्या प्रमाणात शोषण केले. त्यांना नानाप्रकारच्या शिव्याश्राप द्यायचे. या जमातीच्या अनेक समस्या होत्या. त्या समस्या सोडविण्याचे कार्य लोकबिरादरी प्रकल्पातर्फे करण्यात आले. त्यामुळे संपूर्ण माडिया आदिवासींच्या विश्वास लोकबिरादरी प्रकल्पावर बसला. त्यानंतरच्या काळात कोणत्याही समस्येचे निराकरण करण्यासाठी माडिया आदिवासी हे लोकबिरादरीकडे येऊ लागले. त्यामुळे माडिया आदिवासींचे माहेरघर हे एकमेव लोकबिरादरी प्रकल्प ही संस्था ठरली होती.

बिज संज्ञा : –माडिया आदिवासींसाठी लोकबिरादरी प्रकल्पाने केलेले कामगिरीचा आढावा घेणे. तसेच माडिया आदिवासींच्या विविध समस्यांचे निराकरण कशाप्रकारे केले त्याचा उहापोह करणे.

उद्देश : –

- १) माडिया आदिवासींचे शोषण थांबविणे.
- २) माडिया आदिवासींमध्ये जनजागृती घडवून आणणे.
- ३) माडिया आदिवासींमध्ये अज्ञान दूर करून त्यांच्यात शिक्षणाची सुरवात करणे.
- ४) माडिया आदिवासींना अज्ञान अंधश्रद्धा यांचा जंजाळयातून मुक्त करणे.
- ५) माडिया आदिवासींनी मुख्य प्रवाहात आणणे.
- ६) माडिया आदिवासींना शेती कशी करायची हयाबाबत माहिती देणे.
- ७) लोकबिरादरीतर्फे माडिया आदिवासींच्या अनेक समस्यांचे निराकरण करणे.

८) माडिया आदिवासी ही जमात जनावराप्रमाणे जीवन जगत आहे. त्यांना माणसात आणणे, हा मुख्य हेतू लोकबिरादरी प्रकल्पाचा होता.

९) माडिया आदिवासींना स्वच्छ पाणि व पोटापुरते अन्न कसे निर्माण करता, वा उपलब्ध करून कसे देता येईल यावर भर देणे.

१०) माडिया आदिवासींना प्रोट्रिनयुक्त अन्न धान्नाची माहिती देणे त्याद्वारे त्याचे कुपोषण कमी करणे

११) आरोग्य सेवा उपलब्ध करून देणे.

१२) माडिया आदिवासींचे राहणीमान उंचावणे व त्यांना माणसात आणणे हा मुख्या हेतू लोकबिरादरी प्रकल्पाचा होता.

लोकबिरादरी प्रकल्पाने केलेले कार्य: —

माडिया आदिवासींच्या अनेक समस्या व प्रश्न मार्गी लावण्याचे काम लोकबिरादरी प्रकल्पाने केले होते. सर्वात महत्वाची बाब म्हणजे आरोग्य सेवा ही होय. ही सर्वात पहिले लोकबिरादरी प्रकल्पाने केलेली महत्वाची सुधारणा होय. त्यांनी आरोग्य सेवा देऊन आदिवासींचा मुत्यूदर घटविण्याचे काम केले. कमालीचे त्यांच्या कुपोषण होते. त्यांनी केलेल्या कार्यामुळे माडिया आदिवासींची वयोमर्यादा ही वाढली.या ठिकाणी सेलेब्रल, मलेरिया, गॅस्ट्रो, कुपोषण स्क्वी विविध स्किनचे रोग तसेच अनेक जिवनसत्वाच्या अभावामळे, त्यांना जडलेले नानाविधी रोग, हे माडिया आदिवासींच्या जीवनाचे अविभाज्य अंग बनले होते. विविध रोगांसोबत झगडूनच त्यांना जीवन जगावे लागत. त्यांना रोगमुक्त करून सोडवणारी एकमेव संस्था म्हणजे लोकबिरादरी प्रकल्प होय. डॉ. प्रकाश आमटेनी अतिशय आवडीने आरोग्य सेवेचे काम केले. त्यांनी हा प्रकल्प उभा करून माडिया आदिवासींच्या जीवनातील अंधार नाहीसा करून त्यांच्या जीवनात प्रकाश आणण्याचे कार्य केले.माडिया आदिवासींना लोकबिरादरीने आरोग्य सेवा देऊन मुत्यूच्या दारातून त्यांना बाहेर काढण्याचे मुख्य कार्य लोकबिरादरी प्रकल्पाने केले आहे. लोकबिरादरी प्रकल्पाचे हे प्रसंशनीय कार्य हे जगतिक पातळीवर गेले. त्यांच्या ह्या कार्यामुळे त्यांना जागतिक पातळीचा रॅमन मॅगसेस पुरस्कार जाहिर केला. डॉ. प्रकाश आमटेना प्राप्त झाला तसेचअनेक त्यांना छोटे मोठे पुरस्कार प्राप्त झाले.आहेत

डॉ. प्रकाश आमटेनी माडिया आदिवासींना आरोग्यसेवा प्रदान तर केलीच त्याचबरोबर त्यांच्या आरोग्याची काळजीसुद्धा घेतली स्वच्छ आणि निर्मळ पाणि त्यांना भेटण्यासाठी त्यावेळी आलेल्या आदिवासी आयुक्तां कडून प्रत्येक गावात बोरवेल खनन्याची विनंती केली. कारण या भागात लोहाचे प्रमाण जादा असल्याने येथील आदिवासी वारंवार अनेक रोगाना बळी पडत.तसेच या आदिवासींना कितीतरी अंतरावरून पायपिट करून पाणि आणावे लागत होते.हॅन्डपंप जर खनला तर त्यांचा हा त्रास वाचणार होता तसेच त्यांचे आरोग्य चांगले राहत होते.साधे आपण कपडे सुद्धा धुतले तरी त्यांच कलर हा लालसर झालेल्या दिसत होता. या उद्देशाने येथील लोकांचे आरोग्य चांगले राहण्यासाठी स्वच्छ पाणि फार उपयोगी आहे. त्यांची नितांत गरज आहे. हे पटवून दिले तेव्हा आजूबाजूच्या गावात बोरवेल खोदण्यात आले.आता त्यांच्या मेन्टनसची समस्या निर्माण झाली होती. तेव्हा लोकबिरादरी प्रकल्पातील हॅन्डपंप बिघडला तेव्हा डॉ. प्रकाश आमटे व लोकबिरादरी प्रकल्पातील कार्यकर्त्यांनी तो दुरस्त केला होता. तो अनुभव पाठिशी असल्याने हे दुरस्ती करण्याची जबाबदारी डॉ. प्रकाश आमटे व लोकबिरादरी प्रकल्पातील कार्यकर्त्यांनी उचलली आणि आपले कार्य त्यांनी निष्कामपणे पूर्ण केले कोणत्याही गावातील हॅन्डपंप बिघडला तर त्याचा निरोप लोकबिरादरी प्रकल्पात येत असत. त्यानंतर लोकबिरादरी प्रकल्पातील कार्यकर्त्ये धावून जावून बिघडलेले हॅन्डपंप दुरस्त करीत. काही दिवसानी हे केलेले काम त्याच गावातील तरूणाकडे देण्यात आले त्यांना ह्याबाबतीत प्रक्षिण देण्यात आले.

लेकबिरादरी प्रकल्प हे आता माडिया आदिवासींचे माहेरघर व न्यायालय बनले होते. कारण माडिया आदिवासींचा विश्वास डॉ. प्रकाश आमटेवर एवढा बसला होता की, बारीक सारीक खटले वादविवाद आता लोकबिरादरीत सोडवायला येऊ लागले. कारण हे लोक गरीब असल्यामुळे न्यायालयात जावू शकत नव्हते कारण न्यायालय हे दूर व खर्चिक असल्याकारणाने त्यांनी आपल्या समाजातील पंचामार्फत सोडवत असत त्या ठिकाणी जर त्यांचे समाधान झाले नाही तर ते

लो प्रकाशभाऊंकडे येत होते. त्यामुळे लोकबिरादरीमार्फत लोकअदालत चालून माडिया आदिवासींचे वादविवाद, तटे खटले सोडविल्या जात असत. लोकबिरादरी प्रकल्पात सोडविलेले खटले पुन्हा वापस न्याय मागण्यासाठी येते नव्हते. त्यांना डॉ. प्रकाश आमटे सांगितलेला न्याय मान्य होत होता. एवढा विश्वास डॉ. प्रकाश आमटेवर माडिया आदिवासींचा होता. या न्यायदान करण्याच्या क्रियेला पुढे लोकअदालत हे नामाभिधान प्राप्त झाले.

माडिया जमातीचे शेतीचे प्रश्न सोडविण्याचे कार्य लोकबिरादरी प्रकल्पाने केलेले दिसून येते. कारण माडिया आदिवासी कधीच चांगल्या प्रकारची शेती करित नव्हते. त्यांनी केलेली शेती ही जंगले साफ करून जाळून करित असत. कोणत्याही प्रकारची मशागत अथवा साधी नागरणी सुद्धा करित नव्हत कारण ते आपल्या जमिनिला माता समजत आत त्यामुळे पाहीजे त्या प्रमाणात त्यांना पिकपाणि होत नसत. त्यामुळे त्यांना पुरेसे अन्न मिळत नव्हते त्यांना अन्नासाठी सतत भटकावे लागत असत. माडिया आदिवासी अन्नाच्या बाबतीत स्वयंपूर्ण व्हावे हे स्वप्न लोकबिरादरी प्रकल्प बघत होता. याबाबत जर कोणी जनजागृती घडवून आणली असेल तर ती लोकबिरादरी प्रकल्पातील कार्य कर्त्यानी होय. यामध्ये दादा पांचाळ हे आघाडीवर होते. त्यांनी प्रत्येक गावात जावून एक एकर अथवा अर्धा एकर जमिन आपल्या ताब्यात घेवून प्रत्येक गावात विद्यार्थ्यांना सोबत घेवून जमिनीची मशागत कशी केली जाते. रोपे कशी प्रकारे उगवली जातात. आणि त्यांची जपानी पद्धतीने कशी भाताची पिके रावली जाते. याचे प्रात्येशिक त्यांनी करून दाखविले तसेच जास्तीत जास्त पिक कशा प्रकारे घेतल्या जाते याचीही माहिती लोकबिरादरी प्रकल्पाच्या लोकांनी दिली. त्यासाठी लोकबिरादरी प्रकल्पाने आदिवासींसाठी बिजधान्य कोठाराची निर्मिती करून प्रकल्पामार्फत शेतीत पेरायची बिजाई वाटल्या जात. तसेच अनेक प्रकारच्या पालेभाज्याच्या बियानाचे वाटप करण्यात येत असत. या मागिल कारण असे की आदिवासींना चांगले व्हिटयामिनयुक्त फळभाज्या मिळव्यात व त्याद्वारे माडिया आदिवासींचे कुपोषण नष्ट होईल हा त्यामागिल उद्देश होता. त्यामुळे अन्नासाठी भटकत असलेले माडिया आदिवासी स्थिरावली व अशा प्रकारे त्यांची असलेली अन्नाची गरज त्यांच्या जागृती निर्माण करून लोकबिरादरी प्रकल्पाने पूर्ण केली. लोकबिरादरी प्रकल्पातील शिकलेली मुले व कार्यकर्ते हे गावोगावी जावून त्यांच्यातील चालत आलेली रूढी, प्रथा, परंपरा, नष्ट करण्याचा प्रयत्न करित. त्यांनी गावातील चालत आलेले भगत, भूमक, बुवा अंगारे धुपारे करणारे विविध मांत्रिक याची सत्ता पूर्णता: बंद करण्याचा प्रयत्न केला. त्यात त्यांना यश प्राप्त होवून आता माडिया आदिवासी अंगारे धुपारे न करता लोकबिरादरी प्रकल्पात सुरू असलेल्या दवाखात येतात दुरस्त होऊन हासत हासत आपल्या घरी जातात. हे लोकबिरादरी प्रकल्पाच्या यशाच गमकच म्हणावे लागेल. लोकबिरादरी प्रकल्पातील प्रत्येक कार्यकर्त्यांमध्ये समस्याचे निराकरण करण्याचे सामर्थ्य होते. वनअधिकारी माडिया आदिवासींनकडून जादा काम करून घेत, पण त्यांना कामाचा मोबदला मिळत नव्हता. अशावेळी लोकबिरादरी प्रकल्पातील प्रकाशभाऊ व कार्यकर्त्यांच्या ठिकाणी जावून त्यांना न्याय देण्याचा प्रयत्न करित. सरकारच्या विविध योजना माडिया आदिवासींन पर्यंत पोहतच नव्हत्या. तेव्हा लोकबिरादरी प्रकल्पाने दखल घेवून कार्यकर्ते गावागावात जावून सरकारी योजनांची माहिती देत होते. तसेच त्या योजना माडिया आदिवासींना मिळवून देत होते. पोस्ट ऑफिस मध्ये येणारे पैसे कोणत्याना कोणत्याही कारणाने देत नव्हते. तेव्हा स्वतः प्रकाशभाऊ व त्यांचे कार्यकर्ते जावून त्यांना रक्कम अदा करून देत होते. लोकबिरादरी प्रकल्प हा आता माडिया आदिवासींची हलकी सलकी कामे सुद्धा करित होती. प्रकाशभाऊ व त्यांचे कार्यकर्ते हे काम करित असत. त्यामध्ये उंदराने अथवा उदरीने कातरलेल्या पैशाच्या नोटा होत त्या बदलून आणण्याची कामे स्वतः प्रकाशभाऊ व लोकबिरादरीचे कार्यकर्ते करित असत. तसेच त्यांच्या घडयाळी सुद्धा दुरस्त करण्याचे काम स्वतः प्रकाशभाऊ करित असत त्यांनी केलेली अनेक कामे त्यावेळी ही आदिवासींनसाठी लाखमोलाची होती.

निष्कर्ष : —

डॉ. प्रकाश आमटेना माडिया आदिवासींचा देवता व मसीहा मानल्या जाते. कारण माडिया आदिवासींच्या प्रत्येक प्रश्नाचे व प्रत्येक समस्येचे निराकरण लोकबिरादरी प्रकल्प करित असत. त्यामुळे लहान सहान कामे सुद्धा घेवून माडिया आदिवासीमोठया आशेने लोकबिरादरी प्रकल्पात येत असत. त्यांना हेच माहित होते की. प्रकाशभाऊच सर्व समस्या सोडविताता. तो वादविवाद किंवा

भांडण तंटे असो अथवा विवाहाचा काडिमोडी प्रसंगा असो या सगळ्या समस्या सोडविण्यासाठी आदिवासीना एक हक्काचे असे लोकबिरादरी प्रकल्पाच्या रूपाने हक्काचे घर प्राप्त झाले होते. माडिया आदिवासींना हेच माहित की दवाखाना म्हणजे प्रत्येक रोगाचे निदान करता येते. पण माडिया आदिवासींच्या गरजेपोटी प्रकाशभाऊंनी प्रत्याक्षात अनेक सर्जरी करूनी माडिया अदिवासींच्या दुःखावर फुक्कर घातलेली दिसून येते. डोळ्याचे ऑपरेशन असो अथवा मोडलेल्या हाडाचे असो कोणतेही ऑपरेशन करण्यास प्रकाशभाऊ सदैव तयार असत फक्त उद्देश एकच माडिया आदिवासींचे दुःख कमी करणे हेच होय. म्हणून प्रत्येकमाडिया आदिवासींच्या समस्या सोडविणारी एकमेव संस्था म्हणजे लोकबिरादरी प्रकल्प होय.

संदर्भ ग्रंथसूची : —

- १) प्रकाशवाटा — डॉ.आमटे प्रकाश — समकालीन प्रकाशन, पुणे, ७ एप्रिल २००९
- २) रानमित्र — डॉ.आमटे प्रकाश — समकालीन प्रकाशन, पुणे, २ आक्टोबर २००९
- ३) नेगलभाग १ — मनोहर विलास — प्रकाशक ग्रंथावली,मुंबई, १ जानेवारी १९९१
- ४) नेगल हेमलकसाचे सांगाती भाग २ — मनोहर विलास—प्रकाशक ग्रंथावली,मुंबई, ४जुलै २००३
- ५) समिधा — साधना आमटे — पॉप्युलर प्रकाशन,मुंबई २००१
- ६) एका नक्षलवादाचा जन्म — मनोहर विलास — श्रीविद्या प्रकाशन,पुणे, १५ ऑक्टोबर १९९२
- ७) तुम्हचे आम्हचे सुपरहिरो डॉ.प्रकाश आमटे—देशमुख दिपा,मनोविकास प्रकाशन,पुणे,२६जाने २०१५
- ८) एका अवलियाचा प्रपंच — ठाकूर अंजली — आनंदी सहवास प्रकाशन,नाशिक ४ एप्रिल २०१७
- ९)प्रकाशमार्ग — डॉ. प्रकाश आमटे — मेनका प्रकाशन, पुणे ७ऑगस्ट २०१७
- १०) द रिअल हिरो डॉ.प्रकाश बाबा आमटे —सोनार किरण आनंदी सहवास प्रकाशन,नाशिक ४ एप्रिल २०१७

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे आर्थिक विचार

डॉ. चेतना दत्तात्रय जगताप

कर्मवीर मामासाहेब जगदाळे महाविद्यालय, वाशी ता.वाशी जि. उस्मानाबाद

cdjagtap7@gmail.com

प्रस्तावना :-

१४ एप्रिल या सोनेरी दिवसाचे समाजाच्या आणि देशाच्या दृष्टिने अत्यंत महत्त्व आहे. देशातील कोटयावधी दीनदुबळ्यांसाठी तसेच देशासाठी हा दिवस फार आनंदादायी आहे. डॉ. आंबेडकरांनी उच्च शिक्षणासाठी २५ जूलै १९१३ रोजी अमेरिकेतील कोलंबिया विद्यापीठात प्रवेश केला. १९१६ इंग्लंडमध्ये लंडन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स अँड पॉलिटिकल सायन्स येथे एम.एस.सी. इकॉनॉमिक्स प्रवेश केला. १९२२-२३ मध्ये युनिव्हर्सिटी इन बॉन जर्मनीमध्ये डी.एस.सी. पदवी चा अभ्यास पूर्ण केला. म्हणजे एम.ए. , पीएच.डी. ,एल.एल.डी. ,डॉ. डीलिट, बार अँट लॉ. इत्यादी पदव्यांनी उच्चविद्या विभूषित बाबासाहेब आंबेडकर झाले.

डॉ. बाबासाहेबांनी जगातील सामाजिक शास्त्रांचा (अर्थशास्त्र, राज्यशास्त्र, समाजशास्त्र,मानववंशशास्त्र, धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, इतिहासशास्त्र आणि कायदाशास्त्र) सखोल अभ्यास केला त्याचबरोबर जगातील सामराज्यशाही, भांडवलशाही तसेच युद्ध, स्वा-या , लढाया आणि विविध क्रांत्यांचा वंशवादाचा जागतीक स्तरावर असलेल्या गुलामांच्या जीवनांचा अभ्यास केला. ज्ञानसंपन्नतेच्या शक्तीमुळेच व्यक्ती, समाज , राज्य आणि राष्ट्र महान बनत असते याची त्यांना पुरेपूर जाणीव झाली होती. त्यामुळे १८-१८ तास अभ्यास करून शोकडो वर्षाचा शिल्लक राहिलेला ज्ञानाचा बॅकलॉग डॉ. बाबासाहेब भरून काढत होते. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे जसे समाजसुधारक आहेत तसेच राजकीय नेते, राष्ट्रपुरुष, सच्चे राष्ट्रवादी आणि अखिल मानवांचे कल्याण चिंतनारे युगपुरुष आहेत. तसेच इतिहाससंशोधक, शिक्षणतज्ञ, अर्थतज्ञ,धर्मचिकित्सक, कायदा व जायशास्त्राचे पंडीत,घटनाकार त्याचप्रमाणे धम्मप्रवर्तक आहेत. अशा वेगवेगळ्या भूमिकांतून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे व्यक्तिमत्व पुढे येते.

अभ्यास विषयाची उद्दिष्ट्ये:- Objective of the study topic

१) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या आर्थिक विचारांचा अभ्यास करणे.

२) डॉ. आंबेडकरांच्या समाजवादी समाजरचना चा अभ्यास करणे.

संशोधन पध्दती:- Research Methodology

प्रस्तुत संशोधन द्वितीय साधन सामग्रीवर आधारीत असून त्यासाठी विविध पुस्तके राष्ट्रीय आंतरराष्ट्रीय जर्नल्स , विविध संकेत स्थळे ,मासिके इत्यादी दुय्यम साधनांचा वापर करून संशोधन अहवाल तयार केला आहे.

डॉ.बाबासाहेब म्हणजे भारताच्या नव्या उभारणीचे एक महान वैभव बनले होते. जगातील आदर्श समाज निर्माण करण्यासाठी त्यांनी लोकशाही शासनाचा स्वीकार केला. स्वातंत्र, समता,बंधुत्व, आणि न्याय ही डॉ.आंबेडकरांच्या तत्वज्ञानाची चार आर्यसत्य होती. यात चतुःसुत्रांचा अवलंब केल्याशिवाय येथील लोकशाहीला काही अर्थ उरणार नाही अशी त्यांची मुलभूत धारणा होती.

‘ एक व्यक्ती, एक मुल्य ’, ‘ एक राष्ट्र , एक भाषा ’ या संकल्पनेत अखंड मानवजात एक आहे, ही विश्वबंधुतेची जाणीव त्यांना होती. राजकीय लोकशाही असली तरीही त्याचे रूपांतर सामाजिक आणि आर्थिक लोकशाहीमध्ये झाले तरच जगापुढे हा देश टिकेल अन्यथा अडचणीत येईल या साठी त्यांनी जगाला शोभेल आणि भारताला आधुनिक काळात सर्व प्रकारच्या सुधारणा व सर्वांगिन विकास करता येईल अशी राष्ट्राला राज्यघटना दिली. भारतरत्न डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी राजकारण, कायदा , आंतरराष्ट्रीय संबंध, धर्म अशा विविधांगी विषयावर प्रकट चिंतन केले शिवाय त्यांचे आर्थिक विषयांवरील विचारही दूरगामी परिणाम करणारे आहेत. भारत आज आर्थिक स्थित्यंतराच्या उंबरठ्यावर उभा असताना डॉ. बाबासाहेबांच्या आर्थिक विचारांचे चिंतन करणे आवश्यक ठरते त्यासाठी हा प्रयत्न; डॉ. आंबेडकरांचे व्यक्तिमत्व अनेक पैलुंनी युक्त असले तरी त्यात एक समान धागा होता आणि तो म्हणजे आर्थिक हित पाहणारा बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय या त्यांच्या उक्तीतुनच त्यांचे आर्थिक विचार स्पष्टपणे दिसून येतात. डॉ. आंबेडकरांनी जाती व्यवस्थेरील हल्ला हे केवळ उच्चवर्णीयांच्या वर्चस्ववादाला दिलेले आव्हान नव्हते, तर आर्थिक विकासाशी त्याचा जवळचा संबंध होता. जाती व्यवस्थेमुळे श्रमाचे आणि भांडवलाची गतीशिलता कमी होऊन त्याचा देशाच्या अर्थव्यवस्थेवर आणि विकासावर प्रतिकूल परिणाम झालेला आहे असे त्यांनी प्रतिपादन केले. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचा मुळ अभ्यास विषय हा अर्थशास्त्र होता. त्यांच्या कारकीर्दीचे ढोबळमानाने दोन भागात विभाजन करता येते. १९२१ पर्यंत एक अर्थतज्ञ म्हणून त्यांनी केलेल्या लिखानाचा कालखंड असून, त्यानंतर दुस-या कालखंडात ते एक राजकीय नेते म्हणून उदयास आले आणि महानिर्वाणापर्यंत त्यांनी शोषित पिडित समाजासाठी उदंड कार्य केले. सर्वसामान्यांच्या दृष्टीने डॉ. आंबेडकर भारतीय घटनेचे शिल्पकार, उत्कृष्ट संसदपटु, बौद्धतत्वज्ञानाचे भाष्यकार,

प्रकांडपंडीत, दलितोद्धारक, विद्वान अशा भूमिका बजावल्या असा समज आहे परंतु त्यांची ' अर्थशास्त्रज्ञ' या नात्याने असणारी भूमिका दूर्लक्षिली जात नाही.

आर्थिक गुलामगिरीची समस्या :-

डॉ. आंबेडकरांच्या मते भारतातील ग्रामिण अर्थव्यवस्थेच्या स्वरूपात बदल झाल्याशिवाय आर्थिक गुलामगिरीच्या पाशातून शोषित, बंदिस्त समाजाची सोडवणुक करता येणार नाही. विशेषतः खेडी ही स्वयंपूर्ण व्हावीत असे त्यांचे मत होते. घटना समितीत भारतीय खेड्याविषयी आंबेडकरांनी काढलेले उद्गार म्हणजे ' भारतीय खेडी म्हणजे स्थानिक अहंकाराची डबकी, अज्ञानाची हिंस्त्र गुहा, कुपमंडुक मानसिकता आणि जातीयवादाचे अड्डे आहेत'. ग्रामिण भागातील जाती व्यवस्थेमुळे आर्थिक विकासास एक प्रकारची खीळ बसते. भारतीय अर्थव्यवस्थेचा शेती हा पाया असून ग्रामिण अर्थव्यवस्था शेतीवरच अवलंबून आहे. शेतजमिनीच्या मालकी बाबत कमालीचे केंद्रीकरण आहे. अशा प्रकारचे केंद्रीकरण ग्रामिण भागातील वरिष्ठ जातीकडे एकवटले आहे परिणामी कनिष्ठ जातीतील लोक परंपरेनुसार ठरवून दिलेली कामे करत असत. आर्थिक व सामाजिकदृष्ट्या प्रबळ असणा-या वर्गाच्या दबावामुळे श्रमिक शेतकरी यांचे आर्थिक शोषण होत असे अशा वर्गाना जर शैक्षणिक व आर्थिक सवलती मिळाल्या तर त्यांच्या जीवनमानात अमुलाग्र बदल होऊ शकेल. त्यांच्या आर्थिक विचारांतून दलितांना, शोषितांना नवा आशावाद प्राप्त झाला असे म्हणता येईल.

आंबेडकरांच्या अर्थकारणाचा केंद्रबिंदू :-

डॉ. आंबेडकरांच्या आर्थिक तत्वज्ञानाचा गाभा हा परंपरागत स्वरूपाचा आर्थिक मानव नाही तर मानवाचा जीवन पैलू आहे. प्रत्येक मनुष्य ज्या परिसरात वावरतो किंवा वास्तव्य करतो त्या ठिकाणाच्या प्रश्नाबाबतचा अभ्यास हा अर्थकारणाचा केंद्रबिंदू आंबेडकरांनी मानला. मनुष्य हा आर्थिक प्राणी आहे. माणसाच्या सर्व कृती व आकांशा ह्या आर्थिक घटनांनी प्रेरित झालेल्या असतात. सत्तेचे ख-या अर्थाने संपत्ती हेच उगमस्थान असून राजकीय व सामाजिक सुधारणा हा फार मोठा भ्रम आहे; म्हणून आर्थिक समतेवर आधारीत सर्व सुधारणा अवलंबून असतात अशी त्यांची शिकवण आहे. लोकशाहीच्या माध्यमातून आर्थिक विषमता कमी करण्याचा प्रयत्न त्यांनी मांडला आहे. आर्थिक परिवर्तनासाठी क्रांतीकारक बदल हवेत यावर आंबेडकरांच्या आर्थिक विचारांची भिस्त होती. लोकशाहीचे यश किंवा लोकशाही जिवंत ठेवण्यासाठी व्यक्तीच्या किमान गरजांची पूर्तता होणे महत्वाचे असते आणि किमान गरजांची पूर्तता झाल्याखेरीज कोणताही माणूस लोकशाहीच्या उज्वल भवितव्याबाबतची स्वप्ने रंगवू शकणार नाही. देशातील आर्थिक विषमता नष्ट होण्यासाठी आर्थिक समता प्रस्थापित करणे महत्वाचे असते. किंबहुना स्वातंत्र्याचा खरा अर्थ प्राप्तीसाठी आर्थिक समता महत्वाची असते.

समाजवादी समाजरचना:-

आपल्या देशात समाजवादी समाजरचना हे पंचवार्षिक योजनेचे एक महत्वाचे उद्दिष्ट मानण्यात आले आहे परंतु गेल्या कित्येक वर्षांपासून समाजवादी समाजरचनेचा नगारा बडविण्यात येत आहे. पण दुर्दैवाने त्या ध्येयापर्यंतचा किंवा उद्दिष्टापर्यंतचा प्रवास अर्धवटच राहिला आहे.दारिद्र्य, आर्थिक विषमता, आर्थिक सत्तेचे केंद्रीकरण हे समाजवादी समाजरचनेतील महत्वाचे अडथळे आहेत. लोकशाहीच्या चौकटीतच समाजवादी समाजरचना प्रस्थापित करण्याचा प्रयत्न करण्यात यावा अशी त्यांची अपेक्षा होती. देशातील शेतजमीनीवर पूर्णपणे सरकारची मालकी असावी, म्हणजेच शेतजमिनीचे राष्ट्रीयीकरण हा अतिशय महत्वाचा विचार त्यांनी मांडला. समाजातील आर्थिक व सामाजिकदृष्ट्या दूर्बल घटकांवरील अन्याय, अत्याचार कमी करण्यासाठी समाजातील ठरावीक वर्गाच्या विशेषाधिकारावर त्यांनी हल्ला चढविला जापर्यंत विशिष्ट वर्गाचा विशेषाधिकार किंवा मक्तेदारी नष्ट होणार नाही तोपर्यंत समाजातील शोषित, पिडीत वर्गाच्या शोषणाची प्रक्रिया थांबविता येणार नाही. आर्थिक शोषण थांबविण्यासाठी त्यांनी समाजवादी समाजरचनेचा पुरस्कार केला.

डॉ. बाबासाहेबांचे अर्थशास्त्रातील लिखाण मोठया प्रमाणात असून त्यांची प्रमुख तीन पुस्तके आहेत.

- १) अॅडमिनिस्ट्रेशन अॅड फायनान्स ऑफ दि ईस्ट इंडिया कंपनी
- २) दि इव्होल्युशन ऑफ प्रोव्हिन्शियल फायनान्स इन ब्रिटिश इंडिया
- ३) दि प्रॉब्लेम ऑफ दि रुपी; इट्स ओरिजिन अॅड इट्स सोल्युशन

डॉ. आंबेडकरांची वरील तीन प्रमुख पुस्तके असून पहिली दोन पुस्तके सार्वजनिक वित्तव्यवस्थेवरील असून त्यातील पहिल्या पुस्तकात ईस्ट इंडिया कंपनीच्या १७९२ ते १८५८ या काळातील वित्त व्यवहारावर लिहले आहे तर दुसरे पुस्तक ब्रिटिशांच्या आमदनीतील वित्तीय व्यवहारांमधील केंद्र आणि राज्यसंबंधावर भाष्य करण्यात आले आहे.तर तिसरे पुस्तक हे चलनविषयक अर्थशास्त्रावरील एक उत्कृष्ट ग्रंथ मानला गेला आहे. या पुस्तकात १८०० पासुन १८९३ पर्यंतच्या कालखंडात विनिमयाचे माध्यम म्हणून भारतीय चलनाची कशी उत्क्रांती झाली हे बाबासाहेबांनी सांगितले आहे.

डॉ. आंबेडकरांचे श्रमविभाजन आणि अर्थशास्त्र :-

जातीव्यवस्था आणि अस्पृश्यतेसारख्या सामाजिक आजारांचे आर्थिक पैलू उलगडून दाखविणे हे डॉ. आंबेडकरांचे आणखी एक विद्वत्तापूर्ण कार्य होय. श्रमविभागणीच्या तत्वानुसार महात्मा गांधींनीही जाती व्यवस्थेचे अस्तित्व स्वीकारले होते. मात्र आंबेडकरांनी ' जातीचा उच्छेद ' या पुस्तकात कडाडून टीका केली. जातीव्यवस्थेमुळे केवळ श्रमाची विभागणी केली नसून श्रमिकांची विभागणी केली आहे हे त्यांनी निदर्शनांस आणून दिले. डॉ. आंबेडकरांचा जाती व्यवस्थेवरील हल्ला हे केवळ

उच्चवर्णीयांच्या वर्चस्ववादाला दिलेले आव्हान नव्हते, तर आर्थिक विकासाशी त्यांच्या मांडणीचा जवळचा संबंध होता. जातीव्यवस्थेमुळे श्रमाची आणि भांडवलाची गतिशिलता कमी झाली नाही तर त्याचा देशाच्या अर्थव्यवस्थेवर आणि विकासावर प्रतिकूल परिणाम झाला आहे असे त्यांनी प्रतिपादन केले आहे.

आर्थिक लोकशाहीचे खंदे पुरस्कर्ते :-

स्वातंत्र्यानंतर डॉ. आंबेडकर हे भारताचे पहिले कायदामंत्री होते १९४८ —४९ घटनासमितीचे अध्यक्ष म्हणून भारतीय राज्यघटनेला आकार देतानाही त्यांच्यातील अर्थतज्ञ दिसून येतो. मानवी अधिकारांचे मुलतत्व म्हणून त्यांनी लोकशाही राज्यव्यवस्थेचा पुरस्कार आणि पाठपुरावा केला. समता, स्वातंत्र्य आणि बंधूभाव या तीन लोकशाही तत्वांचा केवळ राजकीय हक्क असा संकुचित अर्थ लावला जावू नये, असे त्यांनी म्हटले. सामाजिक आणि आर्थिक लोकशाहीकडे दुर्लक्षून राजकीय लोकशाही टिकू शकत नाही असे विचार त्यांनी व्यक्त केले. भूमीहीन मजुर, लहान जमिनी, खोतीपद्धती, महारवतन, सामुदायिक शेती, जमीनदारशाहीचे उच्चाटन या विषयांवर त्यांनी विचार मांडले. बॉम्बे लेजिस्लेटिव्ह असेम्ब्लीचे सदस्य असताना (१९२६) ग्रामीण भागातील गरिबांच्या समस्यांविषयीचे समग्र आकलन त्यांनी उभारलेल्या जन आंदोलनामध्ये प्रतिबिंबित होते. शेती मधील खोती पद्धती विरुद्ध केलेल्या यशस्वी आंदोलनामुळे अनेक ग्रामिण गरिबांची आर्थिक शोषणातून मुक्तता झाली. महारवतन या नावाखाली सुरू असलेल्या शुद्ध गुलामगिरीविरुद्ध त्यांनी आवाज उठविल्यानंतर ग्रामीण गरीबांचा मोठा वर्ग शोषणमुक्त झाला. सावकरांच्या मनमानीला चाप लावण्यासाठी असेम्ब्लीमध्ये विधेयक आणले. औद्योगिक कामगारांच्या क्षेत्रात १९३६ मध्ये स्वतंत्र मजुर पक्षाची स्थापना केली. त्याकाळी कामगारांच्या अन्य संघटना होत्या मात्र त्यांना अस्पृश्य कामगारांच्या मानवाधिकारांशी काहिही देणे घेणे नव्हते मात्र नव्या राजकीय पक्षाने ही उणीव भरून काढली त्याचप्रमाणे व्हाईसरॉयज् एक्झिक्युटिव्ह कौन्सिलचे कामगार सदस्य या नात्याने १९४२ ते १९४६ या काळात डॉ. आंबेडकरांनी कामगार विषयक धोरणात आमूलाग्र सुधारणा घडवून आणल्या शेतजमिनीच्या राष्ट्रीयीकरणबरोबरच देशातील महत्वाच्या अशा आधारभूत उद्योगांचे राष्ट्रीयीकरण करावे असे त्यांनी सुचविले. खाजगी क्षेत्रासाठी इतर उद्योग असावेत. विमा व्यवसायाचे देखील राष्ट्रीयीकरण करण्यात यावे, आर्थिक सत्तेच्या केंद्रीकरणानेच राज्य सत्तेचे केंद्रीकरण आकारास येते आणि आर्थिक सत्तेचे केंद्रीकरण टाळण्यासाठी काही प्रमाणात उत्पादक साधनांवर सरकारची मालकी आवश्यक असते. आर्थिक समतेशिवाय ग्रामीण भागातील विशिष्ट घटकांची आर्थिक गुलामगिरी नाहिशी होणार नाही. यावर त्यांचा ठाम विश्वास होत । आर्थिक विचारांबाबतचे डॉ. बाबासाहेबांचे तत्वज्ञान हे ख—या अर्थाने क्रांतीकारक तत्वज्ञान होते.

समारोप:-

डॉ. आंबेडकरांच्या आर्थिक विचारांना अधिक खोली व जागतीक व्याप्ती होती. ब्रिटिशांच्या अर्थकारणाबद्दल त्यांनी अतिशय परखड विचार मांडले. डॉ. आंबेडकरांचे अर्थकारण अतिशय समृद्ध होते. समाजवादी समाजरचना, शेतीचे राष्ट्रीयकरण, सामुदायिक शेती, व्यक्ती हे आर्थिक मुल्य आहे. आर्थिक गुलामगिरीचे निर्मूलन, जाती व्यवस्थेचे अर्थशास्त्र अशा विविध विचारांचे प्रवाह त्यांच्या आर्थिक तत्वाज्ञानाच्या प्रगल्भतेची साक्ष देतात.

आदिकल्याणम् , मध्यकल्याणम् , अन्तिकल्याणम् ही त्यांच्या तत्वज्ञानाची आणि जीवनकार्याची मुलभूत उद्दिष्ट्ये होती. वरील उद्दिष्ट्ये पूर्तीसाठी आयुष्याच्या सायंकाळी त्यांनी बौद्ध धम्माची दीक्षा घेतली आणि मी सांगतो म्हणून तुम्ही धर्मातर करू नका, तर तुमच्या बुद्धीला पटल्यावर तुम्ही धर्मातर करा अशा आशयाचे आवाहन त्यांनी आपल्या अनुयायांना केले.

संदर्भ सूची :- Reference

- १) महाराष्ट्राचा सामाजिक व राजकीय विकास — प्रा. सौ. शुभांगी राठी,— साहित्य सेवा प्रकाशन
- २) महामानव — डॉ. राजनाथ काशीनाथ गायकवाड,— राजवंश प्रकाशन,पुणे
- ३) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर — भालचंद्र फडके,— श्रीविद्या प्रकाशन
- ४) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर गौरवग्रंथ — प्रा. टी.एस. गवळी, प्रा.सुधीर गव्हाणे
- ५) <https://mr.m.wikipedia.org>

डॉ. राममनोहर लोहिया यांचे समाजवादाविषयीचे विचार

प्रा. डॉ. सिद्राम सलवदे

राज्यशास्त्र विभाग प्रमुख वालचंद कॉलेज ऑफ आर्ट्स अँड सायन्स सोलापूर

ई-मेल : salwadehiraj@gmail.com

प्रस्तावना :

डॉ. राममनोहर लोहिया हे थोर समाजवादी विचारवंत होते. भारताच्या समाजवादी चळवळीमध्ये त्यांचे महत्त्वाचे योगदान होते. भारताच्या विकासासाठी समाजवाद हाच एकमेव मार्ग आहे असे त्यांचे स्पष्ट मत होते. 1953 साली एशियन सोशलिस्ट कॉन्फरन्स आयोजित करण्यामागे त्यांचे महत्त्वाचे योगदान होते. ते उच्च विद्याविभूषित होते. त्यांनी जर्मनीतील बर्लिनचे हम्बोल्ट विद्यापीठातून अर्थशास्त्र विषयात मिठ आणि सत्याग्रह (Salt and Civil Disobedience) या विषयावर Ph.D. पदवी प्राप्त केली होती.

कार्ल मार्क्स आणि म. गांधी यांच्या विचारांचा त्यांच्यावर प्रभाव होता. मार्क्स आणि म. गांधी यांच्या विचारांचा समन्वय साधून त्यांनी समाजवादाची संकल्पना मांडली. भारताला स्वातंत्र्य मिळवण्यासाठी त्यांनी स्वातंत्र्य चळवळीत महत्त्वाची भूमिका बजावली. स्वातंत्र्यानंतर 1944 साली काँग्रेसमधील समाजवादी विचारांच्या प्रमुख नेत्यांना घेऊन ते बाहेर पडले व स्वतंत्र समाजवादी पक्षाचे नेतृत्व केली. 1952 साली हा समाजवादी पक्ष कृषक मजदुर प्रजा पक्षात विलीन करण्यात आला. त्याचे नाव 'प्रजा सोशलिस्ट पक्ष' बनले परंतु त्या पक्षाशी त्यांचे मतभेद झाले नंतर 1955 मध्ये हैद्राबाद येथे 'समाजवादी पक्ष' 1964 साली प्रजा समाजवादी पक्षात विलीन होऊन संयुक्त समाजवादी पक्ष उदयास आला. 1963 आणि 1967 या दोन्ही निवडणुकांमध्ये ते लोकसभेवर फारूखाबाद मतदार क्षेत्रातून निवडून आले. त्यांनी सभागृहात आणि बाहेर अशा दोन्ही पातळीवर समाजवादी तत्त्वासाठी प्रखर लढा दिला. आर्थिक विषमता नष्ट झाली पाहिजे, गरीब कष्टकरी लोकांना चांगले जीवन जगता आले पाहिजे. आर्थिक व सामाजिक विषमता कमी झाली पाहिजे. यासाठी त्यांनी आयुष्यभर संघर्ष केला.

डॉ. राम मनोहर लोहिया यांनी भांडवलशाही अर्थव्यवस्थेवर प्रखर टीका केली आहे. भांडवलशाही ही आर्थिक विषमतेची जननी आहे. भांडवलशाही हे गरीबांचे अरिष्ट आहे असे त्यांचे मत होते. परंतु भांडवलशाहीचे विश्लेषण त्यांनी मार्क्सपेक्षा वेगळ्या पद्धतीने केले आहे. भांडवलशाहीचा पाया मोठी यंत्रे आहेत मोठ्या यंत्रामुळे भांडवलशाही निर्माण झाली आणि उत्पादित झालेल्या मालाच्या बाजारपेठेसाठी साम्राज्यशाही अस्तित्वात आली. इंग्लंडसारख्या देशातील उत्पादित मालाच्या बाजारपेठेसाठी भारतासारख्या देशावर सत्ता निर्माण केली जाऊन भारतासारख्या देशातील हस्त उद्योग, कुटीर उद्योग नष्ट झाले. अनेक लोक बेकार झाले. भांडवलशाहीमुळे अमेरिकेसह आशिया खंडातील अनेक राष्ट्रे साम्राज्यशाहीच्या प्रभावामुळे गुलामगिरीत गेली व वसाहतिक धोरण प्रभावी बनले. याला भांडवलशाही व मोठी यंत्रे जबाबदार आहेत असे डॉ. लोहिया यांचे मत होते. भांडवलशाहीचा सर्वात जास्त परिणाम हे वसाहतिक क्षेत्राला बसले. ज्या देशामध्ये औद्योगिक क्रांती झाली तेथील मजूरपेक्षा वसाहतिक क्षेत्रातील मजूरंची अवस्था अतिशय हालाखीची बनली. येथील लोकांचा रोजगारच नष्ट झाला. येथील कामगार हस्त उद्योजक शेतकरी हा पुर्णपणे उद्ध्वस्त झाले असे विश्लेषण डॉ. लोहिया यांनी केलेले आहे. ते म्हणतात जनतेच्या वाढत्या दारिद्र्याला आणि तिच्या भुमीहीन होण्याचा आणि आर्थिक कंगाल होण्याचा इतिहास आहे. डॉ. लोहिया म्हणतात भांडवलशाहीत जीवनावश्यक वस्तुपेक्षा चैनीच्या वस्तु निर्मातीवर वाढता भर दिला जातो.

परिणामी भांडवलशाही अर्थव्यवस्था आपली उत्पादनशक्ती वाढवू शकत नाही किंवा त्याचा पुर्ण उपयोगही करू शकत नाही. त्यामुळे गरीब आणि पगारी लोकांना त्याचा त्रास होतो, त्यांच्या मुलभूत गरजा भागत नाहीत, दारिद्र्याचे प्रमाण वाढते.

छोट्या यंत्रांचा पुरस्कार :

डॉ. लोहिया यांनी भांडवलशाही व्यवस्थेवर टीका केली असून मोठी यंत्रे ही अनावश्यक आहेत. त्यामधुन बेकारी वाढते असे मत व्यक्त करून अल्पप्रमाण यंत्रांचा पुरस्कार केला आहे. त्यांच्या मते यंत्रांचा वापर अपरिहार्य आहे वीज व यंत्र ही आवश्यक आहेत परंतु ती छोट्या-छोट्या विभागात विभागली पाहिजे. प्रचलीत तंत्रविज्ञान व्यवस्था मोडून व तिचे अनेक प्रक्रियामध्ये विभाजन करून विकेंद्रीकरण केले पाहिजे असे त्यांचे मत होते. अल्पप्रमाण यंत्रांमुळे हस्त व्यवसाईक नष्ट होणार नाहीत अशी त्यांची भुमिका होती. छोट्या उद्योगांना महत्त्व दिले, छोट्या उद्योगांची संकल्पना महत्त्वाची मानली.¹

भुसेनेचा पुरस्कार :

डॉ. राममनोहर लोहियांनी शेतीविषयक महत्त्वाचे विचार मांडलेले आहेत. डॉ. लोहिया म्हणतात की ज्याप्रमाणे संरक्षणासाठी बंदुकधारी सैन्य असते त्याप्रमाणे शेतकऱ्यांची भुसेना असावी. ते म्हणतात की भारतामध्ये 15 कोटी एकर जमीन पडीक आहे. ही पडीक जमीन लागवडीखाली आणण्यासाठी शेतकऱ्यांकडे साधने नसतात व तेवढी क्रयशक्ती शेतकऱ्यांकडे नसते. डॉ. लोहिया यांनी भुसेना तयार करावी या भुसेनेमार्फत जी जमीन पडीक आहे ती लागवडीखाली आणावी या 15 कोटी एकर पडीक जमीनीवर भुसेनेच्या मदतीने पिके घेतली तर अतिशय मोठ्या प्रमाणात शेतीमधले उत्पन्न वाढेल. या भुसेनेमध्ये जे सैनिक असतील ते सर्व जाती धर्माचे असतील. त्यांच्यात भेदभाव असणार नाही. म्हणून भुसेनेची संकल्पना मांडतात. कृषीविषयक विचारांमध्ये त्यांनी व्यक्तिगत शेती, सामुहिक शेती या दोन प्रकारांचा उल्लेख केला आहे. त्याच बरोबर जे जमीनीचे मालक आहेत परंतु प्रत्यक्षात शेती करत नाहीत त्यांना फक्त 25% उत्पन्न द्यावे व जे शेतामध्ये काम करतात त्यांना 75% हिस्सा द्यावा. असेही मत त्यांनी व्यक्त केलेले आहे.²

मर्यादित वेतनाचा पुरस्कार :

डॉ. राममनोहर लोहिया यांनी 1967 साली खर्चावरील मर्यादा हा लेख लिहिला आहे. त्यामध्ये ते कर्मचारी अधिकारी यांना जो मासिक पगार दिला जातो तो मर्यादित असावा असे मत मांडले आहे. 1967 साली त्यांनी कोणालाही मासिक 1500 पेक्षा जास्त वेतन नसावे असे मत व्यक्त केले आहे. यामध्ये 1000 रु जीवनावश्यक वस्तुंसाठी तर 500 रु. मुलांच्या संगोपनासाठी खर्च करता येतील अशी त्यांची भुमिका होती. कोणालाही मासिक 1500 पेक्षा जास्त वेतन नसावे व इतर मार्गांचे उत्पन्नही नसावे. खाजगी संपत्ती, अतिरिक्त संपत्ती नसावी असे त्यांचे मत होते. त्यांच्या या खर्चावरील मर्यादेच्या प्रस्तावामुळे मोठ्या प्रमाणात काटकसर होईल. कोट्यावधी रूपयांची बचत होईल. बाजारपेठेमध्ये सामान्याला परवडेल अशा वस्तु मिळतील. भांडवलदाराकडे जे पडून भांडवल व पैसा, दागिने आहेत ते कोट्यावधी रूपये पडून आहेत ते भांडवली रूपात राज्याकडे येतील असे त्यांचे मत होते.³

जातीप्रथेला विरोध :

समाजवाद ही संकल्पना फक्त आर्थिक व राजकीय नाही तर ती सामाजिकही आहे. समाजवादाचा संबंध प्रत्येक घटकाशी येतो. डॉ. लोहिया यांनी भारतातील जाती व्यवस्थेवर प्रखर टीका केली आहे. ते म्हणतात की भारतीय समाज व्यवस्थेत 50% लोकांना जातीव्यवस्थेच्या नावाखाली विविध बंधनात गुंतवून ठेवले आहे. त्यामुळे हा समाज प्रगती करू शकला नाही. जात व्यवस्थेमुळे 90% लोकांना अकार्यक्षम बनवले गेले.⁴ 10% लोकांनी आपल्या स्वार्थासाठी 90% लोकांना चुकीच्या अशा जातीय चक्रात अडकवले. त्यामुळे भारतीय समाज प्रगती करू

शकला नाही. अशी त्यांची भूमिका होती तसेच भारतातील जातीव्यवस्थेमुळे परकीय शत्रुला विरोध करता आला नाही. जाती व्यवस्थेमुळे वेगवेगळ्या घटकात समाज विभागला गेला. खालचा दर्जा दिलेल्या जातीतील लोकांना अतिशय निर्बल बनवले, गुलाम बनवले. त्यामुळे परकीयांच्या विरोधात लढे देता आले नाहीत असे मत त्यांनी व्यक्त केले आहे. जन्मावरून जाती निश्चित होत असल्यामुळे कनिष्ठ मानलेल्या जातीली लोकांवर मोठ्या प्रमाणात बंधने घातली, त्यांचे सामाजिक अधिकार, मानवी अधिकार नाकारले. त्यांना पशुपेक्षाही दुय्यम वागणूक दिली गेली. या जाती व्यवस्थेवर डॉ. लोहिया यांनी कठोर टीका केली आणि जातीयता नष्ट झाली पाहिजे अशी भूमिका त्यांनी घेतली.

जातीयता नष्ट करण्यासाठी त्यांनी

- 1) सहभोजन
- 2) आंतरजातीय विवाहाचा पुरस्कार
- 3) अस्पृश्यता निर्मूलन
- 4) अस्पृश्यांनी स्वतःची आर्थिक प्रगती करणे यासारखे मार्ग सुचविले. एवढेच नव्हेतर त्यांनी स्वतः आपल्या बरोबर सहभोजनाचे आयोजन करण्यात पुढाकार घेतला.⁵

समतेचा पुरस्कार -

डॉ. लोहिया हे सामाजिक व आर्थिक समानतेचे पुरस्कर्ते होते. आर्थिक समते विषयी ते म्हणतात मालक नफ्यासाठी काम करतात आणि कामगार नोकरीच्या भितीने काम करतात. कामगारांना चांगले वेतन मिळाले पाहिजे. कामगारांच्या मुलभूत गरजा भागल्या पाहिजेत. राज्यांनी या जनतेसाठी योग्य त्या सोयी सुविधा उपलब्ध करून दिल्या पाहिजेत. अन्न, वस्त्र, निवारा, शिक्षण, आरोग्य ह्या गरजा भागविणे राज्याचे कर्तव्य आहे अशी त्यांची भूमिका होती. या बरोबरच त्यांनी कायद्याच्या समानतेचा पुरस्कार केला आहे. कायद्यातील समानतेमध्ये राजकीय समानता ही अभिप्रेत आहे. सर्वांना समान राजकीय अधिकार मिळाले पाहिजेत. समान मत अधिकार असावा. अशा प्रकारे आर्थिक राजकीय समानतेचा पुरस्कार केला. या बरोबरच सामाजिक समानतेचा पुरस्कार डॉ. लोहिया यांनी केला. जातीय विषमता नष्ट झाले पाहिजे. ही त्यांची आग्रही भूमिका होती.⁶ स्त्री पुरुष समतेचा पुरस्कार डॉ. लोहिया यांनी जातीव्यवस्थे बरोबरच स्त्री-पुरुष विषमतेवर टीका केली आहे. त्यांच्या मते भारतीय स्त्री ही जगातील सर्वात दुःखी स्त्री आहे ते म्हणतात की हिंदूस्थानातील स्त्री ही जगातील लोकामध्ये जास्त दुःखी आहे, उपाशी आहे, निस्तेज आहे व रोगट आहे. स्त्रियांनी परिस्थिती सुधारण्याशिवाय समाजवादी आंदोलन यशस्वी होणार नाही असे डॉ. लोहिया यांचे मत होते. त्यांनी लग्नातील हुंडा पद्धतीला विरोध केला या बरोबरच स्त्रियांना पती निवडण्याचा अधिकार असावा, लैंगिक स्वातंत्र्य असावे जसे पुरुषाला स्वातंत्र्य आहे तसे स्त्रीला स्वातंत्र्य असावे असे त्यांचे मत आहे. हिंदूस्थानातील योनीसुचिता या संकल्पनेवर ते टीका करतात. पुरुषांनी पत्नीकडून योनीसुचिता अपेक्षित ठेवणे स्वतः मात्र व्यभिचारी असणे. स्त्रियांना राजकीय क्षेत्रा समानता असावी अशी त्यांची मागणी आहे. त्यांनी भारतातील स्त्रियांच्या अधिकाराबाबत बोलतांना त्यांनी मुस्लीम धर्मातील काही परंपरेवर टीका केली. मुस्लीम धर्मातील पुरुषाला चार बायका करण्याचा अधिकार चुकीचा आहे.

धार्मिक राजकारणाला विरोध केला. डॉ. लोहिया यांनी मानवी जीवनामध्ये धर्माचो अस्तित्त्व मान्य केले आहे. त्यांनी मार्क्स प्रमाणे धर्मावर टीका केली नाही. म. गांधी प्रमाणे धर्माचे महत्त्व ते मान्य करतात. त्यांच्या मते धर्म म्हणजे मानवतावाद. तहानलेल्यांना पाणी देणे, भुकेलेल्यांना अन्न देणे, पडलेल्यांना उठवणे, बेघरांना घर देणे हाच खरा धर्म आहे. त्यांच्यामते खरा धर्म मानवता आहे. त्यांचे मते मनुष्याला धार्मिक स्वातंत्र्य असावे. परंतु धार्मिक

राजकारणाला मात्र डॉ. लोहिया यांचा विरोध आहे. धर्म व राजकारण एकत्र आणले तर दोन्ही क्षेत्रे अत्यंत भ्रष्ट होतात. धार्मिक राजकारणामुळे सांप्रदायिकता व कट्टरता वाढते त्यातून प्रतिगामीता निर्माण होते.⁷

वरील प्रमाणे लोहिया यांचे समाजवादाविषयीचे विचार असून त्यांनी भांडवलशाही व साम्यवादाला विरोध केला आहे. गरीब कष्टकरी लोकांना मुलभूत सुविधा द्याव्यात, सत्तेचे विकेंद्रीकरण झाले पाहिजे म्हणून त्यांनी चौखंभा राज्यांची संकल्पना मांडली जमीनदारी, व्यवस्थेला विरोध केला. या बरोबरच मोठ्या यंत्राला विरोध करून अल्पप्रमाण यंत्रांचा पुरस्कार केला. खाजगी मालमत्ता प्रमाणापेक्षा जास्त नसावी. सर्वांना मर्यादित उत्पन्नाची साधने असावीत. वेतन हे गजरेपुरतेच असावे. धार्मिकतेचा राजकारणामुळे सांप्रदायिकता निर्माण होऊन समाजामध्ये विषमता निर्माण होते. मानवनिर्मित विषमता नष्ट झाली पाहिजे असे. डॉ. लोहिया यांचे विचार असून आजच्या भारताच्या परिस्थितीमध्ये जी सामाजिक विषमता आहे धार्मिक असहिष्णुता वाढत आहे, आर्थिक विषमता वाढत आहे. गरीब अधिक गरीब होत असून देशाच्या संपत्तीमध्ये 90% लोकांकडे 80% संपत्ती आहे. अशा परिस्थितीत डॉ. लोहिया यांचे विचार प्रत्यक्षात येणे ही काळाची गरज आहे.

संदर्भ :

1. केळकर इंदुमणी - लोहिया - सिद्धांत और कर्म, नव हिन्द प्रकाशन हैद्राबाद.
2. दंडवते मधु - भारतीय समाजवादी वाटचाल, साधना प्रकाशन, पुणे
3. भोळे भा.ल. - आधुनिक भारतीय विचार, चिंचामपुरे प्रकाशन नागपूर
4. लोहिया राममनोहर - लोहियांचा पत्रव्यवहार - नवहिंद प्रकाशन, हैद्राबाद
5. गौतम सीमा - राममनोहर लोहिया समाजवादी परिक्षेत्रमे एक विशिष्ट अध्ययन
6. Lohia Rammanohar - Mahatma Gandhi and Socialism, Samta, Vidya Trust, Hyderabad.
7. मुकेश कुमार - लोहिया का राजनीतिक चिंतन

महात्मा फुले वाङ्मय व कार्य

प्रा. विजयकुमार रमदास घोडके
एस. जी. के कॉलेज लोणी कालभोर, पुणे

महाराष्ट्रातीलच नव्हे तर संपूर्ण देशातील सामाजिक परिवर्तनाच्या चळवळीचे अग्रणी, विचारवंत, कर्ते सुधारक, साहित्यिक, १९ व्या शतकातील उत्तम व्यक्तीमत्त्व ज्यांनी आपल्या ध्येयासाठी आपले सर्व आयुष्य वेचले असे महात्मा ज्योतिराव फुले यांचे नाव अग्रक्रमाने घ्यावे लागते. त्यांनी अस्पृश्यांसाठी शाळा (१९४८), मुलींची शाळा (१८९१), स्वतःच्या घरी बालहत्या प्रतिबंधक गृहाची स्थापना (१८६३), अस्पृश्यांना पाणी पण्यासाठी स्वतःच्या घराचा हौद मोकळा केला. (१८६८), सत्यशोधक समाजाची स्थापना (१८७३) अशी अतिशय महत्वाची कार्ये त्यांनी कसल्याही परिणामांची तमा न बाळगता केली. ही समाजोपयोगी कार्ये करत असतानाच त्यांनी समजाला जागृत करण्यासाठी लेखणी हाती घेतली व साहित्याची निर्मिती केली. त्यांच्या शेतकऱ्यांचा असूड ग्रंथात उपोद्घातमध्ये ते म्हणतात

“विद्येविना मती गेली, मती विना निती गेली.

नितीविना गती गेली । गती विना विन्ता गेले.

विन्ताविना शुद्ध स्वचले, इतके सारे अनर्थएका अविद्येने केले.”^१

‘शेतकऱ्यांचा असूड’ या ग्रंथातून महात्मा फुले यांनी शुद्ध-अतिशुद्ध यांच्या एकूणच अवनतीचे, अधोगतीचे कारण त्यांच्या शिक्षणाच्या अ वामध्ये असल्याचे सांगितले आहे. याच दृष्टीने शुद्धातिशुद्धांच्या मुलांसाठी, तसेच स्त्रीयांसाठीही शाळा सुरू केल्या. जून्या रूढी-परंपरा, कर्मकांड कालबाह्य विचार-आचार, पूर्वजन्म, पुर्नजन्म, ईश्वर, स्वर्ग-नरक इत्यादी संकल्पना स्पष्ट करत मानवी जीवनाला गुलामीत बंद करून टाकणाऱ्या, चूकीच्या समजूतींवर आपल्या लेखनीद्वारे प्रहार केले. आपल्या लेखनिद्वारे त्यांनी तमाम रतातील सामाजिक, आर्थिक, राजकीय, धार्मिक, सांस्कृतिक शोषणकारी तसेच अन्यायकारक गोष्टींना वाचा फोडली. समाज प्रबोधन व समाजसेवेचे कार्य केले. महाराष्ट्र शासनाच्या साहित्य आणि संस्कृती मंडळातर्फे महात्मा फुले यांचे समग्र वाङ्मय प्रकाशित करण्यात आले आहे. त्यामध्ये-तृतीय रत्न (नाटक) (१८९७), पवाडा : छत्रपती शिवाजीराजे ासले यांचा (जून १८६९), पवाडा : विद्याखात्यातील ब्राह्मण पंतोजी (जून १८६९), ब्राह्मणांचे कसब (१८६९), गुलामगिरी (१८७२), पुणे सत्यशोधक समाजाचा रिपोर्ट : (१८७३ ते १८७७), सत्यशोधक समाजाची तिसऱ्या वार्षिक समारं वी हकीगत (२४ सप्टें. १८७६), पुणे सत्यशोधक समाजाचा निबंध व वचनसंग्रह (ज्ञानोदय : १२ एप्रिल १८७७), दुष्काळविषयक विन्तीपत्रक : (१७ मे १८७७), हॅन्टर शिक्षण आयोगापुढे सादर केलेले निवेदन (१९ ऑक्टो. १८८२), शेतकऱ्यांचा असूड (एप्रिल-जुलै १८८३), महात्मा फुले यांचे मलबारीच्या दोन टिपणांविषयीचे मत (४ सप्टें. १८८४), मराठी ग्रंथकार सेस पत्र (११ जून १८८७), संत्सार अंक १ (सप्टें. १८८७), संत्सार अंक २ (ऑक्टोबर १८८७), इशारा (१ ऑक्टो. १८८७), ग्रामजोश्यांसंबंधी जाहीर खबर (२९ मार्च १८८६), मामा परमानंद यांस पत्र (२ जून १८८६), सत्यशोधक समाजाचे मंगलाष्टकासह सर्व पूजा-विधि (जून १८८७), सार्वजनिक सत्य धर्म पुस्तक (१८९१), अखंडादि काव्यरचना, महात्मा फुल्यांचा पत्रव्यवहार, महात्मा फुले यांचे मृत्युपत्र (१० जुलै १८८७). याशिवाय पुण्यात सुरू केलेल्या शाळा संबंधीचे कागदपत्र, पत्रव्यवहार, अस्पृश्यांची कैफियत, हॅन्टर शिक्षण आयोगापुढे सादर केलेले निवेदन, अशा विविध प्रकारचे साहित्य प्रकाशित झाले आहे. या सर्व उपलब्ध साहित्यांतून म.फुले यांचे विचार, कार्याची विषालता व महत्त्व लक्षात येते. म.फुले यांनी हे सर्व कार्य प्रतिकूल परिस्थितीत, प्रतिगाम्यांच्या कडव्या विरोधाला न जूमानता एकनिष्ठेने केले. त्यांच्या निवडक साहित्याचा आढावा खालीलप्रमाणे घेण्याचा प्रयत्न केला आहे.

तृतीय रत्न (नाटक)

हे नाटक महात्मा फुले यांनी १८७७ साली लिहिले.या नाटकाच्या सुरुवातीलाच या नाटकाबाबत म.फुले सांगतात की, “या नाटकाचे हस्तलिखित आपण १८७७ सालात दक्षणा प्राईज कमिटीस अर्पण केले.”^२या नाटकाच्या माध्यमातून महात्मा फुले यांनी भट-ब्राह्मण,गरीब व ोठ्या- ाबड्या, माळ्या-कुण्ढ्याच्या शेतकरी स्त्री-पुरुषांस देवा-धर्मचे नावाने कसे फसवतात, त्यांचे शोषण करतात व आपले उखळ पांढरे करतात याचे यथोचित वर्णन आहे. धनंजय कीर ‘महात्मा ज्योतिराव फुले’ या त्यांच्या पुस्तकात या नाटकाच्या आष्या विषयी लिहीतात, “आठराशे पंचाकन साली त्यांनी (म.फुल्यांनी) ‘तृतीय रत्न’ नावाचे नाटक लिहीले, त्यात ब्राह्मणांनी देवाच्या नावाने जे समज पसरविले होते आणि अंधश्रद्धा निर्माण केल्या होत्या, त्या सर्व त्यांनी उजेडात आणल्या”^३

या नाटकाची मध्यवर्ती कल्पना अशी आहे की, एक ब्राह्मण िक्षुक एका खेड्यात फिरत असता एका शेतकऱ्याच्या गरोदर पत्नीस पाहतो. तो तिला सांगतो की, तुझ्या ाची मुलाचा जन्म तुझ्या नवऱ्याला घातक ठरणार आहे हे विषय कथन ऐकून ती ंदरून जाते. तो ब्राह्मण िक्षुक तिला सांगतो की, ‘हे संकट दूर व्हावे म्हणून तुझ्या कुटूंबियांच्या वतीने मी देवाची प्रार्थना करतो.’ असे म्हणून तो तिचे सांतवण करतो. भट भिक्षुकांच्या भूलभाषांना ती बिचारी फसते व त्याची सूचना ती मान्य करते. शेतकऱ्याच्या घरी ही प्रार्थना आणि ब्राह्मण ोजन चालले असताना एक ख्रिस्ती धर्मोपदेशक तेथे योगायोगाने येतो. वादविवादास प्रारं होतो. आणि तेथे ब्राह्मणाची लबाडी उघडकीस येते.

महात्मा फुले यांनी शेवटी त्या चर्चेपासून असा निष्कर्ष काढला की, मूर्तिपूजेपेक्षा ज्ञान हे श्रेष्ठ होय. ज्योतिशांनी शेवटी तो शेतकरी आणि त्याची पत्नी यांना त्यांनी खास काढलेल्या प्रौढांच्या रात्रशाळेत शिकवण्यास जाण्याचा उपदेश केला.

छत्रपती शिवाजीराजे भोसले यांचा पवाडा

महात्मा फुले यांनी ही दुसरी साहित्यकृती जून १८६९ साली प्रसिध्द झाली. या पवाड्यात एकूण आठ भाग आहेत. हा पवाडा प्रचारकी थाटाचा असला तरी त्यात इतिहासाचा विपर्यास केला नाही, या पवाड्याच्या प्रस्तावनेत महात्मा फुले लिहितात, "अतिज्ञानात यवनी व भेसर्स ग्रांडफ, मरी वगैरे इंग्रज लोकांच्या बहुतेक लेखी आधारावरून हा पवाडा केला आहे." असं या पवाड्याच्या रचनेसाठी घेतलेल्या आधाराचा उल्लेख केलेला आहे. त्याचबरोबर या पवाड्याच्या लिखाणामागील मूकिका किंवा हेतू स्पष्ट करताना पवाड्याच्या प्रस्तावनेत ते म्हणतात, "कुणबी, माळी, महार, मांग, वगैरे पाताळी घातलेल्या क्षेत्रांच्या उपयोगी हा पवाडा पडावा असा माझा हेतू आहे. लांबच लांब मोठले संस्कृत शब्द मुळीच घातले नाहीत व जेथे माझा उपास चालेना तेथे मात्र लहानसहान शब्द निर्वाहापुरते घेतले आहेत. माळी, कुणब्यांस समजण्याजोगी सोपी भाषा होण्याविषयी फार भ्रम करून त्यांस आवडण्याजोग्या चालीने रचना केली आहे" या पवाड्याच्या निर्मातीसाठी म.फुले यांनी माळी, कुणब्यांस समजण्याजोगी पवाड्याची भाषा व्हावी म्हणून खुप परिश्रम घेतल्याचे त्यांनी नमूद केले आहे.

या पवाड्यामध्ये महात्मा फुलेंनी शिवाजी महाराजांचे बालपण, राजमातेचा आदेश, ब्राह्मणवर्गाचा नेता परशुरामाने या देशातील क्षत्रीयांचा संहार करून हा देश क्षत्रीयमुक्त केल्यामुळे स्वातंत्र्य हा देश यवनांच्या आक्रमणांना बळी पडल्याचे ज्योतिषा सांगतात व यवनांच्या नागाविध अत्याचारांचे वर्णन ते जिजाबाईसाहेबांच्याकडून या पवाड्यात करवितात. त्याशिवाय स्वराज्याचा शुभारंभ, अफजलखानाचा वध, सैतान औरंगजेब, शाहिस्तेखानाची स्वारी, पुंरंदरवरील संघर्ष, आग्रा येथून सुटका, काशीकर गंगा टावा खेळ, शिवाजी महाराज व त्यांचेजोराजे व शेवटी महाराजांचा मृत्यु आणि कुठ्ठांडांचा शोक अशा शिवाजी राजांच्या जीवनातील महत्त्वपूर्ण विषयांना हातळत राजांच्या अंगी असणारा काटकपणा, चपळाई, अघाट बुद्धिमत्ता, व्यवहारीपणा, चातुर्य, सावधता, अखंड उद्योग, मुत्सदेगिरी, धाडस, स्वतंत्रता कल्याणाची तळमळ व आदर्श प्रशासन हे महाराजांचे गुण शिवचरित्रांतून वेढून जोतीबांनी पवाड्यातून मांडले आहेत.

ब्राह्मणांचे कसब :

१८६९ मध्ये महात्मा फुले यांनी हा ग्रंथ लिहिला. तो त्यांनी महाराष्ट्र देशातील कुणबी, माळी, मातंग, मांग, महार, यांना अर्पण केला आहे. जे सुशिक्षित असतात. त्यांना फसवता येत नाही, जे अशिक्षित असतात त्यांना फसविणे सोपे. टजी मंडळी कुणबी, माळी या अशिक्षितांना सहज फसवत व धर्माच्या नावाखाली लुबाडत. या मंडळींना टजीचा कावेबाजपणा सांगता म्हणून ज्योतिशांनी ही छेटीशी पुस्तिका लिहिली. यामागे महात्मा फुले यांचा उद्देश स्पष्ट आहे. किंबहुना उद्देशाशिवाय महात्मा फुले यांनी काही लिहिलेलेच नाही. महात्मा फुलेंनी ब्राह्मणांचे कसब नऊ भागात सांगितले आहे. आर्य ब्राम्हण इतरात येण्यापूर्वी इथे सर्व लोक गुण्यानोविदाने नांदत होते. एकमेकांच्या हाकेला धातून जात होते. याची माहीती महात्मा फुले देतात. जेव्हा आर्य ब्राह्मणांनी हा देश काबीज केला. तेव्हा ही परिस्थिती बदलली. त्यांनी आपल्या स्वार्थासाठी धर्माच्या नावाखाली बहुजनांवर अन्याय सुरू केले. त्यांची अवस्था-

"दान्याला रे माहाग । पोटाची रे आग ।।

सोई नाही पोट रण्यास ।।

खाती मेल्या जनावरांस ।।"

अशी करून सोडली आहे. एवढेच नव्हे तर महार-मांगांना शिवून घेणे हे अशुभ मानले जाऊ लागले. "सुड घेतला, नीच मानिला, शिवतां जाती आंघोळीस ।।"

असा व्यवहार सुरू झाला. एका बाजूला शुद्रांना शिवून घेणे अशुभ मानले जाऊ लागले. परंतु दुसरीकडे त्यांची धर्माच्या नावाखाली त्यांच्या अज्ञानाचा फायदा घेत लुबाडणूक सुरू केली. ब्राह्मण जोशी शुद्रांच्या घरी मूल जन्मले म्हणजे येऊन पैसा कसा उकळतात हेही महात्मा फुले यांनी -

"पुसे जन्मकाळ राशीचक्र मांडी ।।

चाळी बोटे कांडी वेडा जैसा ।।२।।

न्याहाळून सर्व ठोक्या पित्या बोले ।।

मुळावरी आले बाळ तुड्या ।।३।।"

या पंक्तीतून सोदाहरण सांगितले आहे. शुद्रांच्या अज्ञानाचा फायदा घेत त्याला धर्माच्या, विषयाच्या, राशीचक्राच्या नावाने घाबरवून त्याचेकडून पैसे उकळले जात. ब्राह्मणाने सांगितलेले सर्व अनुष्ठान हे सर्व उपास करूनही त्याचे मुल मेले याचे सोयरयुक्त जोशी बुवाला कुठले? शुद्रांच्या घरी लग्न समारंभ असेल, घरांत ऋतुशांती, घर रणी असेल, पोथी वाचनाच्या निमित्ताने असेल किंवा शुद्रांच्या अंतकाळीही ब्राह्मण त्याच्या पत्नीलाही कसा नाडतो, सणाचारांत कशा पध्दतीने लुबाडतो या सर्वांची वर्णने महात्मा फुले यांनी 'ब्राह्मणांचे कसब' या छेटीखानी ग्रंथात केले आहे. एकंदर ब्राह्मण आपले सर्व कसब पणाला लखून शुद्रांस महार, मांग, कुणबी, माळी यांना धर्माच्या, श्रध्देच्या नावाने त्यांच्या वनांना हात घालत फसवत होता. शुद्रांची फसवणूक थांबली पाहिजे. त्यांच्यावरील अन्यायाला वाचा फोडली पाहिजे. त्यांची स्थिती सुधारली पाहिजे. हे करण्यासाठी वास्तवावर प्रहार करावयास हवेत. तिथे शोषकावर

फटकारे मारले पाहिजेत. मग ते कोणी का असेना. महात्मा फुले यांनी तेव केले. इथे घोषक ब्राह्मण होता. तर शोषित शुद्र होता. शोषिताचे कैंवारी महात्मा फुले होते. म्हणूनच घोषकांच्या विरोधी क्रांतीकारी लढाई त्यांनी सुरु केली. त्याचाच एक भाग म्हणून समाजाला जागे करण्याचा प्रयत्न 'ब्राह्मणांचे कसब' म्हणून केला.

शेतकऱ्यांचा असूड :

१८८३ मध्ये महात्मा फुले यांनी हे पुस्तक लिहीले. हे पुस्तक आपण शुद्र शेतकऱ्यांचा बचाव करण्यासाठी लिहीले असे महात्मा फुले यांनी म्हटले आहे. या ग्रंथाच्या शिर्षकाविषयीची व शुद्र शेतकऱ्यांच्या दैन्याविषयीची माहिती महात्मा फुले यांनी उपोद्घातमध्ये दिली आहे. ते म्हणतात, "शुद्र शेतकरी हल्ली इतक्या दैन्यावण्या स्थितीस येऊन पोहचवण्याची धर्म व राज्यासंबंधी अनेक कारणे आहेत, त्यापैकी थोड्या बहुतांचे विवेचन करण्याच्या हेतूने हा पुढील ग्रंथ रचिला आहे. शुद्र शेतकरी बनावट व जुलमी धर्माचे योगाने एकंदर सर्व सरकारी खात्यांनी ब्राह्मण कामगारांचे प्राबल्य असल्याने टिक्कांकडून व सरकारी युरोपियन कामगार पेशआरामात असल्याचे योगाने, ब्राह्मण कामगारांकडून मांडले जातात. त्यांपासून त्यास या ग्रंथातलोकनाचे योगाने आपला बचाव करीता याचा असा हेतू आहे. म्हणून हा ग्रंथास 'शेतकऱ्यांचा असूड' असे नाव दिले आहे." शेतकऱ्यांच्या अज्ञानाचा फायदा घेत त्यांना लुबाडण्याचा, स्वतः पेशआरामात राहणाऱ्या, कडकथा सांगून त्यांना फसविणाऱ्या उत्तवर्णियांना या असूडाचा प्रसाद मिळाला पाहिजे. तसेच इंग्रजांनी त्यांचे शोषण थांबविण्यासाठीचे प्रयत्न केले नाहीत तर त्यांनाही हा असूडाचा प्रसाद देण्याची वेळ येईल. हे करण्यासाठी शुद्रांना जागृत करावे म्हणून त्याची कारणमिमांसा या पुस्तकात महात्मा फुले यांनी दिली आहे.

शेतकऱ्यांचे शोषण दोन माध्यमातून होत होते. एक धर्म आणि दुसरी सत्ता. त्याकाळी "ब्राह्मण सांगतील तो धर्म आणि इंग्रज करतील ते कायदे". अशी परिस्थिती होती. बिचारा शेतकरी अज्ञानी, गिरदार असल्याने त्याला दोन्ही समजत नव्हते. याचा फायदा मात्र उत्तवर्णिय वर्ग घेत होते. त्याच्यावर महात्मा फुले यांनी प्रहार केला. रोगाचे जे मुळ त्यावर घाला घातल्याशिवाय रोग कायमचा नाहीसा होणार नाही. याची जाणीव महात्मा फुलेंनी शेतकऱ्यांना करून दिली. शेतकऱ्यांचे शोषण थांबवायचे असेल तर त्यांच्या मुलाबाळांना शिक्षण दिले पाहिजे. हे काम इंग्रजांनी करावे असा आग्रह महात्मा फुले यांनी केला. शेतकऱ्यांना आधुनिक शेतीची माहिती द्यावी. नोकरीमधील संधी लोकसंख्येनुसार देण्यात यावे. असे महात्मा फुलेंनी सुचविले. शेतकऱ्यांना त्यांच्या अज्ञानाची जाणीव व्हावी हा उद्देश 'शेतकऱ्यांचा असूड' या ग्रंथाचा आहे.

गुलामगिरी

१८९३ साली महात्मा फुले यांनी 'गुलामगिरी' हा ग्रंथ लिहीला. हा ग्रंथ अमेरिकेमधील निग्रोंना मुक्त करण्याच्या त्यांनी अर्पण केलेला आहे. तसेच त्या लढ्यापासून स्फुर्ती घेऊन आपले शुद्र बांधवांस ब्राह्मण लोकांच्या दास्यत्वापासून मुक्त करण्यासाठी प्रयत्न केले जातील अशी आशा बाळगली आहे. या ग्रंथाच्या प्रस्तावनेत या ग्रंथाचा उद्देश महात्मा फुले यांनी स्पष्ट केला आहे. ते म्हणतात, "या ग्रंथाचा मुख्य उद्देश असा आहे की, आज शेकडे वर्षे शुद्रातिशुद्र, हे ब्राह्मण लोकांचे राज्य झाल्यापासून सतत दुःखे सोशीत आहेत व गाना प्रकारच्या यातनेत आणि संकटात दिवस काढत आहेत, तर या गोष्टीकडेस त्या सर्वांचे लक्ष लागून त्यांनी तिजविषयी नीट विचार करणे व येथून पुढे ब्राह्मण लोकांचे अन्यायी जुलमापासून आपली सुटका कशी करून घेणे हाच काय तो आहे." इश्वराच्या नावाखाली सदा सर्वकाळ शुद्रांनी ट लोकांची सेवा केली तर ते ईश्वराला पावन होऊन त्यांचे देहाचे व जन्मास येण्याचे सार्थक झाले असे सांगितले जाई. हे सर्व मानवतेच्या विरोधी होते. नैसर्गिक न्यायास धरून नव्हते. इश्वराच्या नावाखाली शुद्रातिशुद्रांच्या अज्ञानापोटी त्यांचे शोषण होत होते. हे शोषण थांबवावे यासाठी ज्या धर्मग्रंथातील माहितीचा आधार घेऊन शुद्रांना लुबाडले जात होते. त्या धर्मग्रंथातील फोलपणा उघड करण्याच्या हेतूने 'गुलामगिरी' या ग्रंथातून प्रयत्न केला आहे.

पृथ्वीवरील सर्व माणसे सारखीच आहेत. त्यांना जन्म स्त्री देते. सर्व मानवप्राण्यांचा जन्म स्त्री योनी मधूनच होतो. हे सत्य असताना, मनुने ब्रह्मदेवाने अणुपल्या मुखातून ब्राह्मणास उत्पन्न केले आणि त्या ब्राह्मणांचीसेवाकरी करण्यासाठी त्याने आपल्या पारांपासून शुद्रास उत्पन्न केले. असे का म्हणावे असा प्रश्न महात्मा फुले यांनी उपस्थित केला. याचे उत्तर देताना ते सांगतात की, शुद्रांच्या अज्ञानाच्या फायदा घेऊन त्यांना फसवता आले पाहिजे आणि आपला स्वार्थ साधता आला पाहिजे हा उद्देश होता. ही चुकीची समजूत दूर करण्यासाठी मुखातून कोणीही जन्म घेऊ शकत नाही हे अनेक उदाहरणांनी महात्मा फुले यांनी सांगितले आहे. ब्राह्मणांच्या या प्रचारांमार्गी खरी गोम शुद्रांच्या लक्षात यावी यासाठी ब्राह्मणांचा मुळ इतिहास त्यांनी स्पष्ट केला आहे. त्यांच्या मते ब्राह्मण हे मुळचे इथले नाहीतच. टोळधाडीप्रमाणे हे बाहेरून आले आणि येथील लोकांचा छळ करून त्यांनी त्यांना दास बनविले. आपली सत्ता कायम रहावी म्हणून धर्माच्या नावावर अनेक कल्पित गोष्टी रचून शुद्रांच्या मनावर बिंबवल्या, शुद्रांना ग्रंथ वाचता येत नसल्याने सगळे काही त्यांना शक्य झाले. तात्पर्य असे की, 'गुलामगिरी' या पुस्तकात शुद्रांना प्रथमपासूनच गुलामासारखे करणे वागवले गेले हे महात्मा फुले यांनी सांगितले आहे.

निष्कर्ष -

महात्मा फुले हे महारमांगादी अस्पृश्य गणल्या गेलेल्या पददलितांचे पहिले उद्धारक, पाच हजार वर्षांच्या रीताच्या इतिहासात मुलींसाठी शाळा स्थापन करणारे पहिले रतीय म्हणून रतीय स्त्रीशिक्षणाचे जनक, स्त्रीयांच्या स्वातंत्र्याचे आणि हक्कांचे उद्गाते, शेतकरी अणि कामकरी यांच्या दुखाचे नि दारिद्र्याचे निवारण करण्यासाठी चळवळ उ राणारे लेखन करणारे, पहिले पुढारी आणि चातुर्वर्ण्य व जाति द या संस्थांवर कडाडून हल्ला चढवून मानवी

समानतेची घोषणा करणारे पहिले लोकनेते होते. आधुनिक रताचे ते पहिले महात्मा आणि 'सत्यमेव जयते' या दिव्य तेजाने रलेले पहिले सत्यशोधक होत.

संद ' सूची -

१. संपा.य.दि.फडके, मफुले समग्र वाङ्मय (शेतकऱ्यांचा असूड), उपद्घात, महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि संस्कृती मंडळ, पृष्ठ क्र.२५३
२. उनि, पृष्ठ क्र.३.
३. किर धनंजय, महात्मा ज्योतीराव फुले, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई १९६८, पृष्ठ क्र.८४.
४. उनि, मफुले समग्र वाङ्मय (छत्रपती शिवाजी राजे ेसले यांचा पवाडा), पृष्ठ क्र.३५.
५. संपा.य.दि.फडके, मफुले समग्र वाङ्मय (ब्राह्मणांचे कसब), पृष्ठ क्र.९१.
६. उनि, पृष्ठ क्र.९२.
७. उनि, पृष्ठ क्र.९३
८. उनि, शेतकऱ्यांचा असूड, उपोद्घात, पृष्ठ क्र.२५३.
९. उनि, गुलामगिरी, प्रस्तावना, पृष्ठ क्र.१२९.
१०. उनि, गुलामगिरी, प्रस्तावना, पृष्ठ क्र.१२९.

उच्च शैक्षणिक ग्रंथालयासमोरील आव्हाने

प्रा. सरडे दिलीप निवृत्ती

ग्रंथपाल, वसंतराव काळे महाविद्यालय ढोकी. ता. जि. उस्मानाबाद.

Email dileepsarde@gmail.com

प्रस्तावना :

शैक्षणिक ग्रंथालये ही शैक्षणिक संस्थाचा अतिशय महत्वाचा व अविभाज्य घटक आहे. ही ग्रंथालये एखाद्या संस्थेशी कायम सलग असतात. उदा. शाळा, महाविद्यालये, विद्यापीठे तसेच इतर उच्च शैक्षणिक स्वायत्त संस्था. शैक्षणिक ग्रंथालयामध्ये वरील विविध प्रकारची ग्रंथालये असतात. परंतु येथे केवळ महाविद्यालयीन आणि विद्यापीठीय ग्रंथालये समोर ठेवून सदर लेख लिहिला जात आहे.

कोविड-१९ मुळे आर्थिक, सामाजिक, औद्योगिक क्षेत्रावर मोठा विपरीत परिणाम झाला आहे तसाच परिणाम शैक्षणिक घटकावर ही झाला आहे. ग्रंथालय विभाग याचाच एक अविभाज्य घटक असल्याने अप्रत्यक्षपणे ग्रंथालयातून दिल्या जाणाऱ्या सेवावर याचा अधिक परिणाम झाला आहे. कारण आज वाचकवर्ग ग्रंथालयापासून दूर गेला आहे. त्यामुळे ग्रंथालयापासून दूर गेलेला वाचक परत ग्रंथालयाकडे आणण्यासाठी ग्रंथपालाना भरपूर मेहनत घ्यावी लागणार आहे. या सर्व गोष्टींचा अभ्यास सदर लेखातून करण्यात येणार आहे.

ग्रंथालयाची ऐतिहासिक पार्श्वभूमी :

मराठी विश्वकोशामध्ये ग्रंथालय म्हणजे ग्रंथसंग्रहाचे स्थान आहे. व ग्रंथालय ही प्राचीन सामाजिक संस्था असून तिला मोठा इतिहास आहे. आणि तो मानव संस्कृतीशी समांतर आहे असे सांगितले आहे. प्राचीन ग्रंथालयात इष्टीका, पपायरस व चामडे यावर लिहिलेले ग्रंथ असत. त्यात पुढे हस्तलिखित ग्रंथाची व नंतर मुद्रित ग्रंथाची भर पडली. आधुनिक ग्रंथालयात ग्रंथालयाबरोबर नियतकालिके, कागदपत्रे, हस्तलिखिते, नकाशे, छायाचित्रे, शिल्पकृती, शिलालेख, ध्वनिमुद्रिका, सूक्ष्मपट, लेख छायाचित्रे, कात्रणे इत्यादी प्रकारचे ज्ञान साहित्य संग्रहित केले गेले. आज २१ व्या शतकात ग्रंथालयामध्ये बदल होऊन डिजिटल ग्रंथालये अस्तित्वात येवू लागली आहेत. ही ग्रंथालये पूर्णतः इलेक्ट्रॉनिकमाध्यमावर आधारित असून यांना इ-लायब्ररी असेही संबोधितात. वरील संपूर्ण माहितीवरून प्राचीन काळातील ग्रंथालयामध्ये कसकसे बदल होत गेले आहेत हे लक्षात येते.

३. उच्च शिक्षण आणि महाविद्यालयीन ग्रंथालये :

उच्च शिक्षण :

महाराष्ट्र विद्यापीठ दुरुस्ती कायदा २००० नुसार, 'उच्च शिक्षण म्हणजे शालेय शिक्षणाच्या टप्प्यावरील शिक्षणानंतरचा ज्ञानाचा व्यासंग असे सांगितले आहे. यामध्ये महाविद्यालय आणि विद्यापीठातून दिल्या जाणाऱ्या शिक्षणाचा समावेश होतो. या महाविद्यालय आणि विद्यापीठ यांच्या मार्फत चालविण्यात येणाऱ्या ग्रंथालयाचा अभ्यास संबंधित लेखातून करण्यात येणार आहे.

विद्यापीठ अनुदान आयोग आणि शैक्षणिक ग्रंथालये :

उच्च शिक्षणातील सुधारणेसाठी विद्यापीठ अनुदान आयोगाची स्थापना डिसेंबर १९५३ मध्ये करण्यात आली असून ही एक स्वायत्त संस्था आहे. या आयोगाला १९५६ साली भारतीय कायद्यान्वये मंजूरी देण्यात आली. विद्यापीठ अनुदान आयोग विद्यापीठ आणि महाविद्यालय ग्रंथालयाच्या विकासाठी भौतिक सोयी-सुविधा, ग्रंथ व नियतकालिके खरेदी, ग्रंथालय संगणकीकरण व इतर कामासाठी भरीव सहकार्य करते. याबरोबरच विशिष्ट कालावधीच्या अंतराने वेगवेगळ्या समित्या व आयोग स्थापन करून शैक्षणिक सुधारणेसाठी उच्च शिक्षण क्षेत्रात व शैक्षणिक ग्रंथालयाच्या विकासाठी प्रयत्न करते. याचाच एक

भाग म्हणून यूजीसीने १९९१ मध्ये शैक्षणिक ग्रंथालयाच्या व संस्थांच्या विकासाठी उच्च शिक्षण क्षेत्रात इनफ्लिबनेट (INFLIBNET) या संस्थेची स्थापना केली गेली.

इनफ्लिबनेट आणि शैक्षणिक ग्रंथालये :

इनफ्लिबनेट हे विद्यापीठ अनुदान आयोगाने स्थापन केलेले आंतरविद्यापीठ केंद्र असून त्याची स्थापना १९९१ साली गुजराथ मधील गांधीनगर येथे करण्यात आली आहे. शैक्षणिक ग्रंथालयाचे आधुनिकीकरण अथवा संगणकीकरण करण्याच्या उद्देशाने SOUL या ग्रंथालय आज्ञावलीची निर्मिती केली. या आज्ञावलीचा उपयोग आज विद्यापीठ व महाविद्यालयीन ग्रंथालयाच्या संगणकीकरणासाठी मोठ्या प्रमाणात केला जात आहे. तसेच भारतातील शैक्षणिक ग्रंथालयाचे नेटवर्किंग द्वारे महाविद्यालये व विद्यापीठ ग्रंथालयीन साहित्याची देवाण घेवाण करण्यासाठी प्रयत्न केले जातात. या संस्थेने शोधगंगा च्या माध्यमातून भारतातील विद्यापीठाद्वारे प्रदान करण्यात आलेल्या प्रबंधाचा डेटाबेस तयार करून उपलब्ध करून देण्यात आला आहे. यात २४ डिसेंबर २०२१ पर्यंत भारतातील ५०० सहभागी विद्यापीठातील जवळपास ३,३२,१३८ प्रबंध व ८३९५ संशोधन आराखडे (SYNOPSIS) चा डेटाबेस नेटवर्क द्वारे सर्वाना अभ्यासण्यासाठी उपलब्ध केला आहे. तसेच याच संस्थेने वर्गणीदार महाविद्यालय व विद्यापीठ ग्रंथालयासाठी ६१५० ई-जर्नल्स व ३१,६४,३०९ ई-बुक्स चा डेटाबेस N-LIST च्या माध्यमातून उपलब्ध केला असून याच्यामुळे शैक्षणिक ग्रंथालयामध्ये भरपूर बदल घडून आला आहे. सध्या डिसेंबर २०२१ पर्यंत ३५९४ विद्यापीठ व महाविद्यालयीन ग्रंथालये N-LIST चे सभासद असून ५,१६,१८७ Active Users याचा लाभ घेतात.

शैक्षणिक ग्रंथालयासमोरील आव्हाने

शैक्षणिक ग्रंथालये ही महाविद्यालय व विद्यापीठातील वाचकांच्या गरजा पूर्ण करून शैक्षणिक व संशोधनाचा मुख्य उद्देश साध्य करण्यासाठी मदत करतात. ज्ञानाचा खजिना व माहितीचे वेगवेगळे स्रोत यामुळे शैक्षणिक ग्रंथालये व तेथील ग्रंथपाल यांना नवनवीन मार्ग शोधून त्याद्वारे आपल्या वाचकांच्या गरजा पूर्ण कराव्या लागतात. डिजिटल साहित्याची निर्मिती व ग्रंथालयातील डिजिटल तंत्रज्ञानाचा वापर आणि सध्या कोरोनाच्या प्रादुर्भावामुळे ग्रंथालयासमोर आपले अस्तित्व टिकवणे आवश्यक झाले आहे. आजच्या ग्रंथपालासमोर पुढीलप्रमाणे आव्हाने आहेत.

1. डिजिटल तंत्रज्ञानाचा वापर करून शिक्षण व संशोधनासाठीच्या वाचकांच्या मागण्याची पूर्तता करणे.
2. डिजिटल माहितीस्रोत जसे डिजिटल संग्रह, संस्था रीपोझिटरी, ऑनलाईन जर्नल्स इत्यादींची प्रभावी व परिपूर्ण अमलबजावणी करून वाचकांच्या गरजेनुसार त्यांना मदत करणे.
3. मोबाईल तंत्रज्ञानाचा उदय आणि त्याचा झपाट्याने झालेला प्रसार याचा परिणाम ग्रंथालयावर झाला असून वाचक ग्रंथालयापासून दूर जावू लागला आहे. त्यामुळे त्याला परत ग्रंथालयाकडे आकर्षित करणे ग्रंथपालापुढे मोठे आव्हान उभे राहिले आहे.
4. ग्रंथपालाना डिजिटल युगात माहिती साक्षरता व डिजिटल साक्षरता कार्यक्रम राबवून आपले व कर्मचाऱ्यांचे ज्ञान अद्ययावत करणे.
5. ग्रंथालय आणि माहितीशास्त्र व्यवसायाची एखाद्या विषयात सामावून घेण्याची व्याप्ती राष्ट्रीय ज्ञान आयोगाने सांगितले आहे. त्यामुळे शैक्षणिक ग्रंथालयाशी संबंधित जे ग्रंथपाल आहेत त्यांना वाचकांच्या गरजा पुरविणे व त्यांचे समाधान करण्याचे आव्हान त्यांच्यासमोर आहे.
6. शैक्षणिक ग्रंथालयातील ग्रंथपालांना निरंतर शिक्षणाद्वारे ज्ञानात वाढ करून आपले आपले कौशल्ये व कार्य सतत वृन्धिगत करावे लागेल.
7. सध्या कोरोनामुळे ग्रंथालयाचा पारंपारिक उपभोक्ता वा वाचकवर्ग ग्रंथालयापासून दूर गेला आहे. त्याची वाचनाची सवय कमी झाली आहे त्यामुळे त्यांच्यामध्ये परत वाचनाची आवड निर्माण करून तो ग्रंथालयात परत कसा येईल यासाठी आवश्यक ते प्रयत्न करावे लागतील.

सारांश :

भारतात ज्ञानाधारित समाजाची निर्मिती होण्यासाठी शैक्षणिक ग्रंथालयांना त्यांच्यामध्ये वाचकांच्या गरजेनुसार योग्य ते बदल करावे लागतील. तसेच डिजिटल तंत्रज्ञानाचा वाढता वापर, माहिती तंत्रज्ञानाची माहिती शोधण्याची भूमिका व कोरोनामुळे शिक्षणाचे बदलते पॅटर्न या सर्व गोष्टींचा स्विकार करून त्यानुसार बदल घडवून वाचकांना अद्ययावत माहिती व ज्ञान देण्याचा प्रयत्न केला पाहिजे.

संदर्भसूची :

1. पेठे, म. प., २००६, 'ग्रंथालय', मराठी विश्वकोश, खंड ५, पृष्ठे २९३
2. मानकर, सुधाकर, २००१, महाराष्ट्र विद्यापीठ कायदा, कोल्हापूर : अतुल प्रकाशन, पृष्ठे १९४
3. पांडेय, राजेश कुमार, अनु.हंबर्डे अरुण, अनु. धर्मापुरीकर, रणजित, डिसेंबर २०१८ ते मे २०१९, 'भारतातील शैक्षणिक ग्रंथालये : आव्हाने आणि संधी'.ज्ञानगंगोत्री, ३७-४५
4. shodhganga.inflibnet.ac.in / 24.12.2021
5. nlist.inflibnet.ac.in/index.php/ 24.12.2021

सामाजिक क्रान्ति के प्रणेता महात्मा ज्योतिराव फूले

प्रो. डॉ. गायकवाड मुकुन्द

प्रोफेसर एवं हिंदी विभागाध्यक्ष शि.म.ज्ञानदेव मोहेकर महाविद्यालय कळंब तहसिल जि. उस्मानाबाद
पिनकोड—४१ ३५०७

ज्योतिराव फूले का जन्म ११ अप्रैल १८२७ को पूना शहर में हुआ था। महाराष्ट्र के लोग बड़े होने पर ज्योतिराव फूले को आदर, श्रद्धा, सम्मान व स्नेह से ज्योतिबा नाम से पुकारने लगे। कोल्हापुर के पास एक पहाड़ी पर महाराष्ट्र के बहुजन समाज के देवता ज्योतिबा का मंदिर है। मराठों के कई घरानों में ज्योति कुल देवता का नाम है। महात्मा फूले के जन्म दिवस पर इस देवता का उत्सव था इसलिए उनका नाम ज्योतिराव रखा था।

ज्योतिराव की अवस्था जब नौ माह की थी, तब माता चिमणाबाई का देहांत हो गया। गोविंदराव की पत्नी चिमणाबाई का जब देहांत हुआ तब मित्रों ने दूसरे विवाह की सलाह दी। लेकिन इन्होंने दूसरा विवाह यह सोचकर नहीं किया की सौतेली माँ उनके बच्चों को सगी माँ जैसा प्यार और ममता नहीं दे पायेगी। इसलिए राजाराम एवम् ज्योतिराव के पालन पोषण के लिए ज्योतिराव की मौसैरी विधवा बहन श्रीमती सगुणाबाई के छत्रछाया में रखा। सगुणाबाई ने उनका पालन—पोषण ही नहीं किया वरन उन्हें सही आर्थो में इन्सान बनाया था।

ज्योतिराव गोविंदराव फूले का नामोच्चार साथ एक विचार मन में आता है। ज्योतिराव ने शुद्रादि शुद्र को धर्म के नाम पर जो शोषण होता था इसका जिक्र बहुत ही लगनता के साथ किया था। इतना ही नहीं ईश्वर और धर्म के नाम पर संस्कृति के नाम पर चलनेवाला महिलाओं का शोषण, उनका शारीरिक और मानसिक शोषण, उनपर लदा हुआ पुरुषों का दास्यत्व इनका दटकर विरोध किया। संस्कृति के नामपर बली जानेवाली हिंदू महिलाओं की खामोशी पहले महाराष्ट्र में ज्योतिराव ने ही सुनी थी। पाठशाला छोड़ने के बाद ज्योतिराव के हाथों में हल—फाल, खुरपी जैसे खेती के उपकरण आ गये। अपने पिता के साथ खेत तथा बगीचे में वह परिश्रम व लगनता से काम करने लगे। इतना होने के बाद भी उनका किताबों का लगाव कम नहीं हुआ। खेती के काम के बाद बचे समय में तथा रात्रि में दीपक की रोशनी में वह पढ़ाई करते थे। पास—पडोस के बुजुर्गों से विविध विषयों पर चर्चा करते थे। इनकी सुक्ष्म और तर्कपूर्ण बुद्धि ने पडोसियों को अधिक प्रभावित किया। उर्दू—फारसी के जानकार गप्फार बेग मुंशी तथा ख्रिस्ती धर्मोपदेशक लिजीट साहब इनके प्रतिभा से चकित थे।

गोविंदराव ने तेरह वर्ष की आयु में १८४० में उनका विवाह कर दिया। उस समय बाल्यावस्था में ही विवाह करने का प्रचलन था। इनकी पत्नी धाय माँ सगुणाबाई के दूर के रिश्ते में मामा खण्डूजी पाटील की पुत्री सावित्रीबाई थीं। इनका जन्म १८३१ में सातारा जिले के नामगाँव में हुआ था। इस सावित्रीबाई ने आजीवन ज्योतिराव का साथ दिया। इनके चलाये गये समाज—सुधार अभियान में सहयोग तथा सम्मुख आनेवाली विभिन्न समस्याओं से इस दम्पति ने संघर्ष किया और अपने क्रान्ति—पथ पर निर्भीकता से बढ़ते रहे। जब ज्योतिराव के पडोसियों ने इनकी प्रशंसा की तथा उन्हें आगे और पढने के लिए प्रोत्साहित किया लगभग १४ वर्ष की आयु के ज्योतिराव को पूना के बुधवार पेठ बाडा स्थित स्कॉटिश मिशन की सरकारी पाठशाला में प्रवेश दिलवा दिया। स्कूल परिवार में सदाशिव गोवन्डे से इनकी लम्बी दोस्ती हो गई। साथ ही विभिन्न जातियों के बहुत से बच्चे इनके मित्र बन गये।

मिशन स्कूल में हिन्दू, मुसलमान तथा ईसाई आदि सभी धर्मों के छात्र पढते थे। ज्योतिराव की सबसे मित्रता हो गई थी। इनके रहन—सहन, धर्म तथा आचार—विचार से इनका परिचय हुआ। समाज में व्याप्त विषमता में सुधार लाने की भावना वही से उनके मन में जागृत हो गई थी। रामोशी, कोली आदि पहाड़ी जन जातियों में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध वातावरण बन रहा था। श्री उमाजी नाईक ने १८२६ में विद्रोह का झण्डा लहराया, बापू जी मगरे एवं राधोजी मगरे ने १८४८ में ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध विद्रोह किया, लेकिन सभी अभियान असफल रहे। अंग्रेजों ने निर्दयतापूर्वक इनके विद्रोह को दबा दिया। इस घटना का इनपर बहुत प्रभाव पडा। ज्योतिराव की नजर में गुलामी घृणास्पद थी। इसलिए विदेशी शासन के विरुद्ध झण्डा उठाने वालों से ज्योतिराव एवं उनके मित्रों को स्वतंत्रता प्राप्ति की प्रेरणा मिली। ज्योतिराव के ब्राह्मण मित्र सखाराम ने उन्हें अपने विवाह का मिनंत्रण दिया। इसलिए ज्योतिराव उसकी बारात में चले गये। कुछ देर बाद अपने ब्राह्मणत्व पर घमण्ड करनेहवाले दकियानुसी ब्राह्मणों ने उन्हें अपने साथ चलते देखा। एक क्रोध भरे ब्राह्मण ने कहा —“क्यों रे शुद्र लडके, तू हमारे साथ कैसे जा

रहा है? तेरी यह हिम्मत कैसे हुई।” ज्योतिराव ने उत्तर में कहा इसमें हिम्मत की बात कहाँ आती है।’ इन्हें बहुत गुस्सा आया और वहाँ से अपने घर चले गये। रास्तों में चलते समय उनके मन में सामाजिक व्यवहार के प्रति उथल-पुथल मचती रही। घर पर जाने के बाद पिता को घटना के बारे में बताया गया। तब पिताने कहा “बेटा हम ठहरे नीच जातिवाले लोग। हम उनकी बराबरी कैसे कर सकते हैं? सुनने के बाद ज्योतिराव क्रोध में बोले हम नीची जातिवाले? किसने बनाया हमें नीच? यह सारा ब्राह्मणों का ढकोसला है। बारात की घोड़ी को छूने से उन्हें छूत नहीं लगती और हमारे छुने से छूत लग जाती है? क्या हम जानवरों से भी गये बीते है? ज्योतिराव की बात सुनकर गोविन्दराव फिर बोले बेटा, यही हमारे भाग्य में लिखा है। ब्राह्मणों ने तुम्हें दण्ड दिये बिना छोड़ दिया, यह क्या कम उपकार है उनका? पेशवा—राज्य में ऐसा होता, तो तुम्हें हाथी के पाँव तले कुचल दिया जाता” इस समय की स्थिति ही ऐसी थी। इससे ज्योतिराव फूले के भीतर सामाजिक चेतना जागरण हुआ।

ज्योतिराव फूले ने शिक्षा के महत्व को स्वयं समझा। उन्हें मालूम हुआ कि शुद्र—अतिशुद्र तथा महिलाओं में व्याप्त अज्ञान, अंधविश्वास तथा अशिक्षा को ज्ञान की ज्योति से विकीर्ण करने की आवश्यकता है। महात्मा फूले ने शुद्र—अतिशुद्र तथा महिलाओं में शिक्षा के प्रति रूचि उत्पन्न करने का दृढ संकल्प किया। इस कार्य के लिए उन्हें समाज के विरोध का सामना करते हुए अजीवन संघर्ष करना पडा तथा उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी आन्दोलन चलाया। महात्मा फूले ने शिक्षा की महत्ता को अपनी पुस्तक किसान का कोडा में प्रारंभिक पंक्तियों में भी बताया है। इस पुस्तक में महात्मा ज्योतिबा फूले ने शिक्षा के अभाव में होनेवाली हानियों का वर्णन भी किया है। उन्होंने लिखा है विद्या का अर्थात् शिक्षा ज्ञान न मिलने से मनुष्य की बुद्धि ठीक ढंग से काम नहीं कर सकती। जहाँ बुद्धि नहीं, वहाँ नीति की बातें भी नहीं हो सकती। नीति के अभाव में मानव कभी प्रगति नहीं कर सकता। जहाँ प्रगति नहीं वहाँ आर्थिक उन्नति नहीं हो सकती। आर्थिक विपन्नता के कारण ही शुद्र अपना धैर्य खो देते हैं। वह कहते थे कि सभी अनर्थों का मूल केवल अविद्या या अशिक्षा है। समाज की विपन्नावस्था के कारणों को जान लेना ही उस समय एक बड़ी चुनौती थी। महात्मा फूले नारी उत्थान के प्रबल समर्थक थे। भारत में १९ वीं शताब्दी के प्रारंभ में स्त्री शिक्षा को लेकर प्रबल विरोध था। कोई व्यक्ति अपनी पुत्री को स्कूल भेजने का साहस करता, उसे पागल समझा जाता था और उस पर विश्वास नहीं किया जाता था। समाज में बहु—विवाह का प्रचलन था। विधवा पुनर्विवाह का विरोध था। इसलिए महिलाओं का जीवन अत्यंत कारुणिक हो गया था। स्त्रियों को सम्मानजनक बनाने के लिए महात्मा फूले ने उसे शिक्षित करने का सुझाव दिया। उन्होंने कहा था, “एक शिक्षित माता जो सुसंस्कार अपने बच्चों में डाल सकती है, उन्हें हजार अध्यापक या गुरु नहीं डाल सकते।” उनका मानना था कि नारी समाज शिक्षित हो, तभी हमारा राष्ट्र प्रगति कर सकता है। शिक्षा क्षेत्र में महात्मा फूले ने क्रान्ति लाई। इस वजह से सरकार द्वारा महात्मा फूले का अभिनन्दन किया। सामाजिक क्रान्ति के प्रणेता महात्मा ज्योतिराव फूले का नाम दो शताब्दियों के पश्चात आज भी अविस्मरणीय और उनके कार्य अनुकरणीय है। वे आधुनिक भारत के “महात्मा” की उपाधि प्राप्त करनेवाले प्रथम महापुरुष थे। महात्मा ज्योतिराव फूले मानवता के धर्म को माननेवाले तथा विश्व परिवारवाद की विचारधारा रखनेवाले महामनीषी थे। वे सम्पूर्ण समाज में शिक्षा का प्रचार व प्रसार, नारी—उत्थान के लिए अथक प्रयास तथा शुद्र—अतिशुद्र वर्ग की प्रगति के लिए जीवन समर्पित करनेवाले समाज व धर्म सुधारक थे। पुरातनवादी, रूढीवादी, कट्टरवादी समाज के विरुद्ध चलाये गये आन्दोलन में सभी वर्गों के महामनीषियों ने तन,मन,धन से सहयोग व समर्थन दिया। वे भारतीय परम्पराओं के मूल्यों, स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व की भावना को प्रसारित के लिए अग्रसर हुए। इस देश में भगवान गौतम बुद्ध, संत कबीर और महात्मा ज्योतिराव फूले को गुरु मानने वाले डॉ. बाबासाहेब आम्बेडकर जीने आगे बहुत ही अध्ययन करते हुए इनकी विचार धाराओंको आगे बढ़ाते हुए साथ ही न्याय देते हुए संविधान के माध्यम के द्वारा डॉ. बाबासाहेब आम्बेडकरजी ने काम किया। दुनिया के सभी धर्म ग्रंथों का अध्ययन करने के बाद लगभग दो साल ग्यारह महिने सत्रह दिनों तक संविधान लिखते रहे। और सभी भारतीय देशवासियों को एक सूत्र में लाने का बहुत बड़ा कार्य किया है।

संदर्भ:—

१. सामाजिक क्रान्ति के प्रणेता महात्मा ज्योतिराव फूले.पृष्ठ —५३
२. वही पृष्ठ —५४,५५
३. वही पृष्ठ — ६२,
४. वही पृष्ठ —६७

म. फुले यांनी शेतकऱ्यांच्या, कष्टकऱ्यांच्या दुःखस्थिती विषयी मांडलेले विचार व त्याचा मराठी साहित्यावर झालेला परिणाम

प्रा. डॉ. चंदनशिव राजेश नारायण

बी.पी. आर्ट्स., कॉमर्स, अॅन्ड सायन्स कॉलेज, चाळीसगाव. जि. जळगाव

प्रास्ताविक (Introduction) -

स्वातंत्र्योत्तर काळात मराठी साहित्यात अनेक साहित्य प्रवाह निर्माण झालेले दिसतात. त्यात ग्रामीण साहित्य, दलित साहित्य, आदिवासी साहित्य, स्त्रीवादी साहित्य असे अनेक प्रवाह प्रबळ आणि समृद्ध स्वरूपात अस्तित्वात असलेले दिसतात. या सर्व प्रवाहांच्या निर्मितीची कारणमीमांसा लक्षात घेतली, तर प्रवाहांच्या निर्मितीस महाराष्ट्रातील वैचारिक परंपरा कारणीभूत असलेली दिसते. महाराष्ट्रात प्राचीन काळापासूनच सतत प्रबोधनाचे परिवर्तनाचे विचार मांडलेले दिसतात. त्यातून परिवर्तनाच्या अनेक चळवळी निर्माण झालेल्या दिसतात. वेळोवेळी सामाजिक वैगुण्ये नष्ट करून सामाजिक जीवन सुदृढ होण्याचा प्रयत्न केला गेला आहे. बुध्द, ज्ञानेश्वर, बसवेश्वर, इत्यादी किंवा वारकरी महानुभाव, वीरशैव वगैरे. या सर्व लेखकांनी आणि सांप्रदायाने समाज जीवनाचाच ध्यास घेतलेला दिसतो.

अर्वाचीन काळात म. फुले, म. विठ्ठल रामजी शिंदे, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी मांडलेल्या विचारांमुळे आधुनिक महाराष्ट्राची नव्हे, तर भारतीय समाजाची एक वेगळी जडण घडण झालेली दिसते. कारण म. फुले, डॉ. आंबेडकर हे मानवमुक्तीचा ध्यास घेणारे तसेच मानवता आणि स्वातंत्र्य, समता, बंधुत्व यांसारखी आधुनिक मुल्य मांडणारे, जोपासणारे विचारवंत आहेत.

शोधनिबंधाची उद्दिष्ट्ये - (Objective)

प्रस्तुत शोधनिबंधाची उद्दिष्ट्ये पुढीलप्रमाणे आहेत -

1. म. फुले यांचे साहित्य आणि विचार समजून घेणे.
2. म. फुले यांची शेतकऱ्यांकडे, कष्टकरी वर्गाकडे पाहण्याच्या दृष्टीचा वेध घेणे
3. म. फुले यांनी शेतकऱ्यांच्या कष्टकऱ्यांच्या ग्रामीणांच्या दुःस्थितीची केलेली कारणमीमांसा समजून घेणे.
4. म. फुले यांनी मांडलेली सामाजिक समतेची बंधुत्वाची संकल्पना समजून घेणे.

गृहितके - (Hypothesis)

प्रस्तुत संशोधनाचे गृहितके पुढीलप्रमाणे आहेत -

1. म. फुले यांची दृष्टी ही सामाजिक असून, ती मुलभूत चिंतनाची आहे.
2. म. फुले यांच्या विचारांमुळे सामाजिक क्रांती झाली.
3. म. फुले यांचे विचार हे सामाजिक उध्दार करणारे, मानवमुक्तीचा विचार मांडणारे आहे.
4. म. फुले यांचे विचार हे आधुनिक मूल्ये स्वातंत्र्य, समता, न्याय निर्माण करणारे आहेत.

संशोधन पद्धती -

संशोधनात विविध संशोधन पद्धती अस्तित्वात आलेल्या दिसतात. त्यात वैज्ञानिक संशोधन, शास्त्रीय संशोधन, सामाजिक संशोधन, प्रायोगिक संशोधन पद्धती, सर्वेक्षण पद्धती, तुलनात्मक पद्धती ऐतिहासिक पद्धती अनुसूची

पद्धती, सांख्यिकी पद्धती, प्रश्नावली, मुलाखत वगैरे पद्धती अस्तित्वात असल्या तरी प्रस्तुत संशोधनात ग्रंथालयीन, वर्णात्मक, विश्लेषणात्मक या पद्धतींचा अवलंब केला आहे.

म. फुले यांनी तत्कालीन सामाजिक जीवनाचे केलेले निरीक्षण, केलेले वर्णन, हे लक्षवेधी स्वरूपाचे आहे. त्यात तत्कालीन समाजाची दुःस्थिती, समाजातील स्थितीशीलता, अशिक्षितपणा, अज्ञान, अंधश्रद्धा, कर्मकांड, विषमता, जातिव्यवस्था, शोषण, अस्पृश्यता, दुःख, दैन्य, उच्चनीचतेची दृष्टी या सर्वांचे वास्तव चित्रण केले आहे. महात्मा फुले यांना हा समाज पाहून अत्यंत दुःख होते. समाज नागवला जात आहे अवनतीकडे वाटचाल करीत आहे. समाजात परिवर्तन झाले पाहिजे. शेतकरी करी, कामगार, शोषित जनता या गर्तेतून बाहेर पडली पाहिजे. अस्मानी-सुलतानी आणि समाज विघातक प्रवृत्तीतून आणि त्यामुळे निर्माण झालेल्या संकटातून जनता मुक्त झाली पाहिजे असे त्यांना वादु लागले. म. फुले यांनी या संदर्भात मुलभूत चिंतन केले आणि आपले विचार मांडले ते केवळ विचार मांडून थांबले नाहीत तर त्यांनी तशी प्रत्यक्ष कृतीही केली. स्त्री, शुद्रादिचा उद्धार व्हावा म्हणून प्रयत्न केले. त्यासाठी त्यांनी अनेकविध कार्य केले. मुलींसाठी शाळा काढल्या. शेतकऱ्यांच्या समस्या मांडल्या आणि समाजसुधारणेचे कार्य केले. म. फुले यांनी तृतीय रत्न, ब्राह्मणाचे कसब, गुलामगिरी, पुणे सत्यशोधक समाजाचा रिपोर्ट, शेतकऱ्यांचा आसुड, सार्वजनिक सत्यधर्म. याबरोबर ऐतिहासिक पोवाडा, विविध विषयानुषंगाने पत्रे, असे अनेक प्रकारचे लेखन केले. त्यांच्या या सर्व लेखनातून / साहित्यातून तत्कालीन समाजाचे विदारक दुःस्थितीचे वास्तव चित्रण केले आणि त्या स्थितीची कारणमीमांसा केली. ही कारण मीमांसा किंवा त्यांनी सुचविलेले उपाय जर लक्षात घेतले, तर मानवी जीवनाकडे पाहण्याची त्यांची दृष्टी, त्यांची मानवमुक्तीची कल्पना व त्यामागे असणारी त्यांची तळमळ आणि वैचारिकतेचा मुलभूतपणा लक्षात येतो. अज्ञान हे गरीबीचे मुळ कारण आहे असे सांगितले. म्हणून महात्मा फुले म्हणतात, "विद्येविना मति गेली । मति विना नीति गेली । नीतिविना गती गेली। गतीविना वित्त गेले आणि वित्ताविना शूद्र खचले । इतके अनर्थ एका अविद्येने केले." त्यांच्या विचाराचा समाज जीवनावर आणि समाजावर झालेला परिणाम ही जाणवतो.

म.फुले हे विद्रोही चळवळीचे जनक मानले जातात. उच्च वर्णियांनीधर्म, चालीरिती आणि सामाजिक सत्ता त्यांच्या आश्रयाने जे शोषण केले त्याविरुद्ध त्यांनी आवाज उठविला, धार्मिक व सामाजिक संतैतून उद्धवणारी गुलामगिरी नाहिशी व्हावी, अज्ञानामुळे गरीब, दीन, पददलित समाजाचे जे शोषण होते ते थांबावे म्हणून कार्य केले.म. फुले यांनी जे लेखन केले आहे ते अतिशय मुलभूत आणि प्रभावकारी आहे. त्यांनी 'गुलामगिरी' हा ग्रंथ लिहिला. त्यात जुन्या परंपरागत ब्राह्मण प्रधान धार्मिक, सामाजिक संस्कृती विरुद्ध बंड पुकारले. समाजरचनेवर जुन्या अवतार कल्पनांवर, जुन्या मुल्यांवर घाणाघाती हल्ला चढविला. तसेच या विषयमतेच्या काळात अस्पृश्याचे दुःख त्यांनी येशीवर टांगले. मनुष्य जन्माने, जातीने वा धनाने श्रेष्ठ वा कनिष्ठ ठरत नसून तो कर्मनि श्रेष्ठ वा कनिष्ठ ठरतो. तो स्वतःच्या भाग्याचा नियंता असतो असे सांगितले. तसेच कोणताही धर्म ईश्वर प्रणीत नाही किंवा कोणताही धर्मगथ देवनिर्मित नाही, चातुर्वर्ण्य किंवा जातिभेद हा ईश्वर निर्मित नाही असे सांगितले. शिवाय स्त्रियांच्या आणि अस्पृश्यांच्या गुलामगिरीचा प्रश्न ही सर्व प्रथम त्यांनीच उपस्थित केला. समाजातील अज्ञानाचे दुःखाचे कारण अज्ञान, शिक्षण नसणे हे आहे. असे सांगून शिक्षणाविषयी ही विचार मांडले. फुले यांनी शंभर वर्षांपूर्वीच शेतकऱ्यांच्या प्रश्नावर लक्ष केंद्रित केले. कारण भारत हा कृषकांचा देश आहे, भारतीय समाज कृषी जीवनाशी निगडीत आहे. भारतीय संस्कृतीचा आणि अर्थ च्यवस्थेचा आत्मा आहे. येथील जीवनच देव-देवता, सण, उत्सव सोहळे किंवा जीवनशैली ही कृषी जीवनावर अवलंबून आहे. त्यामुळे त्यास संस्कृतीचा मध्यवर्ती केंद्रबिंदू मानला पाहिजे असे सांगून शेती व खेड्यांशी निगडीत असणाऱ्या प्रश्नांवर शेतकऱ्यांच्या वेपात उपस्थित राहून शेतकऱ्यांच्या विषयी विचार मांडले. शेतकरी, शेतमजूर, दलित, शोषित आणि स्त्रियांच्या शोषणाचा प्रश्नही त्यांनी उपस्थित केला. सत्यधर्म आणि

सत्यशोधक समाजाची निर्मिती केली. इतकेच नव्हे तर त्यांनी शेतकरी व बहुजन समाजातील दोषही निर्भयपणे दाखविले आहेत. थोडक्यातमहात्मा फुले हे जे जे शोषित आहेत त्यांच्या व्यथा मांडणारे आणि शोषण व्यवस्थेचा शोध घेणारे लेखक आहेत. बहुजन समाजाबद्दल शेतकऱ्यांबद्दल ग्रामीणांबद्दल कष्टकऱ्यांबद्दल व स्त्रीयांच्या अस्पृश्यांच्या शिक्षणासाठी अविधात कष्ट घेणारे मानवीसमतेवर भार देणारे, बंधुत्व निर्माण करण्यासाठी प्रयत्न करणारे महात्मा आहेत. म. फुले यांनी मांडलेल्या विचाराच्या पाठीमागे असलेली त्याची मुलभूत उदारदृष्टी लक्षात घेतले तर पुढील साहित्यकांच्या प्रेरणांचा व स्वरूपाचा विचार करता येतो. म. फुले यांनी शेतकरी, कष्टकरी, बहुजन समाजातील तळागाळातील समाजाचे चित्रण केले आहे. त्यांच्या प्रश्नावर दुःखावर, शोषणावर लक्ष केंद्रित केले आहे. त्यांनी ग्रामीण जीवनाचे नेमके सुत्र ओळखले होते. ग्रामीण जीवनाच्या केंद्रस्थानी शेतकरी आहे आणि शेती हाच मुख्य व्यवसाय आहे. शेती पिकली तर आबाद न पिकली तर सर्व बर्बाद ! म्हणून या घटकाकडे लक्ष वळविलेले दिसते. शेतकऱ्यांचे शोषण, ब्राह्मण भटजी वर्गाची मनमानी, समाजातील अज्ञान, विषमता, दारिद्र्य, अनिष्ट रूढी, परंपरानिष्ठता, अभिमानशून्यता इत्यादी नष्ट करून आत्मभान जागृत करण्याचा प्रयत्न त्यांनी केला. म. फुलेंचा विचार हा मानवी स्वातंत्र्याकडे व समतेकडे नेणारा विचार होता. भारतातील परंपरागत समाज संस्थांच्या विरुद्ध बंड करणारे ते पहिले पुरुष होते. शाश्वत नैतिक सत्याच्या आधारावर त्यांची विचारसरणी आधारलेली होती.

म. फुले यांनी शेतकऱ्यांच्या, कष्टकऱ्यांच्या आणि ग्रामीणांच्या संदर्भात त्यांच्या दुःस्थितीची कारणमीमांसा केली असली तरी त्यांनी इतर विषयांवर ही लेखन केले त्यात त्यांनी कर्मकांडाचा, कर्मठपणाचा निषेध केला. (पाप-पुण्य, स्वर्ग नरक, पुनर्जन्म, नवस, गंडा दोरा इत्यादी) स्त्री-पुरुष विषमता आणि जातीयव्यवस्थेतील विषमता या विरुद्ध संघर्ष केला. त्याचप्रमाणे ब्राह्मण्य ब्राह्मण यात भेद केला. पुण्यातील काँग्रेस अधिवेशनात शेतकऱ्यांचे प्रतिनिधीत्व करून शेतकऱ्यांचे प्रश्न मांडले. समाजाला मानसिक गुलामगिरीतून मुक्त करण्याचा प्रयत्न केला. स्त्री शुद्रासाठी शैक्षणिक कार्य केले. अज्ञान, अडाणीपणा आणि दुःख यांची कारणे शोधून ते नष्ट करण्याचा प्रयत्न केला. शेतकऱ्यांचे, दीन दुबळ्यांचे शोषण थांबविण्यावर भर दिला. शेतकऱ्यांनी काय करावयास हवे, या संदर्भात ही उपदेश केला. बालविवाह, बालाजरठ विवाह, इत्यादीचा निषेध केला व या गोष्टी थांबविण्याचा प्रयत्न केला.

संदर्भ सूची

1. डॉ. सदा कन्हाडे :मराठी साहित्याची सांस्कृतिक पार्श्वभूमी: दुसरी आवृत्ती
2. १९५० स्वरूप प्रकाशन, सिडको औरंगाबाद-३ प्र.आ. २००८
3. नागनाथ कोत्तापल्ले : ग्रामीण साहित्य स्वरूप आणि शोध..
4. गो. मा. पवार, :मराठी साहित्य, प्रेरणा व स्वरूप (१९५०-१९७५)
5. शरद पाटील : मार्क्सवाद, फुले आंबेडकरवाद सुगावा प्रकाशन, पुणे ३०,
6. प्र.आ. १९९३
7. य. दि. फडके : महात्मा फुले समग्र वाङ्मय महाराष्ट्र राज्य
8. आणि संस्कृती मंडळ, मुंबई, ५ वी आवृत्ती १९९१
9. आनंद यादव : ग्रामीण साहित्य : स्वरूप आणि समस्या
10. यादव आनंद : ग्रामीण साहित्य स्वरूप आणि समस्या
11. मुलाटे वासुदेव (सं.) : ग्रामीण साहित्य चळवळ आणि आम्ही
12. भोसले द.ता. :ग्रामीण साहित्य एक चिंतन
13. जाधव रा.ग. : साहित्य आणि सामाजिक संदर्भ

अर्थतज्ञ: डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर

डॉ. भागवत सुभाष गजधाने

सहाय्यक प्राध्यापक (पी.जी.विभाग) छ. शिवाजी नाईट कॉलेज ऑफ आर्ट्स अँड कॉमर्स सोलापूर

bhagawatgajdhane22@gmail.com

प्रस्तावना :

डॉ. आंबेडकरांच्या व्यक्तिमत्त्वाचा महत्त्वाचा परिमाण म्हणजे त्यांची अर्थशास्त्रीय बाजू होय. अर्थशास्त्रज्ञ आंबेडकरांना त्यांच्या सुरुवातीच्या विद्यार्थी जीवनापासूनच या विषयात विशेष रूची होती. अर्थशास्त्राचा गंभीर विद्यार्थी म्हणून त्यांनी विशेष प्राविण्य संपादन केले होते. पीएच.डी. सारखी उत्कृष्ट पदवी केवळ त्यांनी अर्थशास्त्र या विषयात मिळवली.

अर्थशास्त्राचा विद्यार्थी म्हणून कार्य :

त्यांच्या प्रबंधाचे शिर्षक होते "रुपयाचे मूल्य. हे संशोधन 1947 मध्ये हिस्ट्री ऑन इंडियन करन्सी अँड बँकिंग या नावाने प्रकाशित झाले. या आधी त्यांनी 1919 च्या उत्तरार्धात आणि 1920 च्या सुरुवातीस मूकनायकच्या प्रकाशनासह समाजाभिमुख पत्रकारितेच्या क्षेत्रात त्यांनी प्रवेश केला तेव्हा ते बॉम्बेतील "सिडनहॅम"कॉलेजमध्ये अर्थशास्त्राचे प्राध्यापक होते. त्यांचा प्रबंध, द इन्व्होल्यूशन ऑफ प्रोव्हिजनल फायनान्स इन ब्रिटिश इंडिया, एम.ए. च्या पदवीसाठी तयार झाला. 1915 मध्ये इस्ट इंडिया कंपनीच्या फाईनान्स विषयक केलेल्या शोधा मध्ये ब्रिटिश काळातील भारतविरोधाच्या आर्थिक निर्तीचा पर्दाफाश केला. आंबेडकरांनी देशाप्रती असलेल्या त्यांच्या कृतज्ञतेचाही हा पुरावा आहे आणि ब्रिटिशांना भारतात आर्थिक मदत केली ते एक कटकारस्थान होते सिद्ध झाले.

डॉ. बाबासाहेबांचे आर्थिक विचार व भाषणे :

अर्थशास्त्राचे प्राध्यापक म्हणून कार्यरत असतांना भारतीय समाजामध्ये बंधुभाव प्रस्थापित व्हावा यासाठी सामाजिक न्यायाचा संदेश त्यांनी आपल्या भाषणांमध्ये आणि लेखांमधून दिला. त्यात असे म्हटले आहे की, "हिंदूंच्या शस्त्रागारातील सर्वात मोठे शस्त्र हे त्यांची आर्थिक शक्ती आहे, ज्याच्या मदतीने ते दलित जातींचे शोषण करतात.¹सध्याच्या ग्रामीण भारतामध्ये ८०% जमीन मालक हा शेतमजुर आणि शहरामध्ये भांडवलदार हे बांधकाम उद्योजकाच्या माध्यमातून भाडेकरूंचे शोषण करित आहे. झोपडपट्ट्यांमध्ये राहणाऱ्या दलितांवर वाढत्या अत्याचारामुळे ते कायमस्वरूपी देशाच्या दारिद्र्य रेषेखाली आहेत. आंबेडकरांना या परिस्थितीची संभाव्य पूर्वसूचना होती. म्हणून त्यांनी विशिष्ट परिस्थितीची मागणी केली. म्हणून त्यांनी भारतात विशिष्ट राजकीय समाजवादाच्या स्थापनेच्या बाजूने आपले विचार मांडले. त्यांचे असे मत होते की, "आर्थिक शोषण संपवायचे असेल तर मूलभूत उद्योगांची मालकी आणि व्यवस्थापन राज्यांच्या हातात असले पाहिजे आणि विमा कंपन्यांचे राष्ट्रीयीकरण झाले पाहिजे. कृषी क्षेत्रात शासनाने मालक, भाडेकरू आदींना मोबदला देऊन जमीन संपादित करावी व त्यावर सामूहिक शेती करावी², अशी सूचनाही करण्यात आली."डॉ. आंबेडकर हे राज्य समाजवादाचे समर्थक होते. अशा प्रकारे त्यांनी दलित, मागासवर्गीय आणि महिलांना आर्थिक स्वातंत्र्यात सहभागी करून घेण्याचे स्वप्न पाहिले होते. त्यांनी निवेदनाद्वारे देशाच्या भावी अर्थव्यवस्थेबद्दल आपले मत व्यक्त केले होते. हे ज्ञापन पुस्तकाच्या रूपात (प्रांत आणि अल्पसंख्यांक) छापण्यात आले होते, त्यात डॉ. आंबेडकरांनी त्यांच्या योजनेबद्दल लिहिले आहे "या योजनेचे दोन पैलू

आहेत. एक म्हणजे ते आर्थिक जीवनातील महत्वाच्या क्षेत्रात राज्य समाजवाद सूचित करते. राज्य समाजवादाचे काम विधिमंडळाच्या इच्छेवर सोडलेले नाही, हे त्याचे दुसरे वैशिष्ट्य. या राज्य समाजवादाची स्थापना हा राज्यघटनेचा कायदा असेल जेणेकरून तो विधिमंडळाच्या किंवा कार्यकारिणीच्या कोणत्याही पायरीने बदलता येईल. ज्या लोकांना व्यक्तीगत स्वातंत्र्यावर विश्वास आहे त्यांना हुकूमशाही बदल नाराजगी असते आणि ते लोक स्वतंत्र समाजाचे शासन प्रणाली अंतर्गत लोकशाहीवर भर देतात. त्यामुळे आमची अडचण अशी आहे की हुकूमशाहीशिवाय समाजवादी व्यवस्था असावी, हा आमचा समाजवाद हा संसदीय प्रणाली सोबत असावा."³

त्याकडे पाहून डॉ. आंबेडकरांनी केवळ शैक्षणिक क्षेत्रात अर्थशास्त्राच्या रूपात आपली प्रतिभा दाखवली की व्यावहारिकदृष्ट्या भारतीय राज्याच्या आर्थिक अधिरचनेने एक निरोगी वैचारिक बाजू मांडली. म्हणूनच, ते एक पात्र अर्थशास्त्रज्ञ देखील होते परंतु त्यांच्या आर्थिक विचारांचा संबंध आहे जिथे भांडवलशाहीच्या दबावाखाली हळूहळू जगणारी लोकशाही शासन व्यवस्था आणि राज्य समाजवाद यांच्यात समन्वय साधण्याचे दिव्य स्वप्न ते पाहत होते, पण अशी कल्पना प्रत्यक्षात येण्याची शक्यता नगण्य होती कारण समाजवाद आणि भांडवलशाही या दोन भिन्न व्यवस्था आहेत ज्यांचे एकत्रीकरण त्यांना मान्य नव्हते. ते त्यांच्या निव्वळ समाजवादी कल्पनेची अंमलबजावणी कशी करत आहेत हे तेव्हाच समोर आले जेव्हा त्यांना देशाच्या नियोजनात हस्तक्षेप करण्याची संधी मिळाली असती. भांडवलशाही आणि ब्राम्हण्यवाद यांच्या हातमिळवणीमुळे त्यांच्या अर्थ विशेषज्ञतेचा योग्य वापर होऊ शकला नाही." 1937 मध्ये, जेव्हा ते मुंबई विधानसभेत आमदार होते तेव्हा त्यांनी जमीनदारी उन्मुलनाचा अभूतपूर्व प्रस्ताव ठेवला होता.⁴त्यांचे अर्थशास्त्रज्ञ विशेषतः निराश वर्गासाठी वचनबद्ध होते. या बदलचे विचार 'अस्पृश्यांच्या आर्थिक प्रगतीचा आधार'या बहिष्कृत भारताच्या संपादकीय मध्ये पाहता येतील. अस्पृश्यता टाळण्यासाठी शासकीय सेवेतून उपजीविका करणारे महार हे राजपुरुष आहेत, कारण सरकारी नोकराचा कुणाशीही संबंध नसतो, त्यामुळे त्याला सामाजिक बहिष्काराची भीतीही वाटत नाही.⁵सरकारी नोकर म्हणून नियुक्त केल्यामुळे ते थेट सामाजिक उपेक्षेचे बळी होण्याचे टाळू शकले असते, परंतु ते स्वतंत्र झाले, हा विचार करणे चुकीचे आहे. आंबेडकरांनी याचा अनुभव घेतला आणि सांगितले की ज्यांना थोडीशी जमीन मिळेल त्यांनी नोकरी सोडावी आणि शेती करावी. मग ते कोणावरही अवलंबून न राहता स्वतंत्र होतील."ही त्यांची संमिश्र सामाजिक दृष्टी होती ज्यामध्ये त्यांनी सामाजिक स्थितीत राहणाऱ्या अस्पृश्यांच्या मानसिक दुष्परिणामांची भीती व्यक्त केली होती. जन्मापासूनच दलित मुलांच्या कानात तो अस्पृश्य आहे, नीच आहे, असे अपमानजनक शब्द वापरल्यामुळे मुले स्वतःला हीन समजू लागतात. त्याचे मानसिक दुष्परिणाम आयुष्यभर राहतात. जेव्हा मन दुर्बल होते तेव्हा त्यातून कोणतेही प्रयत्न करता येत नाहीत. मुलांना वेगळ्या कॉलनीत मोकळे केले जाईल.शेती हाच त्यांच्या उदरनिर्वाहाचा उपाय असेल, तरच तो स्वावलंबी होईल.⁶जानेवारी 1938 मध्ये 'एसप्लेनेड'बाँम्बे'येथे एक मोठी सभा झाली. डॉ. आंबेडकरांनी यामध्ये पाच कलमी आर्थिक सूचना दिल्या होत्या, ज्यात लोककल्याणाची भावना आढळते, जसे की

1. शेतमजुरांची मजुरी निश्चित करून त्याचे जोरदार पालन केले पाहिजे.
2. जमीनदारांच्या महसुली माफीसह लहान शेतकऱ्यांची थकबाकी माफ करण्यात यावी.
3. जमीनदारी वेठबीगारी प्रथा कायद्याने संपवावी.
4. जमीनदारी व्यवस्था ही आर्थिकदृष्ट्या पराकोटीची,सामाजिक अत्याचारी आहे. त्यामुळे ती रद्द करण्यात यावे.
5. छोट्या शेतकऱ्यांच्या सिंचन करात 50 टक्के कपात करावी.⁷

अशाप्रकारे, अर्थशास्त्रज्ञ आंबेडकरांनी आयात केलेल्या भांडवली गुंतवणुकीत भारताच्या आर्थिक मुक्तीची कल्पना केली नाही, तर ते लोकशाहीकरण करून स्वदेशी अर्थव्यवस्थेला आधुनिक स्वरूप देऊ इच्छित होते.

त्यांनी टीकात्मक पद्धतीने सांगितले की, "संसदेने आर्थिक विषमतेकडे लक्ष दिले नाही." उद्योगांच्या राष्ट्रीयीकरणाशी ते पूर्णपणे सहमत आहेत. त्यांचे मत होते - "सर्वांसाठी आवश्यक जमीन न मिळाल्यास सोव्हिएत युनियनच्या पद्धतीने सामूहिक शेती करण्याशिवाय पर्याय नाही." डॉ. आंबेडकरांच्या मजबूत आर्थिक धमतेमुळे, 2 जुलै 1942 रोजी व्हाईसरॉयने त्यांच्या कार्यकारिणीचे सदस्य म्हणून कामगार खाते त्यांच्याकडे सोपवले.

सारांश :

एकूणच डॉ. आंबेडकरांच्या बहुआयामी व्यक्तिमत्त्वाकडे पाहिल्यास संशोधकांच्या दृष्टिकोनातून हे लक्षात येते की, साध्या घरातील आणि अस्पृश्य जातीतील व्यक्तीसुद्धा हेतुपूर्ण समर्पण, कठोर परिश्रम, सतत सरावाच्या बळावर स्वतःमध्ये राष्ट्रीय उपयुक्त क्षमता निर्माण करू शकतात आणि एक आदर्श उदाहरण बनू शकतात. समाजासाठी आणि तो एकाच वेळी अनेक आघाड्यांवर आपली सेवा देऊ शकतो. यश-अपयशाचा मुद्दा, त्यामुळे समाजपरिवर्तनाचे काम अखंडपणे सुरू असते. डॉ. आंबेडकरांचे राहिलेले कार्य आता त्यांच्या वैचारिक वारसांना करावे लागणार आहे.

तळ टीपा

1. डॉ. आंबेडकर - अस्पृश्यता आणि भारतीय संविधान - दलित मासिक, एप्रिल 1975, पृ.-14.
2. मधु लिमये - डॉ. आंबेडकर : एक चिंतन, पृ.-96.
3. संपादकीय अग्रलेख वेगळी वस्ती करा - बहिष्कृत भारत, डिसेंबर, 1927
4. डॉ. डी.के. वैसंत्री - आंबेडकरांचे सामाजिक दर्शन - योजना, 15-01-1992.
5. पूर्वोक्त, मधु लिमये, पृ.-18.
6. डॉ. आंबेडकर संशोधन साधने - Vol-I, पृ.- 275.
7. पूर्वोक्त, डी.के. वैसंत्री
8. पूर्वोक्त, मधुलिमये, पृ.-18.

राजर्षी छत्रपती शाहू महाराजांचे शाश्वत शेती विकासाचे कार्य

प्रा. डॉ. श्रद्धानंद बा. माने

अर्थशास्त्र विभागप्रमुख, माधवराव पाटील महाविद्यालय, पालम. जि.परभणी.

shradhanandmane@gmail.com

प्रस्तावना :

सर्वांगीण आर्थिक विकास, समाजातील मागसलेल्या वर्गाचे कल्याण, आर्थिकदृष्ट्या दुर्बल घटकांच्या उत्पन्नात वाढ झाली पाहिजे, परिणामी त्यांच्या राहणीमानात वाढ झाली पाहिजे, त्यांचे जीवनमान उंचावले पाहिजे, झालेल्या विकासाचे वाटप समाजाच्या शेवटच्या स्तरातील अंतीम घटकांपर्यंत पोहोचले पाहिजे असे समाजवादी आर्थिक धोरण राजर्षी शाहू महाराजांनी स्वीकारले होते. त्यादृष्टीने धोरणांची आखणी करून त्यांच्या प्रभावी अंमलबजावणीवर राजर्षी शाहू महाराजांनी भर दिला आणि आपल्या संस्थानातील प्रजेच्या हिताचे रक्षण त्यांनी केले. कृषी व्यवसाय हा भारतीय अर्थव्यवस्थेचा कणा आहे याची जाणीव महाराजांना प्रथमपासूनच होती. म्हणूनच ते आपल्या एका भाषणात म्हणाले होते, "खेड्यातील शेतकऱ्यांचे त्यांच्या शेतीवर पोट भरत नाही. म्हणून शेती व्यवसाय हा आधुनिक व अधिक प्राप्तीचा झाला पाहिजे." या व्यवसायाने अधिकाधिक लोकांना कामधंदा पुरविला पाहिजे. "शेतीविषयक आधुनिक ज्ञान व तंत्रज्ञानाची माहिती करून घेणे व कोल्हापूर संस्थानात तो प्रयोग राबवून शेती उत्पादन वाढीला चालना देणे, शेती आणि शेतकऱ्यांच्या कल्याणासाठी नवनविन प्रयोग करण्याचा त्यांचा प्रयत्न होता. शेतीचे महत्त्व स्पष्ट करताना महाराज म्हणाले होते, "कृषी कार्ये इतके पवित्र आहेत की वैदिक काळात वर्षातून एकदा चक्रवर्ती राजा व त्याचे मंत्री ही नांगर हाकीत असत. ज्यायोगे भूमीमध्ये एक दाणा टाकून हजारो दाणे मिळतात व ज्या कृषी कर्मावर सारी मनुष्यजात उपजिविका करते ते कृषी कर्म हलके अथवा वाईट असे मी मुळीच मानीत नाही. आपल्याला माहित आहे की, कृषी कर्मापासून मनुष्य जातीला सुख मिळते. कृषी कर्मावर समाजाची सुव्यवस्था व उन्नती अवलंबून आहे." राजर्षी शाहू महाराजांचे हे विचार फ्रान्समधील निसर्गवादी विचारवंतांच्या विचारांशी मिळते जुळते आहेत. तसेच कार्लमार्क्स या विचारवंताने म्हटल्याप्रमाणे श्रमातून संपत्ती निर्माण होते. त्याच्या या विचाराशी राजर्षी शाहू महाराजांचे विचार तंतोतंत जुळणारे आहेत.

राजर्षी शाहू महाराजांचे शेतीविषयक कार्य आणि विचार शेतीच्या शाश्वत विकासाला प्रेरणा देणारे आहेत. शेतीची उत्पादकता वाढावी यासाठी आणि सुधारित शेती पद्धतीला चालना देण्याच्या हेतूने शेतीच्या आधुनिकीकरणासाठी आणि शेती व्यवसायात आधुनिक तंत्रज्ञानाच्या वापराला प्रोत्साहन देण्यासाठी ते म्हणतात, "देशाचे कल्याण ज्यांना करावयाचे आहे त्यांनी प्रथम आपल्या शेतीच्या सुधारणेकडे लक्ष दिले पाहिजे. इतर देशांच्या मानाने आपले शेतीचे उत्पन्न सरासरीने पुष्कळ कमी आहे. शेती सुधारण्यासाठी सुधारलेल्या औतांची फार जरूरी आहे." यावरून त्यांची कृषी व्यवसायाच्या विकासाची तळमळ दिसून येते.

संस्थान पाहणी दौरा :

राजर्षी छत्रपती शाहू महाराजांनी सत्तासूत्र हाती घेतल्यानंतर संस्थानचा पाहणी दौरा केला. प्रजेची आर्थिक परिस्थिती समजावून घेणे हा त्यांचा हेतू होता. गारगोटी, भुदरगड, पन्हाळा, गडहिंगलज, कटकोळ या भागामध्ये त्यांनी पाहणी केली. या पाहणी दौऱ्यातून त्यांच्या असे लक्षात आले की, पाण्याच्या कमतरतेमुळे शेती आणि शेतकऱ्यांची आबाळ होत आहे. त्याचा परिणाम शेतीच्या उत्पन्नावर आणि पर्यायाने शेतकऱ्यांच्या जीवनमानावर

होत आहे. गरीबीचे प्रमाण दिवसेंदिवस वाढत आहे. शेतीतून निर्वाहापुरतेही उत्पन्न मिळत नाही. अनेक शेतकऱ्यांच्या जमिनी सावकारांकडे गहाण आहेत. या सर्व बाबींचा महाराजांनी खुलासेवार अभ्यास करून शेतकऱ्यांना त्यांच्या आर्थिक दारिद्र्यातून बाहेर काढण्यासाठी आपले शेतीच्या सुधारणेचे धोरण तयार केले आणि त्याच्या प्रभावी अंमलबजावणीवर भर दिला.

शेती सुधारणेसाठी पंचसुत्री कार्यक्रम :

1. दुष्काळ निवारणार्थ बागायतीसाठी आणि पिण्यासाठी पाण्याचा पुरवठा व्हावा म्हणून लहान-मोठ्या योजना तयार करणे.
2. कृषी शिक्षणाचा अंतर्भाव असलेल्या कृषी विस्तार योजना तयार करणे.
3. विहीरी खोदण्यासाठी व सुधारित अवजारांसाठी शेतकऱ्यांना स्वस्त दराने किंवा विनव्याजी कर्ज पुरवठा करणे.
4. सहकारी कृषीजन्य उद्योग, व्यापार व पतपेढ्यांना उत्तेजन देणे.
5. वनस्पतींचा जास्तीत जास्त उपयोग करणे.

राजर्षी शाहू महाराजांनी वरील पंचसुत्री योजनांचा अंतर्भाव असलेले कृषी धोरण कोल्हापूर संस्थानात राबवून शेतीच्या शाश्वत विकासावर भर दिला.

एकूण खर्चातील वाढ :

शेती व्यवसाय बागायती करायचा असेल तर पाणी पुरवठ्याची योजना, शेतकऱ्यांसाठी कर्ज आणि वन विस्तार योजना राबवल्या पाहिजेत हे महाराजांनी ओळखले होते. त्यामुळे त्यांनी आपला चालू खर्च आणि भांडवली खर्च वाढविण्याचा निर्णय घेतला. राजर्षी शाहू महाराजांच्या पहिल्या दशकात हा खर्च रु.८१.७ हजार ते २२४.९ हजार एवढा होता. १९०५ ते १९१५ या काळात हा खर्च २३९.६ हजार रु. ते ११७८.४ हजार रु. या दरम्यान होता. त्यांच्या कारकिर्दीच्या शेवटच्या सहा वर्षात हा खर्च रु. २७५.४ हजार ते रु. ५९९.१ हजार च्या दरम्यान होता. यावरून असे दिसून येते की, राजर्षींनी संस्थानात शेती आणि पाणी पुरवठ्याच्या योजना तसेच शेतकऱ्यांना दिलेली कर्जे या सर्व प्रकारचा खर्च सतत वाढता ठेवला. त्यामुळे शेतीच्या शाश्वत विकासात भर पडत गेली.

पाणी पुरवठा योजना :

कोल्हापूर संस्थानात वारंवार येणारे दुष्काळ आणि त्यामुळे येणारी अन्नधान्याची टंचाई या समस्येवर कायमचा उपाय करण्यासाठी महाराजांनी शेतीला नियमित पाणीपुरवठा करण्यासाठी आणि पिण्याच्या पाण्याचा प्रश्न सोडवून उद्योग व्यवसायाला लागणारा पाणीपुरवठा यासाठी मोठ्या प्रमाणात खर्चाची तरतूद करून पाणी पुरवठ्याच्या योजना आखून त्यांची प्रभावी अंमलबजावणी केली. सुरुवातीला त्यासाठी २७.६ हजार रु. ते ७५.१ हजार रु. खर्च केले. त्यानंतर या खर्चात वाढ करून तो ५५.६० हजार रु. ते ६३८.२ हजार रु. केला. त्यामुळे पुढीलप्रमाणे पाणीपुरवठा योजना राबवता आल्या.

बुडकी आणि इतर विहिरी :

कोल्हापूर संस्थानच्या विशिष्ट भौगोलिक रचनेमुळे पाटाच्या पाण्याच्या योजना राबवणे शक्य नव्हते. नदीकाठावर उपसासिंचन योजना सुरु करणे हाच उपाय होता. म्हणून महाराजांनी ३ ते ४ बुडकी विहिरींची साखळी नदीपासून उंच टेकडीपर्यंत केली आणि मोटेने नदीपात्रातील पाणी एका विहिरीतून दुसऱ्या विहिरीत सोडले. नंतर हे पाणी शेतीच्या सिंचनासाठी उपयोगात आणले. यासाठी महाराजांनी फड पद्धतीचा अवलंब केला. (भांडवल, मनुष्यबळ, बैल एकत्र आणणे) याशिवाय राजर्षी शाहू महाराजांनी नविन विहिरी खोदणे आणि जुन्या विहिरीची दुरुस्ती करणे यावरही भर दिला. १९०९-१० यावर्षी कच्च्या व पक्क्या विहिरींची संख्या ११.९ हजार होती ती १९२०-२१ यावर्षी १२.८ हजार झाली. म्हणजे दहा वर्षात एक हजार नविन विहिरी खोदल्या. तसेच शेतकऱ्यांना

नविन विहिर खोदण्यासाठी आणि जुन्या विहिरींच्या दुरुस्तीसाठी लघू आणि मध्यम मुदतीची कर्जे देण्यात आली. त्यामुळे शेतीच्या पाणी पुरवठ्यासाठी शाश्वत साधन उपलब्ध झाले.

पाणी पुरवठ्याच्या छोट्या योजना :

कोल्हापूर संस्थानात १८९६-९७ साली दुष्काळ पडला होता. त्यावेळी महाराजांनी कळंबे, बार्लिंगे, निगवे, भेडसगाव, कोडोली, सोनवडे, अतिग्रे, अबू, काटकोळ, बानोर व इतर ठिकाणच्या जुन्या तलावांच्या दुरुस्तीची कामे केली. तसेच शहापूर, बांबवडे आणि वडगाव येथे नविन तलावाचे बांधकाम केले. तसेच ज्योतिबा, सातवे, भुदरगड, आळसे आणि रायबाग येथे छोटी तळी बांधण्यात आली. यासाठी त्यावेळी रुपये ४०,०००/- खर्च केला. १९०६-०७ साली कळंबे तलावाचा बंधारा, शिरोळ येथील काळेश्वर तलावाची दुरुस्ती आणि अतिग्रे व रंकाळा तलावाचा पाणलोट विभाग वाढविण्याचे काम सुरु केले. या सर्वांचा परिणाम शेतीसाठी पाणीपुरवठा वाढून बागायती क्षेत्रात वाढ झाली.

भोगावती नदीवरील पाटबंधाऱ्याची योजना :

आळसे आणि शिरोळ तालुक्यातील अवर्षणाची समस्या सोडविण्यासाठी व राधानगरी, पन्हाळा, करवीर या तालुक्यात नियमित पाणी पुरवठा कसा होईल याचा विचार करून महाराजांनी १९०७ मध्ये (राधानगरी व काळम्मावाडी) भोगावती आणि दुधगंगा नद्यांवर तलावाचे बांधकाम योजना करण्यासाठी एका अभियंत्याची नियुक्ती केली. १९०९ मध्ये राधानगरी धरणाच्या बांधकामास सुरुवात केली. हे धरण महाराजांचे जिवित कार्य आहे. महाराजांच्या दूरदृष्टीमुळे आजही कोल्हापूर जिल्हा सुजलाम-सुफलाम आहे. अशा प्रकारे महाराजांनी कोल्हापूर संस्थानात पाणी पुरवठ्याचा शाश्वत विकास करून शेतकऱ्यांच्या जीवनात क्रांती घडवून आणली.

नवीन पिके लागवडीचे प्रयोग :

पारंपारिक पद्धतीने पिकांचे उत्पादन घेऊन शेतकऱ्यांचे दारिद्र्य संपणार नाही ही गोष्ट राजर्षी शाहू महाराजांनी ओळखली होती. म्हणून नवीन पिकांच्या लागवडीचे प्रयोग करण्याचा निर्णय घेतला. सुरुवातीला हे प्रयोग संस्थानतर्फे करण्यात आले. कॉफीच्या लागवडीचा पहिला प्रयोग पेंडखले या गावी करण्यात आला. त्यानंतर भुदरगड पेठ्यात कॉफीची लागवड करण्यात आली. पन्हाळा पेठ्यात चहाच्या लागवडीचा प्रयोग पहिल्यांदा केला. तसेच बुंद, कोरफड, राळ, वेलदोडे, कोको, साग, आंबा, फणस, मोह, आंबाडी, बेळगावी बटाटे, लाख, शिंगाडे, टॅपीओका, कंबोडीयन कापूस, हिरडा, जांभूळ, काजू अशा अपारंपारिक पिकांच्या लागवडीचे यशस्वी प्रयोग केले. आजही कोल्हापूर जिल्हा फळ उत्पादनात आघाडीवर आहे. शेतकऱ्यांना भरपूर उत्पादन आणि उत्पन्न मिळते त्यामुळे शेतकरी तुलनेने इतर भागातील शेतकऱ्यांपेक्षा सधन आहेत.

शेतकऱ्यांची सावकारांच्या पाशातून मुक्तता :

राजर्षींनी सत्तासूत्र हाती घेतले तेव्हा अनेक शेतकऱ्यांच्या जमिनी सावकारांकडे गहाण होत्या. शेतकरी वर्ग कर्जाच्या विळख्यात अडकलेला होता. महाराजांनी अशा शेतकऱ्यांना संस्थानामार्फत अल्प व्याजदरावर कर्ज दिल्यामुळे शेतकरी खाजगी सावकारांच्या पाशातून मुक्त झाले. कर्जबाजारी शेतकऱ्यांना कर्जमुक्त करण्यासाठी व्हिक्टोरिया राणीच्या नावे फंडाची स्थापना करून शेतकऱ्यांना आपल्या जमिनी परत घेता आल्या. त्यामुळे राजर्षी शाहू महाराजांच्या काळात पाच मोठे दुष्काळ पडूनही एकाही शेतकऱ्याने आत्महत्या केल्याची नोंद कोल्हापूर संस्थानच्या इतिहासात नाही. ही बाब आजच्या राज्यकर्त्यांना विचार करायला लावणारी आहे.

किंग एडवर्ड Agricultural इन्स्टिट्यूट :

१९११ मध्ये किंग एडवर्ड सातवा मृत्यू पावल्यानंतर त्याच्या नावे फंड स्थापन करून १९१२ मध्ये किंग एडवर्ड संस्था स्थापन केली. त्यावेळी त्या फंडात ३४२४१/- रु. फंड जमा झाला होता. त्यामध्ये महाराजांनी स्वतःचे

५०००/- रु. टाकले आणि दरवर्षी १०००/- रु. अनुदान देण्यात येत होते. या संस्थेमार्फत सुधारित शेतीचा प्रचार आणि प्रसार केला जात होता.

आदर्श शेती विभाग :

शेतीला संशोधनाची जोड देण्यासाठी "आदर्श शेती" विभागाची स्थापना करण्यात आली. शेतीच्या पुस्तकी शिक्षणाबरोबरच प्रात्यक्षिक ज्ञान शेतकऱ्यांना देण्यासाठी या विभागातून कार्य केले जात. या विभागामार्फत ऊस, कापूस, डाळी, कडधान्य, कोबी, बटाटे, मिर्ची, ज्वारी, भुईमूग यांच्या लागवडीचे यशस्वी प्रयोग केले जात. त्यामुळे शेतकऱ्यांच्या ठिकाणी विविध पिक लागवडीचे फायदे लक्षात आले. या विभागात 'अर्लिटन नांगर, आणि अँड चॉप कटर' शेतकऱ्यांना प्रयोगासाठी उपलब्ध होता.

इनामे अविभाज्य : शेतीचे तुकडीकरण थांबवून शेतीचा आकार अनार्थिक होऊ नये म्हणून राजर्षी महाराजांनी शेतीचे विभाजन थांबवण्यासाठी मे, १९१३ मध्ये संस्थानातील सर्व इनामे अविभाज्य ठरवली. त्यामुळे शेतजमिनीचे तुकडीकरण थांबले.

कृषी प्रदर्शने :

कृषी प्रदर्शने भरवून शेती उत्पादन वाढीला राजर्षी महाराजांनी प्रेरणा दिली. प्रदर्शनामध्ये वेगवेगळे विभाग केले जात, त्यामध्ये १) जनावरांचा विभाग २) शेती विभाग ३) औद्योगिक विभाग होते. १९०९ आणि १९१४ मध्ये अशी प्रदर्शने भरवली होती. त्यामुळे शेतकऱ्यांना शेतीसाठी लागणाऱ्या वस्तू अशा प्रदर्शनातून विकत घेता येत असत. अशा प्रकारे राजर्षी छत्रपती शाहू महाराजांनी शेतीमध्ये ज्या शाश्वत सुधारणा घडवून आणल्या त्यामुळे कोल्हापूर जिल्हा आजही कृषी आणि सहकारात आघाडीवर आहे. राधानगरी धरणामुळे शेतीला पाणीपुरवठा झाला. त्यामुळे दुष्काळासारख्या संकटावर कायमची मात केली. राजर्षी शाहू महाराजांनी बांधलेले कोल्हापुरी पद्धतीचे बंधारे आजही मराठवाड्यासारख्या दुष्काळी भागात वरदान ठरले आहेत. पिक लागवडीचे नवनविन प्रयोग आणि नविन पिक लागवड करून महाराजांनी त्याकाळातच आधुनिक हरितक्रांतीचे बिजारोपन करून ठेवले होते. प्रसंगी शेतकऱ्यांना अल्प व्याजाने प्रसंगी बिनव्याजी कर्ज देऊन शेतकऱ्यांचा आत्मविश्वास जागवला. अशा या दूरदृष्टीच्या प्रजाहितदक्ष राजाला मानाचा त्रिवार मुजरा..!

संदर्भ :

1. डॉ. वि.बा. घुगे, छत्रपती शाहूंचे समाजवादी आर्थिक धोरण, कोल्हापूर रायटर्स सोसायटी, कोल्हापूर, १९७५.
2. मिना कुलकर्णी/ ब.शी. कुलकर्णी- राजर्षी छत्रपतींचे अर्थकारण, गौरीनंदन प्रकाशन, कोल्हापूर, १९७५
3. जाधव रमेश- लोकराजा शाहू छत्रपती, सुरेश एजन्सीज पूणे, २००१.
4. डॉ. जयसिंगराव पवार- राजर्षी शाहू स्मारक ग्रंथ, महाराष्ट्र इतिहास प्रबोधिनी कोल्हापूर २००१.
5. डॉ. ज.फा. पाटील/ राहूल म्होपरे- राजर्षी शाहू महाराजांची आर्थिक धोरणे आणि कार्यक्रम, कोल्हापूर विद्यापीठ प्रकाशन, २००७.
6. अर्थसंवाद (त्रैमासिक) विविध अंक.

दलितांचे मानवी हक्क,जातीव्यवस्था आणि डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर

प्रा. डॉ. रुपराव उकंडराव गायकवाड

सहयोगी प्राध्यापक मनोहरभाई पटेल महाविद्यालय,सालेकसा, जि- गोंदीया

E-Mail :- rupraogaikwad94@gmail.com

सारांश

शोध निबंधात भारतीय संस्कृती मधील जातीव्यवस्थेचा मानवी हक्कांवर होणारा परिणाम याविषयावर आपण चर्चा करणार आहोत. भारतीय संस्कृती काय आहे ? तीचा व्यवस्थेशी कसा संबंध आहे ? या बद्दल प्रस्थावने मध्ये स्पष्टीकरण केले आहे.जातीय भेदभावामुळे अनेक व्यक्तींच्या जीवनावर कसा परिणाम झाला या विषयी चर्चा केली आहे. भारताव्यतिरिक्त इतर देशांमधील जातीव्यवस्थेची समस्या कशी आहे ? याविषयी सुद्धा विचार व्यक्त केले आहेत. शोधनिबंधाच्या संदर्भात तीन प्रमुख मुद्दे अधोरेखित केले आहेत.

१. ऐतिहासिक आणि आधुनिक जातीव्यवस्था —

यामध्ये जातीव्यवस्थेची सुरुवात केव्हा झाली ? आणि जातीय भेदभाव कुठून सुरु झाला. त्याची प्रमुख कारणे कोणती याविषयी ची माहिती दिली आहे.

२. दलित मानवी हक्कांचे उल्लंघन :-

कनिष्ठ जाती आणि दलितांच्या बाबतीत जातीय भेदभाव कसा केला जातो , जाती भेदांची करणे आणि त्याचा व्यक्तीचा जीवनावर होणारा परिणाम या विषयी ची माहिती दिलेली आहे.

३. समस्या निवारणासाठी शासनाचा सहभाग आणि सक्रियता:

भारत सरकारने जाती भेदाची समस्या सोडविण्यासाठी अनेक तरतुदी केल्या परंतु त्यामध्ये पूर्णपणे यश प्राप्त झाले नाही. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी जातीय भेदभावा विरुद्ध आजन्म संघर्ष केला. त्याचा परिणाम काही प्रमाणात जातीय भेदभावाच्या बेड्या तोंडण्यात यश प्राप्त झाले आहे. आपण सर्व एक जबाबदार नागरिक आहोत , या — नात्याने आपण सुद्धा भेदभाव नष्ट करण्यासाठी प्रयत्न करणे आवश्यक आहे. प्रत्येकाला या जगात मुक्तपणे जीवन जगण्यासाठी सुयोग्य वातावरणाची निर्मिती करण्यासाठी उपाययोजना राबविणे अनिवार्य आहे. या उपाययोजना कशा केल्या पाहिजे याविषयीची माहिती संशोधन निबंधामध्ये दिलेली आहे.

प्रस्तावना :

भाषा, मुल्य, विश्वास, मानके, वारसा, योग्यता, इतिहास, धर्म, पौराणिक कथा या आधारावर सिर्फ एकत्रित समुहाच्या वर्तनाच्या विश्वासाला संस्कृती असे म्हटले जाते. भारतीय उपखंडामध्ये असंख्य वंश, जाती, धर्म, भाषा व संस्कृतीची लोक राहातात. त्यामधील काही समान घटकांच्या आधारावर वर्ग तयार झाले. तसेच त्यांच्यामध्ये श्रमाच्या आधारावर विभागणी झाली त्यामधुनच जातीचीही निर्मिती झाली आहे. कालांतराने जाती — जाती मध्ये उच्च—निच असा भाव तयार झाला आणि यातुनच जातीभेद निर्माण होऊन भेदभाव वाढीस लागला.

जगामध्ये अनेक संघटना मानवी हक्कासाठी संघर्ष करत आले. त्यामध्ये जातीय भेदभावाचा सुद्धा प्रश्न हाताळल्या जात आहे. भारतामध्ये जातीय भेदभाव विकोपाला गेलेला होता. शुद्रांना तर कोणतेही अधिकार नव्हते. विहीरीवर पाणी भरणे, संपत्ती ठेवणे, अस्पृश्यता, शिक्षणापासून वंचित अशा सर्वच बाबतीन बंधणे होती. ही सर्व व्यवस्था समुळ नष्ट करणासाठी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी संविधानामध्येच मानवी हक्कांची तरतुद केली. भारतात लोकाशाहीच्या माध्यमातुन अनिष्ट प्रथा पूर्णपणे संपुष्टात आणण्याचा प्रयत्न केला परंतु त्यामध्ये पूर्णपणे यश प्राप्त झालेले नाही. भारतामध्ये उच्च जातींचा जातीयवाद जो आहे तसा जातीयवाद जगातील कोणत्याही राज्यात आढळून येत नाही. जागतिक आणि स्थानिक प्रयत्नांद्वारे जातीय भेदभाव कमी करण्याचा प्रयत्न करूनही भाज भारतातील १६५ दशलक्षापेक्षा जास्त लोकांना जातीच्या जातीयते मुळे भेदभाव आणि असंख्य प्रकारच्या अपमानास्पद वागणूकीला सामोरे जावे लागते. इतकेच नाही तर भारतात जातीयवादाच्या तक्रारींची संख्या खूप जास्त आहे. परंतु पोलीसांच्या दुर्लक्ष किंवा समजुदारपणाच्या अभावाची भीती वाटल्यामुळे बरेच पिडीत लोक अधिकृत तक्रार नोंदवत नाहीत. अश्या लोकांचे जीवन वारंवार नष्ट होते. शिक्षणापासून वंचित केल्या जाते. कठिण परिश्रमाचे काम करण्यास भाग पाडले जाते, मंदिरे, रुग्णालये, जलस्त्रोत, बाजारपेठा इत्यादी ठिकाणी प्रवेश नाकारला जातो. महिलांवर अत्याचार केले जातात अशाप्रकारे भारतात मानवी हक्काची समस्या आहे.जातीय भेदभावाची समस्या केवळ भरतापुरती मर्यादित नाही. आशियातील जपान, पाकिस्तान, बांग्लादेश नेपाळ आणि श्रीलंका या राज्यांमध्ये सुद्धा जवळ—जवळ ९० दशलक्ष लोक जातीय भेदभाव सहन करतात. आफ्रिका, युरोप, उत्तर अमेरिका आणि दक्षिण आशिया या प्रदेशात सुद्धा स्थलांतरित लोकांची अवस्था भेदभावाची आहे. वरील परिस्थितीचे वास्तव निदर्शनास आल्यावर जागतीक मानवी संघटना. शिफारस करते की भारत सरकारचा मुख्य केंद्रबिंदु निम्न जातींना मानवी हक्क प्राप्त करून देण्याचा असला पाहिजे. भारतामध्ये अनेक ठिकाणी जातीय भेदभाव दिसून येतो. त्याला नष्ट करायचे असेल तर निःपक्षपाती कायद्याद्वारे समाप्त केला पाहिजे. परंतु असे दिसून येते की, सरकारद्वारे कोणत्याही सुधारणांना मदत केल्या जात नाही.भारतातील मानवी हक्कांच्या दृष्टीकोनातुन जातीसंबंधीची समस्या अनुशासनात्मक दृष्टीकोनातुन अडचणीची दर्शविते. आधुनिक भारतातील सर्वात खालच्या जातीतील व्यक्तींच्या जीवनावर जातीच्या प्रभावाचे मुल्यांकन करते. जातीभेद हा इतका गुंतागुतीचा मुद्दा आहे की, कायदेशीर पर्याय आणि निःसंदिग्ध कायद्याद्वारे जातीभेद नष्ट होणार नाही. तर लोकांमध्ये जो दुषीत सांस्कृतीक आत्मविश्वास आहे तो बदलविला पाहिजे आणि सर्वांना मानवी हक्क प्राप्त होतील. अशी परिस्थिती निर्माण करणे आवश्यक आहे. कारण त्याचा परिणाम भारतीय समुदायातील प्रत्येक व्यक्तींच्या जीवनशैलीवर होणार आहे

पारंपारिक आणि समकालीन जातीय व्यवस्था :

ऐतिहासिक पुराव्यानुसार भारतात आर्य.इ.स.पू.१५०० मध्ये आले. त्यांनी भारतात जातीव्यवस्थेची अंमलबजावणी केली पूर्वी कामाच्या वर्गीकरण वरून जातीची निर्मिती केली. सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद या ग्रंथांचे संकलन ऋग्वेदामध्ये

दिसून येते.या ग्रंथामध्ये भारतातील सांप्रदायीक संघर्षाची माहिती दिलेली आहे. तसेच सांप्रदायीक प्रसंगांपत्रे दिलेली आहेत. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आणि शुद्र असे चारसामाजिक वर्ग निर्माण केले.

ब्रम्हदेवाच्या डोक्यापासून ब्रम्हणांची उत्पत्ती झाली. त्यांना सर्वत्र क्षेत्रात संधी असून कमीत कमी कर्तव्य आहे.

श्रत्रियः ब्रम्हदेवाच्या खांद्यापासून निर्माण झालेली सर्वोच्चदूसरी जात आहे. त्यांचे प्रमुख कार्य राज्याचे संरक्षण करणे होय.

वैश्यः ब्रम्हदेवाच्या नितंबापासून निर्माण झालेली तिसरी सर्वोच्च जात आहे. त्याचे कार्य सामान्यतः व्यापार, शेतकरी आणि कारागीर होते..

शुद्र :- ब्रम्हदेवाच्या पायापासून निर्माण झालेली सर्वात खालची जात म्हणजे शुद्र ही जात सर्वात बहिष्कृत आणि सर्वात निम्न श्रेणीची मानली गेली. मानवी हक्कांचे समर्थक आणि समाजसुधारक डॉ बाबासाहेब आंबेडकरांनी म्हटले की, जर श्रमविभागणी हे सुसंस्कृत समाजाचे आवश्यक वैशिष्ट्य आहे. मग जातीयवस्थेत काहीही चुकीचे नाही, पण मुद्दा असा आहे की, जातीव्यवस्था ही केवळ श्रमाची विभागणी नाही तर ती कामगारांची विभागणी आहे. कामगारांचे विभाजन महत्वपूर्ण आहे. परंतु हे विभाजन वारसा तत्वाने लागू होणे चुकीचे असून त्यामध्ये बदल करण्याची सुविधा नसणे ही जातीव्यवस्थाची समस्या आहे. साधारणपणे उच्चवर्णीय लोक खालच्या श्रेणीतील लोकांचा वापर करतात. ही स्थिती टिकून राहण्यासाठी संस्कृतीचा वापर करतात. त्याआधारे दलिताना कोणतेही अधिकार देत नाहीत. त्यासाठी मनुस्मृती सारख्या ग्रंथाचा आधार घेऊन सर्व सामाजिक वर्गाना पाठण्यास बाध्य केले आहे. दलिताना आपल्या जीवण शैलीत सुधारणा करण्याचा अधिकार, विशेषाधिकार किंवा कोणतीही संधी नसावी याची व्यवस्था केलेली आहे. दलित सामान्यतः जातीय सुधारणा करण्यास घाबरतात कारण उच्चवर्णांकडून त्यांना प्रतिवादी बनविले जाते. भारतात यामध्ये बदल होत नाही कारण भारतातील सांप्रदायिक दर्जा हा धर्म किंवा जात असला तरीही प्रत्येकासाठी जीवनशैलीचा भाग मानला जातो.व त्यामधुनच संस्कृती निर्माण केली आहे.

दलित किंवा कनिष्ठ जातीच्या मानवी हक्कांचे उल्लंघन

भारतामध्ये जातीयव्यवस्थेमुळे दलितांच्याव कनिष्ठ जातीच्या मानवी हक्कांचे उल्लंघन सातत्याने होत असते. संयुक्त राष्ट्रसंघाच्या विधीमध्ये म्हटले आहे की, “मानवी हक्कामध्ये जीवन जगण्याचा अधिकार, गुलामगिरी पासून स्वातंत्र्य , अभिव्यक्ती स्वातंत्र्य, शिक्षणाचा अधिकार आणि समतेचा अधिकार आहे “

वरील मानवी हक्क उच्च जातीच्या लोकांना प्राप्त होतात. परंतु निम्न जातीचे म्हणजे दलित आणि आदिवासीना हक्क मिळत नाहीत. परिणामी त्यांची जीवन शैली दोषपूर्ण होते. दलिताना शिक्षण नाकारले जाते त्यामुळे त्यांची मुलभूत क्षमता कमी होते. परिणामी चांगला व्यवसाय प्राप्त होत नाही परिणामी त्यांना निकृष्ट व्यवसाय करावा लागतो. शारीरिक श्रमाची कार्य करावी लागतात. साफसफाई, शेतमजुरी, अशा कमी वेतनाच्या नोक—या कराव्या लागतात. सर्वात अपमानास्पद कार्य म्हणजे शौचालयातून मानवी मलमुत्र हाताने साफ करून डोक्यावर उचलून फेकण्यासारखे आहे. त्यामुळे त्यांना अनेक आजाराहोतात. प्रसंगी अशा व्यक्तींचा उपचार करण्यास डॉक्टर नकार देतात.

दलिताना अनेक जोखमीचे काम करावे लागते. परंतु त्यांना देण्यात येणारा मोबदला अतिशय कमी असतो. ज्यामध्ये त्यांच्या जीवनावश्यक गरजा पूर्ण होत नाहीत.अशाप्रकारचा भेदभाव क्रूर आहे. जात, धर्म, लिंग या आधारावर भेदभाव हामानवी हक्कांचे उल्लंघन आहे भारतामध्ये दलितांविरुधी अनेक प्रकारचा क्रूरपणा लादला जातो. दलित लोकांना मारहाण करणे, हल्ले करणे, सामानाची नासधुस करणे, दलित स्त्रियांवर लैंगिक अत्याचार करणे अशाप्रकारच्या अनेक घटना दिसून येतात. यासर्व वाईट गोष्टीसाठी किंवा मानवी हक्क उल्लंघनासाठी भारतातील जातीयव्यवस्था पूर्णपणे जबाबदार आहे. ज्याद्वारे दलितांच्या जीवनावर प्रभाव टाकते.

सरकारी सहभाग :-

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी संविधानाद्वारे जातीयता नष्ट करून समता प्रस्थापित करण्याचा प्रयत्न केला आहे. त्यामुळे सरकारने घटनात्मक बदल घडवून आणला आहे. ज्यामुळे आंशिक स्वरूपात भेदभाव संपुष्टात आला आहे. परंतु सरकारने दलितांच्या विशेषाधिकारांचे रक्षण केले पाहिजे त्यांचे कल्याण करण्याकरिता प्रयत्न करणे आवश्यक आहे. परंतु विविध सरकारी कर्मचा—यांच्या प्रभावी प्रयत्नांच्या अभावामुळे व राजकारण्यांच्या कमकवुत इच्छाशक्तीमुळे दलितांच्या मानवी हक्कांची अंमलबजावणी प्रभावीपणे होऊ शकली नाही. राजकारणी, अधिकारी आणि उच्च वर्णीय व्यक्तीस्वेच्छेने त्यांचा विश्वास बदलण्यास तयार नाहीत. आणि नविन कायदे समाजातील व्यक्तीअमलांत आणत नसतील. तर कोणतेही बदल केले जाऊ शकत नाहीत. भारतात सरकारी अधिका—यांच्या निष्काळजीपणामुळे सुधारणा घडून येत नाहीत.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे कांतीकारी समाजसुधारक आहेत. ते स्वतः दलित समाजात जन्मले होते. त्यामुळे त्यांना त्याची तिव्रता माहित होती. स्वातंत्र्य, समता, आणि बंधुत्वाच्या आधारावर भारतात समाजव्यवस्था निर्माण करण्यासाठी संपूर्ण आयुष्य कामी आले. विदेशात जाऊन उच्च शिक्षण प्राप्त करून भारतातील दलित, आदिवासी बहुजन समाजाचे अधिकार प्राप्त करून देण्यासाठी जीवनभर प्रयत्न केले संपूर्ण भारतातील सर्व समाजाला मानवी हक्क प्राप्त होतील. या पद्धतीने संविधानाची रचना केली विशेषता दलित आणि कनिष्ठ जातीच्या हक्कांसाठी संविधानात विशेष तरतुदी केल्या आणि आरक्षणाची सुद्धा व्यवस्था केली भारतातील पाच — हजार वर्षांपासून चालत आलेल्या धार्मीक रूढी, प्रथा, परंपरा बदलवून समाजाला वैज्ञानिक व आधुनिक दृष्टीकोन देण्याचे महत्वपूर्ण कार्य त्यांनी केले आहे. आधुनिक भारताचे शिल्पकार म्हणुण डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांना येणार काळ ओळखल्याशिवाय राहणार नाही.त्यांनी दलित आणि कनिष्ठ जातीच्या मानवी अधिकारांचे प्रभावीपणे समर्थन करून ते प्राप्त करून देण्याचा प्रयत्न आयुष्यभर केला.

निष्कर्ष

वरील विवेकानावरून हे स्पष्ट होते की, केवळ नविन कायदेअंमलात आणल्यामुळे सांप्रदायीक वातावरण बदलण्यासाठी पुरेसे नाही.जातीयव्यवस्था ही विशिष्ट व्यक्तींना दिलेल्या विशेषाधिकारांची आणि संधिची संमिश्र व्यवस्था आहे. खालच्या जातीतील सदस्यांना सर्वात कमी विशेषाधिकार दिलेले आहेत. परिणामी २५०दशलक्ष दलित लोक वेगवेगळ्या प्रकारच्या भिन्नेलेला बांधिल आहेत. हा शोधनिबंध भारतीय संस्कृती आणि जातीयव्यवस्थेचा मानवी हक्कांवर होणारा परिणाम यासाठी तयार करण्यात आला आहे. त्याची जाणीव लोकांना करून देण्यासाठी मदत करणे हे उद्दिष्ट आहे. प्रत्येक व्यक्तीला मानवी अधिकार मिळवून देण्याची प्रत्येकाची नैतिक जबाबदारी आहे. २१ व्या शतकातसुद्धा जातीयव्यवस्था हा मानवी हक्कांचे उल्लंघन करणारा प्रकार टिकून आहे. ही शरमेची बाब आहे. त्यामुळे दलित आणि कनिष्ठ जातीच्या व्यक्तीला जीवणात भेदभावाला दररोज सामोरे जावे. लागते. म्हणुन मानवी हक्कांचे पालन होणे अनिवार्य आहे.

संदर्भग्रंथ:

१. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर —लेखन आणि भाषणे
२. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर— शुद्ध पूर्वी कोण होते.
३. चांगदेव खैरमोडे — डॉ.आंबेडकर (खंड १ ते १२)
४. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर— भारतीय संविधान

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – सामाजिक विचार आणि दलित साहित्य

डॉ भारत शिंदे

माधवराव पाटील माहविद्यालय पालम

प्रस्तावना--

" जखवड बंद पायातले साखळदंड
तटातट तुटले तू ठोकायचा बंड
झाले गुलाम मोकळे भीमा तुड्यामुळे,

---- महाकवी वामन दादा कर्डक

खवरील कविता मधून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या कार्याला नमन करून त्यांच्या कार्याला वंदन करून त्यांच्या कार्यमुळे मानवला नवदिशा प्राप्त झाली आहे. सामाजिक क्षेत्रांत विचार ला चालना मिळाल्याने नव क्रांतीच्या विचारांची पायभरणी उभारण्यात सुरुवात झाली. याचे परिणाम मराठी भाषेवर जाणवता डॉ .बाबासाहेब आंबेडकरांनी मराठी भाषेचा वापर केल्याने मराठी भाषेत अनेक तळागाळातील साहित्यक निर्माण झाले. यांचा परिणाम मोठ्या प्रमाणात दलित साहित्य भाषेवर झाला आहे .सामाजिक विषमते विरुद्ध त्यांनी आपला लढा देवून मराठी भाषिकांत आत्मविश्वास निर्माण केला. आत्मभान निर्माण करून नवा लढा लढण्याची ताकत मिळाली . आत्मभान बनण्याची त्यांच्यामध्ये नवीन दृष्टी निर्माण केली. डॉ बाबासाहेब आंबेडकर समाजामधील गुलामगिरीच्या जाती व्यवस्थे विरुद्ध खिचपत पडलेल्या व्यक्तीचा आवाज उठवला आणि आपला लढा यशस्वीपणे त्यांनी लढला . समाजा मधील शोषित वर्गला त्यांनी सन्मान प्राप्त करून दिले. सामाजिक क्रांतीची चळवळचा नवा आध्याय निर्माण केले. अत्याचार अन्याय विरुद्ध त्यांनी आपला लढा दिला . बहुजन समाजासाठी शिक्षणची दारे खुली केल्याने भोगले लोकाचा आवाजा मराठी भाषेत आत्मकथन स्वरूप समोर आले. तळागाळातील व्यक्ती शिक्षणामुळे आपल्या अन्यायाच्या गाथा लिहलेल्याने नव्या समाजाकडे नेतृत्व जावू लागले . मराठी भाषेत प्रमाण भाषा व बोलीभाषा चा विकास झाला .सामान्य बोली भाषे कडे नेतृत्व आल्याने नवनायकाचा उदय झाला.समाजाला नव्या विचाराना चालना प्राप्त झाली ।

लघु शोधनिबंधाचा उद्देश--

प्रस्तुत लघु शोधनिबंधा मधून " डॉ बाबासाहेब आंबेडकर-सामाजिक विचार आणि दलित साहित्य " याचा फार जवळपास संबंध आहे. परिणामता मराठी भाषेत नव्याने दालन निर्माण झाली गेली .या विषयचा आढवा घेतला आहे.विषमते वर त्यांनी प्रहार केला.जात , जातीपरिघाबाहेर व गावकुसाबाहेच्या व्येथा मराठी साहित्यात मांडणी केली गेली. नवा आर्दश निर्माण होवू लागले.व्यक्ती आणि समाजाला लढण्याचे बळ प्राप्त झाले. अन्याय चा नवा वर्ग निर्माण होवू लागले. कामगार, शेतमजूर, कष्टकरी वर्ग, असे अनेक गट नव्याने एकत्र येवून एकजूट होण्याची ताकत निर्माण झाली.डॉ बाबासाहेब आंबेडकर संघटना रूपी एकत्र उभे करून बहुभाषिक एकत्र राहण्याचे बळ त्यांना मिळाले.

- 1 डॉ बाबासाहेब आंबेडकर च्या कार्यची उजळणी करून कार्य माहिती घेणे.
- 2 समाजाला सामाजिक गुलामगिरी मधून दुर करून शिक्षण ची दारे उघडी तळागाळातील व्यक्ती पर्यंत नेली.
- 3 डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर च्या सामाजिक विचारणे दलित साहित्यचे नव नव दालने उभी राहिले.

4 शेतकरी,शेतमजूर व कामगार यांच्यासाठी लढाई लढाताना त्यांच्या बोलीभाषेचा उपयोगी झाल्याने मराठी तळागाळातील आवाज पुढे आला.

4 स्त्रियांच्या सामाजिक सुधारणे साठी त्यांना प्राथमिक शिक्षण हे त्यांच्या बोलीभाषेतून मिळाले तर त्यांना समजले. प्रस्थापित मराठी भाषा मधून शिक्षण ची देवाण घेवाण करण्याची सुरुवात झाली .

लघु शोधनिबंध ची माहिती संकलन व विश्लेषण--

प्रसतुत लघुशोधनिबंधा मधून " बाबासाहेब आंबेडकर – सामाजिक विचार आणि दलित साहित्य " या विषयावर मांडणी करताना वेगवेगळ्या संदर्भ ग्रंथचा आढवा घेतला आहे. यासाठी संदर्भ ग्रंथचा उपयोग करण्यात आले आहे. या साठी दलित साहित्य भाषा विषयावर आयोजित चर्चासत्र, कार्यशाळा याचा अहवाल संदर्भ म्हणून उपयोग करण्यात आलेला आहे. मासिके, वक्तमानपत्र, विविध विद्यापीठ मधून प्रकल्प लेखनाचा आधार घेतला आहे.

इंटरनेट सारख्या साधनांचा वापर करून माहिती संकलित करण्यात आली आहे. अशा अनेक माध्यमातून माहिती संकलित करून लेखनासाठी आधार घेतला आहे. या लघु शोधनिबंध साठी विश्लेषणात्मक पध्दतीचा वापर करण्यात आले आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी आपल्या कार्यतून समाजाला नव दिशा व योग्य दिशा दाखवित्यात आल्या आहेत.मराठी साहित्यात नवविचाराची नव क्रांती घडवून आली . भारतीय समाजातील अनेक मूलभूत प्रश्न हे त्यांच्या भाषेत मांडता न आल्याने चिघळले गेले. यासाठी डॉ आंबेडकरनी भाषेच्या नव जाणवा जागृत करण्यात आल्या. समाजात नवविचाराची पेरणी करून नव विचार निर्माण केले.भाषीकलढा दिला. प्रस्थापित जाती व्यवस्थेविरुद्ध विद्रोह केला करून विद्रोही साहित्यची निर्मिती केली . डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर नी सर्वच स्तरातील लोकासाठी शिक्षणाची दारे उघडल्याने साहित्य आपला आवाज दिसत नसल्या कारणाने त्यांनी नवीन चुल मांडताना आपली अस्मिता कुठे विसरली नाही. मराठी भाषेत कामगाची भाषा समोर आणली. डॉ. आंबेडकरानी सामाजिक विचारतून मराठी भाषेची जडणघडण निर्माण केली. दरोची बोल्यजाणारी भाषा आता हळूहळू ग्रंथ रूपात समोर येवू लागली.

शेतकऱ्यांच्या भाषेला वेगळी ओळख-

सामाजा मधील अनेक व्यवसाय शेती वर आधारित होते.ग्रामीण भागातील आर्थिक कणा हा शेती व्यवसाय भोवती फिरताना दिसतात . शेती व्यवसाया निघडीत अनेक शब्दाचा वापर होताना दिसतो. त्याची बोलण्याची पध्दतीचे अनुकरण साहित्य मध्ये येवू लागले. कुटुंबेची उपजिवीका शेती वर चालताना दिसते .शेती व्यावसायावर अनेक लघुकुटीर उद्योग अवलंबून असल्याने त्यांचा शब्दसाठ मराठी भाषेत आला. मिश्रा पिक पध्दतीचा परिणाम अनेक गिता मधून साकार होवू लागत असल्या कारणाने भाषे कक्षा रूदावल्या गेल्या.

भारतीय शेती ही निर्सगावर अवलंबून आहे . अर्थव्यवस्थेत शेती व्यवसाय आधीक महत्त्व दिले आहे .पण प्रत्यक्षात तिची उपेक्षाच केली गेलीआहे. अनेक कुटुंबे शेती व्यवसायशी निघडीत असलेल्या कारणे शेतकऱ्यांचे प्रश्न अधिक गंभीर स्वरूपामध्ये निर्माण झाले आहेत. नापिकीता, सतत दुष्काळ अशा अनेक कारणांचे चित्रण मराठी साहित्य मधून आणले जावू लागले. सावकारी व कुळ कायद्यात अडकलेली दिसते.भाषांमध्ये शेतकरीवर्ग अडकलेला दिसतो. वसूल केला जाणारा शेतसारा आणि शेतकऱ्या उत्पादन मुळे अनेक अनुभव चित्रीत झाले आहेत . डॉ. बाबासाहेबानी शेतकरी वर्गाचे प्रश्न " लँड रिव्हर अशोक कमिटी" समोर भेट घेवुन मांडले. शेतसारा किती द्यायचा काल्पनिक उत्पन्नावर शेत सारा सरसकट आकार ने करणे हे किती गैर आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरानी शेतकऱ्यांच्या प्रश्नाला स्वतः झोकून दिले. शेतकरी आणि शेती चे प्रश्न मोठ्या प्रमाणात साहित्य मधून आले.

आत्मकथन दलित साहित्य --

डॉ. बाबासाहेबच्या प्रेरणे मधून नवसाहित्याचे दालन समोर आले . आत्मकथन उध्याल आले आहेत. आत्मकथन मधून एखाद्या घटना किंवा प्रसंगाचे चित्रण केले जावू शकते यांची ओळख करून दिली. आत्मकथनासाठी सामान्य व्यक्ती, सामान्य जिवणाचे चित्रण रेखांठण केले जावू लागले. डॉ. बाबासाहेबनी आपल्याला साप्ताहिक मधून छापले जावू लागले. यामधून नव दालन उभी राहिले.लेखक समाजात जन्माला येतो त्यांच्या वर झाले संस्कार चा प्रभाव जाणवते. समाजातील धर्मसंकल्पना, आचर-विचार भाषेचा परिणाम साहित्यिक कलाकृती वर होताना दिसतो.

विद्रोहाचा साहित्यातील आविष्कार---

डॉ. आंबेडकरच्या प्रेरणेतून साहित्य मधून विद्रोही रूप आविष्कारत होवू लागली. प्रस्थापित साहित्य स्थान नसल्याने त्यांनी विद्रोह केला. मनातील भावना साहित्य मधून आणताना कोंडमारा झाले मन शब्द रूपात साकारले जावू लागले.दलित साहित्यने जाणीव पुर्वक विद्रोहाची वाट निवडली.समनता स्वतंत्र आणि बंधुता ह्या तत्वाची जोपासना केली जावूलागली.जातीविरहित ,वर्तविरहित,व्देशविरहित आणि शोषणविरहित समाज निर्माण करण्यासाठी प्रयत्न होवू लागले. याला साहित्य मधून चालना मिळाली.

स्त्री गुलामगिरी विरुद्ध लढा ---

समाजामध्ये स्त्रियांची स्त्रियांचे दुय्यम स्थान होते कुटुंब असो समाज असो तीला कोणत्याही स्थान दिले नव्हते.पुरुष प्रधान संस्कृती मध्ये स्त्रियांना सन्मान नव्हता. दास्यत्व, गुलामगिरी नोकर म्हणून या दृष्टीने तिच्याकडे पाहत होते.यांच्या विषयावर मोठ्या प्रमाणात साहित्य मधून लेखन केले जावू लागले. बालविवाह, हुंडाबळी, बहुपत्नीत्व पध्दती, बालविवाह, आदी प्रश्नावर लेखन केले जावू लागले. या मधून स्त्री साहित्यला चालना मिळत गेली. स्त्रियांचे प्रश्न चित्रीत केले जावू लागले.स्त्रिया भावना ,विचार साहित्य मधून व्यक्त होतना दिसतात.

संदर्भग्रंथ---

- 1 दलित साहित्य वेदना आणि विद्रोह - भालचंद्र फडके
- 2 आंबेडकरी क्रांतिवीजे -- ताराचंद्र
- 3 आंबेडकरी साहित्यचे समालोचन—अप्पासाहेब रणपिसे
- 4 साहित्य समाज आणि परिवर्तन-- डॉ. वासुदेव मुलाटे
- 5 दलित साहित्य: क्रांती विज्ञान—बाबुराव बागुल
- 6 युगाचे हुंदके—सुरेख भगत

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे राजकीय विचार

प्रा. चौधरी प्रदीप विनायक

राज्यशास्त्र विभाग, छत्रपती शिवाजी महाविद्यालय, कळंब

प्रस्तावना :-

भारतीय राज्यघटनेचे शिल्पकार लोकशाहीचे पुरस्कर्ते, मानवी स्वातंत्र्याचे कैवारी व सामाजिक चळवळीचे प्रणेते म्हणून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचा गौरव केला जातो. आधुनिक भारताच्या जडणघडणीत त्यांचा वाटा महत्त्वपूर्ण आहे. देशातील दलिताना समान मानवी प्रतिष्ठा मिळावी हा आग्रह त्यांच्या व्यक्तिमत्वातून मुर्तिमंत साकार झाला आहे. डॉ. आंबेडकर हे दलितबांधव व भगिनीचे उद्धारक व आस्मितादर्शक होते. भारतातील कोट्यावधी दलिताना आज मिळालेली व मिळत असलेली अस्मिता, आत्मभान, सन्मान व जागरण ही केवळ बाबासाहेबांचीच देण आहे. डॉ. आंबेडकर घटनातज्ञ असल्यामुळे जगातील सर्व घटनांचा सखोल अभ्यास करून प्रत्येकास मानवी हक्क, नागरी स्वातंत्र्य व मतदानाचा स्त्री-पुरुषांना समान अधिकार त्यांनी मिळवून दिला. सामान्य भारतीय नागरिकास त्यांच्या उत्थानासाठी, लोकशाही मूल्यरक्षणासाठी व समाजोद्धारसाठी ज्या हक्कांची गरज असते ते हक्क सर्वांना धर्म, लिंग, जात, निरपेक्ष, सर्वांना प्रदान केले. हे हक्क म्हणजे सामान्य जनतेला मिळालेली आत्मोद्धारार्थी गुरुकिल्ली होय, एकविसाव्या शतकातील आव्हानांना समर्थपणे तोंड द्यायचे असेल तर डॉ. आंबेडकरांचे समतावादी विचार आत्मसात करणे आवश्यक आहे. आज भारतातील पुरोगामी चळवळ डॉ. आंबेडकरांच्या राजकीय विचारातूनच पुढे जात आहे.

शोधनिबंधाची उद्दिष्टे :- डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या राजकीय विचारांचे महत्त्व लक्षात घेऊन पुढील उद्दिष्टानुसार विषयाची मांडणी केली आहे.

- 1) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे राजनैतिक तत्त्वज्ञान अभ्यासणे.
- 2) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या राजकीय विचारांची उपयुक्तता पडताळून पाहणे.
- 3) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचा लोकशाही शासनप्रणाली संबंधीच्या दृष्टीकोनाचा आढावा घेणे.

गृहितके :-

- 1) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या तत्त्वज्ञान राजकीय विचारांना महत्त्वाचे स्थान होते.
- 2) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी सामाजिक लोकशाहीचा पुरस्कार केलेला दिसून येतो.

संशोधन पध्दती :-

सदरील शोधनिबंधातील डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे राजकीय विचारांचा अभ्यास करण्यासाठी दुय्यम साधनांचा आधार घेण्यात आलेला आहे. ज्यामध्ये वेगवेगळे संदर्भग्रंथ, मासिके, वर्तमानपत्रे व इंटरनेटवरील उपलब्ध माहितीचा आधार घेण्यात आलेला आहे.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे राजकीय विचार :-

राष्ट्रवादासंबंधी विचार :-

डॉ. आंबेडकरांच्या मते राष्ट्रवाद ही मानवी अभिव्यक्ती आहे. त्याचप्रमाणे राष्ट्रवाद हे असे एक सत्य आहे ज्यापासून वेगळे होता येणार नाही किंवा त्यास नाकारता येणार नाही. जरी त्यास कोणी अबौद्धिक भावना किंवा भ्रम म्हटले तरी राष्ट्रवाद ही एक परिणामकारक शक्ती असून तिच्यात साम्राज्य उखडून टाकण्याची क्षमता आहे. डॉ.

आंबेडकरांच्या मते राष्ट्रवादी भावनेतील महत्वाचा घटक म्हणजे आपण सर्व एक आहोत ही जाणीव होय. राष्ट्रवादाचे हे भावबंध इतके घट्ट असतात की त्यामुळे आर्थिक संघर्ष किंवा सामाजिक वर्गभेद हे बांध ओलांडले जाऊ शकतात. याचाच अर्थ राष्ट्रवाद हा आंतरराष्ट्रीय बंधुभाव निर्माण होण्यामधील अडथळा नसावा असे त्यांना वाटत होते.

डॉ. आंबेडकरांचा केवळ भारतीय राष्ट्रवादावर विश्वास आहे. बहुसंख्याकांचा राष्ट्रवादास त्यांचा विरोध होता. भारतातील धर्म हे भारतीय समाज जीवनाच्या विकासातील अपरिहार्य आणि अत्यावश्यक घटक आहेत. भारतात धर्माची विविधता ही कायम राहणार आहे परंतु निधर्मी राज्य म्हणजे नागरिकांच्या धार्मिक संवेदना विचारात घेऊ नयेत असे नाही. प्रत्येकाने स्वतःच्या विवेकबुद्धीने धर्माची निवड करावी. धर्माने राष्ट्रीय एकतेच्या प्रवाहाला अडथळा बनू नये असे त्यांचे मत होते.

लोकशाहीसंबंधी विचार :-

डॉ. आंबेडकर हे लोकशाहीचे पुरस्कर्ते होते. त्यांचा लोकशाहीवर विश्वास होता त्यांच्या मते लोकशाही हा शासनाचा असा प्रकार आहे की ज्यामध्ये सक्तीशिवाय लोकांचा सामाजिक, आर्थिक तसेच राजकीय जीवनात क्रांतिकारी बदल घडवून आणता येतो. डॉ. आंबेडकरांच्या मते भारतात जोपर्यंत सामाजिक व आर्थिक लोकशाही प्रस्थापित होणार नाही तोपर्यंत राजकीय लोकशाही यशस्वी होणे कठीण आहे. लोकशाही हा केवळ शासनाचा प्रकार नसून तो जीवन जगण्याचा मार्ग आहे. लोकशाही यशस्वी करण्यासाठी सामाजिक, आर्थिक समानता निर्माण करावी लागेल. समाजातील सर्वांना विकासाची समान संधी द्यावी लागेल. डॉ. आंबेडकरांच्या मते लोकशाहीत 'एक व्यक्ती एक मत' हे मूल्य उपयोगी नसून एक व्यक्ती एक मूल्य हे तत्त्व जास्त उपयोगी आहे. सामाजिक लोकशाहीचा पाया पक्का नसेल तर राजकीय लोकशाही कोलमडून पडेल. यासाठी सर्व प्रकारचे भेदाभेद नष्ट करून किमान जनतेच्या प्राथमिक गरजा पूर्ण करव्यात. डॉ. आंबेडकरांनी संसदीय लोकशाहीचा पुरस्कार केला कारण भारताला इंग्लंडच्या वास्तव्यामुळे संसदीय लोकशाही परिचित होती. संसदीय लोकशाहीत दोन व्यक्ती प्रमुख असतात. कायदेमंडळातूनच कार्यकारी मंडळ निर्माण होते. मंत्रीमंडळ हे सामूहिकरीत्या लोकसभेला जबाबदार राहते. या सर्व बाबी विचारात घेऊन आंबेडकरांनी संसदीय लोकशाहीचा पुरस्कार केला. डॉ. आंबेडकरांच्या मते लोकशाही घटना यशस्वी होण्यासाठी सर्वच राजकीय पक्षांनी घटनात्मक निती पाळली पाहिजे यावर त्यांचा विशेष भर होता. वेगवेगळ्या राजकीय पक्षाने लोकशाही यशस्वी होण्यासाठी स्वतःवर काही नैतिक बंधने लादून घेतली पाहिजेत एक नवी आचार संहिता तयार केली पाहिजे. लोकशाहीला उपयुक्त अशा अलिखित परंपरा, प्रथा, पध्दती निर्माण केल्या पाहिजेत अशी ही घटनात्मक निती यशस्वी लोकशाहीचा कणा आहे असे त्यांनी एका भाषणातून आग्रहाने सांगितले आहे.

समाजवादी विचार :-

देशातील शेती व्यवसायाचे आधुनिकीकरण व देशाचे औद्योगिकीकरण हे व्यक्तीगत सहभागाने न होता राजकीय पुढाकारानेच होईल यावर डॉ. आंबेडकरांचा विश्वास होता. कुळकायदे करून आणि जमिन धारणेचे कायदे करून हरिजन मजुरांचा वनवास संपणार नाही असे त्यांचे मत होते. भारतातील दारिद्र्य नष्ट करण्यासाठी म्हणजेच आर्थिक विषमता नष्ट करण्यासाठी भांडवलशाही समाजरचना योग्य नाही. भांडवलशाही समाजरचनेत संपत्ती व सत्ता यांचे केंद्रीकरण होईल अशी भीती त्यांना वाटत होती. म्हणून त्यांनी लोकशाही समाजवादाचा स्वीकार केला. लोकशाही समाजवादात छोटे उद्योगधंदे हे खासगी मालकीचे असतील तर मोठे उद्योगधंदे हे राष्ट्राच्या मालकीचे असावेत. अशा मिश्र अर्थव्यवस्थेचा स्वीकार करावा असे डॉ. आंबेडकरांनी सुचविले. जेणे करून समाजात कुणीही कुणाचे शोषण करणार नाही. डॉ. आंबेडकरांचा व्यक्तीस्वातंत्र्यावर विश्वास होता म्हणून भारतातील समाजाचे आर्थिक परिवर्तन घडवून आणण्यासाठी त्यांनी राज्य समाजवादी विचारांचा स्वीकार केला. या समाजवादी रचनेत लोकांच्या आर्थिक जीवनावर राज्याचे नियंत्रण असेल. तसेच वस्तुचे उत्पादन आणि वितरण करण्याचा अधिकार

राज्याला असेल. म्हणून त्यांनी सत्ता व संपत्तीच्या विकेंद्रीकरणासाठी म्हणजेच जास्तीत जास्त लोकांच्या कल्याणासाठी समाजवादी विचारांचा सातत्याने पाठपुरावा केला.

राज्यासंबंधी विचार :-

राज्य हे व्यक्तीच्या विकासाचे एक साधन आहे. म्हणून डॉ. आंबेडकरांनी लोकांच्या कल्याणासाठी राज्याची आवश्यकता स्पष्ट केली. सामाजिक व आर्थिक न्याय प्रस्थापित करण्यासाठी राज्याने योजना तयार करावी. नागरिकांना सर्वांगीण विकासासाठी हक्क द्यावेत. त्यांच्या मते राज्याने नागरिकांना हक्कांच्या संरक्षणाची हमी द्यावी म्हणून आंबेडकरांनी राज्य व्यवस्थेचे समर्थन केले. राज्य ही समाजोपयोगी अनेक विधे कार्य करणारी जागरूक संघटना आहे असे ते मानीत. व्यक्तीस्वातंत्र्य हे सर्व क्षेत्रातून म्हणजे केवळ राजकीय क्षेत्रातच नव्हे तर सामाजिक, आर्थिक, बौद्धिक व आध्यात्मिक क्षेत्रात ही आवश्यक आहे असे त्यांना वाटते. समाजातील प्रत्येक व्यक्तीच्या विकासाची जबाबदारी राज्यावर असावी ही राज्याची भूमिका त्यांनी ओळखली होती. राज्य व व्यक्ती यांच्या संदर्भात राज्याकडून नैतिक आचरणाची त्यांना अपेक्षा होती. डॉ. आंबेडकरांनी व्यक्त केलेले वरील सर्व विचार लक्षात घेतल्यास त्यातून राजकीय उदारमतवाद व मानवतावादाचे चित्र प्रकट होते.

समारोप :- भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर या महामानवाने भारतालाच नव्हे तर संपूर्ण मानवतेला एक आदर्श दाखवून दिला. त्यांच्या इतका स्वाभिमान, स्वतंत्र प्रवृत्तीचा, बुद्धीमान, प्रामाणिक, दीर्घ परिश्रमी विचारवंत क्वचितच आढळतो. डॉ. आंबेडकर यांनी भारत देशातील अस्पृश्यता जातीय व्यवस्था नष्ट करण्यासाठी आयुष्यभर फार मोठे प्रयत्न केले. परंतु डॉ. आंबेडकरांनी केलेल्या सर्व प्रयत्नांचे एक वैशिष्ट्य असे की, त्यांनी हे सर्व प्रयत्न लोकशाहीच्या चौकटीत बसून करण्याचा प्रयत्न केला. डॉ. आंबेडकर यांचा हिंसात्मक मार्गाने सामाजिक परिवर्तन करण्यास विरोध होता. फ्रेंच राज्यक्रांतीतील स्वातंत्र्य, समता, बंधुता ही मुल्ये त्यांना पूर्णपणे मान्य होती परंतु ज्या हिंसात्मक मार्गाने ही क्रांती झाली त्या पध्दतीला त्यांचा विरोध होता. हिंसात्मक मार्गाने होणारा बदल ज्या प्रमाणे एका रात्री घडून येतो त्याप्रमाणे तो बदल एका रात्रीत नष्टही होऊ शकतो. हिंसात्मक मार्गाने झालेला बदल हा टिकाऊ नसतो उलट लोकशाही मार्गाने मानसिक परिवर्तन करून घडवून आणलेला बदल हा टिकावु स्वरूपाचा आणि समाजाला फलदायी ठरणारा असतो. केवळ साध्य उदात्त असून भागत नाही आपली साधने पवित्र आणि लोकशाहीला पोषक असली पाहिजेत. या दृष्टीने त्यांनी साधन सुचितेचा व लोकशाही मार्गाचा पुरस्कार केला आहे. डॉ. आंबेडकर वैचारिक जीवन गतीमान होते. बदलल्या आव्हानाप्रमाणे त्यांचे विचारही सतत गतीमान राहिले होते. या दृष्टीने नव्या परिस्थितीच्या संदर्भात त्यांच्या विचारांचा अभ्यास झाला पाहिजे व त्यांच्या विचारातील शाश्वत जीवन मूल्यांचा शोध घेवून त्या विचारांच्या प्रकाशात भारतीय लोकशाहीने उद्याची वाटचाल केली पाहिजे.

संदर्भ सुची :-

- 1) मंगुडकर, मा. प (1990), महात्मा फुले, रानडे, डॉ. आंबेडकर व इतर विचारवंतांचे महाराष्ट्रातील लोकशाही विचार, पुणे : रघुवंशी प्रकाशन
- 2) पंडित नलिनी (1996), आंबेडकर, दादर, मुंबई : ग्रंथाली प्रकाशन
- 3) कुबेर, वा.ना.(1998), डॉ. आंबेडकर : विचारमंथन, पुणे : सुगावा प्रकाशन
- 4) फडिया, बी. एल. (2008), राजनीतिक चिन्तन भारतीय एवं पाश्चात्य, आगरा : साहित्य भवन पब्लिकेशन्स
- 5) खैरमोडे चांगदेव भवानराव, डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर खंड 9, मुंबई : महाराष्ट्र राज्य साहित्य संस्कृती मंडळ.
- 6) प्रबुध्द भारत (साप्ताहिक) 23 - 5 - 1959

गरीब मजदूरों और किसानों की सहायता-ज्योतिबा फुले

प्रा. डॉ. कदम एस. एस.

शंकरराव जावले पाटील महाविद्यालय लोहारा ता. लोहारा जिला उस्मानाबाद

ज्योतिबा ने स्त्रियों और दलितों में शिक्षा प्रसार का कार्य शुरू किया, और उनका ध्यान समाज के अन्य लोगों पर भी था। उन्होंने विधवाओं के दूखी जीवन के लिए भी कार्य किया। उनका ध्यान गरीब मजदूरों और किसानों चला गया। ज्योतिबा ठेकेदारी भी करते थे। उन्हें एक बड़ा ठेका भी मिला। इन दिनों खडकवासला तालाब का काम चल रहा था। इस तालाब के लिए पत्थरों की पूर्ति का ठेका ज्योतिबा को मिला। इस कार्य में फंसाने और परांजपे नामक दो लोगों ने भी उनकी सहायता की। इस दौरान उन्होंने मजदूरों की दीन दशा देखी। उन्होंने उनके बीच शिक्षा प्रचार का कार्य शुरू किया। उन्हें संगठित होकर कार्य करने के लाभ समझाए। कुछ समय बाद यरवदा पुल का कार्य शुरू हुआ। ज्योतिबा को चुने की पूर्ति का ठेका मिला। और भी कई ठेकेदार थे। वह मजदूरों का खूब शोषण करते थे। इंजीनियरिंग विभाग के लोग भी इन भ्रष्ट ठेकेदारों से मिले हुए थे। ज्योतिबा ने मजदूरों का पक्ष लिया। उन्हें संगठित किया। अन्याय अत्याचार और शोषण के विरुद्ध संघर्ष छेड़ दिया। मजदूरों की भांति गरीब किसान भी दुखी थे। ज्योतिबा का ध्यान उनकी ओर भी गया। जैसे गरीब किसानों से मिलते। उनका मार्गदर्शन करते। वह गांव गांव जाते। और उन में जागृति की भावना भरते। सन 1885 ज्योतिबा ने एक चित्र बनवाया। उसकी हजारों प्रतियां गरीब किसानों में बांट दी। इस चित्र में क्या अंकित था? इस चित्र का नाम रखा गया था—

“सुधारने चे झाड़” सुधार का वृक्ष 143

चित्र में एक किसान बना था। उसके सिर पर एक वृक्ष लगा था। इसमें साग सब्जी और फल हुए थे। यह फल केवल भट्ट ब्राह्मण सेठ साहूकार और सत्ताधारी खाते दिखाए गए थे। उनके बोझ से किसान तब आ जा रहा था। यह एक व्यंग्य चित्र था। गरीब किसानों पर इसका अच्छा असर पड़ा। उन दिनों सरकार किसानों से “लोकल फंड” भी लेती थी। पर किस राशि से किसानों को कोई लाभ नहीं होता था। ज्योतिबा ने इस फंड का भी विरोध किया। ज्योतिबा का ध्यान जमींदारी और साहूकारों के अत्याचारों की ओर भी गया। इसी समय एक घटना घट गई। शिरूर तालुके में करदहै नामक एक गांव था। इस गांव में एक गरीब किसान के खिलाफ साहूकार ने अदालत से डिग्री ले ली। उसके नौकरों ने किसान का घर छीन लिया। करदहै ग्राम के किसान उत्तेजित हो उठे। धीरे धीरे यह विद्रोह समूचे पुणे जिले में फैल गया। गरीब किसानों ने साहूकारों सूदखोरों के घरों पर उनकी दुकानों पर हमला कर दिया। वे कर्ज के दस्तावेज जलाने लगे। यही नहीं, उन्होंने खेत जोतना भी बंद कर दिया। अब तो और स्थानों पर भी किसानों में विद्रोह फैल गया। विद्रोह दबाने के लिए सरकार ने पुलिस बुलवाए। उससे काम न बना तो देना सेना आई। किसी तरह विद्रोह दबा। पर किसानों में चेतना जागृत हो गई। ज्योतिबा ने इस विद्रोह में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सन 1889 में मुंबई में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ था। इस अधिवेशन के प्रवेश द्वार पर ज्योतिबा ने एक किसान का पुतला खड़ा किया। किसानों की दुर्दशा की ओर कांग्रेस का ध्यान आकर्षित करना चाहते थे। उन्होंने घोषणा की की, “जब तक कांग्रेस के लोगों में इस भूषण खेड़कर किसान समुदाय का प्रतिनिधित्व नहीं होगा, तब तक जनता का नेतृत्व करने में तुम असफल रहोगे।” ज्योतिबा शुरू से ही किसानों की दुर्दशा के प्रति चिंतित थे। सर 1883 उन्होंने मराठी में एक पुस्तक लिखी थी। इस पुस्तक में किसानों की समस्याओं का वर्णन था। उसमें यह भी बताया गया था कि किसान कितने गरीब है। कितने और शिक्षित और धर्मभीरु है।

ज्योतिबा पिछले दो-तीन वर्षों से यह पुस्तक लिख रहे थे। उसकी पांडुलिपि के अन्य लोगों को पढ़कर सुनाते। जो भी उन्हें सुनता उनसे प्रभावित होता। ऐसे ही लोगों में बड़ौदा के महाराजा सयाजीराव कुमार भी थे।

महाराजा गायकवाड सर 1881 ने गद्दी पर बैठने के बाद पुणे आए थे। तब ज्योतिबा भी उनसे मिले। महाराजा गायकवाड उनसे, उनके विचारों से बेहद प्रभावित हुए। ज्योतिबा ने उन्हें अपनी पांडुलिपि के कुछ अंश भी पढ़कर सुनाए। महाराजा गायकवाड भी किसानों के हमदर्द थे। उन्होंने पांडुलिपि के प्रकाशन के लिए ज्योतिबा को आर्थिक सहायता देना स्वीकार किया। इस पुस्तक में ज्योतिबा ने अंग्रेजों की नीतियों की भी आलोचना की थी। उन्होंने लिखा कि अंग्रेजों ने भी गरीब किसानों पर करों का बोझ लाद दिया है। नमक उपयोग की वस्तु पर भी कर लगा दिया गया है। तालों, झीलो, नदियों में मिट्टी जमा है। किसान नहरों के पानी से वंचित है। पशुधन भी बर्बाद हो रहा है। इसके लिए बाहर से अच्छी नस्ल के पशु लाने चाहिए। उनके सुझावों का अच्छा प्रभाव पड़ा। ज्योतिबा जो कहते थे, उसे करते भी थे। पुणे के पास उन्होंने 200 एकड़ का एक कृषि फार्म बनाया था। इसमें उपयोगी वृक्ष लगाए गए। उन्नत बीजों, सुधरे कृषि यंत्रों, अच्छी खाद और नहर के पानी का कितना लाभ होता है, यह प्रत्यक्ष बताया गया था।

सत्यशोधक समाज:

पुणे में समूचे महाराष्ट्र से लगभग 60 व्यक्ति एकत्र हुए थे। वे सभी प्रतिष्ठित थे, जाने-माने समाज सेवक थे। पवित्र उद्देश्य से हुए थे। उद्देश्य समाज में सुधार के लिए एक संगठन की स्थापना। इन सभी लोगों को ज्योतिबा ने पुणे में आमंत्रित किया था। उनके अनेक सहकारी विभिन्न शहरों में काम कर रहे थे। ज्योतिबा चाहते थे कि सब को संगठित किया जाए। इससे दो लाभ होंगे। एक तो सामाजिक सुधार का कार्य सुचारू रूप से चलेगा, दूसरा विरोधियों को भी समुचित उत्तर दिया जा सकेगा। अपने विचारों को पत्र का रूप देकर ज्योतिबा ने भेजा था। लोग उत्साह से आए। विचार विमर्श किया। एक संगठन स्थापित किया गया। उसका नाम रखा गया- "सत्यशोधक समाज"।

इस समाज के 6 सिद्धांत थे।

1. ईश्वर एक है अंततः वह सर्वव्यापी, निर्गुण, निर्विकार एवं सत्व स्वरूप है। सारे मनुष्य प्राणी उसके प्रिय पुत्र है।
2. ईश्वर की भक्ति करने का प्रत्येक मनुष्य को पूर्ण अधिकार है। जिससे भांति माता-पिता को संतुष्ट करने के लिए किसी मध्यस्थ दलाल की आवश्यकता नहीं होती, उसी तरह सर्वथा परमेश्वर की पूर्ति के लिए दलालों की आवश्यकता नहीं।
3. मनुष्य जाति की अपेक्षा, गुणों से श्रेष्ठ समझा जाता है।
4. कोई भी ग्रंथ ना तो ईश्वर प्रणीत है और पूर्ण प्रमाण है।
5. परमेश्वर सावयव रूप में अवतार नहीं ग्रहण करता।
6. पुनर्जन्म, कर्मकांड, जब तक यह बातें अज्ञान मुलक है।⁴⁷

सत्यशोधक समाज के पहले अध्यक्ष और कोषाध्यक्ष ज्योतिराव फुले बनाए गए। मंत्री थे नारायणराव गोविंदराव कडलक। इनके अतिरिक्त 48 सभासद थे। इनमें सावित्रीबाई फुले और सावित्रीबाई रोडेला महिलाएं भी थीं। सदस्यों में कई पदाधिकारी थे। उसमें कई जातियों और धर्मों के लोग थे। इस समाज में रविवार का दिन सामुदायिक प्रार्थना के लिए रखा गया। कारण अवकाश का था। ज्योतिबा और उनके सहयोगी गांव गांव जाते। लोगों में अपने विचारों का प्रचार करते। वे कहते- ईश्वर एक है। मूर्ति पूजा और अन्य उपासना मार्ग गौन है। उसे से ईश्वर की पूजा नहीं होती। प्यास लगने पर हम पानी पीते हैं, भूख लगने पर भोजन करते हैं। इसी प्रकार अंतर मन की शुद्धि के लिए ईश्वर की उपासना यही मांग है। जिसके लिए या अन्य जाति के किसी तरह की आवश्यकता नहीं।..... पाप, पुण्य, मोक्षा और उसके लिए पुनर्जन्म मैया स्वर्ग की बात मिथ्या है। अपने कार्यों द्वारा ही मनुष्य इस मृत्युलोक में स्वर्ग अर्थात् सुख,

मृत्यु अर्थात् दुख का निर्माण कर सकता है। यह सब उसी के कर्म का फल है। तुम पर आकाश के ग्रहों या पृथ्वी पर देवताओं का खौफ नहीं है। उससे मुक्ति देने के लिए ईश्वर ने तो अवतार लेते हैं और आदेश देते हैं। तुम्हें स्वयं अपना मार्ग बनाना है। इसके लिए ना तो तीर्थों में जाने की आवश्यकता है, गुरु प्रसाद की। तुम्हारे सद्बिचार ही तुम्हारे गुरु हैं। उनके आदेश ही तुम्हारा धर्म है। इन्हीं के लिए जीवित रहो। इन्हीं के लिए मरो। प्रत्येक रविवार को सामुदायिक प्रार्थना की जाती। मराठी भाषा में होती। संत तुकाराम, नामदेव आदि के अभंग गाए जाते। महापुरुषों के विचार भी सुनाए जाते। सत्यशोधक समाज के प्रचारक सिर पर साफा बांधते, कंधे पर कंबल रखते। उनके हाथ में ढोल होता। वह ढोल बजाते। लोगों को एकत्र करते। फिर उन्हें सत्यशोधक समाज के उद्देश्य समझाते। वे लोगों को नारी शिक्षा का, दलित शिक्षा और स्वदेशी वस्तुओं का महत्व समझाते। सच्चे धर्म का मर्म बताते। धर्म के नाम पर पाखंड से बचने की सलाह देते। सत्यशोधक समाज के लोग विवाह में अपव्यय करने की सलाह देते। ज्योतिबा टोना टोटका, मूर्ति पूजा आदि का विरोध करते। शीघ्र ही सत्यशोधक समाज लोकप्रिय हो गया। दलित बस्तियों, कामगारों की बस्तियों, गरीबों की बस्तियों में सत्यशोधक समाज की शाखाएं स्थापित होने लगीं। इससे पुरोहित वर्ग क्रोधित हो उठा। अब दलित समाज के लोग उनके पास नहीं आते थे। इससे उनकी आएं थें घट गईं। उन्होंने एक उपाय सोचा, लोगों को सत्यशोधक समाज के खिलाफ भड़काया जाए। उन्होंने प्रचार करना शुरू किया- ज्योतिबा सबको इसाई बना देगा। मराठी भाषा में ईश्वर की प्रार्थना करने से क्या लाभ वह तो ईश्वर के पास पहुंचती ही नहीं। कुछ लोग उनकी बातों में आ भी गए। वे लोग ज्योतिबा के पास अपनी शंकाओं के समाधान के लिए गए। उन्होंने उन्हें समझाया, बताया कि कट्टरपंथी क्यों ऐसा गलत प्रचार कर रहे हैं। सत्यशोधक समाज की लोकप्रियता बढ़ने लगी। शाहजी पाटिल नामक एक किस्सा ज्योतिबा और उनके सत्यशोधक समाज से बेहद प्रभावित थे। उन्होंने अपने पुत्र के विवाह में किसी भी पुरोहित को नहीं बुलाया। इस पर ओतूर गांव के पुरोहित वामन जगन्नाथ और शंकर बापूजी ने शाहजी पाटिल के विरुद्ध मानहानि का दावा कर दिया।

पाटिल परेशान हो गए। वह ज्योतिबा के पास गए। उन्होंने कहा, चिंता ना करो। हम लोग मुकदमा लड़ेंगे। पुणे के प्रथम श्रेणी के सब जज की अदालत में सुनवाई हुई। अदालत में पाटिल ने कहा कि उनके पुत्र का विवाह विधि सम्मत है। उनकी जाति के व्यक्ति ने कराया है। उनके पूर्वज भी ऐसा ही किया करते थे। अदालत ने मान लिया डिग्री खारिज कर दी। यह नवंबर 1887 की बात है। इससे सत्यशोधक समाज के सिद्धांतों का समर्थन हुआ। उधर कट्टरपंथियों ने मुंबई हाईकोर्ट में अपील करने की ठानी।

संदर्भ संकेत

1. ज्योतिबा फुले- दुर्गा प्रसाद शुक्ला, विभागीय सहयोग: हीरालाल बाछोटिया पृष्ठ. क्र.43
2. वही. पृष्ठ. क्र.48

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर : धार्मिक विचार

प्रा. शफीक लतीफ चौधरी

हिंदी विभाग छत्रपती शिवाजी महाविद्यालय ता.कळंब जि.उस्मानाबाद. महाराष्ट्र

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर पर छोटोपेन से ही धार्मिक संस्कार हुए थे। डॉ. बाबासाहेब का मानना है कि जाति और वर्ग यह दोनों समान है। इसी जाति और वर्ग ने दुर्बल, पीड़ित, शोषित, अस्पृश्य आदि लोगों का घात किया था। आंबेडकर के पिता कबीरपंथी थे। इतनी सारी बौद्धिकता के होते हुए भी वे धार्मिक थे, लेकिन बाबासाहेब की धार्मिकता में कर्मकांड और रूढ़ियों को कोई स्थान नहीं था। डॉ. बाबासाहेबजी ने 1917 से 1935 तक हिंदू धर्म में सुधार लाने के अनेक प्रयास किए। बाबासाहेब की इच्छा थी कि हिंदू धर्म के तथाकथित शंकराचार्य पंडित आदि वर्ण तथा जातिव्यवस्था को नकारे मनुस्मृति को नकारे और अस्पृश्यों को अपने दिलों में समा ले। लेकिन हिंदू धर्म के प्रमुखों ने बाबासाहेब के सारे लेखन, आंदोलनों तथा कानूनी प्रयासों को स्वीकार नहीं किया। हिंदू धर्म के प्रमुखों ने हमेशा विषमता का तथा विषमता को मानने वाले शास्त्रग्रंथों का समर्थन करते रहे। उनके मतानुसार जो धर्म समानता का लक्ष्य प्राप्त करने में असमर्थ हो वह धर्म नहीं हो सकता वह अधर्म है। हिंदू धर्म समानता के आधार पर नहीं टिका है, हिंदू धर्म में कर्मकांड की प्रधानता है और इसी में वर्ण व्यवस्था की निर्मिती हुई है। इसलिए उन्होंने लिखा है कि, " जो धर्म विषमता का समर्थन करता है, उसके विरोध का हमने निर्णय लिया है। अगर हिंदू धर्म अस्पृश्यता का धर्म है, तो उसे समानता का धर्म बनाना चाहिए चातुर्वर्ण्य ही अस्पृश्यता की जननी है। अगर इस जड़ को नष्ट नहीं किया गया तो अस्पृश्य वर्ग इस धर्म को त्याग देगा " लेकिन बाबासाहेब के इन विचारों को सवर्णों ने गंभीरता से नहीं लिया।

आंबेडकर जी के विचार में धर्म कोई गहरी आध्यात्मिक आस्था नहीं है, न ही किसी अदृश्य या अज्ञात का समस्यात्मक संकेत है। यह सिर्फ मानवोचित आस्था है, जो सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। डॉ.बाबासाहेब यह मानते हैं कि व्यक्ति के सद्गुणों का विकसित होना ही सच्चे धर्म का अंतिम प्रयोजन है, ' जिस कारण प्रजा उधारण होता है, वही धर्म।' उनका मानना है कि बिना सही सामाजिक व्यवस्था के, न तो राजनीति, न ही अर्थनीति सही मार्ग पर जा सकती है। इसलिए धर्म एक ऐसी जरूरत है, जो मानव को सही अर्थ में मानव बनाने के लिए अनिवार्य है। जो धर्म समानता का लक्ष्य प्राप्त करने में असमर्थ हो वह धर्म नहीं हो सकता। वह अधर्म है। प्रजा के धारण के लिए धर्म को चाहिए कि वह बंधुभाव, क्षमता और स्वतंत्रता के सद्गुणों के संस्कार डालें। करोड़ों व्यक्तियों के गुणों का विकास अस्पृश्यता के कारण नहीं हो सका है। ऐसा धर्म जो शतकों से एक पूरे वर्ग को मानवीय अधिकारों से वंचित रखता है। वह धर्म कहलाने लायक नहीं होता ऐसा उनका विश्वास था। बाबासाहेब ने कही स्थानों पर लिखा है कि, 'धर्म मनुष्य के लिए हैं, मनुष्य धर्म लिए नहीं है। वह लिखते हैं जो धर्म अस्पृश्य को मनुष्य के रूप में स्वीकार नहीं करता, जो धर्म पीने के लिए पानी तक नहीं देता, वह धर्म धर्म कहलाने लायक नहीं हो सकता। जो धर्म मनुष्य मनुष्यों में भेद करें, वह धर्म नहीं हो सकता।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर धर्म के महत्व को स्वीकार करते हुए उन्होंने 'बुद्ध और उसका धम्म' इस ग्रंथ में लिखा है कि समाज की ' स्थिरता और नियंत्रण के लिए नीति की आवश्यकता होती है। इसमें से किसी एक के अभाव में समाज रसातल को जा सकता है। इसी कारण के लिए किसी भी समाज के लिए धर्म की आवश्यकता होती है। धर्म केवल नीति का पाठ नहीं है। इनके विचार में सामाजिक व्यवहार ही नैतिक व्यवहार है। क्योंकि मनुष्य की बुद्धि इसी

व्यवहार की आज्ञा देती है। इस अर्थ में धर्म का संबंध राजनीति और अर्थनीति से भी हो जाता है। बिना सही सामाजिक व्यवस्था के, न तो राजनीति, न ही अर्थनीति सही रास्ते पर जा सकती है। इसीलिए धर्म एक ऐसी जरूरत है, जो मानव को सही अर्थ में मानव बनाने के लिए जरूरी है। धर्म केवल नीति का पाठ नहीं है। स्वतंत्रता, समता और बंधुता को मूल्य रूप में उसे स्वीकारना चाहिए। दरिद्रता को पवित्रता मानने का आग्रह धर्म को नहीं करना चाहिए। दरिद्रता का उदात्तीकरण भी नहीं किया जा सकता। सही रूप में उपर्युक्त सभी बातों की स्वतंत्रता, समता, बंधुता, नीति, शील, करुणा, तर्क, बुद्धि वाद की पूर्ति बौद्ध धर्म करता है। इसी कारण आंबेडकर जी ने धर्म परिवर्तन कर ही लिया उन्होंने बौद्ध धर्म को अनुयायियों सहित स्वीकार किया था। उल्लेखनीय है कि उस वक्त के दलित वर्ग के कई नेताओं ने इसका विरोध किया। संभवतः आंबेडकर जी का विचार था कि बौद्ध धर्म की नैतिक मान्यता है तो वही है, जो कि हिंदू धर्म की है। अंतर सिर्फ यह है कि उसमें छुआ-छूत के बजाय मानव मूल्यों पर अधिक जोर दिया गया है। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर बुद्ध और मार्क्स को एक दूसरे का शत्रु अथवा प्रतिस्पर्धी के रूप में भी नहीं देखते। इन दोनों के बीच के साम्य भेद को भी वे स्पष्ट करते हैं। इन दोनों में समानता ज्यादा है। हिंसा के सिवा इन में भेद नहीं है, इसलिए बाबासाहेब ने 'बौद्ध साम्यवाद' शब्द का इस्तेमाल किया। वह कहते हैं कम्प्युनिज्म अथवा साम्यवाद में से हिंसा निकाल दी जाए तो सिर्फ बुद्ध ही शेष रहता है। बुद्ध व्यक्तिगत संपत्ति के विरोध में थे। बुद्ध की 'दुख मीमांसा' और मार्क्स की 'शोषण मीमांसा' में उन्हें समानता दिखाई देती है।

बौद्ध धर्म के संबंध में उनके निष्कर्ष इस प्रकार के थे :-

- १) बौद्ध धर्म परलोक के संबंध में नहीं है। वह ना स्वर्गवादी है, ना नरकवादी, वह प्रतिवादी है।
- २) यह धर्म व्यक्तिगत मोक्ष की बात नहीं कहता। वह सामाजिक मुक्ति का संदेश देता है।
- ३) वह धर्म निरीश्वरवादी, अनात्मवादी, भौतिकवादी और प्रखर बुद्धिवादी है।
- ४) यह धर्म अपरिवर्तनीय नहीं है, परिवर्तन का वह खुला समर्थन करता है। अर्थात् यह धर्म विकासशील है।

डॉ. बाबासाहेब ऐसी अनेक विशेषताओं के कारण वे बौद्ध धर्म की मौलिकता को स्पष्ट करते हुए इसे आधुनिक वैज्ञानिक कसौटियों पर कसते हैं और इसके महत्व को स्पष्ट करते हैं। उपर्युक्त संक्षिप्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि आंबेडकर के हिंदू धर्म त्यागने का यह अर्थ कतई नहीं समझना चाहिए कि वे भारतीय संस्कृति के खिलाफ नहीं थे। वह स्वयं कहते हैं, " बौद्धधर्म भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है। मैंने इस बात का ख्याल रखा है कि मेरे धर्म परिवर्तन से इस देश की परंपराओं, संस्कृति और इतिहास पर आघात न पहुंचे "। आंबेडकर धर्म को मनुष्य के विकास का साधन मात्र मानते हैं। वे लिखते हैं कि, "जो धर्म सबकी चिंता करता हो, सबको अवसर प्रदान करता हो, उसके लिए हम प्राण तक देने तैयार हैं। जो धर्म कुछ वर्ग /वर्ण जाति विशेष की परवाह भी न करता हो, उसकी फिक्र हम क्यों करें ? धर्म उनकी नजर में विशुद्ध नैतिकता का दूसरा नाम है। बाबासाहेब का भरोसा था कि धर्म में व्यक्ति की आशा को, उसके परिश्रम को तथा उसकी जिद्द को बनाए रखने की अद्भुत शक्ति होती है। विशेषता गरीबों के जीवन में धर्म महत्व की भूमिका निभाता है। धर्म के सहारे ही व्यक्ति दुख, निराशा के बाहर आ जाता।

संदर्भ सुची

- १) हिंदी में नवजागरण : श्री. आनंद यादव. ग्रंथ निर्मिती केंद्र, यशवंतराव चव्हाण महाराष्ट्र मुक्त विद्यापीठ नाशिक .
- २) भारतीय सामाजिक व्यवस्था : डॉ गणेश पांडेय.
- ३) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर संपूर्ण वाडःमय : डॉ. बी. आर आंबेडकर.
- ४) हिंदी साहित्य : दलित विमर्श : प्राध्यापक. डॉ. उमाकांत बिरादार .

छ. शाहू महाराज व ब्राह्मणतर स्त्री सुधारणा

डॉ. थोरे किशोर धोंडीबा

इतिहास विभाग, सी. बी. खेडगीज् बी. सायन्स, आर. व्ही. कॉमर्स अँड आर. जे. आर्टस् कॉलेज अक्कलकोट जि.

सोलापूर 413216

kishorda.thore@gmail.com

प्रस्तावना:-

छ.शाहू महाराजांच्या कार्याचा आढावा घेत असताना त्यांनी कोल्हापूर परिसरात जो क्रांतीकारक परिवर्तनाचा नविन प्रवाह निर्माण केला त्याचा परिणाम म्हणूनच आज महाराष्ट्राला शाहू-फुले-आंबेडकरांचा महाराष्ट्र म्हणून ओळखले जाते. शाहू महाराजांच्या कार्याचा आढावा घेत असताना त्यांच्या कार्याचा अनेक पैलूवर प्रकाश टाकता येतो. पण त्यांच्या प्रत्येक कार्याच्या मुळाशी ब्राह्मणतर चळवळीचा पाया महत्त्वपूर्ण आहे. महात्मा फुलेंनी सत्यशोधक चळवळीच्या माध्यमातून महाराष्ट्रातील बहूजन समाजामध्ये चळवळीला एक नविन मार्ग निर्माण करून दिला. बहूजन, स्त्री व शुद्रातिशुद्र यांना शिक्षणाची दरवाजे खुली केली व त्यांच्या मध्ये एक प्रेरणा निर्माण केली. याच पार्श्वभूमीवर ब्राह्मणतर चळवळ महाराष्ट्रात सुरु झाली. राजाराजशास्त्री भागवत यांनी या चळवळीला "ब्राह्मणतर चळवळ" असे नाव दिले.¹ या चळवळीने पुरोहितशाही व वर्णव्यवस्थेवर प्रहार केला. कनिष्ठ वर्गाच्या शिक्षणाला चालना दिली. त्यांच्यामध्ये राजकीय हक्काची जाणीव निर्माण केली. या चळवळीने वरिष्ठ वर्गाला समाजिक समतेचे तत्व विचारात घेण भाग पाडले.

कोणतीही चळवळ निर्माण होण्यासाठी जर राजकीय वरदहस्त मिळाला तर ती चळवळ जोमात सुरु होते. या चळवळीला व ब्राह्मणतर चळवळीच्या नेत्यांच्या पाठीमागे छ. शाहू महाराजांचा वरदहस्त लाभला. यामुळेच या चळवळीला महाराष्ट्रात गती मिळाली. सत्यशोधक चळवळीच्या कार्याला शाहू महाराजांनी मदत केली इतकेच नाही तर त्या चळवळीला गती देण्याचा प्रयत्न केला त्यामुळेच महाराष्ट्रात ही चळवळ प्रभावी ठरली. समाजिक सुधारणेबरोबरच राजकीय चळवळ निर्माण व्हावी यासाठी केशवराव जेधे व सहकाऱ्यांनी 12 डिसेंबर 1920 रोजी ब्राह्मणतर लीग या राजकीय पक्षाची स्थापना केली.² या शोधनिबंधामध्ये आपण छ. शाहू महाराजांनी ब्राह्मणतर स्त्री शिक्षण व सुधारणा यांचा अभ्यास करणार आहोत.

छ. शाहू महाराजांची स्त्री शिक्षण विषयक भूमिका:-

माणसाच्या प्रगतीमध्ये शिक्षणाची भूमिका खुप महत्त्वपूर्ण आहे. हे लक्षात आल्यानंतर महाराष्ट्रातील समाजसुधारकांना शिक्षणाचा प्रसार करणे अत्यंत गरजेचे वाटत होते. समाजातील कोणत्याही घटकांचा मग तो शुद्र असो किंवा स्त्री असो यांचा उद्दाराचा एकमेव मार्ग म्हणजे शिक्षण होय. याच कारणामुळे सत्यशोधक समाजाने आपले लक्ष शिक्षणावर केंद्रीत केले. त्याच्याच आधार घेऊन शाहू महाराजांनी स्त्री शिक्षणाचा पुढाकार घेतला. त्याचाच परिणाम म्हणून त्यांनी स्त्रीयांना शिक्षण देण्यासाठी महिला शिक्षिका तयार व्हाव्यात म्हणून 1882 साली स्त्रियांसाठी अध्यापक विद्यालयाची स्थापना केली.³ या अध्यापक विद्यालयातून मुलींनी शिकून इतर स्त्रीयांना शिक्षित करावे ही महाराजांची अपेक्षा होती.

बोले तैसा चाले त्यांची वंदावे पावले या उक्तीप्रमाणे शाहू महाराजांचे कार्य होते. कृष्णाबाई केळवकर या हुशार विद्यार्थिनीला मुंबईच्या गॅट मेडीकल कॉलेजमध्ये वैद्यकीय शिक्षण घेण्यासाठी पाठविले. शिक्षण पुर्ण

झाल्यानंतर शाहूंनी 1902 साली अल्बर्ट एडवर्ड मेमोरियल हॉस्पिटल याठिकाणी सहाय्यक डॉक्टर म्हणून नेमणूक केली. इतकेच नाही तर सुतिकाशास्त्रात तीने उच्च शिक्षण घ्यावे म्हणून शिष्यवृत्ती देवून इंग्लंडला पाठविले. उच्च शिक्षणानंतर कृष्णाबाई पुन्हा कोल्हापूरमध्ये आपल्या कामावर रुजू झाल्या.⁴ समाजामध्ये स्त्री शिक्षणाविषयी आदर्श निर्माण करण्याची परिस्थिती त्यांच्या घरातच निर्माण झाली. त्यावेळी तत्कालिन समाज, घरातील मंडळी, दरबारातील मंडळ इतकेच नाही तर आपल्या पत्नीचाही विरोध असताना एक क्रांतीकारी निर्णय घेतला. शाहू महाराजांच्या धाकट्या सुनबाई इंदुमती राणीसाहेब या वयाच्या साडेअकराव्या वर्षी विधवा झाल्या. आपल्या धर्मग्रंथांमध्ये विधवाविषयी अनेक समजूती होत्या. तरीही समाजसुधारकांचा पिंड असणारे शाहू महाराजांनी आपल्या या सुनेने शिक्षण घ्यावे असे अग्रह धरला. सर्व विरोधाचा परिहार करून त्यांनी इंदुमतीच्या शिक्षणासाठी सोनतळीला खास आश्रम तयार केला त्याठिकाणी तज्ञ शिक्षक मंडळीची नेमणूक केली. इंदुमती राणीसाहेबांनीही या संधीचे सोने केले व मॅट्रीकची परिक्षा दुसऱ्या क्रमांकांने उत्तीर्ण झाल्या. त्याही पुढे जावून शाहू महाराजांनी कोल्हापूर संस्थांनाचे शिक्षण खात्याची धुरा इंदुमती यांच्या हाती देण्याचा निर्णय घेतला. पण इंदुमती राणीसाहेबांचे अकाली निधन झाले त्यामुळे हे घडू शकले नाही.⁵

स्त्रीशिक्षणाच्या बाबतीत शाहू महाराजांची दृष्टी व्यापक असल्याचे आपणास दिसून येते. स्त्री शिक्षणामध्ये स्त्री-पुरुष समानता प्रस्थापित करण्याचा प्रयत्न महाराजांनी केल्याचे दिसून येते. त्याचेच उदाहरण म्हणजे मुलांच्या शाळेत प्रवेश घेतलेल्या मुली चांगल्या गुणांनी उत्तीर्ण झाल्याबद्दल त्या शाळेतील शिक्षकांचा खास इनाम देवून सन्मान केला. त्यांसाठी 512 रुपयांची खास मंजूरी देण्यात आली.⁶ शुद्रातिशुद्रांना शिक्षण मिळावे हा हेतू होताच पण त्या वर्गातील स्त्रियांनाही शिक्षण मिळावे यासाठी शाहू महाराजांनी विशेष प्रयत्न केल्याचे दिसून येते. इ.स. 1907 मध्ये चांभार, ढोर यांच्या मुलींसाठी त्यांनी स्वतंत्र शाळा काढण्यासाठी त्यांनी 96 रुपयांची खास तरतूद केली होती.⁷

शाहू महाराजांच्या दरबारात तोफखाने होते त्यांनी महाराजांच्या संपर्कातील आठवणी आपल्या राजर्षी शाहू यांचे अंतरंग नावाच्या पुस्तकात नमूद केल्या आहेत. अशा एका चर्चेच्या वेळी शाहू महाराज स्त्री शिक्षणाविषयी म्हणतात की, "हल्लीच्या मुलींना भले-बुरे, चांगले वाईट, योग्य अयोग्य हे समजण्याची शक्ती ज्या शिक्षणामध्ये आहे असे शिक्षण त्यांना दिले पाहिजे. असे शिक्षण देणारे गुरूजन जर चारित्र्यसंपन्न असतील तर त्या मुली बेटाल होणार नाहीत. थोरपणाचे, संयमी, नीतीधैर्याचे माणुसकीचे शिक्षण स्वतः आत्मसात करून दाखविणाऱ्या शिक्षकाद्वारे हे कार्य केले पाहिजे. तसे शिक्षक मिळविण्यासाठी समाजाने वाटेल ती किंमत देण्यास तयार असले पाहिजे."

आपल्या घरातील स्त्रियांना चांगल्या प्रकारचे शिक्षण मिळावे यासाठी महाराज खास प्रयत्न करित होते. त्याकाळात राजघराण्यातील मुलींना खाजगी शिक्षण देण्याची पध्दत होती. आपली पत्नी महाराणी लक्ष्मीबाई यांच्या शिक्षणासाठी त्यांनी मिसिस कॉक्स या युरोपियन शिक्षकेची नेमणूक केली. रोज चार तास याप्रमाणे चार वर्ष शिक्षण देण्याचे कार्य कॉक्स यांनी केले. ललित कला, विणकाम याबरोबरच विविध खेळ, घोड्यावर बसणे, मोटार चालविणे या गोष्टीही आल्या पाहिजेत अशी महाराजांची भूमिका होती.⁸

आपल्या लोकसंख्येमध्ये पन्नास टक्के महिलांचा वाटा असूनही आपली व्यवस्था अनेक वर्ष स्त्रियांना दुय्यम दर्जा देवून स्त्रियांना शिक्षणापासून वंचित ठेवले. त्यामुळे शाहू महाराजांनी आपल्या करवीर जनतेसाठी तीन आदर्श ठेवले.

1. करवीर नगरीत व संस्थानातही द्वेषाच्या कोणत्याही प्रकाराला वाव द्यायचा नाही.
2. प्रजेला सर्व दृष्ट्या संतोष देणे व पुरुषांइतकेच स्त्रियांना शिक्षण देणे.
3. पुरुषांच्या बरोबरीने स्त्रियांना समान हक्क आपल्याला मान्य असेल.⁹

शाहूंच्या या आदर्शाचा परिणाम कोल्हापूर संस्थानात स्त्री शिक्षणाचा प्रसार व प्रचार झपाट्याने झाला. व स्त्रियांच्या मनामध्ये आत्मभान निर्माण झाले. छ. शाहू महाराजांनी आपल्या संस्थानात पुरुषांच्या बरोबरीने स्त्री शिक्षण सुरू केले असले तरी यासाठी विशेष तरतुदी करण्यात आल्या. त्यामध्ये फी माफी, शिष्यवृत्त्या सुरू केल्या. मराठी चौथ्या इयत्तेत वार्षिक परिक्षेत पहिल्या येणाऱ्या दोन मुलींना 'श्री राधाबाई आक्कासाहेब महाराज स्कॉलरशिप' व 'श्री नंदकुवर महाराणी भावनगर स्कॉलरशिप' अशा प्रत्येकी 40 रु. दोन शिष्यवृत्त्या सुरू केल्या. या सर्व प्रयत्नामुळे स्त्री साक्षरतेचे प्रमाण 0.10 टक्क्यावरून 0.35 टक्क्यापर्यंत वाढल्याचे दिसून येते.¹⁰

छ. शाहू महाराजांची बालविवाह विषयक भूमिका:-

समाजातील स्त्रियांची विटंबना व दुरावस्था पाहून महाराजांचे मन व्याकूळ होत असे. संपुर्ण समाजाला लागलेली कीड म्हणजे बालविवाह होय. समाजाच्या प्रत्येक जातीजमातीमध्ये बालविवाह प्रथा रुढ होती. 19 व्या शतकामध्ये सत्यशोधक चळवळीच्या माध्यमातून बालविवाह विषयक जनजागृती होण्यास सुरुवात झाली होती. शाहू महाराजांनी बालविवाह हावू नये म्हणून 12 जुलै 1919 रोजी वरांचे वय 18 वर्ष व वधुचे वय 14 वर्ष पुर्ण झाल्याशिवाय विवाह करता येणार नाही असा कायदा संमत केला.¹¹

प्रत्येक सुधारणा करण्याची सुरुवात ते आपल्या घरातून करीत हे शाहू महाराजांचे विशेष होते. बालविवाहाच्या बाबतीत आपली मुलगी राजकुमारी राधाबाईसाहेब उर्फ आक्कासाहेब महाराज यांच्या विवाहाच्या प्रसंगी इ.स. 1908 साली देवास नरेश श्रीमंत तुकोजीराजे पवार यांना पाठविलेल्या पत्रात म्हणतात, 'मुलीचे वय चौदा वर्षांचे होईपर्यंत तिला संसाराला जूपणे योग्य होणार नाही. उलटपक्षी ते अन्यायाचे व निर्दयपणाचे होईल.' यावरून शाहू महाराजांची बालविवाहासंबंधी भूमिका स्पष्ट होते. या काळात बालविवाह होत असल्यामुळे बालविधवाचे प्रमाणही मोठे होते. नवऱ्याने सोडविलेल्या किंवा बालविवाह असलेल्या स्त्रियांना पूर्वी ब्राह्मणेत्तर समाजात विवाहाचा अधिकार होता. ही पाट लावण्याची पध्दती उच्चजातवर्णांच्या अनुकरणाने ब्राह्मणेत्तर समाजात बंद पडू लागली होती. ती पुन्हा कार्यरत करून तिच्या वहिवाटीची तरतूद छत्रपती शाहूंनी कायदा करून केलेली दिसते.¹²

छ. शाहू महाराजांची पुनर्विवाह विषयक भूमिका:-

स्त्रियांच्या समाजातील प्रत्येक बाबतीत आपली भूमिका शाहू महाराजांनी अत्यंत पोटतिडकीने मांडलेले दिसून येते. महाराजांच्या हातात सत्ता होती त्यामुळे त्यांनी आपली जबाबदारी ओळखली व प्रत्येक भूमिका कायद्याच्या आवाक्यात आणण्याचा प्रयत्न केला. इ.स. 1917 च्या जुलैमध्ये शाहू महाराजांनी संस्थानात विधवांच्या पुनर्विवाहास कायदेशीर मान्यता देणारा कायदा संमत केला. हिंदूंच्या अनेक जातीत विधवांच्या पुनर्विवाहाच्या बाबतीत इतर विवाहांप्रमाणेच योग्य विधी न करण्याची पध्दती असल्यामुळे ज्या अनेक अडचणी निर्माण होत होत्या, त्या या कायद्याने दूर करण्यात आल्या. तसेच या कायदानुसार विवाहाची कायदेशीर नोंद करण्याची पध्दत सुरू केली गेली. त्यामुळे विवाहविधीचा कायदेशीर पुरावा अस्तित्वात राहू शकल्याने स्त्रीवर्गावर होणाऱ्या संभाव्य अन्यायाचा प्रतिकार करण्याचे एक साधन या कायद्याने उपलब्ध करून दिले गेले.¹³

समाजामध्ये एखाद्या विधुराला पुनर्विवाहाचा अधिकार आहे तसाच स्त्रियांनाही असला पाहिजे ही महाराजांची भूमिका होती. इ.स. 1919 साली कानपूरमधील कुर्मी क्षत्रिय परिषदेत या विषयावर बोलताना छ. शाहू महाराज म्हणाले होते, "कुर्मी क्षत्रिय समाजामध्ये विधवा विवाह प्रचलित असलेला पाहून मला मोठा आनंद होत आहे. आपली क्षत्रिय जात भ्रूणहत्या, व्यभिचार, पापापासून सुरक्षित राहिल असा माझा विश्वास आहे. हा आपधर्म आहे. मनुष्यसमाज निर्दोष राखण्यासाठी हे आहे. वेदादी शास्त्राचे याला पाठबळ आहे. आमच्या सरकारनेही विधवाविवाह

कायदा पास केला आहे. ज्या जातीत या आपधर्माचा प्रचार नाही त्या जातीत भ्रुणहत्या, व्यभिचार आदी करून पाप घडत आहे व हजारो मुले प्रत्येक वर्षी मरत आहेत. ही किती दुःखाची गोष्ट आहे बरे"14

छ. शाहू महाराजाची आंतरजातीय विवाह विषयक भुमिका:-

आपल्या समाजावर धर्मातील कर्मकांडाचा इतका प्रभाव होता की, मानवाला कितीही त्रासदायक असला तरीही त्यामध्ये बदल करण्यास बंदी होती. आंतरजातीय व आंतरधर्मिय विवाह हा शास्त्रसंमत नसल्याने ते बेकायदेशीर ठरविले जाई. विवाह ही धार्मिक बाब मानण्यात येई. धार्मिक विवाहात स्त्रियांना दुय्यम स्थान देण्यात आले होते. यामध्ये स्त्रियांचे शोषण केले जात होते. अशा शोषणाच्या विरोधी महाराजांनी धर्मातील रूढींना फाटा देऊन ज्यांना नोंदणी पध्दतीने विवाह करावयाचा असेल त्यांना विवाहासाठी जातीची किंवा धर्माचे कोणतेही बंधन असणार नाही. स्त्री विषयक समाजसुधारणेचे हे एक क्रांतीकारी पाऊल होते. आंतरजातीय व आंतरधर्मिय विवाहास मान्यता देणारा कायदा 12 जुलै 1919 रोजी पास करून आपल्या संस्थानात लागू केला. याच सुमारास सन 1918 साली मध्यवर्ती कायदेमंडळात विठ्ठलभाई पटेल यांनी आंतरजातीय विवाह कायदेशीर ठरविणारे बील मांडले. हे बील भारतीय इतिहासात पटेल बील या नावाने ओळखले जाते. या बीलाला सनातन लोकांनी खुप मोठा विरोध केला. त्यामध्ये लोकमान्य ठिळक, शंकराचार्य इ. चा समावेश होता. तर सुधारकांनी या बीलाला पाठींबा दिला. त्यामध्ये रविंद्रनाथ टागोर, योगी अरविंद व लाला लजपतराय यांचा पाठिंबा होता. पटेल बिलाच्या रुपाने सनातनी-सुधारक यांच्यातील संघर्ष पराकोटीला पोहोचला होता. या पार्श्वभूमीवर शाहूंचा हा कायदा अनेक दृष्टीने लक्षणीय ठरतो.15

याच काळात ब्राह्मणेतर चळवळ व सत्यशोधक चळवळ प्रभावीपण काम करित असल्यामुळे मिश्र विवाह होण्यास सुरुवात झाली. वर्धा जिल्ह्यातील अमृतराव कारमकर व ग्वाल्हेरचे सदाशिवराव शिंदे यांची कन्या गोदूताई यांचा विवाह मराठा बोर्डिंग याठिकाणी दि. 12 जानेवारी 1928 रोजी झाला या अनुकरणीय विवाहाचा महाराष्ट्रातील तरुणांनी अवश्य विचार करावा व त्याप्रमाणे अनेक मिश्र विवाह घडवून आणण्याचा प्रयत्न करावा असे आवाहन विजय मराठा पत्राने दि. 7 जानेवारी 1929 च्या अंकात केले होते. छ. शाहू महाराजांनी इंदूरच्या धनगर जमातीतील राजघराण्याशी आपल्या घराण्याचे लग्न संबंध घडवून समाजासमोर एक आदर्श निर्माण करून ठेवला. याविषयी महर्षी वि. रा. शिंदे यांनी छ. शाहू महाराजांविषया काढलेले उद्गार महत्त्वपूर्ण आहेत, "हिंदुस्थानातील वेगवेगळ्या राजेराजवाड्यात मिश्र विवाह व्हावेत असे त्यांचे मतच नव्हे तर प्रयत्नही होते. हे मलाही माहीत आहे."16

याबरोबरच शाहू महाराजांनी स्त्रियांच्या कुटुंबातील अंतर्गत छळवणुकीस प्रतिबंध करणारा कायदाही दि. 2 ऑगस्ट 1919 रोजी संमत केला. भारताच्या इतिहासातील अशाप्रकारचा हा पहिलाच कायदा होय. याबरोबरच दि. 17 जानेवारी 1920 रोजी हिंदू अनौरस संतती कायदा लागू केला. या कायद्याच्या माध्यमातून जनक बापाच्या मिळकतीवर हिंदू अनौरस संततीचा वारसा हिस्सा मंजूर करण्यात आला.

समारोप:-

छ. शाहू महाराजांच्या कार्याचा आढावा घेत असताना आपणास असे दिसून येते की, त्यांची समाजसुधारणेची भरारी ही चौफेर होती. आपणाकडे समाजसुधारणा संबंधी विचार करणारा वर्ग खुप कमी आहे. कार्य करणारा वर्ग तर त्याहून कमी आहे. त्यामुळे समाजसुधारणेचा वेग खुप कमी आहे. ज्यांच्याकडे विचार आहे त्यांच्याकडे अधिकार नाहीत व ज्यांच्याकडे अधिकार आहेत त्यांच्याकडे विचार नाही. अशी आवस्था समाजाची निर्माण झाली होती. पण समाजसुधारणेच्या विश्वात शाहू महाराज असे होते की, ज्यांच्याकडे विचारही होता आणि अधिकारही होता. त्यांचा वापर करून शाहू महाराजांनी आपला सर्व सुधारणावादी विचारांचे कायद्यामध्ये रुपांतर करून घेतले. त्यांची अंमलबजावणी केली. इतकेच नाही तर स्वतःच्या घरापासून त्यांची अंमलबजावणी केली. यामध्ये शाहू महाराजांचे मोठेपण आपणास दिसून येते. त्यामुळेच शाहू महाराजांच्या संस्थानातील कायदे हे संपूर्ण

भारतात आदर्श असल्याचे दिसून येते.छ. शाहू महाराजांनी स्त्रियांचा सर्वांगिन विकास व्हावा व तिची सर्व जोखडामधून मुक्तता व्हावी यासाठी केलेले प्रयत्न आपल्यासाठी आदर्शवत होती. आपल्याला मिळालेल्या आधिकाराचा वापर समाजसुधारणेसाठी कसा करावयाचा यांचे आदर्श उदाहरण म्हणजे शाहू महाराज होय. त्यामुळे स्त्री उद्धारक म्हणून शाहू महाराजांचे योगदान भारतातील प्रत्येक स्त्रियांनी समजून घेतले पाहिजे.

संदर्भ ग्रंथ:-

1. सुर्यवंशी गणपतराव सुबराव, राजा शाहू आणि समाजप्रबोधन, इचलकरंजी, 1978, पृ. 150
2. फडके य. दि., विसाव्या शतकातील महाराष्ट्राचा राजकीय इतिहास 1914-1920, पुणे, 1999 पृ. 295
3. कीर धनंजय, राजर्षी शाहू छत्रपती, पॉप्युलर प्रकाशन मुंबई, 2001 पृ. 104
4. कित्ता पृ. 111
5. उपरोक्त, सुर्यवंशी गणपतराव पृ. 54
6. धाटावकर भास्कर (संपा.), शाहू छत्रपतींचे निवडक आदेश मुंबई, 1988 पृ. 139
7. कित्ता, पृ. 45
8. पुर्वोक्त, सुर्यवंशी गणपतराव, पृ. 55
9. कित्ता, पृ.239
10. कित्ता, पृ. 240
11. पवार जयसिंगराव, राजर्षी शाहू स्मारक ग्रंथ, कोल्हापूर, 2001 पृ. 1016
12. उपरोक्त, धाटावकर पृ.150
13. उपरोक्त, पवार जयसिंगराव पृ.112
14. विजयी मराठा, पुणे, 5 फेब्रुवारी 1923
15. उपरोक्त, शाहू स्मारक ग्रंथ, पृ. 1016
16. पाटील बाळासाहेब (संपा.), दैनिक सत्यवादी, राजर्षी श्री शाहू छत्रपती खास अंक, कोल्हापूर, जून 1974, पृ. 1024

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे सामाजिक न्याय विषयक विचार

प्रा. डॉ. रमेश शेवाळे

संत मुक्ताबाई कला व वाणिज्य महाविद्यालय, मुक्ताईनगर जि. जळगाव

विश्वविख्यात कायदेपंडित, समाजशास्त्रज्ञ, कुशल पत्रकार तसेच भारतीय राज्यघटनेचे शिल्पकार यासारख्या अनेक भूमिका सामाजिक बांधिलकीच्या तळमळीने डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी साकारल्या. स्वातंत्र्य, समता, न्याय व बंधुता या मानवी मूल्यांना प्रमाण मानून सबंध आयुष्यभर विषमतामूलक समाजव्यवस्थेला मानवी मूल्यांच्या माध्यमातून ताकतीने पुढे घेऊन जाणारे महान समाज सुधारक, राजकीय विचारवंत म्हणून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर संपूर्ण विश्वाला सुपरिचित आहेत. भारतीय समाज व्यवस्थेतील वर्णव्यवस्था आणि जातीव्यवस्था समूळ नष्ट करण्यासाठी या देशातील बहुजन समाजाला शिका, संघटित व्हा आणि संघर्ष करा असा मूलमंत्र दिला. 2 मे 1936 मध्ये प्रसिद्ध झालेल्या जनता मधील संपादकीयात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर म्हणतात अस्पृश्यतेचे निर्मूलन झाल्याशिवाय शेतकरी व कामकरी वर्गाच्या आर्थिक लढ्याला संघटीत स्वरूप प्राप्त होणार नाही. सामाजिक आणि धार्मिक विषमता नष्ट झाल्याशिवाय वर्ग जाणीव निर्माण झाली तरी देखील शेतकरी कामकरी वर्गाची टिकाऊ संघटना शक्य होणार नाही. म्हणून हा महत्त्वपूर्ण सिद्धांत समाजाने लक्षात घेऊन क्रांती करावी असा संदेश बाबासाहेब देतात. बाबासाहेब आंबेडकर नुसतेच क्रांतिकारी राजकारणी, धुरंदर नेते नव्हते, तर ते एक गंभीर सम्यक विचारवंत होते. भारताच्या परंपरेत आधुनिक लोकशाहीची मूल्ये कोणत्याही काळात रुजलेली नव्हती म्हणून समतेच्या तत्त्वावर आधारलेल्या लोकशाही मूल्यांच्या रक्षणासाठी फार मोठा संघर्ष करावा लागेल. त्यासाठी त्यांनी दलित, पीडित समाजाला अस्मिता, संघर्ष शीलता आणि त्याच्या जोडीला सामाजिक न्यायाची तत्त्वे दिली. भारतीय समाजव्यवस्थेत जात आणि वर्ग हे दोन्ही सामाजिक वास्तव आहेत. जातिव्यवस्थेमुळे भारतीय समाजात विविध प्रकारच्या समस्या निर्माण झालेल्या आहेत. कारण मुळातच जाती व्यवस्थेची निर्मिती विषमतेच्या आधारावर झालेली आहे. जी जातीव्यवस्था सामाजिक विषमता निर्माण करते त्या व्यवस्थेकडून सामाजिक न्यायाची अपेक्षा करता येणार नाही. म्हणून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर म्हणतात की, प्रथमता जातीव्यवस्था ही सामाजिक समता, बंधुत्व आणि स्वातंत्र्याला घातक आहे. ती मानवी मूल्यांच्या विरोधी आहे. राष्ट्रीयत्वाची भावना जोपासण्यामध्ये जातीव्यवस्था एक मोठा अडथळा निर्माण करते. अशा समाजव्यवस्थेत वर्गवादी आणि वर्णवादी मानसिकता सामाजिक न्याय निर्माण करण्यात अडथळा आहे. म्हणूनच डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी भारतीय समाजाला सामाजिक न्यायाचा मूलभूत सिद्धांत दिला. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी बुद्ध आणि त्यांचा धम्म, शूद्र पूर्वी कोण होते, क्रांती प्रतिक्रांती यासारख्या ग्रंथातून सामाजिक प्रबोधन केले.

शोधनिबंधाचे उद्देश

- 1) सामाजिक न्यायाची संकल्पना स्पष्ट करणे.
- 2) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या सामाजिक क्रांतीच्या लढ्याचे अध्ययन करणे.
- 3) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या सामाजिक न्यायाचे विश्लेषण करणे.
- 4) भारतीय संविधानातील सामाजिक न्याय व डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या सामाजिक परिवर्तनाची संकल्पना स्पष्ट करणे.

शोधनिबंधाची गृहितके

- 1) सांप्रत समाजव्यवस्थेत सामाजिक न्यायाची संकल्पना प्रासंगिक आहे.
- 2) भारतात सामाजिक न्याय प्रस्थापित करण्यासाठी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे विचार प्रेरणादायी आहेत.
- 3) भारतीय सामाजिक क्रांतीच्या लढ्यास बाबासाहेबांचे सामाजिक विचार प्रेरक ठरतात.
- 4) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची सामाजिक परिवर्तनाची चळवळ आधुनिक भारताला दिशादर्शक ठरते.

तथ्य संकलन

प्रस्तुत शोधनिबंधाच्या लेखनासाठी शोधकर्त्याने दुय्यम तथ्य संकलन पद्धतीचा उपयोग केला आहे. भारतातील विविध सामाजिक विचारावरील संदर्भ ग्रंथ, त्यांच्यावरील इतर लेखकांच्या मतांचे लेखन, आदित्यांचा उपयोग करण्यात आलेला आहे.

संशोधन पद्धती

प्रस्तुत शोधनिबंध डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे सामाजिक न्याय विषयक विचार या शीर्षकाच्या अनुषंगाने सादर करण्यात आला असून सामाजिक संशोधन पद्धती तील विश्लेषणात्मक, वर्णनात्मक व ऐतिहासिक शोध पद्धतीचा उपयोग करण्यात आलेला आहे.

सामाजिक न्यायाची संकल्पना

सामाजिक न्याय ही संकल्पना प्राचीन राजकीय तत्वज्ञानातून प्रचलित झाली आहे. प्राचीन पाश्चिमात्य राजकीय विचारवंत प्लेटो आणि आरिस्टॉटल यांच्या विविध राजकीय तत्वज्ञानातून या संकल्पनेची चर्चा सुरू आहे. न्यायाच्या संदर्भात कार्य पद्धती विषयक न्याय आणि वास्तविक किंवा सामाजिक न्याय असे दोन भाग केले जातात. यामधील कार्यपद्धतीविषयी न्याय हा राजकीय व्यवस्थेमध्ये प्रत्यक्षात आणणे सोपे असते. कारण त्यामध्ये कायदेविषयक प्रक्रिया व कायद्यासमोर समानता इत्यादी गोष्टींचा समावेश होतो. "समाजमान्य मूल्यावर अधिष्ठित असलेली न्यायाची संकल्पना म्हणजे सामाजिक न्याय होय सामाजिक न्याय ही नितीमूल्य वर आधारलेली संकल्पना आहे ती सामाजिक धोरणांमध्ये राज्यशास्त्र आणि राजकीय नियोजनामध्ये, कायद्यामध्ये, तत्वज्ञानात आणि सामाजिक शास्त्रांच्या उगमस्थानात विचारात घ्यावी लागते."^१ भारतीय समाजाच्या पिढ्यान् पिढ्या पासून दबलेल्या समाजाला स्वातंत्र्य, समता, विश्वबंधुत्व आणि आर्थिक, राजकीय आणि सामाजिक हक्क मिळवून देणे म्हणजे सामाजिक न्यायाची प्रस्थापना करणे होय. जगातील ख्रिश्चन, हिंदू धर्म, बौध्द, इस्लाम व जैन इत्यादी धर्मांच्या शिकवणुकीचा माध्यमातून सामाजिक न्याय दिसून येतो. मात्र पाश्चात्य समाजव्यवस्थेतील वैज्ञानिक क्रांती, प्रबोधनाच्या चळवळी, धर्मनिरपेक्षता, मानवतावाद आणि बुद्धी वादाने सामाजिक न्यायाला गतिमान केले. सतराशे एकोनव्वदमध्ये झालेल्या फ्रान्सच्या राज्यक्रांतीने रुसोसारखा मानवतावादी विचारवंताने जगासमोर मानवी जीवनमूल्ये सांगितली. त्याच्या विकारांचा प्रभाव नवस्वतंत्र झालेल्या राष्ट्रांवर आणि त्या त्या राष्ट्रातील समाज सुधारकांवर पडला.

भारतीय संविधानातील प्रतिबिंबित सामाजिक न्याय

भारतीय संविधान भारतीय लोकांच्या मानव मुक्तीचा जाहीरनामा आहे. शतकानुशतके परकियांच्या तसेच कर्मठ रूढी आणि प्रथांच्या बंधनात अडकलेल्या मानवाला प्रथमच सार्वभौमत्व, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकशाही आणि गणराज्ये या जिवन मार्गाचा परिचय झाला. भारतातील प्रत्येक व्यक्तीला विचार, अभिव्यक्ती, विश्वास श्रद्धा आणि उपासना यांचे स्वातंत्र्य तसेच दर्जाची आणि संधीची समानता, बंधुता आणि सामाजिक, राजकीय व आर्थिक न्याय प्राप्त झाले. म्हणून "भारतीय संविधानात मानवाच्या प्रतिष्ठा विषयी सन्मान, समतेच्या तत्वांशी बांधिलकी आणि दुर्बल घटकाविषयी कळकळ या तीन गोष्टी प्रखरतेने प्रतिबिंबित होतात."^२ राज्यघटनेच्या तिसऱ्या भागातील

कलम 12 ते 35 मध्ये मूलभूत अधिकारांचा समावेश करण्यात आला आणि नागरिकांना मूलभूत हक्कांची हमी देण्यात आली. त्याचप्रमाणे भारतीय संविधानाच्या चौथ्या भागात मार्गदर्शक तत्वांमध्ये सर्वांना समान सामाजिक न्याय मिळेल याची शाश्वती देण्यात आली.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांची सामाजिक न्यायाची संकल्पना

कोणत्याही समाजाला सामाजिक व आर्थिक दृष्ट्या सक्षम करायचे असेल तर त्या समाजात मोठ्या प्रमाणात शिक्षणाचा प्रसार होणे गरजेचे आहे आणि शिक्षण हेच माध्यम अज्ञान, अंधकार आणि गुलामी नाकारण्याचे प्रभावी कार्य करू शकते हे प्रथमतः महात्मा फुलेंनी गुलामगिरी या ग्रंथातून सांगितले. छत्रपती शाहू महाराजांनी 26 जुलै 1902 साली कोल्हापूर संस्थानात अस्पृश्यांसाठी 50 टक्के जागा भरण्याचे फर्मान काढले. भारतात खऱ्या अर्थाने सामाजिक न्यायाच्या सिद्धांतला चालना मिळाली ती या आरक्षणाने. त्यांनी अस्पृश्यांसाठी आणि इतर मागास जातीसाठी शिक्षणाची दारे उघडी करून वसतिगृह बांधली. म्हणून छत्रपती शाहू महाराजांना सामाजिक न्यायाचे जनक म्हटले जाते. 1920 मध्ये कोल्हापूर मधील माणगाव येथे झालेल्या परिषदेत डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या सक्रिय राजकीय जीवनाच्या प्रवासानंतर अस्पृश्यांना शिक्षण मिळावे, त्यांना सरकारी नोकऱ्या मिळाव्यात, त्यांची आर्थिक परिस्थिती सुधारावी यासाठी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी प्रयत्न केले. इंग्रज सरकारला अस्पृश्यांच्या शैक्षणिक, आर्थिक आणि सामाजिक स्थितीचा अभ्यास करण्यासाठी एक समिती नेमून शिफारशीची अंमलबजावणी करावी असा आग्रह धरला. सामाजिक न्यायाच्या कार्याला अधिक गतिमान करण्यासाठी बहिष्कृत हितकारणी सभा, जनता, प्रबुद्ध भारत आणि मूकनायक सारख्या वृत्तपत्रातून सामाजिक प्रबोधनाचे कार्य गतिमान केले. सामाजिक न्यायाच्या प्रतिष्ठापनेसाठी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी भारतातील दलित व शोषित वर्गाचे पुनरुत्थान केल्याशिवाय पर्याय नाही हे ओळखून शोषित वर्गाच्या मनात संघर्षाची जाणीव निर्माण करून दिली. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे जाणून होते की, भारतात भांडवलशाही आणि वर्णव्यवस्था ह्या दोन्ही प्रवृत्ती तग धरून आहेत. या प्रवृत्ती संपुष्टात आणण्याकरता सामाजिक बंडाशिवाय दुसरा पर्याय असू शकत नाही असे त्यांचे मत होते. बहुजन समाज हा केवळ राजकीय आणि आर्थिक कारणांमुळे शोषित राहिलेला नाही तर त्याच्या या अवस्थेला सांस्कृतिक गुलामगिरीसुद्धा कारणीभूत आहे असे ते मानत. म्हणून या देशाची संपूर्ण सामाजिक, आर्थिक, राजकीय व सांस्कृतिक चौकट बदलल्याशिवाय सामाजिक न्याय मिळणार नाही असा त्यांचा विश्वास होता. म्हणून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी सामाजिक न्यायासाठी महाडच्या चवदार तळ्याचा सत्याग्रह उभा केला. अस्पृश्यांना पाणी मिळवून देण्यासाठी केलेला हा जगातील पहिला सत्याग्रह होता. 20 मार्च 1927 रोजी चवदार तळ्याचा सत्याग्रह म्हणजे विषमतावादी व्यवस्थेला मूठमाती देणारा संघर्ष होता. 1927 मध्ये डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर प्रस्थापित विषमतावाद्यांना ठणकावून सांगितले की, "इतरांप्रमाणे आम्हीही माणसे आहोत हे सिद्ध करण्यासाठी चवदार तळ्यावर जायचे आहे."^३ खऱ्या अर्थाने ही परिषद सामाजिक समतेची मुहुर्तमेढ रोवण्यासाठी आयोजित केली होती.

महाडच्या चवदार तळ्याच्या सत्याग्रहा नंतर 25 डिसेंबर 1927 रोजी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी मनुस्मृतीचे दहन केले आणि हे घोषित केले की, आता यापुढे विषमतेचा कायदा चालणार नाही. मनुस्मृतीच्या धोरणाला उत्तर देताना बाबासाहेब आंबेडकर म्हणाले की, "आम्ही जे मनुस्मृतीचे वाचन केले आहे त्यावरून आमची खात्री झाली आहे कि, त्या ग्रंथात शुद्र जातींची निंदा करणारी, त्यांचा उपमर्द करणारी, कुटाळ उत्पत्तीचा कलंक त्यांच्या माथी मारणारी व त्यांच्या विषयी समाजात अनादर वाढणारी वचने आहेत. त्यात धर्माची धारणा नसून विटंबना आहे."^४ आधुनिक भारताच्या इतिहासात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी मनुस्मृतीचे दहन करून सामाजिक परिवर्तनाची कायदा आणि शिक्षण ही दोन प्रभावी माध्यमे आहेत हे सिद्ध केल्याचे प्रतिबिंब उमटलेले आहे. म्हणून डॉ. बाबासाहेब म्हणतात की, "कायद्याचा वापर सामाजिक न्यायावर आधारलेल्या नवीन समाजव्यवस्था स्थापन

करण्यासाठी करणे महत्त्वाचे आहे."५ हा आदेश राज्यघटनेतील कलम 38 मध्ये आहे. तर सर्व 14 वर्षांखालील मुला मुलींना सक्तीचे आणि मोफत प्राथमिक शिक्षणाची सोय राज्यघटना कार्यान्वित झाल्यापासून १० वर्षांच्या आत द्यावी असे कलम 41 मध्ये सांगितलेले आहे. थोडक्यात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर कायदा हेच सामाजिक न्यायाचे साधन मानतात. आपल्या संविधानात कृतिशील आणि कल्याणकारी शासनाची निर्मिती झाली पाहिजे म्हणून अशा कृतिशील शासनाला सामाजिक आणि आर्थिक न्याय व समाजव्यवस्था यांची पुनर्बांधणी करायची आहे. म्हणून व्यक्तिस्वातंत्र्य, कायद्याचे राज्य, स्वतंत्र आणि निःस्पृह न्यायव्यवस्था ही मुल्ये संविधानात महत्त्वाची मानली आहेत.

संदर्भ :-

1. सुधा काळदाते – सामाजिक न्याय विकिपीडिया
2. सुधा काळदाते – सामाजिक न्याय विकिपीडिया
3. डॉ. अनिल कठारे – महाराष्ट्रातील आंबेडकरी चळवळीचा इतिहास, चिन्मय प्रकाशन औरंगाबाद पृष्ठ क्र. १२६
4. डॉ. अनिल कठारे – महाराष्ट्रातील आंबेडकरी चळवळीचा इतिहास, चिन्मय प्रकाशन औरंगाबाद पृष्ठ क्र. १२६
5. संपा. दया पवार – महाराष्ट्र राज्य साहित्य व संस्कृती मंडळ मुंबई,
6. पृ.क्र. २६८

क्रांतीयोध्दा : महात्मा जोतीराव फुले

प्रा. सचिन पोपट सवने

सहायक प्राध्यापक, मराठी विभाग, श्री.आर.आर.पाटील महाविद्यालय, सावळज.

प्रास्ताविक:-

महाराष्ट्रातील बहुजन समाजाचे आणि पददलित जनतेचे उद्धारकर्ते म्हणून क्रांतिवा महात्मा ज्योतिबा फुले यांना आजही ओळखली जाते. त्यांचा पिंड हा कृतिशील क्रांतिकारकांचा होता. महाराष्ट्राच्या समाजसेवेसाठी ध्येयाने भारावून जाऊन सर्व जीवन समर्पित करणारे ते थोर पुरुष होते. आधुनिक भारतातले पहिले समाजक्रांतिकारक खऱ्या अर्थाने महात्मा फुले होते. ते सामान्य असले तरी विचाराने व कर्तुत्वाने असामान्य होते. लहानपणापासूनच ते बंडखोर वृत्तीचे असल्याने त्यांना इंग्रजी सत्तेची चीड होती. पुढे त्यांना समाजातील सामाजिक विषमता, अन्याय, शोषण याची प्रकर्षाने जाणीव झाल्याने त्यांनी भोवतालच्या सामाजिक परिस्थितीचे बारकाईने अवलोकन व निरीक्षण केल्यानंतर त्यांचे मन सामाजिक विषमता व अन्यायाविरुद्ध पेटून उठले, समाजातील शूद्रातिशूद्रांना मिळत असलेली वागणूक तेथील स्त्रियांची दुःस्थिती, हिंदू धर्मातील अनिष्ट चालीरीती, रूढी या सर्व गोष्टींचा ते अंतर्मुख होऊन विचार करू लागले. या सामाजिक, धार्मिक परिस्थितीत परिवर्तन घडवून आणल्याखेरिज या समाजातील दलित व शोषित घटकांना न्याय मिळणे शक्य नाही, हे ओळखून त्यांनी आपले पुढील आयुष्य या समाजाच्या सेवेला वाहून घेतले. सामाजिक विषमतेविरुद्ध बंड पुकारून त्यांनी समतेसाठी शूद्रातिशूद्रांना संघटित करून शिक्षण व समता या दोन गोष्टींना महत्त्व दिले. ते नुसते बोलघेवडे सुधारक नसून ते कर्ते सुधारक तसेच संवेदनशील लेखक ही होते. त्यांनी लिहिलेल्या गुलामगिरी, शेतकऱ्यांचा असूड, सार्वजनिक सत्यधर्म या ग्रंथाधारे तत्कालीन समाजाचे सद्यस्थितीचे चित्रण केले. बहुजन समाजाच्या शिक्षणासाठी अविरत झगडणारे ते ऋषी तर सर्वसामान्यांसाठी रात्रंदिवस झटणारे ते सेवक होते. त्यांचे व्यक्तिमत्व प्रयोगप्रवण व विकसनशील असल्याने त्यांनी अनेक उपक्रम समाजाच्या विरोधात जाऊन धाडसाने हाती घेतले. ग्रंथपांडित्यापेक्षा समाज प्रवाहातील भल्याबुऱ्या प्रवृत्तींचा अन्वयार्थ लावण्याचा त्यांनी आटोकाट प्रयत्न करून, प्रत्येक बाबीच्या मुळाशी जाऊन चिंतनशीलपणे विचार केला. म्हणून त्यांना महाराष्ट्राचे मार्टिन ल्युथर तसेच समाजसुधारकांचे अग्रणी म्हणून ही ओळखले जाते. महाराष्ट्राच्या सामाजिक प्रबोधनाला त्यांनी वेगळी दिशा दाखवली. स्त्रियांच्या,अस्पृश्यांच्या,शेतकऱ्यांच्या व श्रमिकांच्या उद्धारासाठी ते चंदनासारखी झिजले, त्यांच्या या महानकार्यात अनेकांनी विघ्ने आणण्याचा प्रयत्न केला. तरीही अनेक हालअपेष्टा सहन करूनही आपल्या ध्येयापासून कधीच विचलीत न झालेल्या या समाज क्रांतीकारकांनी समाजाच्या उद्धारासाठी दिलेले योगदान महत्त्वपूर्ण ठरले.

स्त्री उद्धारासाठीचेयोगदान:-

समाजातील विषमता,जातीभेद,अज्ञान,स्त्रीदास्य यासारख्या अनिष्ट प्रथा धर्मांमुळे दृढमूल झाल्या आहेत. त्या प्रथम नष्ट करण्याच्या हेतूने महात्मा फुलेंनी प्रथम स्त्रियांच्या उद्धाराचे कार्य हाती घेतले. भारतीय समाजाने स्त्रियांना समतेपासून व शिक्षणापासून दूर ठेवले होते, अशा स्त्रियांना धार्मिक गुलामगिरीतून बाहेर काढण्यासाठी, त्यांचे जीवन विकसित करण्यासाठी शिक्षण हे प्रमुख साधन आहे हे त्यांनी ओळखले होते. शिक्षणामुळे स्वाभिमान निर्माण होतो, सत्य-असत्याचा उलगडा होतो. म्हणून शिक्षण हे सर्व सुधारणांचे मूळ आहे, असे त्यांचे मत होते. 'जिच्या हाती पाळण्याची दोरी ती जगाते उद्धारी' या तत्त्वाचे ते पाईक होते. मुलांच्या कर्तव्याचे मार्गदर्शन मातेकडून होते. कर्तव्याची जाणीव झाली तरच देशाची प्रगती होते. या विचाराचे ते होते. सनातनाच्या मते स्त्रीला

शिक्षण दिले तर ती कुमार्गाला लागेल, घरच्या सुखात अडसर येईल, तिला अकाली वैधव्य येईल अशी खोटी समजूत समाजात रूढ होती. तिला छत्री,चपला वापरण्यास मनाई होती. ती घराबाहेर पडली तर ते शिष्टसंमत मानले जात नव्हते. चूल आणि मूल एवढेच तिचे कार्यक्षेत्र निश्चित केलेले होते. बालविवाह, जरठकुमार विवाह यांच्या प्रथा असल्यामुळे विधवांची स्थिती अत्यंत दयनीय होती. तिला समाजाकडून तुच्छतेची वागणूक दिली जात होती. केशपन करून तिला विदूष केले जाई. धार्मिक विधी, उत्सवापासून तिला वंचित केले जात होते. स्त्री परतंत्र, अबला म्हणून ओळखली जात होती. एखाद्या विधवेकडून कुकर्म घडलेच तर तिला फार मोठे कठोर शासन समाज करीत असे, अशा क्रूर व लज्जास्पद चालीरीतीमुळे स्त्रियांची दैन्यावस्था झाली होती. समाजाने तिला अनेक बंधनात जखडून ठेवून तिचे सर्व हक्क डावलले होते. ती उपभोग्य वस्तू अशीच तिच्याकडे पाहण्याची समाजाची मानसिकता होती. अशा काळात महात्मा फुलेंनी स्त्री उद्धाराचे कार्य हाती घेतले. स्त्री शिक्षणाकडे त्यांनी प्रथम लक्ष दिले एका स्त्रीला शिक्षित केले तर सर्व कुटुंबाला शिक्षित केल्यासारखे आहे. ते ओळखून त्यांनी पुण्यात प्रतिकूल परिस्थितीत इ.स.१८४८ मध्ये मुलींसाठी पहिली शाळा सुरू केली. अस्पृश्य समाजातील स्त्रियांना तेथे शिक्षण दिले जात होते. ज्योतिबा फुले स्वतः शिक्षकाचे काम करीत होते. ते मुलीसाठी शाळा काढणारे पहिले भारतीय होते. पुढे त्यांनी सावित्रीबाईंना शिकवून शिक्षिका बनवली, सनातन्यांना ही गोष्ट समाजद्रोही, धर्मद्रोही वाटली. त्यांनी सावित्रीबाईंना शाळेत जाता-येता त्रास देण्यास सुरुवात केले. चिकल फेकणे, घाण टाकणे, दगड मारणे, शिव्या देणे असा त्रास सहन करून ही त्यांनी आपले कार्य चालूच ठेवले. समाजातील कनिष्ठ वर्गात ज्ञानाचे दरवाजे उघडण्याचे महान क्रांतिकारक कार्य जोतिबांनी केले. पहिली शाळा बंद पडल्यानंतर त्यांनी १८५१ मध्ये बुधवार पेठेत दुसरी १८५१ मध्ये रस्ता पेठेत तिसरी १८५२ मध्ये वेताळ पेठेत मुलींची शाळा सुरू केली. त्यांच्या या कार्याला अनेक मान्यवर व्यक्तींनी, एतद्देशीय व युरोपीय लोकांनी तसेच सरकारनेही यथाशक्ती सहकार्य केले, त्यांचे या अभिनव उपक्रमामुळे महाराष्ट्रात स्त्री शिक्षणाला एक वेगळी दिशा मिळाली. ज्योतिबा फुले हे ब्राह्मणद्वेषे असले तरी समाजातील कोणत्याही घटकावर अन्याय होत असेल तर त्यांचे मन व्याकूळ होत, त्या काळी ब्राह्मण समाजात विधवा स्त्रियांचे फार हाल होत असत. हे पाहून ते अस्वस्थ होत हे हाल थांबावेत व त्यांच्या जीवनाला वेगळे वळण मिळावे या हेतूने फुलेंनी १८६४ मध्ये पुण्यातील गोखल्यांच्या बागेत एका विधवेचा पुनर्विवाह घडवून आणून त्यांनी विधवा पुनर्विवाहाचा पुरस्कार केला. परंतु अशा विधवेचे चुकून वाकडे पाऊल पडले तर तिची वाईट अवस्था होई अशा विधवा पतीतांना त्याकाळी भ्रूणहत्या, आत्महत्या याशिवाय गत्यंतर नव्हते. अशा आपत्तीतून विधवांची सुटका व्हावी व अशा विधवांनी गुप्तपणे येऊन बाळंत होण्यासाठी १८६३ मध्ये आपल्या घराशेजारीच बालहत्या प्रतिबंधक गृह उघडले, हे बालहत्या प्रतिबंधक गृह भारतातील पहिले होते. या त्यांच्या उपक्रमारून त्यांची दूरदृष्टी कशी होती हे दिसून येते. एवढेच नाही तर त्यांनी काशीबाई या विधवेचा यशवंत नावाचा मुलगा दत्तक म्हणून घेतला होता, तो ब्राह्मण जातीचा होता. यावरून त्यांनी जातीभेदाला तिलांजली दिली होती हे दिसून येते. तसेच त्यांनी वडिलांच्या वर्षश्राद्धाचा विधी गरिबांना अन्नदान व विद्यार्थ्यांना पुस्तके वाटून पार पाडला यावरून त्यांची प्रगल्भ विचारसरणी व मानवतावाद दिसून येतो. स्त्रियांसाठी केलेले हे कार्य सामाजिक जीवनातील एक युग प्रवर्तक आहे, असेच मानावे लागते.

अस्पृश्यांच्या उद्धारासाठीचे योगदान:-

हजारो वर्षांपासून महाराष्ट्राच्या समाजात अस्पृश्यांना हीन वागणूक दिली जात होती समाजजीवनात कोणतेही स्थान नसणाऱ्या या समाजाला गावाच्या बाहेर राहावे लागत. त्यांचा जन्म दारिद्र्यांतच होत आणि अंतही दारिद्र्यात होत. अशा अस्पृश्यांना शिवूनही घेतले जात नसे. गावातून त्यांना सकाळ-संध्याकाळ फिरण्यास मनाई असे, गळ्यात मडके व कमरेला खराटा बांधून दुपारच्या वेळेस त्यांना गावात येण्यास परवानगी होती. सवर्णांची सेवा करणे हेच त्यांचे कर्तव्य होते. अत्यंत हीन कामे त्यांच्याकडून करवून घेतली जात होती. हा समाज अज्ञान,

अंधकारात पिचत पडला होता. अशा कनिष्ठ वर्गातील लोकांचे अज्ञान,निरक्षरता दूर करण्यासाठी त्यांची गुलामगिरीतून मुक्तता करण्यासाठी महात्मा फुलेंनी मोठ्या धाडसाने पाऊल उचलले. वर्णव्यवस्था हा हिंदूधर्माला लागलेला कलंक आहे तो दूर करण्याचे कार्य जोतिबांनी हाती घेतले होते. हा उद्देश ठेवूनच त्यांनी अनेक ग्रंथ, काव्य, उपयुक्त पुस्तके लिहिली सामाजिक समतेच्या चळवळीचे ते आद्य प्रवर्तक होते. वर्णभेदाविरुद्ध आवाज उठवण्यासाठी त्यांनी शिक्षण या प्रभावी माध्यमांचा प्रसार व प्रचार केला. १८५२ मध्ये अस्पृश्यांसाठी वेताळ पेठेत शाळा तर १८५३ साली महार, मांग इ.लोकांसाठी विद्या शिकविण्याकरता 'मंडळी' या नावाची संस्था काढली. त्यांच्या या कार्याला युरोपियन व एतद्देशीय शिक्षण प्रेमींनी तसेच दक्षिणा प्राईस फंडातून ही आर्थिक साहाय्य मिळाले. त्यांनी काढलेल्या शाळेतील मुलांना पिण्याच्या पाण्याची अडचण भासू लागली म्हणून त्यांनी आपल्या राहत्या घरातील पाण्याचा हौद सर्वांसाठी खुला केला.'गुलामगिरी' हा ग्रंथ लिहून त्याने त्यातून उच्चभू जमातीवर कठोर टीका तर जातिव्यवस्थेवर व दांभिकतेवर कोरडे ओढले. अस्पृश्यांनी आपल्या उन्नतीसाठी विद्या संपादन करावी असा संदेश देण्यासाठी, त्यांच्यात जागृती घडावी तसेच ब्राह्मणाकडून तुमची कशी फसवणूक केली जाते हे सांगण्यासाठी त्यांनी या ग्रंथाची निर्मिती केली. इ.स.१८७३ मध्ये धार्मिक व सामाजिक गुलामगिरी नष्ट करण्याच्या उद्देशाने महात्मा फुले यांनी सत्यशोधक समाजाची स्थापना केली.'सार्वजनिक सत्यधर्म' व 'गुलामगिरी' या दोन ग्रंथात त्यांनी सत्यशोधक समाजाबद्दलचे आपले विचार मांडले आहेत.'सर्वसाक्ष जगत्पती त्याला नको मध्यस्थी' हे ब्रीदवाक्य या समाजाचे होते. या समाजाचे उद्दिष्ट स्पष्ट करताना ते म्हणतात ब्राह्मण, भट, जोशी, उपाध्ये इत्यादी लोकांच्या दास्यत्वापासून शूद्र लोकांना मुक्त करण्यासाठी व आपल्या मतलबी ग्रंथाच्या आधारे आज हजारो वर्षे ते शूद्र लोकांस नीच मानून गफलतीने लुटीत आहेत. यास्तव सदुपदेश व विद्याद्वारे त्यांचे वास्तविक अधिकार समजून देण्याकरता हा समाज आहे. समता, बंधुता व स्वातंत्र्य हे विचार रुजवण्यासाठी सर्व जाती-धर्माच्या लोकांना व्यासपीठ उपलब्ध होऊन समाजजागृतीचे कार्य घडावे हा हेतू या समाजाचा होता. कनिष्ठ वर्गाला मानसिक गुलामगिरीतून मुक्त करणारी ती एक चळवळ होती. सत्यशोधक समाज ही समाज सुधारण्याची महाराष्ट्रातील पहिली चळवळ महात्मा फुले या समाजक्रांतीकारकाने चालू केली होती. या समाजाद्वारा उभारण्यात आलेला लढा हा सामाजिक, आर्थिक, राजकीय, सांस्कृतिक गुलामगिरीविरुद्धाचा लढा होता. या कार्यामुळे स्वार्थनिरपेक्ष कार्यकर्त्यांची नवी पिढी उदयास आली. समाजाने उठवलेल्या आवाजाने सामाजिक न्यायाची व सामाजिक पुनर्रचनेची मागणी केली होती. हा आवाज अनेक शतके दडपून टाकलेल्या कनिष्ठ समाजाचा होता.

शेतकऱ्यांच्या उद्धारासाठीचे योगदान:-

पूर्वीपासूनच हिंदुस्थानातील लोक हे शेतीवर उपजीविका करणारे होते. तो देश शेतीप्रधान म्हणून आजही ओळखला जातो.देशाची समृद्धीता ही शेतकऱ्यांवर अवलंबून असते. परंतु असे असूनही त्या काळातील शेतकरी मात्र सुखी समाधानी नव्हता. कमालीचे मागासलेपण, अज्ञान कर्जबाजारीपणा, दारिद्र्य यामुळे भारतीय शेतकरी पिचला गेला होता. जोतिबांनी अशा शेतकऱ्यांचे जवळून सूक्ष्म अवलोकन केले,अशा खेड्यातील शेतकऱ्यांशी त्यांचे असणारे संबंध हे जिवाळ्याचे होते. त्यांचे हाल पाहून ते फार दुःखी होत. कर्जबाजारीपणामुळे सावकाराकडून शेतकऱ्यांचे मोठे नुकसान होत. अशाच शेतकऱ्यांच्या जीवनात आमूलाग्र बदल करण्याचा निश्चय महात्मा ज्योतिबांनी केला. शेतकऱ्यांची गार्हाणी परखडपणे मांडणारे ते महाराष्ट्रातील पहिले समाजचिंतक होते. शिक्षणाशिवाय अशा शेतकरी, कष्टकरी समाजाची स्थिती सुधारणार नाही, हे त्यांनी जाणले होते.'शेतकऱ्यांचा आसूड' या ग्रंथात त्यांनी शिक्षणाअभावी समाजाची कशी दुर्दशा झाली हे सांगताना ते म्हणतात की,

विद्येविना मती गेली ;मतीविना नीती गेली;
नीतीविना गती गेली ; गतीविना वित्त गेले;

वित्ताविना शूद्र खचले ;इतके अनर्थ एका अविद्येने केले;

शेतकऱ्यांच्या मुलांना शिक्षण मिळाले पाहिजे त्यांच्यासाठी वस्तीगृह, धंदे शिक्षण द्यावे, कनिष्ठ वर्गातील लोकांना नोकरीत प्राधान्य मिळावे, शेतकऱ्यांना नैसर्गिक आपत्तीच्या वेळी सर्वतोपरी आर्थिक साहाय्य मिळावे, असा आग्रह त्यांनी सरकारपुढे धरला. १९७७ च्या दुष्काळाच्या वेळी त्यांनी दुष्काळ पीडितांना मदत म्हणून धनकवडी येथे दुष्काळ पीडित विद्यार्थ्यांसाठी कॅम्प उभारला, शेतकऱ्यांच्या स्थितीत सुधारणा होण्यासाठी त्यांनी सरकारला सूचना केल्या, त्यात त्यांनी शेतीला पाणीपुरवठा योजनेस अग्रक्रम दिला. पीक संरक्षणासाठी शेतकऱ्यांना बंदुकांचे परवानगे मिळावे, कालव्याचे पाणी वेळेवर मिळावे, शेतीवर वाजवी कर आकारला जावा,त्यांना अज्ञान व भोळ्या समजुती पासून दूर करावे, जोडधंदा म्हणून पशुपालनास चालना द्यावी शेतीची माहिती देणाऱ्या पुस्तिका छपाव्यात, शेतीपद्धती व अवजारे यात सुधारणा कराव्यात, कमी व्याजाने कर्ज उपलब्ध करून द्यावीत. असे अनेक विचार व सूचना त्यांनी सरकार दरबारी मांडले. १८८८ मध्ये ड्युक ऑफ कॅनॉट हे महाराणी व्हिक्टोरिया चे चिरंजीव भारतभेटीसाठी पुण्यात आले. तेव्हा त्यांना मानपत्र देण्याच्या समारंभास इतर महत्त्वाच्या व्यक्तीबरोबर महात्मा फुलेनाही निमंत्रित केले होते. सर्वजण त्यांच्या भेटीसाठी निरनिराळे पोशाख करून आले होते. पण फुले मात्र साधा शेतकरी पोशाखात भेट देण्यासाठी आले व त्यांनी शेतकऱ्याबद्दल मांडलेले विचार चिंतनीय आहे. ते म्हणाले की, 'ड्युक साहेब, याठिकाणी उत्तम उत्तम पोशाख करून उपस्थित असलेले हे लोक हिंदुस्थानाच्या जनतेचे प्रतिनिधी नाहीत. या देशातील बहुसंख्य जनता शेतकरी आहे, ते जो पोशाख वापरतात त्याच पेहरावात मी त्यांचा प्रतिनिधी म्हणून आपल्या भेटीला आलो आहोत. या जनतेचे हित तुम्हांला करावयाचे असेल तर, त्यांचे अज्ञान घालवा. त्यांना प्राथमिक शिक्षणाची मोफत सोय करून द्या. या जनतेचा प्रतिनिधी म्हणून माझा निरोप महाराणींना कळवा यावरून शेतकऱ्यांच्या हिताची चिंता त्यांना कशी होती हे दिसून येते. याशिवाय त्यांच्यातील निर्भय व निर्भीड वृत्तीही दिसून येते, ते शेतकऱ्यांच्या प्रश्नांवर भर देऊन त्यांचे गहाणे चव्हाट्यावर पोहोचवण्यासाठी पोटतिडकीने पुढे आलेले महाराष्ट्रातील पहिले विचारवंत होत हे मान्यच करावे लागते.

समारोप:- महात्मा फुलेंच्या या सर्व उपक्रमावरून व एकूणच त्यांच्या कार्यावरून त्यांनी संपूर्ण आयुष्य पददलित जनतेच्या व बहुजन समाजाच्या उद्धारासाठी खर्च केले ते दिसून येते. त्यांनी सामाजिक अन्याय व विषमता दूर व्हावी, यासाठी प्रथम आवाज उठविला. महाराष्ट्रातील बहुजन समाजात वैचारिक जागृती घडवून आणण्याचे महान कार्य त्यांनी केले. समाजकार्याच्या प्रत्येक क्षेत्रात ते अग्रभागी राहिले, आणि खऱ्या मानवधर्माची भूमिका सतत निभवली. महाराष्ट्रात स्त्री शिक्षणाची मुहूर्तमेढ रोवणारा पहिला समाज सुधारक, अस्पृश्यांच्या मुलींसाठी शाळा उघडून त्यांना शिक्षणाचे दरवाजे खुले करणारा पहिला दलित उद्धारक, हिंदुस्थानातील शेतकऱ्यांची दुःखे वेशीवर टाकणारा पहिला शेतकरी कैवारी, शूद्रातिशूद्र बहुजन समाजाच्या वेदनांना वाचा फोडणारा बहुजन समाजातील पहिला नेता अशा अनेक विशेषणाने ज्योतिबांचा रास्त गौरव केला जातो. महाराष्ट्राच्या इतिहासात त्यांना अनन्यसाधारण स्थान प्राप्त झाले आहे. समाज परिवर्तनाच्या कार्यात त्यांची बरोबरी करणारा अन्य पुरुष आधुनिक महाराष्ट्राच्या इतिहासात सापडणे शक्य नाही, ते केवळ समाज सुधारक नव्हते, तर मूलग्राही भारतीय समाजक्रांतिकारक होते, हे मान्यच करावे लागते.

संदर्भ ग्रंथ:-

1. महात्मा ज्योतिराव फुले –'शेतकऱ्यांचा असूड', ई साहित्य प्रतिष्ठान(www.esahity.com)
2. डॉ.वासुदेव मुलाटे –'महात्मा जोतीराव फुले लिखित शेतकऱ्यांचा असूड',स्वरूप प्रकाशन औरंगाबाद. जाने. १९९९.
3. डॉ.नागनाथ कोत्तापल्ले –'महात्मा जोतीराव फुले शेतकऱ्यांचा असूड', मेहता पब्लिशिंग हाऊस पुणे.ऑगस्ट २००१.
4. भिडे,पाटील,थोरात-'महाराष्ट्रातील समाजसुधारणेचा इतिहास',फडके प्रकाशन कोल्हापूर.ऑगस्ट २०११.

शाहू महाराजांच्या अस्पृश्य निर्मूलनाच्या कार्याचा आढावा

प्रा. डॉ. युवराज गुंडू सुरवसे

सहाय्यक प्राध्यापक - इतिहास विभाग छत्रपती शिवाजी नाईट कॉलेज ऑफ आर्ट्स अँड कॉमर्स, सोलापूर

प्रस्तावना

१९ व्या शतकातील महाराष्ट्राची आणि भारताची स्थिती पाहता बहुजन समाजाची अधोगती होण्यामागे त्याच्या शिक्षणाची असणारी अनस्था त्यासाठी फुले व शाहू महाराजांनी बहुजनांच्यासाठी शिक्षणाची दारे खुली केली. प्राथमिक शिक्षण सक्तीचे मोफत प्राथमिक शिक्षण सक्तीचे व मोफत करून विद्येची द्वारे खुली केली. शाहू महाराजांनी वरिष्ठ वर्गाच्या मक्तेदारीला धक्का देऊन १९०२ साली सर्व सरकारी व खाजगी नोकरीत ५० % जागा राखीव केली. त्याची व्यावसायिक प्रतिष्ठा वाढविणे, महार लोकांची वेठबिगारीतून मुक्तता इतकेच नव्हेतर गुन्हेगारी प्रवृत्तीच्या लोकांना सक्तीने दयावा लागणारे 'हजेरी' पध्दतीतून मुक्तता शिवाय अस्पृश्यता निवारणाचे कार्य हाती घेऊन हे कार्य शेवट पर्यंत चालू ठेवण्याचे कार्य केले. प्राचीन काळापासून समाजातील वरिष्ठ म्हणून मान्यता असलेल्या समाजाने शुद्ध, जातीजमातींना वैध्दिक दृष्ट्या मागासांना सामाजिक व आर्थिक गुलामगिरीच्या बेडीत स्थानबद्ध केले होते. त्या समाजाच्या प्रगतीसाठी महाराष्ट्रात प्रथम प्रयत्न महात्मा ज्योतीबा फुले यांनी प्रयत्न केले. गुलामगिरीतील समाजाची सुटका करून घेण्याचा मार्ग अस्पृश्यांना फुलेनी दाखविला. परंतु फुलेच्या मृत्यूनंतर समाजातील त्यांचे कार्य पुढे नेण्याचे कार्य कोल्हापूर संस्थानातील राजे छत्रपती शाहू महाराजांनी आपल्या जीवनाचा तो एक बनविला आणि बहुजन समाजाची कशी उन्नती होईल यासाठी मोठे प्रयत्न केले. कमालीचे दारिद्र्य, अज्ञान व धार्मिक अंधश्रद्धा यांनी ग्रासलेल्या व मागासलेल्या समाजाच्या या अवस्थेला मुळात 'शिक्षण' नसणे हेच मुख्य कारण आणि म्हणूनच फुले व शाहू महाराजांनी शिक्षण ही सर्व सामाजिक सुधारणांची गुरुकिल्ली मानली मानवजातीच्या प्रगतीसाठी शिक्षणाच्या सुविधा निर्माण करून मागासांसाठी शिक्षणाची दारे खुली केली.

उद्देश

- १) शाहू महाराजांचे वैयक्तिक जीवनाची माहिती घेणे.
- २) शाहू महाराजांनी फुलेच्या कार्याचा वारसा पुढे चालू ठेवला तो जाणून घेणे.
- ३) शाहू महाराजांच्या अस्पृश्यता निवारण कार्याची माहिती घेणे.

संशोधन पध्दती :-

संशोधन लेखासाठी ग्रंथालयीन पध्दतीबरोबर शाहू महाराजांच्या बदल लिहिलेल्या लेखन साहित्याचा उपयोग करून, समकालीन साहित्याच्या साहाय्याने संशोधन लेख पूर्ण करणे.

शाहू महाराजांचे जीवन

२६ जून १८७४ रोजी कागल येथील घाटगे घराण्यात शाहू महाराजांचा जन्म झाला त्यांचे मूळ नाव यशवंत पुढे कोल्हापूर संस्थानातील राजे चौथे शिवाजी महाराजांचे मृत्यूनंतर त्याच्या पत्नी आनंदीबाई यांनी १७ मार्च १८८४ रोजी यशवंतांना दत्तक घेतले. तेच पुढे शाहू महाराज म्हणून ओळखले जातात. शाहू महाराजांच्या बाबतीत जनतेचा हित जाणणारा राजा म्हणून ख्याती होती. हेच पुढे आपल्या कृतीतून दाखवून देण्याचे प्रयत्न केले.

शैक्षणिक कार्य

भारतीय समाजातील जे दारिद्र्य, अज्ञान व धार्मिक अंधश्रद्धा यांनी ग्रासलेल्या समाजाला यातून बाहेर काढायचे असेल तर त्यासाठी त्यांना शिक्षण आवश्यक आहे. आणि शिक्षण हेच सामाजिक सुधारणांची गुरुकिल्ली मानली. आणि म्हणून शाहू महाराजांनी राज्यातील मागास समाजातील विशेषतः अस्पृश्य समजल्या गेलेल्या वर्गासाठी प्राथमिक शिक्षणाच्या सुविधा निर्माण केल्या गेल्या. या मुलींसाठी वसतिगृहे स्थापन केले. मागास समाजातील मुलांच्या साठी प्राथमिक शिक्षण सक्तीचे व मोफत करून त्यांच्या साठी ज्ञानाची दारे खुली केली.

नोकरीतील अस्पृश्यांचा सहभाग

शाहू महाराजांनी कोल्हापूर संस्थानातील सरकारी दरबारात पिढयानपिढया वरिष्ठ वर्गाची मक्तेदारी निर्माण झाली होती. अशा समाजाने आपली मक्तेदारी निर्माण करून सामाजिक पिढवणुकीचे कार्य केले होते. यामुळे या वर्गाच्या पिढवणुकीपासून सुटका करावयाची असेल तर या समाजाला प्रशासनात नोक-या दिल्या पाहिजेत आणि म्हणून १९०२ साली राज्यातील सर्व सरकारी व खाजगी नोकरीच्या जागा मागासलेल्या समाजासाठी ५० % राखीव ठेवण्याचा आदेश काढून या समाजाच्या सहभाग आणि वरिष्ठ वर्गाच्या मक्तेदारीस पायबंध घालण्याचे धाडसी कार्य केले.

महार समाजाची वेठबिगारीतून सुटका

शिवकाळात वतनदारी पध्दतीला अत्यंत प्रतिष्ठा होती पण पाटील कुलकर्णी, देशपांडे सारखे वतन ज्याप्रमाणे मानाचे होते त्याप्रमाणे महार वतन प्रतिष्ठेचे नसून उलट हे वतन म्हणजे गावकीचे सर्व कामे करणारा एक सेवाचाकरी करणारा वेठबिगारच होता. परंतु हे महार वतन खुद्द महार समाजाची सोडण्याची मुळीच ईच्छा नव्हती कारण या वतनामुळे जी जमिन मिळाली ती जमिन ही जाणार परंतु महाराजांनी 'महारवतन' च्या नादाखाली या समाजाला पिढ्यानपिढ्या जखडून ठेवले जात होते तेच महाराजांना नष्ट करावयाचे होते. आणि म्हणून १८ सप्टेंबर १९१८ ला महाराजांनी जाहिरनामा काढून महार वतनी जमिनी सरकार जमा न करता 'रयतवार' केल्या. आणि कोल्हापूर संस्थानातील महार प्रजाजन हे 'स्वतंत्र प्रजाजन' बनली यामुळे महारसमाजाची गुलामगिरी, वेठबिगारातून मुक्तता झाली.

गुन्हेगारी समाजाची हजेरीच्या पध्दतीतून मुक्तता

कनिष्ठ समाजल्या गेलेल्या जातींना त्या जन्मजात गुन्हेगार समजून सरकारातून 'हजेरी' चा सक्ती केली जात असे. हजेरी म्हणजे गुन्हेगारास सकाळ संध्याकाळ गावचावडी किंवा प्रमुखास आपली हजेरी द्यावी लागे. ही अत्याचारी पध्दत महाराजांचे हृदय पिळवटून टाकणारी ठरली आणि त्यांनी हुकूम काढून ही पध्दत बंद केली या अन्यायी पध्दतीचे समर्थन करणा-याला १९२० च्या माणगाव परिषदेत उत्तर दिले.

हजेरी पध्दतीमुळे गरीब लोकांवर फार मोठा जुलूम होत होता. भीती घालून त्या गरीब लोकांकडून अधिकारी, प्रमुख लोक फुकटात काम करून घेऊन गुलामगिरीपेक्षा अत्यंत वाईट वागणूक देत म्हणून महाराजांनी ही पध्दत बंद केली.

अस्पृश्य समाजासाठी कार्य

अस्पृश्य समाजाच्या प्रगती साठी शाहू महाराजांचे कार्य हे अत्यंत महत्त्वाचे व भारतीय इतिहासातील एक क्रांतिकारक पाऊल मानले गेले. १९१९ साली अस्पृश्यता निवारण कायदा करून मानवमुक्तीचा एक आदर्श निर्माण केला. सरकारी नोकरीत ५० % जागा राखीव ठेवण्याचा धाडसी निर्णय घेऊन वरिष्ठ समाजाच्या मक्तेदारीस खिळ घालण्याचे काम केले. महात्मा जोतीबा फुलेंचे कार्य पुढे नेण्याचे काम शाहू महाराजांनी अत्यंत धाडसाने केल्याचे दिसते. अस्पृश्यता नष्ट करण्याच्या दृष्टीने त्यांनी सवर्ण व अस्पृश्यांच्या वेगळ्या शाळा भरवण्याची ही पध्दत १९१९ ला बंद करून सर्वांनी एकत्रित शिक्षण घ्यावे असे आदेश काढले. वेदोक्त मंत्र म्हणण्याच्या प्रकरणावरून शाहू महाराजांच्या काळात निर्माण झालेले सामाजिक जीवनातील हे वादळच होते. आणि म्हणून बहुजन, अस्पृश्य समाजाचा सर्वांगीण विकास साधण्याचे कार्य करताना त्यांनी एका अर्थाने महात्मा फुले यांची परंपरा पुढे चाविण्याचे महत्त्वाचे कार्य महाराजांनी केले.

निष्कर्ष

घाडगे घराण्यातील यशवंत शाहू महाराज म्हणून गादीवर येताच बहुजन समाजाच्या प्रगतीसाठी आपले कार्य मोठया प्रमाणावर केले. त्यात प्राथमिक शिक्षण सक्तीचे, अस्पृश्य समाजाला नोकरीत ५१% राखीव जागा ठेवणे, महार समाजाची महार वतनातून मुक्तता करणे, गुन्हेगारी समाजाची हजेरी पध्दतीतून मुक्तता ; अस्पृश्यांच्या साठी तर शाहू महाराजांनी केलेले कार्य हे अत्यंत महत्त्वाचे आहे.

संदर्भग्रंथ

- १) आधुनिक महाराष्ट्राचा इतिहास - डॉ. एस. एस. गाढाळ, कैलास पब्लिकेशन, औरंगाबाद, जून २००५.
- २) राजर्षी शाहू महाराज जयंती मासिक, संपादक - प्रभाकर होळकर, नांदेड - २००७.
- ३) महाराष्ट्रातील समाजसुधारक, जी. एल. भिडे, गायकवाड, फडके प्रकाशन, कोल्हापूर २००५.
- ४) राजर्षी शाहू महाराज - डॉ. जयसिंगराव पवार, सुमेरु प्रकाशन, मुंबई - २००२.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे संसदीय लोकशाहीसंबंधी विचाराची प्रासंगिकता

श्री समाधान विठ्ठल लोढे

सहाय्यक प्राध्यापक, राज्यशास्त्र विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, बार्शी.

प्रस्तावना:-

आदर्श समाजात एका भागात होणारा बदल दुसऱ्या भागात माहिती होण्याकरिता संसाधने उपलब्ध असतात. यामुळे दोन घटकांतील संवाद वाढण्यास मदत होऊन बंधुतेचा विकास होतो आणि ह्यालाच लोकशाही म्हणतात. लोकशाही म्हणजे केवळ सरकारचे स्वरूप नव्हे, तर ती म्हणजे समूह जीवन, सुसंवादाची अनुभूती होय. लोकशाहीचे म्हणजे इतरांबद्दल आदर व सन्मान राखणे होय. सॉक्रेटिसच्या मते, न्याय म्हणजे शक्तिशाली लोकांचे हित जे भारतीय समाजात तंतोतंत लागू होते. कारण ह्या समाजात कायदानुसार जरी सामाजिक समानता, समान सुरक्षा आणि कायद्यासमोर समानता ह्या गोष्टी अस्तित्वात असल्या तरी 'नाही रे' आणि गरीब वर्गासाठी न्याय हा शब्दच त्यांच्या आवाक्याबाहेर आहे. रोसेलो पाऊंड यांनी कायद्याचे अंतिम ध्येय हे सामाजिक गरजांची पूर्तता करणे होय अशी व्याख्या केली आहे. लोक त्याच शासनाच्या आदेशांचे पालन करतात की जे कायद्याद्वारे लोकांच्या गरजा पूर्ण करतात आणि स्वतःचे अस्तित्वही जपतात. प्रस्तूत शोधनिबंधातून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे संसदीय लोकशाही संबंधी विचारांचा शोध घेतला जाणार आहे.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे संसदीय लोकशाहीसंबंधी चिंतन :-

. बाबासाहेब आंबेडकर हे लोकशाहीचे कट्टर पुरस्कर्ते होते. भारतातील राजकीय, सामाजिक व आर्थिक परिस्थितीच्या अभ्यासातून त्यांचे लोकशाहीविषयक विचार तयार झाले आहेत. 'डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या मते, लोकसंमतीवर आधारीत शासनावर विश्वास होता. जनता ही स्वतंत्र असावी व अभिव्यक्ती करावायास सक्षम असावी. सामाजिक बंधनापासून ती मूक्त असावी. जर मी कायदे बनविण्याच्या प्रक्रियेतील घटक नसेल तर मी त्यांचे पालन का करावे? असा त्यांचा सवाल होता. समाजात हा माणसांचा नव्हे, तर वर्गाचा बनलेला असतो आणि म्हणून शासनात साऱ्या वर्गांना प्रतिनिधीत्व असावे जेणेकरून स्वातंत्र्य, समता व बंधुता प्रत्यक्षात आणता येईल असा त्यांचा आग्रह होता.¹ डॉ. आंबेडकर हे हुकूमशाहीचे विरोधक आहेत. फॅसिझम, साम्यवादासारख्या सर्वंकषवादी शासन पध्दती त्यांना मान्य नाही. समाजाचे चांगल्याप्रकारे परिवर्तन घडवून आणावयाचे असेल तर लोकशाही हा एकमेव मार्ग आहे असे ते मानतात. लोकशाही मुळेच व्यक्तीस्वातंत्र्य जोपासले जाऊ शकते. भारतात शेकडो वर्षांपासून उच्च-नीचता आहे. पददलितांवर अन्याय होत आले आहेत. कमालीची विषमता या देशात आहे, म्हणून शोषित व पिडीतांच्या ज्या तक्रारी आहेत. त्यांना वाचा फोडण्यासाठी लोकशाहीसारखा सर्वोत्तम मार्ग कोणताही नाही. 'या देशात अस्पृश्यतेचे दुःख भोगणाऱ्यांचे दुख इतके भयानक आहे की जगात असे दुख कुठेच नाही. अस्पृश्यांबरोबरच या देशात मोठी लोकसंख्या आदिवासी व वन्य जमातींची आहे. त्यांना सुधारणेच्या मुख्य प्रवाहात आणण्याचा प्रयत्न सरंजामदारांनी कधीच केला नाही. अशा लोकांच्या हाती सत्ता देणे म्हणजे फाशी देणाऱ्यांच्या हाती सुरी देण्यासारखे आहे'² लोकशाही या प्रकारातही आंबेडकरांना संसदीय लोकशाही जास्त पसंत आहे. डॉ. आंबेडकरांचा संसदीय लोकशाही संबंधीचा विचार ब्रिटिश पध्दतीवर आधारलेला आहे. भारतात ब्रिटिश पध्दतीची संसदीय लोकशाही असावी असे त्यांचे मत होते. स्वतंत्र भारतासाठी राज्यघटनेचा जो मसुदा तयार केला त्यातून त्यांची ही श्रद्धा व्यक्त होते. 'केवळ विशिष्ट वर्गातील बहुसंख्य लोकांनीच नव्हे, तर समाजातील सर्वांनीच संविधानात्मक नैतिकतेचे पालन

करणे ही स्वतंत्र आणि शांततामय प्रशासनासाठी अनिवार्य अट आहे. कारण कोणताही बलिष्ठ आणि हेकट अल्पसंख्याक गट स्वतंत्र संस्थेला दैनंदिन कामकाज करणे अशक्यप्राय करू शकतो. मात्र असा गट स्वसामर्थ्यावर वर्चस्व प्रस्थापित करू शकत नाही.¹³ डॉ. आंबेडकरांच्या लोकशाही विचारात मानवी हक्कांना व त्यांच्या संरक्षणांना महत्वाचे स्थान आहे. त्यांच्या मते राजकीय लोकशाहीची उभारणी, व्यक्ती हेच एकमेव साध्य आहे. व्यक्तीला काही उद्देश्ये हक्क असतात व संविधानाने त्या हक्कांची हमी दिलीच पाहिजे. कोणत्याही विशेषाधिकाराच्या प्राप्तीखातर व्यक्तीला आपल्या संविधानिक हक्काचा त्याग करावा लागू नये आणि इतरांवर शासन करण्याची सत्ता राज्यसंस्थेकडून कोणत्याही खाजगी व्यक्तींना दिली जाता कामा नये. या गृहीतांवर झालेली दिसून येते. डॉ. आंबेडकरांनी लोकशाहीचा विचार मांडताना भोवतालच्या सामाजिक, आर्थिक वास्तवाच्या संदर्भात मांडलेल्या असल्यामुळे त्यामध्ये आदर्शवादाच्या भवत्यापेक्षा व्यावहारिक प्रश्नांचे जागृत भान पदोपदी आढळते. सामान्यतल्या सामान्य माणसांच्या प्रतिष्ठेची प्रतिष्ठापना करणारा प्रकार म्हणून आंबेडकरांना संसदीय लोकशाहीविषयी आस्था होती.

भारताच्या संदर्भात तर संसदीय लोकशाहीला पर्यायच नसल्याचे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी संविधान सभेत सांगितले होते. संसदीय लोकशाहीचे महत्त्व स्पष्ट करताना ते म्हणतात की, संसदीय लोकशाहीत विशिष्ट काळानंतर निवडणूका होतात व त्या शुद्ध व स्वच्छ वातावरणात होतात. मतदारावर दडपण नसते व तो मोकळेपणाने मतदान करू शकतो. संसदीय लोकशाहीमुळे व्यक्तीच्या अंगी असलेल्या गुणांचा विकास होतो. त्यास संधी मिळते. यामध्ये व्यक्तीच्या दृष्टिकोन विशाल बनतो. कारण व्यक्ती ही राजकीय जीवनाचा भाग असते. त्यामुळे तिला समाजाचा विचार करावा लागतो. त्याच प्रमाणे लोकांनी नियुक्त केलेले सरकार असते. लोकांकडून सर्व प्रतिनिधी निवडले जातात. संसद सदस्यांतून पंतप्रधान आदी व्यक्ती नियुक्त केल्या जातात. लोकशाही होणारे परिवर्तन सुध्दा शांततेच्या मार्गाने घडत जाते. हिंसाचार, रक्तपात घडत नाहीत, हा या पध्दतीचा महत्त्वपूर्ण फायदा आहे. संसदीय सरकार हे चर्चेच्या आधारे चालणारे सरकार असते. निरनिराळ्या समस्यांबद्दल लोक चर्चा करू लागतात. आणि स्पष्टपणे आपली मते व्यक्त करू शकतात. संसद म्हणजे एक प्रकारे चर्चा मंडळच असते. लोकांच्या सर्व तक्रारींना व दुखाना वाचा फोडण्याचे एक केंद्र असते. भारतात संसदीय लोकशाही आवश्यक आहे. कारण राजकीय पक्ष जनमत संघटीत करतात ते केवळ संसदीय पक्ष पध्दतीत. विरोधी पक्ष सरकारवर टीका करून सरकारला योग्य त्या मार्गावर आणण्याचा प्रयत्न करतात. भ्रष्ट सरकारविरुद्ध लोकमत तयार केले जाते. यामुळे संसदीय लोकशाही सर्वोत्तम असल्याचे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे मत होते.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी इंग्लंडमधील लोकशाहीचे यश प्रत्यक्ष अभ्यासले होते. तशीच भारतामध्ये लोकशाही यशस्वी व्हावी असे त्यांना वाटत होते. समाजात प्रथम सामाजिक लोकशाही मोठ्या प्रमाणात निर्माण झाली पाहिजे. समाजात एखादा वर्ग सतत दडपला गेलेला असेल तर तेथे खरी लोकशाही प्रस्थापित होऊ शकणार नाही. समाजात समता, स्वातंत्र्य व न्याय सर्वांकरिता प्रस्थापित झाला पाहिजे. लोकशाहीच्या यशासाठी देशप्रेमाची भावना वाढीस लागली पाहिजे. समाजाच्या विविध घटकांत एकात्मतेची भावना आली पाहिजे आणि स्वतःचा संकुचित विचार न करता लोकशाही यशस्वी व्हावयाची असेल तर प्रबळ विरोधी पक्षाचे अस्तित्व असावे. याविरोधी पक्षाने केवळ विरोधाकरिता विरोध करू नये. मात्र सरकार जर कुठे चुकीच्या मार्गाने जात असेल तर त्याचे दोष जर दाखवून द्यावेत. या पध्दतीत बहुमताने सरकार असते. त्यामुळे राज्यकारभार पक्षीय दृष्टिकोनातून होत असतो. पण सत्तारूढ पक्षाने पक्षहितापेक्षा राष्ट्रीय हिताला अधिक प्राधान्य दिले पाहिजे. केवळ स्वार्थपूर्तीकडे लक्ष देऊ नये. घटनात्मक मार्गावर या पध्दतीत जास्त भर असला पाहिजे. सत्तांतर सुध्दा घटनात्मक आणि शांततामय पध्दतीने झाले पाहिजे. संविधान म्हणजे केवळ एक सांगाडा असतो. उर्वरीत चांगल्या परंपरा आपणालाच निर्माण कराव्या लागतात. अल्पसंख्याकांना योग्य स्थान मिळाले पाहिजे. कायदेमंडळात अल्पसंख्याकांची केवळ मुस्कटदाबी करून

चालत नाही. आपल्यावर अन्याय होत नाही व आपल्याला स्वातंत्र्य आणि हक्क प्राप्त होत आहेत अशी सर्वच अल्पसंख्यांकाची खात्री पटली तरच संसदीय लोकशाही चांगल्याप्रकारे कार्य करू शकेल अथवा यशस्वी होऊ शकेल. लोकांचे चारित्र्य उच्च दर्जाचे असावे लागते. चारित्र्य उच्च दर्जाचे असेल म्हणजे पैसा, भ्रष्टाचार, अनीती यांना स्थान राहत नाही. राज्यकारभार चांगल्या रितीने चालत राहतो. व्यक्तीस्वातंत्र्य व लोकांची सदसदविवेकबुद्धी हा या पध्दतीचा आधार असतो. लोकांनी अनिर्बंध व्यक्तीस्वातंत्र्य वापर होऊ नये. तसेच बुद्धीला पटेल तेथे अन्यायाचा प्रतिकार जर करावा हे आवश्यक आहे. इंग्लंडमधील किंवा इतर देशातील संसदीय लोकशाही यशस्वी झाली तरी भारतात ती यशस्वी होण्यात अनेक स्वरूपाचे अडथळे आहेत. त्याचा खोल अभ्यास डॉ. आंबेडकरांनी केला होता. 'लोकमतनाचा पाठिंबा, जनतेची तिच्यावरील श्रद्धा वा लोकांच्या मनात तिच्याविषयी असणारी भीती हा सत्तेचा खरा आधार असतो. येणारा काळ हा आधार संपविणारा आणि त्याची जागा कुठे बरोबरीने, तर कुठे संशयाने घेणारा असेल. आपले राज्यकर्ते आपल्या कल्याणाचा कारभार खरोखरीच करित आहेत की ते फक्त त्यांची कार्यक्रमपत्रिका राबवीत आहेत, या सत्तेत सच्चाई किती आणि खोटेपण किती, वास्तव केवढे आणि प्रचार केवढा; झालेच तर तिचा चेहरा कोणता आणि मुखवटा कोणता हे या पुढच्या काळात जगभरच्या सुशिक्षित व प्रगत नागरिकांना पडणारे प्रश्न आहेत.'⁴ भारतीय लोकांची निरक्षरता, त्यांच्यातील अंधश्रद्धा या प्रमुख अडचणी आहेत. त्याचप्रमाणे भारतीय जनतेने लोकशाहीच्या यशासाठी संघर्ष करण्याची तयार ठेवावी. कट्टर जातीवाद व दृढ जातीव्यवस्था हे विशिष्ट वातावरण लोकशाहीच्या यशातील अडथळा आहे. 'आपण लोकशाहीवरील आपल्या विश्वासाबाबत ठाम तर रहायलाच हवे, पण आपण असाही निर्धार केला पाहिजे की, आम्ही जे काही करू त्यातून लोकशाहीच्या शत्रूंना स्वातंत्र्य, समता आणि बंधुता या तत्वांचे उच्चाटन करण्याच्या कामी आमची मुळीच मदत होता कामा नये. जर लोकशाही टिकली तर चिंती फळे आम्हाला कधी ना कधी चाखायला मिळणारच; पण लोकशाही संपली तर मात्र ते आपले मरण ठरेल'⁵ आर्थिक विषमता, विभूतीपूजा आणि एकात्मतेचा अभाव अशा प्रमुख अडचणीमुळे भारतात संसदीय लोकशाही यशस्वी होणे ही तारेवरची कसरत असल्याचे डॉ. आंबेडकर यांना वाटत होते. भारतात लोकशाही यशस्वी होण्यासाठी सहिष्णुतेच्या वातावरणाची निर्मिती होऊन जनतेत लोकशाही व्यवस्थेविषयी जागृकता निर्माण होणे आवश्यक आहे.

समारोप :- डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे लोकशाहीचे कट्टर पुरस्कर्ते होते. भारतीय राजकीय, सामाजिक व आर्थिक परिस्थितीच्या अभ्यासातून त्यांचे लोकशाही विषयक विचार तयार झाले आहेत. लोकशाहीच्या प्रकारातही डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांना संसदीय लोकशाही अधिक पसंत आहे. संसदीय लोकशाही लोकमताला अतिशय महत्व देत असून त्यामध्ये व्यक्तीच्या अंगी असलेल्या गुणांचा विकास होतो. व्यक्तीचा दृष्टिकोन विशाल बनतो. व्यक्तीला आपल्या व्यक्तिमत्व विकासाची संधी प्राप्त होते. मानवी हक्कांच्या उपलब्धीमुळे स्वतःचा सामाजिक, आर्थिक, राजकीय, शैक्षणिक, सांस्कृतिक विकास घडून व्यक्तीला सामाजिक न्यायाची प्राप्ती होते.

संदर्भ :-

1. मुख्य संपा, सिंह ब्रिजेश, महामानव, माहिती व जनसंपर्क महासंचालनालय, महाराष्ट्रशासन मुंबई 14 एप्रिल 2017, पृ-102
2. संपा. विठ्ठल पी. आणि कुंभार नागोराव, डायमंड पब्लिकेशन्स पुणे, प्रथम आवृत्ती 17 सप्टें.2016,पृ.90
3. अनु. शारदा साठे (गुहा रामचंद्र), आधुनिक भारताचे विचारस्तंभ, रोहन प्रकाशन पुणे, प्रथम आवृत्ती 26 जाने.2018, पृ.351
4. व्दादशीवार सुरेश, युगांतर, साधना प्रकाशन पुणे, द्वितीय आवृत्ती, 6 जाने.2015,पृ.122
5. संपा. विठ्ठल पी. आणि कुंभार नागोराव, डायमंड पब्लिकेशन्स पुणे, प्रथम आवृत्ती 17 सप्टें.2016,पृ.87

महात्मा फुले यांचे मराठी साहित्याला योगदान

डॉ. अनिल बळीराम बांगर

मराठी विभाग प्रमुख को.ए.सो. लक्ष्मी-शालिनी महिला महाविद्यालय-पेझारी, ता. अलिबाग, जि. रायगड

प्रास्ताविक:

आधुनिक महाराष्ट्राच्या इतिहासात जेसमाजसुधारक आणि समाजचिंतक होऊन गेले त्यात महात्मा ज्योतिराव फुले यांचे स्थान अग्रक्रमाने घ्यावे लागेल. इतर समाजसुधारकांनी आणि विचारवंतांनी सामाजिक प्रश्नांकडे थोड्या अंतरावरून पाहिले पण महात्मा फुले हे प्रत्यक्षतः सामाजिक संघर्षात उभे होते. इतरांची भूमिका प्रबोधक व सुधारकांची होती. महात्मा फुले हे केवळ प्रबोधक व सुधारक नव्हते वस्तुतः त्यांनी एका चिंतनशील सामाजिक क्रांतीवादयाची भूमिका स्वीकारली होती आणि म्हणून आधुनिक महाराष्ट्राच्या इतिहासातील सामाजिक क्रांतीचे धुरीणत्व निःसंदिग्धपणे त्यांच्याकडे जाते. इतर विचारवंतांनी केवळ प्रबोधन कार्यालाच सुधारणा मानले. प्रबोधनाला देखील सामाजिक परिवर्तनासाठी आवश्यक असणारी एक विमोचक शक्ती प्राप्त होत असते. पण केवळ प्रबोधन म्हणजे परिवर्तन नव्हे. महात्मा फुले यांचा अपवाद वगळता महाराष्ट्रातील इतर समाजचिंतकांचा सुधारणावाद हा केवळ प्रबोधनाच्या पायावर उभारलेला होता. महात्मा ज्योतिराव फुले हे बोलके सुधारक नव्हते तर ते कर्ते सुधारक होते. इसवी सन १८२० ते अठराशे १८७० पर्यंतचा पन्नास वर्षांचा मराठी वाड. मयाचा काळ हा आधुनिक मराठी वाड. मयाचा पूर्वतयारीचा काळ ओळखला जातो. इ.स. १८७५ पासून मराठी साहित्याला आधुनिकता प्राप्त होत गेली असे आपण मानतो. आधुनिक भारतात समाज प्रबोधनाचे जे युग जन्माला आले ते ब्रिटिश सत्तेमुळे हे आपल्याला मान्य करावे लागते. ब्रिटिश अमदानीत या ठिकाणी जे शिक्षण आणि ज्ञान उपलब्ध झाले ते बुद्धिवाद व उदारमतवाद यावर आधारलेले होते

महात्मा ज्योतिराव फुले एक दृष्टे, योद्धा आणि समाज क्रांतिकारक होते. महात्मा फुले हे आधुनिक महाराष्ट्राच्या इतिहासातील एक विद्रोही व्यक्तिमत्व होते. एकोणिसाव्या शतकात महाराष्ट्रामूलाग्र स्वरूपात बदलत होता. राजकीय सामाजिक आणि आर्थिक व्यवस्था मध्ये परिवर्तन होत होते. भारतीय समाजाच्या लौकिक जीवनात झालेल्या उलथापालथीचा हा काळ मानला जातो. राजकीय स्थितीमध्ये बदल झालेला होता ब्रिटिश सत्ता प्रस्थापित झाली होती त्यामुळे समाज जीवनात आणि लोकांच्या मानसिकतेत जरी बदल अत्यंत धिम्म्या गतीने होत असले तरी या कालखंडात महाराष्ट्राची वाटचाल ठळकपणे मध्ययुगाकडून आधुनिक कालखंडाकडे होताना दिसते. स्वातंत्र्य, समता, बंधुता आणि न्याय या मूल्यांचा पुरस्कार करणारे आणि आपल्या व्यक्तिगत जीवनात त्यांचा अंगीकार करणारे महात्मा ज्योतिराव फुले हे महाराष्ट्राच्या आधुनिकतेला दिशा देणारे एक दृष्टे विचारवंत होते. महात्मा फुले यांचा जीवन काळ हा महाराष्ट्राच्या दृष्टीने प्रबोधनाचा काळ समजला जातो. महाराष्ट्राच्या या प्रबोधनाच्या काळात क्रांतिकारी विचार मांडणारा त्याचप्रमाणे सामाजिक क्रांतीला चालना देणाऱ्या चळवळी उभारणारा कर्तासमाजसुधारक आणि विद्रोही विचारवंत म्हणून संबंध महाराष्ट्राला म. फुले परिचित आहेत.

व्यक्तिमत्त्वाची जडणघडण व प्रभाव :

२७ फेब्रुवारी १८२७ साली पुणे येथे गोविंदराव व चिमणाबाई यांच्या पोटी जोतीरावांचा जन्म झाला. जोतीराव केवळ नऊ महिन्यांचे असतानाच त्यांच्या आईचा मृत्यू झाला. वयाच्या ७ व्या वर्षी जोतीरावांना त्यांच्या वडिलांनी शाळेत दाखल केले. परंतु प्राथमिक शिक्षण पूर्ण करताच गोविंदराव जोतीरावांचे शिक्षण बंद करतात. कारण तत्कालीन समाजामध्ये शिक्षणाकडे पाहण्याची मानसिकता जुन्या वळणाची होती. अशा विचारांच्या काही लोकांकडून गोविंदरावांना सल्ले दिले जाऊ लागले की, जोतीरावांना जास्त शिकवल्यास तो कामातून जाईल. त्यामुळे गोविंदराव काही काळासाठी त्यांचे शिक्षण बंद करतात. परंतु, पुन्हा गफूर बेग मुन्शी व ख्रिस्ती धर्मोपदेशक लिजिटसाहेब यांनी जोतीरावांची तल्लख बुद्धिमत्ता पाहून पुढचे शिक्षण घ्यायला पाहिजे, असे गोविंदरावांच्या गळी

उतरवले. त्यामुळे पुढे १८४१ मध्ये गोविंदरावांनी जोतिबांना एका स्कॉटिश मिशनच्या शाळेत घातले. १८४७ मध्ये जोतिबांनी इंग्रजी शाळेतील शिक्षण पूर्ण केले. जोतिबांना तिथे वॉशिंग्टन, मार्टिन ल्यूथर, थॉमस पेन यांसारख्या विचारवंतांची चरित्रे वाचयलामिळाली. त्याचबरोबर अमेरिकेचा स्वातंत्र्यलढा, फ्रान्स राज्यक्रांती यांसारख्या मानवी स्वातंत्र्याच्या लढ्यांचाही त्यांना परिचय झाला. महात्मा फुले यांच्या व्यक्तिमत्त्वावर चार्वाक, बुद्ध, कबीर, तुकाराम, दादोबा पांडुरंग या देशीविचारवंत समाजसुधारकांबरोबरच थॉमस पेन, मार्टिन ल्यूथर, रेमिचल, डॉ. स्टिव्हनसन, डॉ. विल्यम इत्यादी पाश्चात्य विचारवंतांच्या विचारकार्याचा प्रभावही दिसतो. थॉमस पेन यांच्या The Rights of Man या ग्रंथाचा खूप मोठा प्रभाव त्यांच्या व्यक्तिमत्त्वावर दिसतो. मानवी हक्क व प्रतिष्ठेसाठी लढण्याचे बळ त्यांना या ग्रंथामुळेच मिळाले. त्यातील पेन यांचे धर्मचिंतन त्यांना विशेष भावले. पेनने केलेल्या धर्मचिंतनामध्ये त्यांना खऱ्या अर्थाने मानवी कल्याणाचे व समतचे तत्त्व दिसले. महात्मा फुले यांच्या सार्वजनिक सत्यधर्म, गुलामगिरी, अखंडादी काव्यरचनांमधील विचारचिंतनावर पेनच्या विचारांचा खोलवर झालेला प्रभाव दिसतो. हिंदू धर्मशास्त्रे, वेद, पुराणे त्याचबरोबर बायबल, मनुसंहिता, विवेकसिंधू, ज्ञानेश्वरी, रामदासांचे लेखन त्यांनी सूक्ष्मपणे वाचन केलेले दिसते. महात्मा फुले यांच्या लेखनकार्यावर इंग्रज राजवटीचाही प्रभाव दिसतो. इंग्रज राजवट आधुनिकतेबरोबरच मानवी मूल्यांचा विचारही रुजवू पाहत होती; म्हणूनच ते या राजवटीचे समर्थन करताना दिसतात. म.फुले यांनी सत्यशोधक समाज नावाची संस्था स्थापन केली; शेतकरी आणि अस्पृश्य व बहुजन समाजांच्या समस्यांना केंद्रस्थानी ठेवून पुरोगामी विचारांची मांडणी केली. तसेच त्यांनी महाराष्ट्रातील स्त्री शिक्षणाची मुहूर्त मेढ रोवली. मुंबईच्या जनतेने त्यांना महात्मा ही पदवी बहाल केली होती. ही पदवी त्यांना इ.स. १८८८ यासाली मिळाली. महाराष्ट्राला तीन प्रमुख समाज सुधारकांचा वैचारिकवारसा लाभला असल्यामुळे या राज्यास "फुले-शाहू-आंबेडकरांचा महाराष्ट्र" असे म्हणतात. २४ सप्टेंबर १८७३ रोजी, त्यांनी आपल्या अनुयायांसह, सर्व जातीतील लोकांना समान हक्क मिळवण्यासाठी सत्यशोधक समाजाची स्थापना केली.यात सर्व जातीधर्मातील लोकांनी एकत्रित येऊन उत्पीडित वर्गाच्या उन्नतीसाठी काम केले. शेतकऱ्यांचे आसूड हा महात्माफुले यांचा प्रसिद्ध ग्रंथहोय. तत्कालीन समाजातील जातिभेद अनिष्ट प्रथा, तसेच समाजातील उच्चवर्णीयांची मत्तेदारी या विरुद्धची प्रतिक्रिया महात्माफुले यांच्या साहित्यातून उमटलेलीहोती. त्या काळच्या समाजाला प्रबोधनाची व सामाजिक परिवर्तनाची वाट दाखविण्यासाठी त्यांनी लिहिलेले ग्रंथ हे मार्गदर्शक व प्रेरणादायी ठरले. समता धिष्ठित समाजाच्या निर्मितीमध्ये महात्माफुले यांनी मोलाचे योगदान दिलेले आहे. त्यांचे कार्यसमाजाला प्रेरणादायी असल्याचे सर्वमान्य आहे.

शैक्षणिक कार्य:

महात्मा फुले यांच्या शिक्षणाचे महत्त्व पटवून देणाऱ्या खालील ओळी प्रसिद्ध आहेत:

विद्येविना मती गेली।
मतीविना नीती गेली।
नीतीविना गती गेली।
गतीविना वित्त गेले
वित्ताविना शूद्र खचले।

बहुजन समाजाचे अज्ञान, दारिद्र्य आणि समाजातील जातिभेद पाहून त्यांनी ही सामाजिक परिस्थिती सुधारण्याचा निश्चय केला. त्यांनी इ.स. १८४८ साली पुण्यामध्ये बुधवार पेठेतील भिडे यांच्या वाड्यात महाराष्ट्रातील मुलींची पहिली मराठी शाळा काढून तेथील शिक्षिकेची जबाबदारी पत्नी सावित्रीबाईवर सोपविली. आणि यानंतर जोतिबांनी अस्पृश्यांसाठी शाळा सुरू केल्या.महात्मा फुले हे महाराष्ट्रातील सामाजिक समतेच्या चळवळीचे आद्यप्रवर्तक, सामाजिक विषमता टिकवून धरण्यास जातिभेद कारणीभूत आहेत, हे त्यांनी निर्भीडपणे मांडले. शूद्रातिशूद्राच्या प्रगतीच्या मार्गात जर सर्वांत मोठा अडथळा कोणता असेल तर तो जातिभेदाचा; म्हणूनच त्यांनी मूलगामी समाजपरिवर्तनासाठी जातिभेदावर हल्ला चढवला. जातीसंस्थेच्या उत्पत्तीसंबंधी फुले यांनी

स्वतःच्या साहित्यात त्यासंदर्भातील आपली मते मांडली. आहेत.दुर्गाबाई भागवत म्हणतात: 'भरभराट इच्छिणाऱ्या कोणत्याही समाजाला परंपरा मांडून दाखवणारे मनु लागतात. त्याचप्रमाणे मनुंनी मांडून ठेवलेली परंपरा जेव्हा घट्ट खोडागत बतून पुढची वाट थांबवून धरतात, तेव्हा मनुंना आव्हान करणारे फुलेसुद्धा आवश्यक असतात. महात्मा फुलेंनी शिक्षणाची प्रेरणा अहमदनगरच्या मिस फरार यांच्याकडून घेतली होती (मेजर कॅडी फुलेंच्या शाळेला पुस्तके पुरवत असत). त्यांनी मुलींच्या शिक्षणासाठी अतोनात प्रयत्न केले. त्यांनी मुलींसाठी शाळा सुरू केल्याचं त्याच बरोबर अस्पृश्य मुलांसाठी देखील शाळा सुरू केलीत. महात्मा फुले यांनी स्त्री शिक्षणाची प्रेरणा मावस बहीण सगुणाबाई क्षिरसागर यांच्याकडून मिळाली. जोतीराव जसे सार्वजनिक ठिकाणी उपदेशपर भाषणे करीत, तसेच ते शाळांतील शिक्षकांना आदर्श पाठ देऊन शिक्षकांनी मुलांच्या हिताच्या दृष्टीने योग्य ती साधने नि उपकरणे वापरावी म्हणून शिक्षकांनाही उत्तेजन देत असत. स्थापत्यशास्त्र महाविद्यालयाच्या प्राचार्यांकडे सत्यशोधक समाजाने एक अर्ज केला. त्या महाविद्यालयामध्ये काही प्रमाणात गरीब ब्राह्मणेतर विद्यार्थ्यांना निःशुल्क शिक्षण द्यावे, अशी त्यांनी प्रार्थना केली होती. त्या अर्जातील त्यांचा हेतू सफल झाला.

सामाजिक कार्य:

मानवी हक्कावर इ.स. १७९१ मध्ये थॉमस पेन यांनी लिहिलेले पुस्तक त्यांच्या वाचनात आले. त्याचा प्रभाव त्यांच्या मनावर झाला. सामाजिक न्यायाबाबत त्यांच्या मनात विचार येऊ लागले. त्यामुळेच विषमता दूर करण्यासाठी स्त्रीशिक्षण आणि मागासलेल्या जातीतील मुलांमुलींच्या शिक्षण यावर त्यांनी भर देण्याचे ठरवले. सामाजिक भेदभाव त्यामुळे कमी होईल असे त्यांचे निश्चित मत आणि अनुमान होते. महात्मा फुले यांनी आपले संबंध आयुष्य समाजोद्धारासाठी व्यतित केले. तत्कालीन समाजामध्ये त्यांनी अनेक प्रकारच्या सामाजिक सुधारणा घडवून आणल्या. मुलींसाठी स्वतंत्रपणे शाळा काढणारे पहिले भारतीय समाजसुधारक म्हणून त्यांना ओळखले जाते. १९४८ मध्ये पुण्यातील भिडेवाड्यात मुलींची पहिली शाळा त्यांनी सुरू केली. त्यानंतर १८६३ साली बालहत्या प्रतिबंधकगृहाची स्थापना केली. दरम्यानच्या काळामध्ये विधवा स्त्रियांचा प्रश्नही बिकट होता. त्यांना अत्यंत अमानवी पद्धतीने वागविले जात होते. त्यांच्या असहायतेचा फायदा घेऊन त्यांचे लैंगिक शोषणही केले जात होते. त्यातून त्यांच्यावर गर्भारपण ओढवले जात असे. अशा अडचणीत सापडलेल्या विधवांना आधार देण्यासाठी आणि भूणहत्या रोखण्यासाठी जोतीराव बालहत्या प्रतिबंधकगृहाची स्थापना करतात. अशा असहाय विधवांनी तेथे येऊन आपल्या मुलांना जन्म देण्याचे आव्हान करतात. त्यांच्या संगोपनाची पूर्णपणे जबाबदारी घेतात. या प्रसूतिगृहाची देखभाल स्वतः सवित्रीबाई करत असत.

श्री. गं. बा. सरदार महात्मा जोतीराव फुले यांच्या कार्याविषयी व व्यक्तित्वाविषयी आपल्या 'महात्मा फुले : व्यक्तित्व आणि विचार' या पुस्तकात आरंभीच म्हणतात, "महात्मा जोतीराव फुले हे आधुनिक महाराष्ट्रातील मूलगामी समाजपरिवर्तनाच्या चळवळीचे आय प्रवर्तक होते. हिंदुसमाजातील शूद्रातिशूद्रांच्या व्यथा त्यांनी निःशंकपणे बोलून दाखविल्या. कर्जबाजारीपणापायी हैराण झालेल्या शेतकऱ्यांची गाहाणी त्यांनी वेशीवर टांगली. खेड्यापाड्यांतील या कष्टकऱ्यांचे अज्ञान व दारिद्र्य हे ईश्वरनिर्मित नसून त्याचे मूळ आपल्या समाजव्यवस्थेत आहे हे त्यांना बरोबर उमगले होते. म्हणून या व्यवस्थेतील धर्माधिष्ठित बौद्धिक गुलामगिरी, सामाजिक अन्याय आणि आर्थिक शोषण यांकडे त्यांनी प्रथमच लोकांचे लक्ष वेधले. एकोणिसाव्या शतकात येथे अनेक विद्यावंत समाजसुधारक होऊन गेले. जांभेकर, दादोबा पांडुरंग, राम बाळकृष्ण, लोकहितवादी, भांडारकर, रानडे, विष्णुशास्त्री पंडित, आगरकर ही नावे सर्वश्रुत आहेत. या सर्वांची दृष्टी उदार व व्यापक होती.... तरीदेखील त्यांचे कार्यक्षेत्र मर्यादित राहिले.... उच्चवर्णीयांच्या कौटुंबिक सुधारणेपलीकडे त्यांच्या कार्याची मजल बहुधा गेली नाही. जोतीरावांच्या कार्याची दिशा याहून अगदी निराळी होती...." हा उतारा महात्मा जोतीराव फुले यांच्याविषयी नीटपणे विचार करणाऱ्या अनेक विचारवतांच्या निष्कर्षांचे सार म्हणावे लागेल.

मराठी साहित्यातील योगदान:

महात्मा फुले आपल्या सामाजिक कार्याला बळकटी देण्यासाठी १८५५ नंतर लेखनकार्याला सुरुवात करतात. १८५५ साली तृतीयरत्न हे नाटक लिहितात. त्यानंतर पोवाडा : छत्रपती शिवाजीराजे भोसले यांचा (१८६९), पवाडा : विद्याखात्यातील ब्राह्मण पंतोजी (१८६९), ब्राह्मणांचे कसब (१८६९), गुलामगिरी (१८७३), शेतकऱ्यांचा आसूड (१८८३), सत्सार अंक १ (१३ जून १८८५), सत्सार अंक २ (ऑक्टोबर १८८५), इशारा

(ऑक्टोबर १८८५), सार्वजनिक सत्यधर्म पुस्तक (१८९१), अखंडादी काव्यरचना इत्यादी स्वरूपाचे लेखन त्यांनी केले आहे.

महात्मा फुले आपल्या संबंध लेखनामध्ये समाजपरिवर्तनाचा विचार प्रखरपणे मांडतात. समाजातील शोषित, वंचितांच्या प्रश्नांना न्याय मिळवून देण्यासाठी ते आपले लेखनकार्य करतात. अन्यायाचा प्रतिकार व शोषित वंचितांना न्याय हे त्यांच्या लेखनाचे मध्यवर्ती सूत्र आहे. आधुनिक समाज परिवर्तनाच्या चळवळीचे जनक एक कृतिशील विचारवंत क्रांतीकारी समाजसुधारक म्हणून महात्मा ज्योतिराव फुले यांना ओळखले जाते. प्रस्थापित विषमता प्रवर्तक ब्राह्मणी व्यवस्थेच्या विरुद्ध थेट आणि ठोस असा विद्रोह करणारे क्रांतीकारी साहित्यिक म्हणून ही त्यांना ओळखले जाते मराठी साहित्यातील त्यांचे योगदान हे एखाद्या क्रांती योद्ध्यासारखेच आहे. आधुनिक साहित्य प्रवाहांना दिशादर्शक अशा प्रकारचे त्यांचे लिखाण आहे विशेषतः ग्रामीण, दलित, स्त्रीवादी, आदिवासी, मुस्लिम व कामगार साहित्य प्रवाहांना प्रेरणा देणारे आणि क्रांतीच्या दिशेने घेऊन जाणारी त्यांचे साहित्यिक योगदान आहे. महात्मा फुले यांच्या मराठी साहित्यातील योगदानाचा संक्षिप्त स्वरूपात आढावा घेताना अगदी स्पष्टपणे दिसते की सामाजिक धार्मिक आर्थिक सांस्कृतिक व शैक्षणिक अशा सर्वच क्षेत्रातील अमुलाग्र परिवर्तनासाठी त्यांनी आपल्या साहित्याच्या माध्यमातून निकराचा लढा दिलेला आहे. बुद्धिप्रामाण्यवादी दृष्टिकोनातून त्यांनी आपले साहित्य लेखन करतानाच विवेकवादी तर्कशुद्धतेला त्यांनी अधिक प्राधान्य दिले. विवेकवादी तर्कशुद्धतेच्या जोरावरच धार्मिकतेच्या नावाखाली लुबाडणूक करणाऱ्या स्वार्थी व पुरोहित शाहीचा ते पर्दाफाश करतात. चातुर्वर्ण्य जातीभेद, अस्पृश्यता यांसारख्या समाजातील विषमता प्रवण गोष्टींचा धर्माशी काही संबंध नाही असा एकंदर विचार ते मानतात मानवी समतेच्या आड येणाऱ्या कोणत्याही गोष्टींना ते आपले लक्ष वनवितात स्वातंत्र्य समता न्याय बंधुता नीती सदाचार सहिष्णुता आत्मपरीक्षण शिक्षण यासारख्या मानवी मूल्यांच्या प्रतिष्ठापनेसाठी ते आपल्या लेखणीचा प्रभावीपणे वापर करताना दिसतात

प्रस्थापित हिंदू धर्मातील सनातनी ब्राम्हण्यावादी तत्वज्ञाने निर्माण केलेल्या शोषण व्यवस्थेने बहुजन समाज समूह पूर्णतः नागवला गेला होता. त्याला नवा जीवनमार्ग दाखवण्यासाठीच २४ सप्टेंबर १८७३ रोजी सत्यशोधक समाजाची स्थापना केली आणि या सत्यशोधक समाजासाठी आचारधर्म सांगण्याच्या आवश्यकतेतून सार्वजनिक 'सत्य धर्म पुस्तका' ची निर्मिती झाली आहे. डॉ. नागनाथ कोतापल्ले म्हणतात, "सार्वजनिक सत्य धर्म पुस्तक म्हणजे सत्याशोधकांचा आचारधर्मच होय. परंतु हा आचारधर्म कर्मकांडाच्या पातळीवरील नाही तर एकूण माणसाला सुखाकडे नेहरा, विचारशक्तीला प्राधान्य देणारा, स्वातंत्र्य, समता आणि बंधुता या मूल्यांना केद्रवर्ती स्थान देणारा असा आहे. पारलौकिक विश्व फुले यांना मान्यच नाही. तेव्हा याच लौकिक जीवनाच्या सुखाचा शोध घेणारा असा हा सत्य धर्म आहे." त्यामुळेच माणसाच्या सुखाचे चिंतन प्रकट करणारा हा ग्रंथ मौलिक आहे. डॉ. जनार्दन वाघमारे यांचे हे विवेचन महात्मा फुले यांचे मराठी साहित्यातील योगदान अधोरेखित करणारे आहे. महात्मा फुले आपले साहित्यलेखन करताना संबंध मानव समूहाचा, त्याच्या मानवी उत्थानाचा आणि उत्कर्षाचा विचार मांडतात. त्याचबरोबर मराठी साहित्याला वास्तवाचे भान प्राप्त करून देतात. फुले पारंपरिक मराठी साहित्यातील काल्पनिकता, तर्कशून्यता, विवेकहीनता, असंवेदनशीलता व सामाजिक उत्तरदायित्वाचा अभाव स्पष्ट करतात. शेती, शेतकरी, दलित, पददलित, स्त्री, कामगार यांची होणारी कुचेष्टा थोपवतात व त्यांच्याकडे मानवी मूल्यांच्या पातळीवर पाहण्याची दृष्टी प्राप्त करून देतात. त्यांचे मराठी साहित्यातील हे योगदान वादातीत आहे. आधुनिक साहित्यप्रवाहांना सांस्कृतिक बंडखोरीकडे वळविण्याचे श्रेयही महात्मा फुले यांनाच जाते. विशेषतः आधुनिक मराठी कविता महात्मा फुलेंच्या विचारांना कवेत घेऊनच आपली बंडखोरी व्यक्त करताना दिसते. कित्येकदा फुलेंची प्रतिमा पुढे करूनच कवी आपला सामाजिक परिवर्तनाचा मूल्यविचार व्यक्त करताना दिसतात. कथा-कादंबरीच्या बाबतीतही फुलेंचा प्रभाव असणारी लेखनदृष्टी लेखकांमध्ये दिसते. भास्कर चंदनशिव, नागनाथ कोतापल्ले, सदानंद देशमुख, राजन गवस, इंद्रजित भालेराव यांसारख्या लेखकांवर हा प्रभाव प्रकर्षाने जाणवतो.

महात्मा फुले यांनी छत्रपती शिवाजी महाराजांच्या कर्तृत्वाची आणि पराक्रमाची ओळख इथल्याबहुजन समाजाला पोवाड्याच्या माध्यमातून करून दिली आहे. 'रयतेचा राजा' म्हणून ज्यांचा उल्लेख केलाजातो, त्या छत्रपती शिवाजी महाराजांच्या आयुष्यातील महत्त्वाच्या घटना-प्रसंगांची आठवण करून देऊनयेथील बहुजन समाजाचा आत्मविश्वास परत मिळवून देण्याचे कार्य जोतिरावांनी केले आहे. तसेच 'इशारा' या ग्रंथाच्या आधारे जातीचा प्रश्न समाजासमोर मांडला आहे. 'सत्सार' या नियतकालिकाच्यामाध्यमातून सामाजिक प्रश्नांवर भाष्य केले आहे. याबरोबरच सार्वजनिक सत्यधर्म' या ग्रंथाच्यामाध्यमातून जोतिरावांनी धार्मिक, सामाजिक, नैतिक, व्यावहारिक प्रश्नांची चर्चा केली आहे. एकंदरीतचमहात्मा फुले ज्या काळात लेखन करित होते, त्या काळाचा विचार करता त्यांच्या साहित्याने मराठीसाहित्यविश्वात मोलाची भर घातली आहे, असे मला वाटते. त्यांच्या प्रेरणेतून आंबेडकरवादी साहित्यजन्माला आले. तसेच दलित साहित्याची एक व्यापक चळवळ उभी राहिली. त्यामधून कविता, कथा,कादंबरी आणि आत्मकथनासारखा नवा वाङ्मयप्रकार जन्माला आला. मराठी साहित्यातील आंबेडकरीआणि दलित साहित्याची पाळेमुळे आपणास फुलेंच्या साहित्यात, विचारांत शोधावी लागतात, त्यामुळेमहात्मा फुलेंच्या साहित्याने मराठी साहित्यविश्व अधिकाधिक समृद्ध केले आहे.

संदर्भग्रंथ :

- १) कुलकर्णी कुसुम 'प्रबोधनपर्व', सिंहवाणी प्रकाशन, कोल्हापूर, द्वितीय आवृत्ती २६ जाने. २००२.
- २) डॉ. किरवले कृष्णा, 'दलित चळवळ आणि साहित्य', प्रतिमा प्रकाशन, पुणे, प्र., आ. जून १९९६.
- ३) डॉ. आढाव बाबा, पुरोगामी सत्यशोधक' (त्रैमासिक) ऑक्टो-नोव्हें-डिसेंबर, १९९३, साई प्रकाशन पुणे.
- ४) ४)भिडे जी. एल., पाटील एन.डी., महाराष्ट्रातील समाजसुधारणेचा इतिहास', फडके प्रकाशन, कोल्हापूर, सोळावी आवृत्ती, नोव्हेंबर २००८.
- ५) ५)हरी नरके- म.फुले साहित्य आणि चळवळ,प्रकाशक:प्रधान सचिव,उच्च व तंत्र शिक्षण विभाग,महाराष्ट्र शासन,मुंबई,प्रथमआवृत्ती-२००६.

दलित कवितेवर डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या विचारांचा प्रभाव

प्रा. डॉ. सारिका विष्णूदास मोहीते

सहा.प्राध्यापक, मराठी विभाग, के.एन.भिसे आर्ट्स, कॉमर्स अँड विनायकराव पाटील सायन्स कॉलेज, विद्यानगर,

भोसरे ता.माढा जि.सोलापूर

Email sarikamohite214@gmail.com

प्रास्ताविक :

इ.स. 1960 नंतर मराठी वाङ्मयात 'दलित साहित्य' आढळून येते. त्याचे एक ठळक वेगळेपण दिसून येते. त्यामुळे मराठी वाङ्मय समृद्ध झाले आहे आणि मराठी वाङ्मयाच्या कक्षा व्यापक झाल्या आहेत. दलित साहित्य चळवळीमुळे मराठी साहित्यास कोणते योगदान दिले किंवा या साहित्याचा मराठी साहित्यावर कोणते परिणाम झाले या प्रश्नांची चर्चा विविध दलित व दलितेतर लेखकांनी केली आहे. दलित साहित्याचा उगम इ.स. 1960 च्या आसपास आसलेले साहित्य हे जरी जन्म घेणारे साहित्य असले तरी दलितांच्या वैचारीक लेखनाचा टप्पा 1920 पासून नोंदविता येऊ शकतो. मुकनायक, बहिष्कृत भारत, जनता, प्रबुद्ध भारत या वृत्तपत्रांतून प्रबोधनाची साहित्यरूपी चळवळ सुरुच होती. साठोत्तरी दलित साहित्यातील कथा, कादंबरी नाटक आत्मकथेने इ. साहित्यनिर्मितीमुळे दलितांचे जीवनानुभव उलगडत जातात. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी स्वतंत्रपणे साहित्याचे विचार मांडले नाहीत परंतु दलित साहित्याला आंबेडकरांच्या विचारांचे अधिष्ठान आहे.

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांचे विचार : डॉ.आंबेडकरांचे विचार समता, स्वातंत्र्य व बंधुभाव या जीवनमुल्यांवर आधारित आहे. त्यांनी हे विचार गौतम बुद्धांच्या धम्मातून घेतले होते. डॉ.आंबेडकर गौतम बुद्धांना पहिले गुरु मानतात. तर संतश्रेष्ठ कबीर दुसरे व महान समाजसुधारक म.फुले यांना तिसरे गुरु मानतात म्हणूनच आपण 'कच्या गुरुचे चेले नाही' असे ते नेहमी म्हणत.

दलित साहित्य चळवळीचे टप्पे :दलित समाजोत्थानासाठी राजकीय, सामाजीक, सांस्कृतीक चळवळीची आवश्यकता आहे. डॉ.आंबेडकरांनी दलितांच्या उद्धाराचे कार्य केले. दलितोद्धारासाठी डॉ.आंबेडकरांचा संदर्भ अत्यंत महत्त्वाचा असल्याने दलित चळवळीचे स्वरूप आंबेडकरपूर्व दलित साहित्य चळवळ, आंबेडकर कालीन दलित साहित्य चळवळ व आंबेडकरानंतरची दलित चळवळ असे बनलेले दिसते.

आंबेडकरपूर्वकालीन दलित साहित्य : आंबेडकरपूर्व दलित साहित्य चळवळीमध्ये चोखामेळापासून ते 1906 च्या वि.रा.शिंदे यांच्यापर्यंतच्या साहीत्यात शरणता, अगतिकता, आळवणी, दयेची याचना, विद्रोह, अक्रोश दुःखाचा हुंकार हे दिसून येते व त्यासाठी समतेचा आग्रह दिसून येतो.

आंबेडकरकालीन दलित साहित्य : या काळात मुकनायक (1920) बहिष्कृत भारत (1927) जनता अशी विविध वृत्तपत्रे सुरु झाले व त्यातून खेड्यापाड्यात समाजप्रबोधन झालेले दिसून येते. तसेच वेगवेगळे सत्याग्रहाचा उदाः चवदार तळ्याचा सत्याग्रह, काळाराम मंदिर सत्याग्रह समावेश होतो.

आंबेडकरकालीन साहित्य : 1960 नंतर या चळवळीला सुरुवात झाली. महाराष्ट्रात दलित पँथर या नावाने अतिशय आक्रमक चळवळीने जन्म घेतला त्याचे सर्वत्र परिणाम दिसून आले. नकार आणि विद्रोह हाच दलित साहित्याच्या महत्त्वाच्या भूमिका मानल्या गेल्या. दलित कवीनी कविता हा वाङ्मय प्रकार हाताळला. कवितेचे प्रेरणास्थान अर्थातच डॉ.आंबेडकर होते. किसन फागुजी बनसोडेनी आपली वेदना कवितेच्या माध्यमातून समर्थपणे मांडली.

हजारो वर्षापासून होत असलेल्या अन्यायाचा अथवा दलितांच्या शोषणाला कारणीभूत असलेल्या संस्कृती, परंपरा आणि विचारप्रवाहाविरुद्ध दलित कविता आक्रमकपणे उभी राहते.

दलित कवितेवरील डॉ.आंबेडकरांच्या विचारांचा प्रभाव :

दलित साहित्यिकांना आपल्या वेदनेच्या अभिव्यक्तीसाठी कविता हा वाङ्मय प्रकार जास्त जवळचा वाटला. त्यामुळे अन्य कुठल्याही वाङ्मय प्रकारापेक्षा दलित साहित्यात कविता हा वाङ्मयप्रकार सगळ्यात जास्त निर्माण झाला आहे. दलित कवितेचे स्वरूप लक्षात घेता ही कविता खालील वैशिष्ट्यावर केंद्रीत झालेली आहे असे दिसते.

आत्मभान : डॉ.आंबेडकरांच्या विचारांमुळे माणसाला आत्मभान लाभले. त्यांचे प्रतिबिंब त्यांच्या काव्यात दिसू लागले. उपासपोटी वेठबिगारीचे काम अहोरात्र करता-करता बंधुमाधवांचा कथानायक 'कपाळी लिवल्यालं कंदी पुसलं?' अशा शब्दात नशीबाला दोष देतो पण ह्या कथानायकाची पत्नी मात्र वेठबिगारी व्यवस्थेवर संतापते. ती नशीबाला दोष लावण्याऐवजी व्यवस्थेला दोष लावणे.

आत्मशोध : परिवर्तनाच्या चळवळीमुळे दलितांना जे आत्मभान प्राप्त झाले. त्याचा परिणाम दलित लेखक आपल्या सभोवतीचं वास्तव न्याहाळू लागला. संस्कृतीशी असणारा आपला नातेसंबंध शोधू लागला. हा शोध म्हणजे आत्मशोध सगळ्या गावातले दिवे लावणाऱ्या बापाच्या झोपडीत आंधार असायचा हे पाहील्यावर शरणकुमार लिंबाळे म्हणतात.

बा तु त्यांच्या वाटेवर दिवे लावलेस

पण त्यांनी तुझी वाट अंधारीच ठेवली रे!

शिक्षणामुळे दलितांना वाणीचे आणि लेखणीचे सामर्थ्य गवसले. शतकानुशकानंतर एका फकिराने दलितांच्या हातावर सुर्यप्रकाश ठेवला तर आता दलितांनी सुर्यफुलासारखे सुर्योन्मुख झालेच पाहीजे. नामदेव ढसाळ यांच्या कवितेतील (गोलपीठा-आता) ही भावना प्रतिनिधीक स्वरूपाची वाटते.

नकार व विद्रोह : आंबेडकरी चळवळीच्या प्रारंभापासून दलित कवितेने लढाऊवृत्ती स्वीकारली. विद्रोहाची भूमिका घेतली. प्रा.केशव मेश्राम यांच्या उत्खनन या कवितासंग्रहातील 'एक दिवस मी परमेश्वराला' या कवितेतील ह्या ओळीही एका अर्थी प्रतिनिधिक स्वरूपाच्या आहेत. आईची प्रतिमा त्यांनी प्रतीयमान रूपात रेखाटली आहे.

साल्या! तुकडाभर भाकरीसाठी

गाडीभर लाकडं फोडशील का

चिंधुक नेसल्या आईच्या फटकुराने

घामेजले हाडके शरीर पुसशील का?

अशी ही कविता दलितांच्या जीवनातील भीषणता भयावह वास्तव प्रश्न वाक्यातून जाणवते. ज्योती लांजेवार यांच्या दिशा या कवितासंग्रहातील 'हे आवाज' या कवितेत कवी लिहितात,

हे आवाज कसले येत आहे?

पाण्यातले मासे तर रडत नाहीत?

दुसऱ्या एका कवितेत त्या म्हणतात.

वाटतं घ्यावं हातात कोलीत

अन लावावी आग

या आमामनुषांच्या वस्तीला

जिथं आपल्या सर्वस्वाची होळी झालीच.....

यातुन संताप, चीड, विद्रोह, नकार व्यक्त होताना दिसतात. आशा या दलित संग्रामात महिलाही मागे राहिल्या नाही हेच त्यातून प्रकट होते.

बाबूराव बागुल यांचा 1967 साली प्रसिद्ध झालेला छोट्यासा टंकमुद्रित 'विद्रोहाच्या कविता' या कवितासंग्रहाच्या म्हणजे अस्पृश्यतेविरुद्धचा एक प्रचंड विद्रोह त्यात एके ठिकाणी हे म्हणतात.

ज्यांनी केली चुक इथे जन्म घेण्याची
त्यांनीच ती सुधारली पाहिजे
देश सोडून अथवा भीषण युद्धे करुन

दलित माणूस म्हणुन जगु दिले नाही. ती व्यवस्था मोडून-तोडून टाकुन दिली पाहिजे आणि त्यासाठी क्रांती करण्यास सिद्ध झाले पाहिजे असा दलित कविचा विश्वास आहे.

क्रौंच पक्षाची हत्या पाहून विव्हाळणाऱ्या वाल्मिकीला आपल्याच जातीत जन्मलेल्या शंबुकाचे मरण पाहून का लिहावे वाटले नाही? वाल्मिकीला उद्देशुन कवी दया पवार हे महाकाव्य या कवितेत म्हणतात.

हे महाकाव्ये
तुला महाकवी तरी कसे म्हणावे?
हा अन्याय, अत्याचार
वेशीवर टांगणारा एक जरी श्लोक
तु लिहिला असता
तर तुझं नाव काळजावर
कोरुन ठेवलं असते

स्वातंत्र्योत्तर काळातील कवी यशवंत मनोहर (उत्थानगुंफा) प्रा.केशव मेश्राम (उत्खनन) वामन निंबाळकर (गावकुसाबाहेरील कविता), नामदेव ढसाळ (गोलपोठा) ज.वि.पवार (नाकेबंदी), अर्जुन डांगळे (छावणी हालते का), प्रल्हाद चेंदवणकर (ऑडिट), त्रयंबक सपकाळे (सुरंग), दया पवार (कोंडवाडा), सा.स.हाटे (रक्तखुणा) भीमसेन देठे (होरपळ) यासारख्या कवींच्या काव्यातून आंबेडकरी विचारांच्या प्रेरणा व्यक्त झाल्या आहेत.

बांधिलकी :

याच वस्तीतून आपला सुर्य येईल
तोवर मला गातच राहिले पाहिजे
नगरवेशीत अडखळीतील ऋतु
तोवर प्रिये जगत राहिले पाहिजे

अशी नारायण सुर्वे यांनी आपल्या सखीला केलेली मागणी ह्याच उत्कट अशावादातून जन्म घेते. कुणाच्याही स्वातंत्र्याचा संकोच होता कामा नये असे दलित कवीला वाटते त्या दृष्टीने नामदेव ढसाळांच्या कवितेकडे पाहता येईल.

माणसाला पहिल्या प्रथम स्व:ताला
पूर्ण अंशाने उद्धवस्त करुन घ्यावे.

ज.वि.पवार डॉ.आंबेडकरांचे मुक्तीलढ्याचे नेतृत्व मान्य करतात. आज पन्नास वर्षांनी या कवितेत त्यांचे मन डॉ. आंबेडकरांच्या व्यक्तीमत्वासमोर आणी कर्तृत्वासमोर कृतज्ञ होते ते म्हणतात.

तु झालास परिस्थितीतर स्तर
आणि घडविलास नवा इतिहास

तु झालास मुक समाजाचा नायक
आणी जागा केलास उभा बहिष्कृत भारत (नाकेबंदी)

सारांश :

दलित कवितेमध्ये दुःख, वेदना, विद्रोह आणी नकार या बरोबरच कृतज्ञता, आदर, आशावाद आणी उत्साह दिसून येतो. कवितेत जीवंत जाणिवेचा प्रवाह दिसतो. 1960 नंतर कालखंडात दलित कविता अतिशय गतीने बहरास आली आणी आपले नकार व विद्रोहाचे मुल्य घेऊन आपल्या सामर्थ्याची मराठी वाङ्मयाच्या इतिहास नोंद केली यात नामदेव ढसाळ, ज.वि.पवार, वामन निंबाळकर, केशव मेश्राम, यावंत मनोहर, अर्जुन डांगळे, प्रल्हाद चेंदवणकर, त्रयंबक सपकाळे, दया पवार, भीमसेन देठे, बा.स.हाटे इ. कविंचाच उल्लेख प्रामुख्याने केला जातो.

संदर्भग्रंथ :

1. कवठेकर बाळकृष्ण, दलित साहित्य : एक आकलन, अजब पुस्तकालय, कोल्हापूर, 1981
2. कुंभोजकर ललिता, दलित कविता : एक दर्शन, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे, 1984
3. डोळस अविनाश, आंबेडकरी विचार आणि साहित्य, साकेत प्रकाशन, औरंगाबाद, 1994
4. फडके भालचंद्र, दलित साहित्य : वेदना आणि विद्रोह, श्री विद्या प्रकाशन, पुणे, 1977
5. मेश्राम योगेंद्र, दलित साहित्य : उद्गम आणी विकास, मंगेश प्रकाशन, नागपूर, 1998
6. सांगोलेकर अविनाश, दलित साहित्य प्रवाह आणी प्रकार, प्रतिमा प्रकाशन, 2008

महात्मा फुलेचे स्त्री विषयक कार्य : एक दृष्टीकोन

प्रा. ज्योतीराम लोखंडे

मराठी विभाग प्रमुख, वसंतराव काळे महाविद्यालय, ढोकी ता. जि. उस्मानाबाद

प्रास्ताविक :-

भारतातील समाज प्रगत करण्यासाठी समाजातील भ्रामक रूढी, प्रथा, परंपरा, चालीरिती, अंधश्रद्धा, अस्पृश्यता, कर्मकांड इत्यादी गोष्टींचे उच्चाटन होणे आवश्यक आहे हे त्यांना पटले त्यामुळे हिंदू धर्म व संस्कृतीचे पुनरुज्जीवन केल्यास आपल्या समाजाची उन्नती होईल असा एक विचार वाढायला लागला. सामाजिक व धार्मिक सुधारणा करण्यामध्ये अनेक संस्था व व्यक्ती आपल्या परीने प्रयत्न करत होते. भारतामध्ये पहिल्यांदा सामाजिक सुधारणेची मुहूर्तमेढ ज्या महापुरुषांने सुरू केली. ते राजा राममोहन रॉय होते. म्हणूनच त्यांना आधुनिक भारताचा जनक म्हणून संबोधले जाते. सती प्रथा आणि बालिका बळी यासारख्या दुष्ट चालीरिती विरुद्ध त्यांनी संघर्ष केला. धर्म सुधारणा, पाश्चात्य शिक्षणाचा आग्रह धरला. एकेश्वरवादाचा पुरस्कार केला पण ब्राम्हो समाज ही सर्वव्यापक संघटना होऊ शकली नाही हे वास्तिकता आहे. भारतातील समाज सुधारणा चळवळीचे प्रणेते राजाराम मोहन राय होते. तर महाराष्ट्रातील समाज सुधारणा चळवळीचे अद्य प्रवर्तक महात्मा ज्योतीबा फुले हे होते. महात्मा फुले यांनी महाराष्ट्रात नवीन प्रवाहाला सुरुवात केली. त्यांच्या विचारावरच थॉमस पेन या पाश्चात्य विचारवंताचा मोठा प्रभाव होता. पेनच्या 'राईट्स ऑफ मॅन' या ग्रंथाचा प्रभाव त्यांचा मनावर झाला. स्वातंत्र्य, समता आणि मानवी मूल्य त्यांचे हक्क यांची जाणीव त्यांना होऊ लागली. स्त्री शिक्षणाचा प्रसार, अस्पृश्यता निवारण, परंपरेपासून चालत आलेली गुलाम - गिरीची प्रथा नष्ट करणे, प्रथा, परंपरा, अंधश्रद्धा दूर करण्यासाठी त्यांनी अहोरात्र प्रयत्न केले.

सत्यशोधक समाजाची स्थापना करून त्यांनी पुरातन व बुरसटलेल्या विचाराला हादरा दिला. त्यांच्या अनेक ग्रंथांमधून हे विचार पाहावयास मिळतात. स्त्री यांची स्थिती ती अत्यंत दयनीय होती. पुरुषांच्या मक्तेदारीदारीमुळे संसार करणारी स्त्री, घरातील शोभिवंत स्त्री, सौभाग्य जपणारी, घरातल्या घरात कोंडून राहणारी स्त्री हे तिचे वैशिष्ट्य बनले होते. अस्पृश्यताप्रमाणे स्त्रीलाही शिक्षणाचा अधिकार नाकारला गेला होता. तिच्या व्यक्तीमत्वाला स्वतंत्र्याची कुठलीही किंमत नव्हती. तिच्या स्वतंत्र्याची विल्हेवाट पुरुषप्रधान समाज व्यवस्थे लावून टाकली होती. पुरुषाला जे हवं तेच स्त्रीने करावे. हा अलिखित नियम झाला होता. आई - वडिलांच्या मर्जीने लग्न करायचे आणि आयुष्यभर पती सांगेल त्यापध्दतीने जीवन व्यतीत करायचे असे जीवन स्त्री जगत होती. पिढी-पिढ्यांना हे दास्यत्व चालत झाले होते. स्त्रीला स्वतःचे स्वातंत्र्य बिलकुल नसते. शिकण्याचा हक्क नाही, पूर्ण स्त्री वर्ग या जुलमी पारतंत्र्यात होता. गुलामगिरीच्या अंधारात खितपत पडला होता. अज्ञान, हालेपेष्टा, वेळी-अवेळीचे बाळतंपण, अवेळीचे विधवापण त्यांतून होणारी तिची कुचंबना या मताचा पगडा समाज मनावर घट्ट बसला होता. पुरुषाला जन्म देणारी स्त्री अशी ओळख त्या काळात चालत होती. धर्माच्या नावावर हे राजरोसपणे चालू होते. या सर्व परिस्थितीचे सुक्ष्म निरीक्षण महात्मा फुले करत होते.

समाजात सुधारणा घडवून आणण्याची तर लोकांना आधी शिक्षण दिले पाहिजे. सर्व लोकांना शिक्षण शहाणे बनविले पाहिजे. स्त्रीया आणि अस्पृश्य यांची गुलामगिरी नष्ट करायची असेल तर त्यांना आधी शिक्षण दिले पाहिजे अज्ञानामुळे त्यांचा हास झाला होता. त्यांना शिकवले, ज्ञान दिले सज्जन केले तर त्यांना बुद्धी चालविण्याचे बळ प्राप्त

होईल. त्यांना खरा व सत्य धर्म व न्याय अन्यायाची बाजू तपासून पाहता येईल आणि आपल्या प्रगतीची दारे ते स्वतः उघडतील अशी जाणीव फुल्यांना झाली होती.

फुलेंचा स्त्री विषयक दृष्टिकोन :

स्त्री शिक्षण :

महात्मा फुलेंच्या काळात स्त्रियांची अतिशय शोचनीय स्थिती होती. स्त्रिया देवता म्हणून गौरव केला जातो तर दुसरीकडे तिचे शोषण केले जात होते शिक्षणाचा अधिकार नव्हता. म्हणून त्या शोषणातून मुक्त करण्यासाठी स्त्रियांना शिक्षण देणे आवश्यक आहे असे वाटल्यामुळे त्यांनी १८४८ मध्ये मुलींची शाळा काढली. विकासासाठी शिक्षण हे अनिवार्य आहे याची जाणीव झाली म्हणून महाराष्ट्रात स्त्री शिक्षणाला सुरुवात केली. स्त्री ही समाजाचे मूळ आहे असे फुलेचे मत होते स्त्रियांमुळे समाजाचा आणि राष्ट्राचा विकास होऊ शकतो म्हणून फुले म्हणतात. जिच्या हाती पाळण्याची दोरी ती जगाचा उद्धार करेल. स्त्रीशिक्षणाला सुरुवात केल्यानंतर फुले दाम्पत्यांना अनेक कठीण परिस्थितीला तोंड द्यावे लागले परंतु ते डगमगले नाहित आपले कार्य त्यांनी चालूच ठेवले.

विधवा विवाहाचा पुरस्कार :

फुलेंच्या काळात अनेक बालविवाह, जरठविवाह, प्रतीप्रथा व केशवपन यासारख्या अनेक कुप्रथा होत्या त्यामुळे स्त्री जीवन अतिशय वाईट होते. अनेक प्रकारचे निर्बंध विधवेवर घातले जात असे यासर्वांची फुलेना चीड येत असे. हिंदू धर्माला हा कलंक आहे असे त्यांना वाटे. स्त्रीवरील हा अन्याय दूर होण्यासाठी पुनर्विवाहाची प्रथा सुरू केली. त्यामुळे विधवांचे प्रश्न कमी ते फक्त बोलले नाहीत तर त्यांनी बहुजन समाजातील स्त्रियांसाठी शाळा सुरू केल्या. फुलेंनी स्त्रियांसाठी शाळा काढून स्त्री शिक्षणाचा पाया रचला. संपूर्ण समाज परिवर्तन झाला पाहिजे. म्हणून स्त्री वर्गाला प्रथम शिक्षित करून शिक्षण दिले पाहिजे. या मनोभूमिकेतून त्यांनी हे कार्य सुरू केले. जुन्या, बुरसटलेल्या रूठीवर प्रहार करून व सनातणी विचाराला लादाडुन संपूर्ण समाज ज्ञानमय करण्याचे सर्व श्रेय फुल्यांना जाते.

बालहत्या प्रतिबंधक गृहाची स्थापना :

बालविवाहाच्या प्रथेमुळे बालविधवांचे बरेच प्रमाण होते. त्यामुळे अनेक वेळा अनैतिक संबंधातून बालविधवा गरोदार रहात. अशावेळी समाजापासून स्वतःला वाचविण्यासाठी त्या नवजात अर्भकाची हत्या करत. म्हणून अशा विधवा स्त्रियांची समाजातल्या जाचापासून मुक्त करण्यासाठी बालहत्या प्रतिबंधक गृहाची स्थापना १८६३ मध्ये केली.

बहुपत्नीत्वला विरोध :

महात्मा फुले हे समतेच्या तत्वाचा पुरस्कार करणारे होते. म्हणून त्यांना बहुपत्नीत्वाची प्रथेची चीड होती याविरुद्ध त्यांनी अनेक प्रकारे आपले मत नोंदविले आहे.

बालविवाहास विरोध :

महात्मा फुले यांचा बालविवाहास विरोध होता कारण बालविवाहामुळे स्त्रियांवर उद्धवणाऱ्या समस्यांची त्यांना जाणीव होती. जसे बालविधवांचे वाढते प्रमाण, भूणहत्या इत्यादी म्हणून फुलेंनी बालविवाहाच्या विरोधात लोकमत जागृत करण्याचा प्रयत्न केला. जरठ विवाहमध्ये मुलींचं वय फार कमी व मुलाचे वय खूप असे त्यामुळे विधवांची संख्या वाढत असे. त्यांच्यावर खूप अन्याय होत असे. यामुळे बालविवाह व जरठ विवाहास विरोध केला.

केशवपन पद्धतीस विरोध :

तत्कालीन समाजव्यवस्थेत विधवा स्त्रियांचे केशवपन केले जाते असे. त्यामुळे तिचे सौंदर्य नष्ट होऊन ती विद्वप दिसते. हे बरोबर नाही असा फुलेंचा विचार होता त्यामुळे त्यांनी या पद्धतीला विरोध केला.

सतीप्रथा व वाघ्यामुरळी प्रथेला विरोध:

वरील दोन्ही पद्धतीमुळे स्त्रियांवर अन्याय होतो म्हणून फुलेनी या सोडल्या जातात या प्रथांना विरोध केला. तसेच देवाच्या नावाखाली वाघ्या-मुरळी शोषण केले जात होते याचा फुलेनी निषेध व्यक्त केला.

समारोप •

उपेक्षित कष्टकरी, ग्रामीण, शेतमजूर, दलित स्त्रिया विषमते विरुद्ध त्यांचा आवाज आज बुलंद होताना दिसतो. व्यक्तीगत व कौटुंबिक संघर्षात अडकुन न राहता सर्व स्त्री समूह म्हणून त्या संघटित होत आहेत. त्यातून नवे नेतृत्व उभे राहत आहे. महाराष्ट्रात फुलेंच्या विचाराला मानणारा मोठा वर्ग निर्माण झाला. त्यातही महिलांची संख्या लक्षणीय आहे. फुलेनी जी पालवीला लावली होती तीला आज वटवृक्षाचे रूप आले आहे. पण नवीन पिढी या विचारधारेला विसरली तर तिची अधोगती होईल हे निश्चितच.

संदर्भ ग्रंथ

- १) महात्मा ज्योतिबा फुले विचार आणि वाङ्मय :- डॉ. श्रीराम गुंदेकर
- २) महात्मा फुले समग्र वाङ्मय - संपा, धनजय कीर
- ३) महात्मा फुले व्यक्तित्व आणि विचार – ग.वा. सरदार
- ४) महाराष्ट्राचे शिल्पकार महात्मा ज्योतिबा फुले – श्रीराम गुंदेकर

राजर्षी शाहू महाराज यांचे खेळा प्रतीचे योगदान

शिवकुमार शामराव खबाले
संशोधक विद्यार्थी

प्रस्तावना -

शाहू महाराज यांचा जन्म 26 जून 1874 रोजी कोल्हापूर जिल्ह्यातील कागल गावच्या घाटगे या शाही मराठा कुटुंबात झाला. त्यांचे शिक्षण दहा वर्षांच्या वया पर्यंत त्यांचे वडील जयसिंगराव आप्पा यांच्या देखरेखीखाली झाले. राजकोटच्या प्रिन्स कॉलेजमध्ये औपचारिक शिक्षण पूर्ण केले आणि भारतीय सिव्हिल सर्व्हिसचे प्रतिनिधी सर स्टूअर्स फ्रेझर यांच्या प्रशासकीय बाबींचे धडे घेतले. समाज सुधारक ज्योतिराव गोविंदराव फुले यांच्या योगदानाचा जोरदार प्रभाव पडला, शाहू महाराज एक आदर्श नेते आणि सक्षम राज्यकर्ते होते, जे त्यांच्या कारकिर्दीत अनेक पुरोगामी व दिशादर्शक कार्यांशी संबंधित होते. 1894 मध्ये त्यांच्या राज्यभिषेकापासून ते 1922 पर्यंत मृत्युपर्यंत त्यांनी आपल्या राज्यात निम्न जातीच्या लोकांच्या उध्दारासाठी अथक परिश्रम घेतले. सर्व जाती प्रथेकडे दुर्लक्ष करून प्राथमिक शिक्षण ही त्याची सर्वात महत्वाची प्राथमिकता दिली.

1891 ते 1992 ही त्यांची 28 वर्षांची कारकीर्द कोल्हापूर संस्थानालाच नाही तर संपूर्ण महाराष्ट्राला कलाटणी देणारी ठरली. अनेकांनी शाहूंच्या चरित्रसंबंधी ग्रंथरूपाने खूप काही लिहून ठेवले आहे. डॉ. बाबासाहेब यांनी म्हटले की "राजर्षी शाहू हे सामाजिक लोकशाहीचे आधारस्तंभ आहेत" लोकराजा राजर्षी छत्रपती शाहूमहाराज यांचे सर्व क्षेत्रातील कार्य अलौकिक आहे. सामाजिक सुधारणेबरोबरच राजर्षींनी साहित्य, कला, कुस्ती, शेती सुधारणा, जलप्रकल्प उभारणी अशा विविध क्षेत्रांत अजोड कामगिरी केली आहे. आजही त्यांच्या कार्याची ओळख शहरातील भव्य अशा वास्तूंमधून प्रकर्षाने समोर येते. खासबाग कुस्त्यांचे मैदान असो, साठमारी असो, जनतेसाठी सुरू केलेले छत्रपती प्रमिलाराजे हॉस्पिटल असो वा त्यांच्या उदार आश्रयाखाली सुरू असलेल्या सांस्कृतिक संस्थांच्या इमारती असोत, त्या नेहमीच प्रेरणादायी ठरत आहे. शाहू महाराजांनी रुजवलेली लाल मातीतील कुस्ती टिकवण्यासाठी सरकारकडून वरवरचा नव्हे तर भरीव अशी मदत मिळाली पाहिजे. असे प्रतिपादन श्रीमंत छत्रपती शाहू महाराज यांनी केले. क्रिकेटला मिळणाऱ्या पाठिंब्याच्या दहा टक्के पाठिंबा जरी कुस्तीला मिळाला तर मोठे परिवर्तन घडू शकते, असा विश्वासही त्यांनी व्यक्त केला.

कुस्ती खेळाला राजाश्रय देणारे राजर्षी शाहू महाराज

शाहू महाराजांनी विविध क्षेत्रात भरीव कार्य केले तरी त्यांचे कुस्तीवर विशेष लक्ष होते. कुस्ती हा कोल्हापूरातील लोकप्रिय खेळ आहे. कागलमध्ये असतानाच शाहू महाराजांना कुस्तीच्या आखाड्याचे आकर्षण निर्माण झाले. वयाच्या नवव्या वर्षी ते कागलच्या मैदानात उतरले आणि मारुती रूकडीकर यांना चितपट करून मैदान मारले देखील. मैदानात उतरून कुस्ती करणारे शाहू महाराज हे राजघराण्यातील पहिले व्यक्ती होते. करवीर संस्थानात आल्यानंतरही त्यांचा मल्लविद्येच्या उपासनेत खंड नाही.

1895 मध्ये त्यांनी जुन्या राजवाड्यातील विस्तीर्ण मोतीबागेत तालीमखाना सुरू केला. या तालीमच्या प्रवेशद्वारावरच महाराजांनी एक फलक लावला होता. 'पहिली शरीरसंपत्ती, दुसरी पुत्रसंपत्ती आणि तिसरी धनसंपत्ती असेल तोच खरा पुण्यवान.' या फलकातून शाहू महाराजांच्या मनातील विचार स्पष्ट झाले. यापूर्वी करवीरनगरीमध्ये केवळ मंगळवारी कुस्त्यांचे मैदान भरत होते. शाहू महाराजांनी आठवड्यातून दोनदा कुस्ती मैदान भरवायला

सुरूवात केली. मंगळवारी आणि शुक्रवारी होणाऱ्या मैदानात कुस्त्या पाहण्यासाठी स्वतः शाहू महाराज थांबत, त्यामुळे दरबारातील सरदार, पाहणे, व्यापारी यांचीही गर्दी होऊ लागली. शाहू महाराजांच्या या प्रयत्नांमुळे संस्थानात गावोगावी तालमी सुरू झाल्या. शाहू महाराजांनी 1897 मध्ये करवीरमध्ये कुस्त्यांचे मोठे मैदान भरवले. या मैदानात उत्तरेकडील चंदन, कल्लू, आदी मल्लांनी करवीरच्या मल्लांना आस्मान दाखवले. या पराभवाने शाहू महाराज अस्वस्थ झाले. त्यांनी रुस्तूम-ए-हिंदच्या तोडीचे पैलवान करवीरमध्ये तयार करण्यासाठी चंग बाधला. यासाठी दहा कलमी योजना तयार केली. स्वतः मल्ल तयार करणे, वस्तादांकरवी कसदार मल्ल घडवणे, मल्लांच्या खुराकाची व्यवस्था करणे, व्यायामावर देखरेख, मल्लांसाठी वैद्यकीय सुविधा, मल्लांना राजाश्रय देणे, सरावासाठी उत्तरेकडील मल्लांना करवीरमध्ये आणणे, मोठी बक्षीसे देऊन मल्लांना सन्मान करणे, वस्तादांच्या उदरनिर्वाहाची सोय आणि मल्लांची राहण्यासह खुराकाची सोय करण्याचे शाहू महाराजांनी ठरवले. देवाप्पा धनगर मुन्ना, शिवाप्पा बेरड, पांडू भोसले, कृष्णा मर्दाने, दादू हेरले, शामू रायबागे, बिरंजा पाटील, रामा पैलवान, हुसेन मांगलेकर, पांडू शिराळकर, दादू करनाळे अशा अनेक मल्लांना ते स्वतः आखाड्यात उतरून नवीन डावपेच शिकवित होते. शाहू महाराजांच्या मल्लप्रेमापोटी उत्तरेतील अनेक मल्ल करवीरात येउन महाराजांसमोर कौशल्य दाखवण्यात धन्यता मानत. एकट्या करवीर नगरीत त्यावेळी शंभराहून अधिक तालमी होत्या. प्रत्येक तालमीत इर्षेने पैलवान घडत होते. पैलवान आणि वस्तादासाठी शाहू महाराज दरवर्षी तीस हजार रूपये खर्च करीत होते. महाराजांनी केलेल्या प्रयत्नांना मल्लांनीही उत्तम प्रतिसाद दिला. पंजाबचा कीर्तीशाली मल्ल हमदुकाका याला शिवाप्पा बेरड याने पन्हाळ्याच्या मैदानात आस्मान दाखवले. भोला पंजाबीला कृष्णा मर्दाने या मल्लाने अवघ्या 13 मिनिटांत आस्मान दाखवले. अगरताळाचा नवरंगसिंग हा नावाजलेल मल्ल याला गणपत शिंदे याने चारीमुंडया चित केले. शाहू महाराजांच्या प्रयत्नांमुळे उत्तरेकडील मल्लांची घमेंड जिरली. यानंतर अनेक मल्लांनी शाहू महाराजांकडेच आश्रय घेतला. पुढे खाशाबा जाधव यांनी ऑलिम्पिकमध्ये मिळवलेल्या कुस्तीतील पहिल्या पदकाची बिजेही राजर्षी शाहू महाराजांच्या प्रयत्नातच दडल्याचे सांगितले जाते. शाहू महाराजांच्या या प्रयत्नांमुळेच करवीरला मल्लविद्येचे माहेरघर असा लौकिक प्राप्त झाला. राजर्षी शाहू महाराज 1902 मध्ये परदेशात गेले होते. रोममध्ये त्यांनी ऑलिम्पिक सामन्यांचे स्टेडियम पाहिले. याचवेळी त्यांच्या मनात कुस्ती मैदानात विचार सुरू झाला. करवीरमध्ये परततात त्यांनी कुस्ती मैदान बांधण्यासाठी जागेचा शोध सुरू केला. कुस्ती पाहण्यासाठी लोकांनी मैलोनमैल चालत जाऊ नये. शौकिनांना सहज पोहोचता येईल अशी जागा त्यांनी शोधल्या. खासबागेतच त्यांनी कुस्तीसाठी जगप्रसिद्ध मैदान तयार केले. खासबागच्या मावळतीच्या बाजुला खास महिलांसाठीही बैठक व्यवस्था केली आहे. खासबागच्या उद्घाटनालाच झालेल्या मैदानात शौकिनांनी तिकीट काढून गर्दी केली.

राजर्षी शाहू महाराज आणि कुस्ती एक अतूट नातं, ज्याच्या मुळे कोल्हापूर नगरी म्हणजे कुस्ती पंढरी म्हणून लोक ओळखू लागले. शाहू महाराजांनी कुस्ती कला वाढण्यासाठी व जोपासण्यासाठी तिला राजाश्रय दिला गेला. त्यामुळे तरुणाकडून गावोगावी आखाडे चालू केले आणि त्या आखाड्यामध्ये चांगले मल्ल तयार होऊ लागले. राजर्षी शाहू महाराज चांगल्या मल्लास हेरून त्यास आपल्या न्यू पॅलेस राजवाड्यामधील तालमी मध्ये ठेवत असत. त्यांचा सर्व खुराक त्यांना संस्थांना मार्फत दिला जाई. त्यांच्या व्यायामाकडे व खुराकाकडे विशेष लक्ष दिले जाई. महाराजांनी विदेशातील खेळाची व डावाची माहिती आपल्याकडील मल्लास होण्यासाठी महाराजांनी अनेक देशी-विदेशी मल्लांना या खासबाग कुस्ती मैदानात आणून स्थानिक मल्लांबरोबर कुस्त्या लावल्या. कि जेणे करून त्यांचा कुस्ती मध्ये चांगला विकास होईल त्यांची प्रगती जोमाने होईल. 1993 साली खासबाग मैदान मध्ये चांगला खलिफा गुलाम मोहिद्दीन विरुद्ध इमामबक्ष (जगजेता गामा चा भाऊ) पैलवान यांच्यात पहिली कुस्ती लावली होती. त्याच इमामबक्ष पैलवान विजयी झाला. यात इमामबक्षला बक्षीस म्हणून शाहू महाराजांनी चांदीची गदा बक्षीस दिली.

आणि तेव्हा पासून विजेत्या मल्लास चांदीची गदा देण्याची प्रथा भारतामध्ये चालू झाली. पुढे याच ऐतिहासिक मैदानांमध्ये अनेक अजरामर लढती झाल्या. त्यामध्ये 7 एप्रिल 1924 ला ज्ञानू माने विरुद्ध गुलमहमद कलावाला. 21 ऑक्टोबर 1936 ला जगदविख्यात जर्मन पैलवान व्हॉन केमर विरुद्ध मल्लापा तडाखे, 17 मार्च 1940 गामा पंजाबी विरुद्ध शिवगौडा मुत्ताळे, 15 एप्रिल 1978 युवराज पाटील विरुद्ध सतपाल, 13 एप्रिल 1979 विष्णू फडतारे विरुद्ध रामा माने अशा अनेक राष्ट्रीय व आंतरराष्ट्रीय स्तरावरच्या कसलेल्या मल्लांच्या लढती शाहू महाराजांनी बांधलेल्या खासबाग मैदान मध्ये खेळल्या गेल्या.

समारोप :

मल्ल विद्या ही केवळ तालमीपुरती मर्यादित नाही, तर ती जगण्यासाठीही अत्यावश्यक कला आहे, अशी ठाम समजूत राजर्षी शाहू महाराजांची होती. करवीरच्या मल्लांनी उत्तरेत जाऊन धिप्पाड मल्लांना आस्मान दाखवावे यासाठी त्यांनी मोहीमच हाती घेतली. दहा कमची योजना तयार करून करवीरच्या मल्लांवर मुक्तहस्ते खर्च केला. यामुळे करवीर संस्थानात रुजलेल्या मल्लविद्येने उत्तरेतही दबदबा निर्माण केला. उत्तर भारतातल्या मल्लांनाही करवीरबद्दल कुतूहल निर्माण करणारे राजर्षी शाहू महाराज मल्लविद्येसह मल्लांसाठीही नवसंजीवनी देणारे वस्ताद वस्ताद ठरले. म्हणून शाहू महाराज एक खेळाडूसाठी प्रेरणादायी राज्यकर्ते होते.

संदर्भ सुची :

1. शाहूंच्या आठवणी : प्रा. नानासाहेब साळुंखे, चौथी आवृत्ती (25 एप्रिल 2008)
2. महाराष्ट्रातील समाज सुधारणेचा इतिहास : डॉ किशोर गव्हाणे, डॉ. एस पी. शिंदे, राजमुद्रा ऑफसेट, औरंगाबाद (2014)
3. महाराष्ट्रातील समाजसुधारक, साहित्यिक, थोर भारतीय विचारवंत व अन्य महनीय व्यक्ती : व्ही. बी. पाटील, के सागर पब्लिकेशन, पुणे (एप्रिल 2000)
4. छत्रपती राजश्री शाहू महाराज : तु.बा.नाईक, म्हता पब्लिकेशन हाऊस (1 जानेवारी 2012)

डॉ. बी. आर. आंबेडकरांचे आर्थिक विचार आणि योगदान

डॉ. दीपक एम. भारती¹ साखरे ज्योती जालंदरराव²

¹प्राध्यापक व संशोधन मार्गदर्शक, एम.एस.पी.मंडळाचे कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, किल्लेधारूर ता.

धारूर जि. बीड

²संशोधक एम.एस.पी.मंडळाचे कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, किल्लेधारूर ता. धारूर जि. बीड

jyotibhosale084@gmail.com¹ d.bharti7@yahoo.com²

प्रस्तावना:-

भारतीय राज्यघटनेचे शिल्पकार म्हणून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर सर्वज्ञात आहेत. त्याच प्रमाणे एक प्रकांड पंडित, नामवंत शिक्षणतज्ज्ञ, सव्यसाची पत्रकार, महान समासुधारक आणि दीन दलितांचे कैवारी म्हणून देखील परिचित आहेत. भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांची भारतीय जनमानसातील अेळख ही त्यांच्या समाज परिवर्तन, दलितोद्धाराचे विलक्षण प्रभावी कार्य आणि जगातील सर्वश्रेष्ठ अशा भारतीय संविधानामुळे ही ते सुपरिचित आहेत. भारत व इतर देशात ते एक थोर अर्थतज्ञ म्हणून ओळखले जातात. दलितांच्या, उपेक्षितांच्या, महिलांच्या आणि एकूणच समाजाच्या आर्थिक विकासासाठी प्रभावी उपाय योजना सातत्याने सुचविल्या आहेत.

जीवन परिचय:-

भारतरत्न डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर यांचा जन्म 14 एप्रिल 1891 मध्ये कोकणात झाला. 1907 मध्ये ते मॅट्रिकची परीक्षा उत्तीर्ण झाले. बी.ए.ची पदवी घेतल्यानंतर काही काळ बडोदा संस्थानात सेवा केली. सयाजीराव गायकवाड महाराजांच्या पाठिंब्याने ते कोलंबिया विद्यापीठात उच्च शिक्षणासाठी गेले. तेथे एम.ए.च्या पदवीसाठी त्यांनी प्राचीन भारताचा व्यापार हा प्रबंध सादर केला. 1920 मध्ये लंडन स्कूल ऍफ इकॉनॉमिक्स येथे अर्थशास्त्राचा सखोल अभ्यास करण्यासाठी दाखल झाले.डॉ. आंबेडकरांनी कोलंबिया विद्यापीठातून अर्थशास्त्र विषयात डबल एम.ए., पीएच. डी आणि लंडन विद्यापीठातून एम. एस्सी, डी. एस्सी या पदव्या मिळवल्या. अर्थशास्त्रामध्ये पीएच.डी. आणि अर्थशास्त्रामध्ये दोन डॉक्टरेट मिळवणारे डॉ. आंबेडकर हे पहिले भारतीयच नव्हे तर पहिले दक्षिण आशियाई व्यक्ती आहेत.

कारकीर्द:-

डॉ. आंबेडकरांनी अर्थशास्त्रात विपुल लिखाण केले असून, या विषयावर त्यांची तीन प्रमुख पुस्तके आहेत.

1. ऍडमिनिस्ट्रेशन अँड फायनान्स ऍफ दि ईस्ट इंडिया कंपनी
2. दि इव्होल्युशन ऍफ प्रोव्हिन्शियल फायनान्स इन ब्रिटिश इंडिया
3. दि प्रॉब्लेम ऍफ द रुपी: इट्स ओरिजिन अँड इट्स सोल्यूशन

पहिली दोन पुस्तके सार्वजनिक वित्त व्यवस्थेवरील असून, त्यातील पहिल्या पुस्तकात ईस्ट कंपनीच्या 1792 ते 1852 या काळातील वित्तव्यवहारावर भाष्य केले आहे. दुसरे पुस्तक ब्रिटिशांच्या आमदनीतील भारतातील वित्तीय व्यवहारांमधील केंद्र आणि राज्य संबंधावर भाष्य करते. हा कालखंड 1833 ते 1921 असा आहे. त्यांचे तिसरे पुस्तक चलनविषयक अर्थशास्त्रावरील एक उत्कृष्ट ग्रंथ मानला गेला आहे. या पुस्तकात 1800 पासून 1893 पर्यंतच्या कालखंडात विनिमयाचे माध्यम म्हणून भारतीय चलनाची कशी उत्क्रांती झाली. हे बाबासाहेबानी सांगितले आहे.

तसेच 1920 च्या दशकाच्या पूर्वार्धात सुयोग्य चलनाची निवड करण्यात आलेल्या अडथळ्याची ही चर्चा त्यांनी केली आहे.

भारतीय शेतीविषयक विचार :-

डॉ. आंबेडकर यांच्या मते, भारताच्या अर्थव्यवस्थेमध्ये शेतीचा विकास झाल्याशिवाय सुधारणा होणार नाही. कारण भारतीय शेतीची उत्पादकता ही अल्प आहे. भारतात शेतजमिनीचे विभाजन व विखुरीकरण मोठ्या प्रमाणात झाले असून त्यामुळे शेतीच्या उत्पादकतेवर त्याचा प्रतिकूल परिणाम झालेला आहे. यावर उपाय सुचवताना, लहान धारण क्षेत्र असलेल्या शेतजमिनीचे एकत्रीकरण करावे, जमिनीचे क्षेत्रफळ वाढेल व उत्पादकतेत वाढ घडून येईल. इतकेच नव्हे तर जमिनीवर भाडंवल व इतर उत्पादनाच्या घटकांत वाढ करणे ही गरजेचे आहे. रशियाच्या धर्तीवर सामुदायिक शेतीची पध्दती स्वीकारली पाहिजे. "State and Minorities" या ग्रंथात आंबेडकर म्हणतात की, शेती हा उद्योग राज्य शासन चालवील. लागवडी खाली नसलेली जमिन भूमिहीन लोकांना सरकारने द्यावी. या जमिनीवर कर वगैरे दिल्यावर राहिलेले उत्पन्न शेती करणा-यामध्ये वाटले जावे. "The Evolution of Provincial Finance in India" या संशोधन ग्रंथात त्यांनी भारतीय अर्थव्यवस्थेच्या संरचनेचा सिध्दांत मांडला. ईस्ट इंडिया कंपनीच्या अर्थकारणाचे विश्लेषण अत्यंत स्पष्ट व कठोर भाषेत केले आहे. प्रचंड नैसर्गिक साधनसंपत्ती असलेल्या भारतातून कच्चा माल इंग्लंडमध्ये नेणे, तेथील कारखान्यात पक्का माल तयार करणे आणि राजकीय व लष्करी शक्तीच्या जोरावर तो माल परत भारतातच आणून विकणे हा दुहेरी फायद्याचा उद्योग करून भारताची प्रचंड आर्थिक पिळवणूक कशी केली जाते हे त्यांनी लक्षात आणून दिले. ईस्ट इंडिया कंपनीने भारतीय कामगारांचे श्रममूल्य अत्यंत नगण्य ठरविले, तसेच अधिक मेहनत व कमी मोबदला हे अन्यायकारक तत्व अवलंबिले होते.

उद्योगासंबंधी विचार :-

डॉ. आंबेडकरांनी औद्योगिकीकरणाला प्राधान्य दिले. औद्योगिकीकरणातून विषमता, संपत्तीचे केंद्रीकरण, मक्तेदारी यांची वाढ होऊ नये असे त्यांना वाटत होते. काही मूलभूत स्वरूपाचे उद्योग सरकारने सुरू करून ते चालविण्यासाठी महामंडळ निर्माण करावीत, विमा उद्योगाचे राष्ट्रीयीकरण व्हावे असे त्यांना वाटत होते. औद्योगिक कामगारांच्या क्षेत्रात डॉ. आंबेडकरांनी 1936 मध्ये स्वतंत्र मजूर पक्षाची स्थापना केली. कामगारांच्या आवाज बुलंद करणा-या अन्य संघटना होत्याच मात्र त्यांना अस्पृश्य कामगारांच्या मानवाधिकारांशी काहीही देणे-घेणे नव्हते.

चलन विषयक विचार :-

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी "The Problem of the Rupee" या प्रबंधात इ.स. 1800 ते इ.स. 1883 पर्यंतच्या जवळ-जवळ 100 वर्षांच्या कालखंडात विनिमयाचे एक माध्यम म्हणून भारतीय रुपयाची उत्क्रांती कशी होत गेली व भारताला कोणती परिमाण पध्दती उपयुक्त आहे याचे सखोल विवेचन केले. त्यावेळी प्रचलित असलेल्या सुवर्ण परिमाण (अर्थव्यवस्थेतील देवाण-घेवाणीसाठी सुवर्ण नाण्यांचा वापर करणे) व सुवर्ण विनिमय परिमाण (अर्थव्यवस्थेतील देवाण-घेवाणीसाठी कागदी चलनाचा वापर करणे.) या दोहोपैकी भारताला कोणती पध्दत अधिक उपयुक्त ठरेल याविषयीचा वाद अर्थशास्त्रज्ञांमध्ये चालू होता.

प्रा.केन्स यांच्या मते, इतर अनेक देशाप्रमाणे भारताला सुवर्ण विनिमय परिमाण पध्दती ही अधिक उपयुक्त व परिणामकारक ठरेल, कारण त्यातील लवचिकतेमुळे जेव्हा हवे तेव्हा कागदी चलनाचे सोन्यामध्ये रुपांतर करता येऊ शकते. परंतु डॉ. आंबेडकर या मताशी सहमत नव्हते, त्यांच्या मते, सुवर्ण विनिमय परिमाण पध्दतीतील लवचिकता हा गुणधर्म जरी चांगला असला तरी त्यामुळे भारतातील प्रत्यक्ष चलन निर्मितीवर त्याचे काहीही नियंत्रण असणार नाही. याचा परिणाम अतिरिक्त चलन निर्मितीमध्ये होऊन देशांतर्गत बाजारपेठेमध्ये महागाई

वाढेल याचाच अर्थ, असा की रुपयाची एकूणच क्रयशक्ती कमी होईल आणि त्यामुळे विनिमयाचे साधन म्हणून रुपया अस्थिर होईल. म्हणजेच प्रचलित विनिमय पध्दती ही इंग्लंडच्या फायद्याची होती कारण पौड खरेदी करण्यासाठी भारताला अधिक रुपये द्यावे लागत होते. म्हणूनच त्यांचा या विनिमय पध्दतीला विरोध होता. यावर उपाय सुचविताना डॉ. आंबेडकर म्हणतात की, निर्गमनाची एक निश्चित मर्यादा असलेला अपरिवर्तनीय रुपया हाच स्थिर राहू शकतो आणि त्यासाठी भारताने योग्य ती पावले उचलली पाहिजेत.

श्रमविभाजन आणि अर्थशास्त्र:-

जाती व्यवस्था आणि अस्पृश्यतेसारख्या सामाजिक आजारांचे आर्थिक पैलू उलगडून दाखविणे हे एक विद्वत्तापूर्ण कार्य होय. आंबेडकरांनी 'जातीचा उच्छेद' या पुस्तकामध्ये जाती व्यवस्थेमुळे केवळ श्रमाची विभागणी केली गेली नसून, श्रमिकांचीच विभागणी केली गेली आहे. हे त्यांनी निदर्शनास आणून दिले. जाती व्यवस्थेमुळे श्रमाची आणि भंडावलाची गतिशीलता कमी झाली असून त्याचा देशाच्या अर्थव्यवस्थेवर आणि विकासावर प्रतिकूल परिणाम झाला आहे. असे त्यांचे प्रतिपादन होते.

मुल्यमापन:-

भूमिहीन, मजूर, जमिनी, खेतीपध्दती महारवतन, सामुदायिक शेती, जमीन महसूल आणि जमीनदारशाहीचे उच्चाटन या विषयावर त्यांनी वेळोवेळी विचार प्रकट केले. उदयोगांचे राष्ट्रीयीकरण, धान्य प्रश्न, समाजवाद, सामाजिक समता या विषयांवरही त्यांनी प्रासंगिक लिखाण केले होते. आर्थिक प्रगतीला हातभार लावण्यासाठी खाजगी उदयोजकांना वाव देण्याच्या आवश्यकतेचा अंतर्भाव असायला हवा. हे कार्यक्रम शाश्वत होण्यासाठी त्यांना राज्य घटनेत मूलभूत गोष्टीचा दर्जा असायला हवा. म्हणजे अशा कार्यक्रमांना विरोध असलेला राजकीय पक्ष सत्तेवर आला, तरी त्याला हे कार्यक्रम रद्द करता येणार नाहीत. या योजनेला डॉ. आंबेडकरांनी "घटनात्मक शासकीय समाजवाद" असे नाव दिले.

संदर्भ:-

1. <http://www.pudhari.com/news/kokan/20998.html>
2. <http://m.lokmat.com/storypage.php> catid=16&newsid=12442032
3. <https://atrocitynews.wordpress.com/2007/05/ambekar-my-father-in-economics-dr-amartya-sen/>
4. <https://drambedkarbooks.com/2015/07/07/what-amartya-sen-said-about-dr-ambekar/>
5. <https://drambedkarbooks.com/2015/02/23/dr-ambekar-as-an-economist/>
6. पुढारी दि. 13/04/2016 रोजीचा डॉ. नरेंद्र जाधव यांचा लेख
7. प्रा.डॉ. बाळकृष्ण माळी इतिहास विभाग, दयानंद कला व शास्त्र महाविद्यालय, सोलापूर.

दलित साहित्य पर म.फुले और डॉ.अम्बेडकर के विचारों का प्रभाव (सुशीला टाकभौरे के साहित्य के संदर्भ में)

प्रा.डॉ.संगीता विष्णु भोसले

वसुंधरा कला महाविद्यालय जुळे सोलापुर ।

प्रस्तावना:

साहित्य में विचारतत्व की प्रधानता रही है । रचनाकार की प्रभावात्मकता गहन वैचारिकता और समाज सापेक्षता पर अवलंबित होती है। भारत महामानवों की भूमि है। म.जोतिराव फुले, राजर्षी शाहू महाराज और डॉ.अम्बेडकरजी के विचार, कार्य तथा जीवन व्यवहार ने समय, सीमा, भाषा, वर्ण और वर्ण की सीमा को लाँघकर विश्वशांति का संदेश दुनिया को दिया है। महापुरुषों के प्रेरणा से निर्माण साहित्य मानवतावादी मूल्यों की स्थापना करता है। म.जोतिराव फुले द्वारा मानवतावाद के लिए जो आंदोलन छेड़ा गया था उसे डॉ.अम्बेडकरजी ने संविधान निर्माण के द्वारा साकार किया है। साहित्यकार संविधान प्रदत्त अधिकार के उपभोग के लिए समाज निर्देशन का कार्य करता है। उपेक्षित जनसमुदाय में अन्याय, अत्याचार और शोषण के विरूद्ध चेतना निर्माण करने का कार्य साहित्य के द्वारा हो रहा है। सुशीला टाकभौरे के साहित्य पर म.फुले और डॉ. अम्बेडकर के विचारों का प्रभाव दिखायी देता है। वह दलित लेखिका होने के कारण समतावादी मूल्यों की अहमियत जानती है। दलित यातना से गुजरा व्यक्ति शोषण के विरूद्ध विद्रोह करें यह सामान्य है लेकिन शोषण के स्रोत का खुलकर आच्छादन करें यह पीड़ा और चेतना का द्योतक है। दलित रचनाकारों की अभिव्यक्ति ने आंदोलन का रूप धारण किया है। साठोत्तरी हिंदी लेखिका सुशीला टाकभौरे का समस्त लेखन समता, स्वतंत्र्य, बंधुता और न्याय की पहल करता है। उनकी वेदना, विद्रोह और इन्कार ने प्रांत, परिवेश, भाषा, समाज, जाति की सीमा लाँघकर संपूर्ण मानवजाति के विकास के लिए समता, समानता, बंधुता, न्याय का उद्घोष किया है। इस क्रांतिकारी आंदोलन की विभिषिका तैयार करने का कार्य सत्यशोधक समाज द्वारा हुआ है। इसी श्रृंखला में डॉ. अम्बेडकर जी ने मनुस्मृति का दहन करके दलितों पर होने वाले अन्याय-अत्याचार का विरोध किया । दलितों में चेतना जागृत करके मानवता की सुरक्षा के लिए संविधान का निर्माण किया । भारतीय संविधान समस्त मानवजाति को मूलभूत हक और अधिकार देने का समर्थन करता है। सुशीला टाकभौरे संविधानिक अधिकार के बलबूते पर विषमतावादी समाजव्यवस्था की पोल खोल देती है। फुले-अम्बेडकरवादी विचारधारा को अपनाकर संविधान प्रदत्त अधिकारों का उपभोग लेने के लिए उपेक्षितों को प्रवृत्त करती है।

म.जोतिराव फुले और सावित्रीबाई फुले के विचारों का प्रभाव:

लगभग २०० साल पहले म.फुले जी ने भेदभावपूर्ण मानसिकता को बदलकर सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए विषम व्यवस्था से संघर्ष किया था । उन्होंने जान लिया था कि शिक्षा के बिना स्त्री और बहुजन समाज की उन्नति संभव नहीं है। उनकी महत्ता इस बात से साबित हो जाती है कि विश्वपुरुष डॉ. अम्बेडकर उन्हें गुरु मानते हैं। डॉ. अम्बेडकर लिखते हैं, “म.फुले के शिक्षा प्रसार के कार्य से ही अच्छुतों में मनुष्यता प्रतीत हुयी। आज तक जिनको अवतारी पुरुष माना जाता रहा है, उन सभी ने छूआछूत को बनाये रखने का प्रयास किया है। बल्कि यह कहना उचित होगा कि उन्होंने उसे बढ़ाने की कोशिश की । छूआछूत को दफनाने की बात एक ही पुरुष ने की है, वह है म.जोतिराव फुले ।”^१ म.फुले जी को विश्वास था कि किसी भी जाति को हमेशा के लिए दबाकर नहीं रखा जा सकता है। उन्होंने सदियों से संताप भुगत रहे दलितजनों में आत्मचेतना जागृ की । उन्हें सम्मान के लिए संघर्ष करना सिखाया । सुशीला टाकभौरे कहती

है—“सदियों से संताप रहा, फुले अम्बेडकर ने न्याय दिया, समझे तभी हम समता ,सम्मान ।”^२ कवित्री दलितों को अपने निम्नतम स्थिति का एहसास कराती है ।उन्हें ज्यातिदूत बनने का संदेश देते हुए कहती है,“जाग उठे स्वाभिमान, हम खुद को पहचाने, आलाकित कर दे तन मन,ज्यातिदूत बन जायें। ”^३म.जोतिराव फुले स्त्री को पुरुष से भी श्रेष्ठ मानते थे ।सार्वजनिक सत्यधर्म में कहते हैं,“मनुष्य का जन्म देने वाली,उसका पालन पोषण करने वाली,सभी उत्कर्ष करने वाली,संवर्धन करने वाली स्त्री पुरुष से निसंशय श्रेष्ठ है।”^४ स्त्री शिक्षा और नारी मुक्ति की विंन धारा यही से आरंभ होती है। स्त्री के दोषमत्त्व का कारण उसकी शारीरिक कमजोरी न होकर पुरुष वर्ग ने छल कपट से उसका दमन किया है।म. फुले कहते हैं,“पुरुष वर्ग ने बडे ही छलकपट से स्त्री को मानवी अधिकारों से दूर रखा है।स्त्री शिक्षा पर प्रतिबंध लगाकर उसपर अन्याय किया है।”^५ स्त्री शिक्षा के जनक म.फुले स्त्री में वितके बल को अत्यावश्यक मानते थे । गेल आम्बेट कहते हैं कि म.फुलेजी ने परिवार संस्था में परिवर्तन करने का आंदोलन सौ वर्ष पहले ही शुरू किया था । सार्वजनिक सत्यधर्म और सत्यशोधक विवाह पद्धति से उनके कार्य की महत्ता साबित हो जाती है। म.फुलेजी ने स्त्री पुरुष समानता के पक्षधर थे । उन्होंने पत्नी सावित्रीबाई के सहयोग से कुंवारी और विधवा माताओं के बच्चों का पालन किया । यशवंत को गोद लेकर उसका आंतरजातिय विवाह करवाया । सुशीला टाकभौरै इस विचार से प्रेरित होकर ‘जीवन के रंग’ नाटक के द्वारा समाज के सम्मुख आदर्श रखती है।सीता शादी के दस साल बाद भी बच्चे को जन्म नहीं दे पाती है। वह संतति प्राप्ति के लिए पूजा पाठ और व्रत उपवास में समय गवों देती है।गीता के समझाने पर अनाथालय से बेटा गोद लेती है।‘नंगा सत्य’ नाटक की नीलिमा अनाथालय से बेटा को गोद लेकर कुंवारी माता बनती है। ‘सही निर्णय’ कहानी में रिना शादी के आठ साल बाद बच्चा गोद लेकर उसकी परवरिश करती है।स्त्री को धर्म,कर्म और मोक्ष के जंजाल में फँसाकर शिक्षा से दूर रखा गया था ।उसे अबला करार देकर उसकी शक्ति से अनभिज्ञ रखा गया था ।‘व्हील वेअर’ नाटक में पत्नी सावित्रीबाई फुले के स्त्री मुक्ति के संदेश से जागत हो जाती है।पौराणिक पात्र सावित्री को आधुनिक परिवेश में व्याख्यायित किया है।फुले दम्पति ने सन १८७४-७७ में प्रौढ शिक्षा अभियान चलाया था ।‘नीला आकाश’ उपन्यास में आकाश और नीलिमा सेवानगर में प्रौढ शिक्षा की कक्षाएँ लेकर शिक्षा का प्रसार करते हैं। अतः सुशीला टाकभौरै पर दलित एवं स्त्री जाति के उध्दारक तथा स्त्री शिक्षा की प्रवर्तक सावित्रीबाई फुले के विचारों का प्रभाव दिखायी देता है।

डा.अम्बेडकर के विचारों का प्रभाव :

सुशीला टाकभौरै अपने लेखन,भाषण और सामाजिक कार्य के द्वारा शिक्षा का महत्व,सामाजिक एकता और पैतृक रोजगार से छुटकारा पाने की बात करती है।अपने सम्मान का श्रेय अम्बेडकर को देते हुए कहती है,“बाबासाहब डॉ.अम्बेडकरजी को ही मैं अपने सम्मान का श्रेय देती हूँ। उनके संघर्षों के फलस्वरुप ही हम यहाँ तक आ सके ,अन्यथा सवर्णों के बीच सम्मान की नौकरी करना क्या हम जैसे लोगों के लिए कभी संभव हो पाता?”^६डॉ.अम्बेडकर जी ने तत्कालीन सरकार को सूचित किया था,“विद्यालयों में मन पर अच्छे संस्कार किये जाते हैं। पाठशाला से तात्पर्य है अच्छे नागरिक तैयार करने का क्षेत्र शिक्षा से राष्ट्रियता का, मानवता का उदात्त कार्य संभव है।शिक्षा से अज्ञान तम नष्ट हो जाता है।”^७डॉ.अम्बेडकर ने दलितों को शिक्षा का संविधानिक अधिकार देकर उनके विकास के मार्ग खोल दिये हैं।‘संघर्ष’ कहानी में शंकर का शिक्षा का अधिकार छिनने की कोशिश की जाती है। परंतु संविधान उसके अधिकार की रक्षा करता है। कल्लू,सिलिया,नीलिमा,मुन्ना आदि पात्रों के साथ सवर्ण मास्टर और सहपाठी अपमानजनक व्यवहार करते हैं।ये दलित पात्र अम्बेडकर जी से प्रेरणा लेकर अपनी पढाई जारी रखते हैं।सुनिल, मनाली,आशा,इंदू उँचे पद की नौकरी करते हैं । दलितों से घृणा का कारण उनका पुश्तैनी व्यवसाय है।अम्बेडकरजी का मानना था कि गंदगी साफ करना,मरे हुए ढेर उठाना, चमडा उतारना, मैला ऐना इस घृणित व्यवसाय के कारण ही सवर्ण दलितों से घृणा करते

है। जातिगत व्यवसाय से छुटकारा पाकर ही दलित सम्मान का जीवन जी सकेंगे। 'जन्मदिन' कहानी का प्रेम कहता है, "मेरा पप्पू सफाई मजदारी बने, मैलागाड़ी चलाये, सिर पर मैला ढोए यह बात मैं कभी बरदाश्त नहीं कर सकता। दलितों के उन्नति का एकमात्र मार्ग शिक्षा संगठन और संघर्ष है। सुशीला टाकभौरे दलितों को अम्बेडकर के संदेश की याद दिलो हुए आत्मसम्मान का भाव जागृत करती है। वह कहती है, "बाबासाहब डॉ. भिमराव अम्बेडकर ने संपूर्ण दलितों को एकता के सूत्र में बाँधकर एक होने का संदेश दिया था। एकता और संगठन से ही हम अपने अधिकार पा सकेंगे। शिक्षा, संगठन ही सामाजिक समता पाने का आधार है।"⁸ उच्चवर्ग दलितों को परंपरागत रूप में देखने का अभ्यासी है। इसलिए उसे उच्च पदस्थ दलित भी किचड से सना हुआ ही दिखता है। उनके लिए दलितों की बौद्धिकता और योग्यता कोई मायने नहीं रखती है। अम्बेडकर सवर्ण की जातिवादी मानसिकता बदलना चाहते थे। सुशीला टाकभौरे कहती है, "हम कुछ भी बन जाये, कुछ भी पाले फिर भी जातिव्यवस्था का संरक्षक हिंदू धर्म हमारे साथ हमेशा भेदभाव करेगा। हिंदू धर्म को मानने वाले वर्णवादी, जातिवादी सवर्ण हमारे साथ अन्याय करते रहेंगे और हम धोखे की मुठ्ठी में पडकर सदियों की अन्याय की चक्की में दुख, पीडा, वेदना और बेचैनी के साथ पिसते रहेंगे।"⁹ डॉ. अम्बेडकर का संपूर्ण संघर्ष उपेक्षितों को मानवता का अधिकार दिलाने के लिए था। इस संघर्ष से प्रभावित सुशीला टाकभौरे की वैचारिकता में मानवीय अधिकार का पक्ष प्रबल है। क्योंकि अम्बेडकर कहते हैं, "इंसान की गुलामी जब उसके मन पर लाद दी जाती है तब वह इंसान नहीं रहता। वह मात्र गुलाम बनकर रह जाता है। ऐसा गुलाम जिसका तन, मन, विचार, भावना कुछ भी उसका अपना नहीं होता। वह गुलामी लादने वालों के हाथ की कठपुतली बनकर रह जाता है। भावहीन, विवकेशून्य, गन्धबोध से हिन मात्र यांत्रिक जीव।"¹⁰

डॉ. अम्बेडकर का संघर्ष मानवाधिकार के प्राप्ति के लिए था। वे दलित जाति अंतर्गत उच्चनीच की भावना को नष्ट करते हुए एकता निर्माण करना चाहते थे। जातिअंतर्गत उच्चनीच के कारण दलितों शक्ति खण्डित हो गयी थी। दलितों में आपसी मनमुटाव होने के लिए रेटी –बेटी व्यवहार आवश्यक है। लेखिका 'नीला आकाश' उपन्यास में मांतग, वाल्मीकि और महार जाति के लोगों में एकता और भाईचारा निर्माण करती है। जातिअंतर्गत भेदभाव का मिटाने हेतु आकाश कहता है, "डॉ. अम्बेडकर ने सभी शूद्र, अछूत, शोषित, पीडित, दलित, पिछड़ी जातियों के उत्थान के लिए बहुत संघर्ष किया है। उनके कार्यों और जीवन के अनुभवों को आप सुनो और समझो।"¹¹ नीलिमा सेवानगर के सभी दलितजनों को संगठित करती है। वह कडवा सच बताती है कि आपसी उच्चनीच भेद के कारण सवर्ण उनपर अत्याचार करते हैं। संगठित होकर इसका विरोध किया जा सकता है। इसलिए आपसी भेद मिटाकर एकता की ताकत को बढ़ाना होगा। नीलिमा और आकाश अम्बेडकर जयंती समारोह के द्वारा दलितों में डॉ. अम्बेडकर के विचारों का प्रचार प्रसार करते हैं। नीलिमा कहती है, "केवल महाराष्ट्र के ही नहीं बल्कि पूरे देश में अछूत दलित जाति के लोग अपने नेता डॉ. अम्बेडकर की जयंती मनाते हैं। इन्होंने ही अपने देश का संविधान लिखा है और संविधान में हमें सवर्णों के बराबर शिक्षा और नौकरी के अधिकार दिए। उनके बताए मार्ग पर चलकर ही हम आगे बढ़ सकेंगे।"¹² 'रंग और व्यंग्य' नाटक में अम्बेडकरवादी चेतना से संपृक्त छबो पटेल को मुंहतोड जवाब देती है। जूठन का टोकरा पटेल के दरवाजे पर औंधा कर देती है। गीता और रामेश्वर अम्बेडकरवादी आंदोलन में सक्रीय सहभाग लेते हैं। 'नंगा सत्य' नाटक में कमल और कृपाशंकर दलितों पर होनेवाले अन्याय और अत्याचार के खिलाफ आंदोलन करते हैं। सुशीला टाकभौरे अम्बेडकरजी के सामाजिक और राजनीतिक आंदोलन से दिशाज्ञान प्राप्त करती है।

अतः अम्बेडकरवादी लेखिका सुशीला टाकभौरे के साहित्य में अम्बेडकर की चिंतनधारा निरंतर प्रवाहीत होती है।

निष्कर्ष:

भारत में लिंगभेद, जातिभेद और वर्णभेद की समस्या प्राचीन काल से वर्तमान काल में भी विद्यमान है। इस मानव विघातक व्यवस्था ने देश की एकता और अखण्डता को विश्रुंखल कर दिया है। देश की एक तिहाई जनता को शूद्र से दलित का संबोधन प्राप्त करने की यात्रा में अनेक कष्ट सहन करने पड़े हैं। दलित साहित्य किसी वर्ग विशेष के लिए प्रयुक्त न होकर आंदोलन बन गया है। इस आंदोलन की ऊर्जा म.फुले और अम्बेडकर की विचारधारा है। सुशीला टाकभौरै म.फुले और अम्बेडकर के कार्य से प्रेरणा लेकर दलितों में चेतना का संचार करती हैं। उनके साहित्य के समस्त पात्र शिक्षा, संगठन और संघर्ष के मूलमंत्र पर अंमल करते हैं। म.फुले जी के विचारों से संप्रवृत्त पात्र सामाजिक परिवर्तन के लिए शिक्षा को अनिवार्य मानकर समाज को शिक्षित करने का व्रत लेते हैं। स्त्री-पुरुष समानता के लिए स्त्री और पुरुष की स्त्रीवादी मानसिकता बदलने के लिए आत्मपरीक्षण करने का संदेश देते हैं।

संदर्भ ग्रंथ संकेत:

१. संपादक वसंत मून, हरि नरके-डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर लेखने आणि भाषणे, खण्ड १८, भाग १, पृष्ठ १६८
२. डॉ. सुशीला टाकभौरै-हमारे हिस्से का सूरज पृष्ठ ७८
३. वही, पृष्ठ ८७
४. जोतिराव गोविंदराव फुले-सार्वजनिक सत्यधर्म ९-१०
५. संपादक धनंजय कीर, डॉ. स. गं. मालशे, डॉ. य. दि. फडके- महात्मा फुले समग्र वाडमय ३७७
६. डॉ. सुशीला टाकभौरै-शिकंजे का दर्द, पृष्ठ २३०-२३१
७. धनंजय कीर-डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, पृष्ठ ८७
८. डॉ. सुशीला टाकभौरै-संघर्ष, पृष्ठ ३८
९. डॉ. सुशीला टाकभौरै- शिकंजे का दर्द, पृष्ठ २७६
१०. वही, पृष्ठ २३४
११. डॉ. सुशीला टाकभौरै-संघर्ष, पृष्ठ ३७
१२. डॉ. सुशीला टाकभौरै-नीला आकाश, पृष्ठ ८७
१३. वही, पृष्ठ ८१

महात्मा जोतीराव फुले यांचे राजकीय विचार

प्रा.घाडगे सोमनाथ व्यंकटी

इतिहास विभाग जयभवानी शिक्षण प्रसारक मंडळाचेकला व विज्ञान महाविद्यालय,पाटोदा,ता.पाटोदा,जि.बीड.
ghadgesv120@gmail.com.

प्रस्तावना :

फ्रेंचराज्य कांतीनतर अनिर्बंध राजेशाहीचे दिवस संपुष्टात आले. स्वातंत्र,समता,बंधूता व न्याय या मानवी मूल्यांची जगामध्ये मागणी समाजकडून होऊ लागली. भारतामध्ये मात्र ब्रिटीशांच्या राजवटीमध्ये भारतीय जनता अज्ञान,अंधश्रद्धा, धर्मभोळेपणा व दारिद्र्यमध्ये जगत होती. या काळात महाराष्ट्रात धर्म सुधारणांची चळवळ शास्त्रप्रामाण्याच्या चौकटीत सुरु झाली होती. या पार्श्वभूमीवर महात्मा जोतीराव फुले यांचा कर्ते समाजसुधारक व विचारवंत म्हणून उदय झाला. महात्मा फुले यांनी अनेक चिकित्सक ग्रंथ लिहिले त्यामधून व इतर मागणी शुद्धातिशुद्धांच्या दास्याचा, शेतकरी,कामगार दास्याचा व स्त्रियांच्या गुलामगिरीचा चिकित्सक पध्दतीने अभ्यास करून त्याची कारणे व उपाय सांगितले. ब्राह्मणी धर्माने वर्ण व्यवस्था व जातिसंस्था शुद्धातिशुद्ध व स्त्रियांच्या शोषणासाठी जाणिवपूर्वक निर्माण केल्याचे चिकित्सक पणे सांगितले. ब्राह्मणी धर्माने जातिसंस्था पितृसत्ता निर्माण करण्यासाठी धर्मग्रंथामार्फत कायदा,रुढी-परंपरांची निर्मिती केली. रोटी-बंदी,बेटी- बंदी, ज्ञानबंदी, इत्यादी निर्बंध लादून समाजात विषमता निर्माण केल्याचे महात्मा फुले सांगतात त्यामुळेच महात्मा फुले धर्मग्रंथांवर चिकित्सक हल्ला करतात.

महात्मा फुले बळी राजाचे ऐतिहासिक मिथक सांगून तो न्यायी,पराक्रमी, प्रजाहितदक्ष ,उदार राजा होता असे सांगतात १ कपटी वामनाने बळीस ठार केल्याचे सांगतात बळीच्या आदर्श चिंतनातून महात्मा फुले यांना जातीअंताच्या समाजकांतीचा विचार समाजामध्ये रुजवायचा होता.

धर्मग्रंथाच्या मार्फत आर्यांनी राजकारण करण्याचे कपट केले. ज्या अविद्येमुळे शुद्धातिशुद्ध त्या कपटाला बळी पडले ती अविद्यानष्ट करणे व समाजात ज्ञान प्रसार करणे हे महात्मा फुले यांना अत्यंत आवश्यक वाटत होते. वर्ण जातीभेदावर टिकून असलेली ब्राह्मणशाही संरजामदारी व्यवस्था मोडून टाकावी. सत्यधर्माच्या समताधिष्ठित, सर्वसमावेशक विश्वकूटूंबात्मक व कष्टक-यांची सत्ता असलेल्या आदर्श राज्याची स्थापना महात्मा फुलेंना आपेक्षित होती.

शोध निबंधाची उद्दिष्टे :

१. महात्मा जोतीराव फुले यांच्या राजकीय विचारांचा अभ्यास करणे.
२. महात्मा जोतीराव फुले यांच्या राजकीय विचारांचा समाजावरील प्रभाव अभ्यासणे.
३. महात्मा जोतीराव फुले यांच्या राजकीय विचारांचे आजच्या काळातील महत्वअभ्यासणे.

शोध निबंधाची ग्रहितके :

१. महात्मा जोतीराव फुले यांचे राजकीय विचार अत्यंत महत्वाचे आहेत.
२. महात्मा जोतीराव फुले यांच्या राजकीय विचारांचा प्रभाव समाजामध्ये मोठ्या प्रमाणात पडला आहे.
३. महात्मा जोतीराव फुले यांचे राजकीय विचार बरोबरच इतर विचारही आजच्या काळात अत्यंत महत्वाचे आहेत.

महात्मा जोतीराव फुले यांचे राजकीय विचार :

महात्मा फुले यांचे समताविशयक विचार :

महात्मा फुले यांनी टॉमस पेन यांचा राईट्स ऑफ मॅन ग्रंथ व त्याबरोबरच इतर विचारवंतांचा अनेक ग्रंथांचा अभ्यास केला होता. त्यांनी मानवासाठी समतातत्वाचा अत्यंत प्रभावी पणे विचार मांडला होता. २ भारतामध्ये हजारो वर्षांपासून धर्मग्रंथांनी निर्माण केलेली विषमता ईश्वर निर्मित असल्याचे सांगून शोषितांना संघटित होऊ नये म्हणून वर्ण जातिभेदाचे थोताड उभे केले, स्वार्थ साधेल असे ग्रंथ शोषकांनी निर्माण केले अशा प्रकारे शुद्धातिशुद्धांना कडेकोट गुलामगिरीत टाकून स्वतः ऐषाराम उच्च वर्णीयांनी भोगले . शुद्धातिशुद्धांना ज्ञानबंदी व धनसंचय बंदी घालून कायमचे दरिद्री ठेवले असे महात्मा फुले म्हणतात.

सर्व मानवप्राणी एकाच ईश्वराची लेकरे असल्यामुळे त्यांचे सर्व हक्क ही समान असले पाहिजेत. सत्यशोधक समाजा मार्फत महात्मा फुले यांनी सर्वांना बंधुभाव आचरणात आणण्याचे शिक्षण दिले ३.

निसर्गातल्या सर्व गोष्टी निर्मिकाने सर्वासाठी मुक्त वापर व्हावा म्हणून निर्माण केलेल्या आहेत. सर्व माणसांना सारखीच पंचद्रिय व विचारशक्ती निर्मिकाने दिलेली आहे. त्यामुळे माणसांनी परस्परांशी वगतांना समतेच्या तत्वाचे पालन करावे असे महात्मा फुले म्हणतात. सत्यधर्माची त्यांची संकल्पना यातूनच निर्मित झालेली आहे. कष्टकरणा-या शेतकरी, मजूर, यांना त्यांच्या कष्टाचा योग्य मोबदला मिळाला पाहिजे. जन्मसिद्ध श्रेष्ठत्व व कनिष्ठत्व या कल्पना महात्मा फुले यांना मान्य नाहीत. सामाजिक, मानसिक, आर्थिक व शैक्षणिकदृष्ट्या मागास ठेवल्या गेलेल्या समाजाचा वेगळा विचार करून त्यांना इतरांच्या बरोबर आणले तरच त्यांना समान संधीचा लाभ घेता येईल याचे भाव राज्यकर्त्यांनी ठेवावे असे महात्मा फुले म्हणतात.

महात्मा फुले यांनी स्त्रीपुरुष समतेचा सातत्याने पुरस्कार केला. भारतातील स्त्रीमुक्तीचे ते आद्यप्रवर्त होते. स्त्री दास्याच्या कारणांचा त्यांनी अभ्यास केला. एकूण हिंदू संस्कृतीचा पितृसत्ताक पध्दती व विषमसमाज रचनेचा त्यांनी सखोल अभ्यास केला व त्यातून बाहेर पडण्याचा मार्ग सांगितला. ४ स्त्री आणि पुरुष दोघांनाही एकाच निर्मिकाने निर्माण केलेले आहे. त्यामुळे त्यांना सारखेच अधिकारही दिलेले आहेत. परस्परांच्या हक्काबद्दल त्यांनी आदर करावयास हवा. सर्व धर्माची पुस्तके पुरुषांनीच लिहिलेली आहेत. त्यामुळे स्त्रियांचे न्याय हक्क पुरुषांनी धर्मग्रंथांमधून नाकारलेले असे महात्मा फुले म्हणतात. समाजातील वर्णभेद, जातिभेद व लिंगभेद यामुळे निर्माण होणारी सामाजिक, आर्थिक, विषमता नष्ट करून सामाजिक समता प्रस्थापित करण्याचे क्रांतीकारी उपाय महात्मा फुले सांगतात.

महात्मा फुले यांचे ब्रिटिश राज्यसत्तेविषयी विचार :

ब्रिटिश राजवटीने विचारस्वातंत्र्य व मुद्रण स्वातंत्र्य मिळवून दिले. त्यामुळे आपण शुद्धातिशुद्धाची दुखे जगासमोर मांडू शकलो. इंग्रज राज्यकर्त्यांनी स्त्री शुद्धांसाठी शिक्षणाची दारे खुली केल्यामुळे समाजातील या घटकांना फायदा झाला असे महात्मा फुले म्हणतात. ७ पण राजकिय सत्ता घेण्याइतपत जाग्रती बहूजन समाजाच्या ठिकाणी आलेली नव्हती. राष्ट्रभक्तीच्या राजकारणापेक्षा वंचित घटकावरील अन्याय दूर होणे त्यांना आवश्यक वाटत होते. समतेचाच स्वतंत्राला काही अर्थ नाही. ब्रिटिश सत्तेकडून आपले हक्क मागणारी मंडळी स्वतःचे हक्क शुद्धातिशुद्धांना द्यायला तयार नव्हते. दलितशोषितांना माणूसपणाची प्रतिष्ठाही देण्याचे ते नाकारत होते. या विसंगतीवर महात्मा फुले टिका करतात. महात्मा फुले यांनी ब्रिटिश राजवटीविषयी चिकित्सक ठिका केलेली आहे. वरच्या पदावरील ब्रिटिश अधिकारी ऐषआरामात दंग असतात. शेतकरी कष्टकरांची खरी परिस्थिती ते समजून घेत नाहीत. त्यांच्या हाताखालच्या ब्राम्हण कर्मचा-यांवर सर्व सोपवतात. गरिबांची चहूबाजूंनी कोडी केली जाते. रेव्हेन्सुखाते त्यांना लुबाडते, न्याय खाते त्यांना खेडे घालायला लावते. सरकारी खात्यातील लाचलुचपत व भ्रष्टाचार रयतेला न्यायापासून वंचित ठेवतो. महात्मा फुले यांसाठी ब्रिटिश राजवटीलाच जबाबदार धरतात. देशातील पुरोहितशाही, नोकरशाही, व सावकारशाही यांनी ब्रिटिश सरकारला फसवून शुद्धकुणब्यांची आर्थिक पिळवणूक चालवली आहे अशी टिका महात्मा फुले करतात. ६

महात्मा फुले यांचा राजकिय सत्तेविषयी विचार :

समाजपरिवर्तनाचे एक साधन म्हणून राजकिय सत्ता फार महत्त्वाची भूमिका बजावते. सत्ता हातची गेली की माणसाचा स्वाभिमान व कृतत्व नाहिसे होते हे शुद्धातिशुद्धांच्या गुलामगिरीचे उदाहरण देऊन महात्मा फुले सांगतात. आर्य-अनार्य यांच्यातील संघर्षाच्या कथामधून सत्तास्पर्धेचे स्वरूप, सत्ताप्राप्ती व ती टिकवण्यासाठी आणि देव आणि दैत्य यांच्यातील लढा सत्तेसाठी संघर्ष होता असे महात्मा फुले म्हणतात. बहुसंख्य जनता सत्तावंचित राहणे हे राज्यकर्त्यांच्या दृष्टीने वाईटच असते. श्रमिक जनतेला सत्तासंपत्तीचा योग्य वाटा मिळणे हे उत्तम राज्यसत्तेचे लक्षण आहे. श्रमिकांना त्यांचा न्याय वाटा मिळतो तेव्हा सामाजिक उर्जेची पातळी उंचावते आणि जेव्हा तो नाकारला जातो तेव्हा ती खालावते. सामाजिक उर्जेची पातळी जेव्हा उंच असते तेव्हा समाजातील सर्व व्यक्ती स्वतःहुनच सत्यवर्तन करतात. अशा परिस्थितीत दंड शक्तीची गरज उरत नाही. बळीचे राज्य हा ज्योतीरावांच्या मते अशा कमीत कमी दमनशक्तीचा आदर्श होता. अहिंसक समाजव्यवस्था निर्माण झाली म्हणजे मग सर्व जनता परस्परांशी प्रेमाने व सहकार्याने वागतील असे महात्मा फुले म्हणतात.

महात्मा फुले लोकशाही आणि स्वातंत्र्यविषयी विचार :

कोणत्याही राज्यपध्दतचे प्रयोजन सार्वत्रिक सुख निर्माण करण्याचेच असले पाहिजे असे महात्मा फुले यांना वाटते. अमेरिकेतील निग्रोच्या मुक्ती संग्रामाबद्दल त्यांना अस्था होती. लोकसत्ताक

राज्यव्यवस्थेचा आदर्श म्हणून त्यांनी बळीच्या राज्याचे वर्णन केलेले आहे. महाराष्ट्राच्या लोक परंपरेत बळीला शेतक-यांचा राजा मानले जाते. मनुष्याला स्वतंत्रता असणे ही एक मोठी जरूरीची बाब आहे. विचार स्वतंत्र, व आचार स्वातंत्र याचे महत्त्व महात्मा फुले यांनी सांगितले आहे. सामाजिक, आर्थिक, राजकीय दृष्टींनी विषम व विभक्त असलेल्या समाजात वरिष्ठांचे स्वातंत्र्य म्हणजे दीनदुबळ्यासाठी अंतर्गत गुलामी, बिगारी आणि संघटित जुलूमशाही ठरण्याची शक्यता सदैव असते, त्यामुळे खरे लोकसत्ताक राज्य निर्माण करावयाचे असेल तर सत्ता ही स्यतेला सर्व प्रकारच्या दास्यांतून मुक्त करणारी व बौद्धिक व आर्थिक क्षमता प्रदान करणारी असावी लागते असे महात्मा फुले म्हणतात.त्यांना अभिप्रेत असलेली लोकशाही विशिष्ट राज्यासाठी नव्हती तर विश्वमानवतावादाला स्विकारणारी होती सर्व जगातील लोकांनी आपल्या आपत्यांना सत्यज्ञान दिल्यास सगळे लोक सदगुणी होतील कोणीच कोणावर स्वारी करणार नाही. सर्व फौजफाटे निरर्थक होतील. महात्मा फुले यांनी मानवी स्वातंत्र्याला फार महत्त्व दिलेले आहे.

महात्मा फुले यांचे पत्रकारितेविषयी विचार :

पत्रकारांनी पाळावयाच्या आचारसंहितेबाबत महात्मा फुले यांनी विचार मांडलेले आहेत स्वतःच्या आचरणात काळेबेरे असलेल्या या पत्रकारांनी इतरावर विखलफेक करण्यापूर्वी आत्मपरिक्षण करावे स्वतःला गैर सोयीची असलेली वस्तुस्थिती ही प्रमाणिकपणे मान्य करून लेखनाद्वारे ती वाचकांसमोर ठेवावी. समाजहिताचे भान कधीही सुटू देऊ नये. पुरावे देऊनच कोणतेही विधाने करावीत. अशा प्रकारे महात्मा फुले यांनी पत्रकारांना मोलाचा उपदेश केलेला आहे.

सारांश :

महात्मा जोतीराव फुले देशातील महान समाजसुधारक व विचारवंत होते. त्यांचे विचार अत्यंत महत्त्वाचे व क्रांतीकार आहेत. आजही त्यांच्या सर्वांगीण विचारी समाजाला दिशा देण्यासाठी व विकासासाठी आवश्यकता आहे. महाराष्ट्रातील प्रबोधन काळाची सुरवात स्व-या अर्थाने त्यांच्यापासून सुरु होते. आजही त्यांचे विचार आपल्या देशाबरोबर जगाला मार्गदर्शन करणारे आहे. त्यांच्या दृष्टीने गुलामगिरीचा अर्थ केवळ राजकीय पारतंत्र्यापुरता मर्यादित नव्हता. कष्टकरी, स्त्री शुद्धातिशुद्धांतर होणारे अन्याय, पुरुष सत्ताक पध्दती, धर्मग्रंथांनी निर्माण केलेली पुरोहितशाही, सावकारशाही, नोकरशाही यांनी आडवणूक करून समाजाला कोणी वाली नाही अशी अवस्था झाली होती. त्यावेळी महात्मा फुले यांनी आमुलाग्र सामाजिक परिवर्तन करण्यासाठी नवमूल्यावर आधारित समाज घडवण्यासाठी क्रांतिकारी विचारांची मांडणी केली व कार्य केले.

स्वातंत्र्य, समता व बंधुता या नवमूल्यावर समाज उभारण्यासाठी स्त्रीशुद्धादिकांना जाग्रत करण्यासाठी त्यांच्या हवकांसाठी वर्ण जातीभेद निर्मूलनासाठी महात्माफुले यांनी सर्व आरुष्य खर्च केले. त्यांनी दलित-शोषितांच्या मनात नवा आत्मविश्वास निर्माण केला. त्यांनी मांडलेले राजकीय विचार आजही अत्यंत मोलाचे आहेत.

निष्कर्ष :

१. महात्मा जोतीराव फुले यांचे राजकीय विचार आजच्या राज्यकर्त्यांना मार्गदर्शक आहेत.
२. महात्मा फुले यांच्या राजकीय विचारांचा फार मोठा प्रभाव समाजावर जाणवतो.
३. महात्मा फुले यांच्या विचारांचे महत्त्व देशामध्ये व जगामध्ये मान्यताप्राप्त झाले आहे.

संदर्भ ग्रंथ :

१. डॉ.बागडे उमेश, महाराष्ट्रातील प्रबोधन आणि वर्ग जाति प्रभुत्व,सुगावा प्रकाशन पुणे, २००६, पृ.३३७
२. डॉ.भोळे भास्कर,आधुनिक भारतातील राजकीय विचार, पिंपळापुणे पब्लीशर्स,नागपूर, २००३, पृ.८०७.
३. अंधारे रमेश,मुद्रा महाराष्ट्राची,इंडिया प्रिंटिंग हाउस,मुंबई, २०१०, पृ.८७
४. डॉ.खोब्रागडे हर्षानंद, डॉ.गरोडे प्रमोद,महात्मा फुले यांचे विचार, देवयानी प्रकाशन,मुंबई २००८ पृ.६८,महात्मा फुले जोतीराव ,सार्वजनिक सत्यधर्म,संदर्भ प्रकाशन,औरंगाबाद,२०१६,पृ.७७
५. महात्मा फुले जोतीराव ,गुलामगिरी, कौशल्य प्रकाशन, औरंगाबाद,२०१८, पृ.८२.

महात्मा फुले यांचे कृषि विकासविषयक चिंतन

डॉ. जयदेवी पवार

कै. व्यंकटराव देशमुख महाविद्यालय, बाभळगाव, ता.जि.लातूर

jaydevik123@gmail.com

भारतीय समाजप्रबोधनाची दशा आणि दिशा निर्धारित करण्याच्या कार्यात बुद्धीवाद्यांचा व उदारमतवादाचा मोठा वाटा आहे. विविध सामाजिक प्रश्नांचे स्वरूप व त्यांची चिकित्सा करण्यासाठी बुद्धिवादी दृष्टिकोनाची मोठी मदत झाली. परंतु येथील काही विचारवंतांना इंग्रजविरोधी माध्यमातून प्राप्त झालेल्या उदारमतवादाच्या आधारे एका विशिष्ट मर्यादेच्या पलीकडे जाता आले नाही. परंपरागत स्थितीशीलतेचा त्याग करून ते गतिशील बनले. समाज सुधारणावादाची मर्यादित कक्षा ओलांडता आली नाही, पण महात्मा फुले यांनी अखंडपणे समाजसुधारणा करिते गेले. फुले हे प्रत्यक्षात सामाजिक संघर्षात उभे राहिले.

निसर्गातील बदलत्या परिस्थितीनुसार सजीव प्राण्यांमध्येही बदल होत गेला. मानव उत्पत्ती झाल्यापासून नैसर्गिक पध्दतीने जीवन जगत होता. मानवाचा विकास टप्प्याटप्प्याने झाला. फळे, कंदमुळे खाऊन उदरनिर्वाह करित होता. यातून पोटभरण्याच्या गरजेतूनच शेतीचा शोध लागून शेती व्यवसायास प्रारंभ झाला. मानवाने श्रमाच्या जोरावर मोठ्या प्रमाणात बदल घडवून आणला. शेतीच्या विकासासाठी विविध आराखडे आखण्यात आले. परंतु ते कागदावरच राहिले. हजारो वर्षांपासून चालत आलेल्या रुढी, प्रथा, परंपरा, अंधश्रद्धा या गोष्टी शेती विकासाला अडथळा निर्माण करू लागल्या आणि आजही त्या अडथळा ठरत आहेत. शेतकऱ्यांचे शोषण वेगवेगळ्या पध्दतींनी केले जात आहे.

क्रांतिकारक विचार :

महात्मा फुले स्वतः शेतकरी होते. भारतातील माणूस हा वेदपुराण, महाकाव्य, संस्कृतीवर विश्वास ठेवून जीवन जगतो. हे सांस्कृतिक ग्रंथ मानवाच्या कल्याणाचा विचार करित नाहीत. आजही समाज भाकडकथांवरी विश्वास ठेवून जीवन जगतो आहे. प्राचीन काळापासून शेतकऱ्यांवर अन्याय झाला आहे. शेतकऱ्यांच्या मनावर देवांच्या नावाखाली भीतीदायक काही गोष्टी बिंबवल्या आहेत. त्या पध्दतीने जो जीवन जगतो आहे. महात्मा फुले म्हणतात,

इडा पिडा मर्दून। सेवा बळिराजाला।

स्वतः श्रम करून जो पोसे स्वकुटुंबाला।

त्यांनी शेती व शेतकऱ्यांसाठी त्यांच्या पिकासाठी मूलभूत स्वरूपाचे विचार मांडले. भारतात ७५ टक्के लोक शेती करतात परंतु तरी ही शेतकरी सुधारला नाही. याची अनेक कारणे आहेत. त्यासाठी महात्मा फुले यांचे विचार अमलात आणले पाहिजेत. महात्मा फुले यांनी गुलामगिरी, शेतकऱ्यांचा असूड, इशारा यासारखे ग्रंथ लिहून समाजव्यवस्थेचे चित्रण केले. 'शेतकऱ्यांचा असूड' या ग्रंथाची सुरुवात क्रांतिकारक कथनाने केली.

विद्येविना मती गेली। मतीविना नीती गेली।

नीतीविना गती गेली। गतीविना वित्त गेले।

वित्ताविना शूद्र खचले। इतके अनर्थ एका अविद्येने केले।

अज्ञान, अंधश्रद्धा यामुळे भारतातील शेतकरी आधुनिक युगामध्ये अतिशय हलाखीचे जीवन जगतो आहे. शेतकऱ्यांचे शोषण वेगवेगळ्या पध्दतींनी होत आहे. धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, राजकीय या पध्दतीने शोषण होत आहे.

संस्कृतीच्या नावाखाली सण, उत्सव, रूढी, परंपरा आजही पार पाडल्या जातात. यात मानवतावादी व विज्ञानवादी विचाराने परिवर्तन झाले पाहिजे. स्वातंत्र्यपूर्व व स्वातंत्र्यानंतर शेतकरी समर्थपणे जीवन जगत नाही. शेतकऱ्यांचे शोषण करणारे अनेक घटक आहे, त्यात सरकार, सावकार, व्यापारी, ब्राह्मण, कारखानदार यांचाही समावेश होतो. फुले म्हणतात,

ब्राह्मणी वकील खोटी स्टॅम्प करी।

दगेबाज परि। गोऱ्या नाडी।

त्या काळातील व आजही शेतकऱ्यांची स्थिती अतिशय वाईटच आहे. भारतीयांचे उद्वेगन करणाऱ्या शेतकऱ्यांची अवस्था पूर्वीपासूनच अत्यंत वाईट होती, आजीही आहे. पुरोहितशाहीच्या, सावकारशाहीच्या, सरकारी कर्मचाऱ्यांच्या आणि अज्ञान व भोळ्याभावड्या संकल्पनांच्या फासात तो अडकला आहे. 'शेतकऱ्यांचा आसूड' मध्ये फुले म्हणतात, आता मी हल्ली सालचा शेतसारा द्यावा तरी कुठून? बागायती शेतीत नवीन मोटा विकत घेण्याकरिता जवळ पैसा नाही. जुन्या तर अगदी काढून त्यांची चाळण झाली आहे, उसाचे बाळगे मोडून हुंडीचीही तीच अवस्था झाली आहे. मग काही खुरपणी वाचून वाया गेली. भूस सुरून बरेच दिवस झाले आणि सरभड गवत कडव्यांच्या गंजी संपत आल्या आहेत. जनावरांना पोटभर चारा मिळत नसल्यामुळे कित्येक धट्टेकट्टे बैल उठवणीस आले आहेत. सुना-बाळांची नेसण्याची लुगडी फाटून चिंध्या झाल्यामुळे लग्नात घेतलेली मौल्यवान जुनी पांघरणे वापरून त्या दिवस काढित आहेत. शेती खपतणारी मुले वस्त्रांचाचून इतकी उघडबंब झाली आहेत की, त्यांना चारचौघांत येण्यास लाज वाटते. घरातील धान्य सरत आल्यामुळे रताळयावरून निर्वाह चालू आहे. घरात माझ्या जन्म देणाऱ्या आईच्या मरते वेळी तिला चांगलेचुंगले गोडधोड घालण्यापुरता मजजवळ पैसा नाही. याला उपाय तरी काय करावा? बैल विकून जर शेतसारा द्यावा तर पुढे शेती जी कोणाच्या जीवावर ओढावी? आपला देश त्याग करून परदेशात जावे तर मला पोटभरण्यापुरता काही हुन्नर ठाऊक नाही. कन्हेरीच्या मुळ्या मी वाटून प्याल्यास कर्ती धर्ती मुले आपली कशी तरी पोटे भरतील परंतु माझा जन्म देणाऱ्या वृद्ध बयस व बायकोसह माझ्या लहान सहान चिटुकल्या लेकरास अशा वेळी कोण सांभाळणार? त्यांनी कोणाच्या दारात उभे राहावे? त्यांनी कोणापाशी आपले तोंड पसरावे? 'शेतकऱ्यांचा आसूड' (पेज.नं. २९८) म्हणजे शेतकऱ्यांचे दुःख दैन्य, अगतिकता, असहायता त्या काळात फुलेनी मांडली. विष घेऊन म्हणजे आत्महत्येचा विचार त्यांनी केला. आजही तोच शेतकरी आत्महत्या करतो आहे.

शेतीसंबंधी विकास योजना :

शेती व शेतकऱ्यांच्या विकासासाठी विविध योजना अमलात आणल्यात. शेतसारा कमी करावा, 'पाणी अडवा पाणी जिरवा', दुष्काळग्रस्त शेतकऱ्यांना कर्ज व शेतसारा माफक करावा. शेतकऱ्यांना आधुनिक तंत्रज्ञानाचे प्रशिक्षण द्यावे तत्संबंधीची ग्रंथे त्यांना उपलब्ध झाली पाहिजेत. उत्तम बैल त्यांना मिळाले पाहिजेत, जनावरांसाठी जंगले मोकळी राहिली पाहिजेत, ठिकठिकाणी असणाऱ्या पाण्याचा शोध घेतला पाहिजे. पिकांचे संरक्षण होण्यासाठी पिकांवर पहारे बसविले पाहिजेत इत्यादी. अनेक विविध उपाय शेती सुधारण्यासाठी महात्मा फुले यांनी सुचविले आहेत. यावरून फुले यांच्या दूरदृष्टीपणाचा प्रत्यय येतो. शेतकऱ्यांविषयीची तळमळ दिसून येते. तत्कालीन प्रशासन जुलमी होते आणि आजही तेच पाहात आहोत. महात्मा फुले यांनी शेतकऱ्यांच्या विकासासाठी शेतकरी बँकेची कल्पना मांडली; परंतु ती आजही वास्तवात उतरली नाही. शेतकऱ्यांच्या दुरावस्थेची कारणे त्यांनी सांगितली आहेत. शेतकऱ्यांनी लागवडीवर केलेला खर्चसुद्धा उभा राहण्याची मारामार पडते. कधी कधी शेतकऱ्यांना गाडीभर माळवे (शेतमाल) शहरात विकण्याकरिता आणल्यास त्या सर्व मालाची किंमत बाजारात जास्त-कमी वजनाने घेणारे दगेबाज दलालांचे व म्युनिसिपालटीचे जकातीचे भरीस घालून गाडीमध्ये अंगावरून त्यास घरी जाऊन मुलांबाळा पुढे शिमगा करावा लागतो. (पेज.नं. २९२) खरे तर शेती खर्चसुद्धा निघत नाही. मालाचे पैसे तर सोडाच उलट गाडीभाडे पडते.

हा तपशील दीडशे वर्षापूर्वी फुले यांनी दिला आहे. तरीसुद्धा आजही विचारणा होते. शेतकरी आत्महत्या का करीत आहेत? शेतकरी जन्मापासून शेतीमध्ये राबतो आहे. देशाची अर्थव्यवस्था शेतकरीविरोधी आहे. शेतकरी व शेतकरी चळवळ वेगळे वळण घेत आहे. "स्वातंत्र्यानंतर ७० वर्षांनंतर शेतकऱ्यांना मोठ्या समस्यांना सामोरे जावे लागत आहे. शेतकऱ्यांची आत्महत्या हा प्रश्न दिवसेंदिवस गंभरी बनत चालला आहे." आजही शेतकरी वेगवेगळ्या समस्यांना सामोरे जावे लागत आहे. एक तर शेती नैसर्गिक खोतांवर अवलंबून असल्याने अनेक प्रश्न आहेत. शेतकऱ्याला शेतीमध्ये आता नव्याने शेती कामगारांचा प्रश्न भेडसावतो आहे. नवनवीन प्रश्न उभे ठाकले आहेत. देशाची अर्थव्यवस्था शेतीवर अवलंबून असूनही त्याकडे कोणी लक्ष देत नाहीत. त्यामुळे तर शेतकरी आत्महत्या करीत आहेत. "स्वातंत्र्यानंतर ७० वर्षांच्या काळातही अन्नसुरक्षा आपण साध्य करू शकलो नाही अन्नधान्य विदेशांतून आयात करावे लागते. देशातील ६० टक्के शेती अद्यापही निसर्गावर अवलंबून आहे" ती आपण सिंचना खाली आणू शकलो नाही.

निष्कर्ष :

1. महात्मा फुले यांची विचारसरणी बैठक शेतकऱ्यांच्या सामाजिक उन्नतीविषयक विचारांवर उभारलेली होती. म्हणून धनंजय कीर यांनी त्यांचा गौरव 'शेतकरीतत्व' म्हणून केला. तर शरद पाटील 'शूद्रतत्व' म्हणतात.
2. शोषणाविरुद्ध सर्वसामान्य शेतकरी वर्गाला जागृत केले पाहिजे.
3. महात्मा फुले यांच्या शेतकरीविषयक कार्याचा गौरव सयाजीराव गायकवाड यांनी 'महात्मा' म्हणून केला.
4. महात्मा फुले यांनी 'शेतकऱ्यांचा आसूड' मधून १८६३ मध्ये शेतकऱ्यांच्या प्रश्न मांडले होते ते आज ७५ वर्षे उलटूनही तीच परिस्थिती राहिली किंबहुना त्या पेक्षा भयावह झाली आहे.
5. शेतकऱ्यांच्या दुरावस्थेला अनेक घटक जबाबदार आहेत पण त्यात अज्ञान हा घटक अधिक कारणीभूत आहे.

संदर्भग्रंथ :

1. शेतकऱ्यांचा आसूड
2. महात्मा फुले समग्र वाङ्मय
3. मार्क्सवाद आणि फुले-आंबेडकरवाद

+

+

+

प्रेरणाप्रद चरित्र : राष्ट्रपुरुष छत्रपति शाहू महाराज

प्रा. डॉ. बंग नरसिंगदास ओमप्रकाश

सहयोगी प्राध्यापक तथा अध्यक्ष, हिंदी विभाग पुण्यश्लोक अहिल्यादेवी होलकर महाविद्यालय,
राणीसावरगांव, जिला. परभणी (महाराष्ट्र)

E-mail: narsingbang7@gmail.com

देश के राष्ट्रीय चरित्रों में लगभग सव्वासौ साल पूर्व छत्रपति शिवाजी के वंश के महान राष्ट्रपुरुष छत्रपति शाहू महाराज का नाम एक प्रेरणाप्रद चरित्र के रूप में लिया जाता है। शाहू महाराज छत्रपति शिवाजी के वंश में हुए इसलिए वे छत्रपति थे। उन्हें अपना राजा होने का कतई अहंकार नहीं था। लेकिन अपने वंश का उन्हें अभिमान था। छत्रपति शिवाजी ने जिन ध्येयों को लेकर हिंदवी स्वराज्य की स्थापना की, उन्हीं ध्येयों को शाहू महाराज ने अपने सामने रखा। वे शोषित, पीड़ित जनता के रक्षणकर्ता बनें। एक राजा होने पर भी सामान्य जनता के दुःख दर्द को करीबसे देखकर उसे दूर करने में ही वे स्वयं को धन्य समझते थे।

शाहू महाराज का सबसे प्रमुख ध्येय देश की सामान्य जनता को शिक्षित बनाना था। महात्मा फुले ने जिस प्रकार ग्रंथालयों के महत्व को जाना। उसी प्रकार उनके शिष्य शाहू महाराज ने ग्रंथालयों का महत्व जानकर उसी दृष्टि से अपनी शिक्षा नीति अपनाई। एक स्थान पर वे कहते हैं, “मेरा ऐसा प्रबल मत है, कि शिक्षा से ही हमारा अस्तित्व है। शिक्षा के बिना किसी भी देश की उन्नति नहीं हुई, ऐसा इतिहास कहता है। अज्ञान में डूबे हुए देश में अच्छे मुत्सद्दी और लड़ाकू वीर कभी पैदा नहीं होंगे। इसीलिए अनिवार्य और विनामूल्य शिक्षा की हिंदुस्तान को अत्यंत आवश्यकता है।” शिक्षा के क्षेत्र में ऊंच-नीच के भेद का विरोध कर सब को समान दृष्टि प्रदान करने का उनका कार्य युगप्रवर्तनकारी था। इसी प्रकार स्त्रियों की मुफ्त तथा अनिवार्य शिक्षा का प्रारंभ भी उन्होंने उस समय किया। इसका मूर्त रूप उन्होंने ‘गारगोटी’ में स्थापित की हुई लड़कियों की पाठशाला है। आज जिस प्रकार साक्षरता का अभियान चलाया जा रहा है, इसे देखते हुए शाहू महाराज के कार्य कितने महान थे, इसका अनुमान लगाया जा सकता है। जनसामान्य में शिक्षा विषयक अभूतपूर्व जागृति करने का उनका प्रयत्न था। “गांव-गांव से गरीबों के लड़कों को शहर में लाकर उन्हें शिक्षा द्वारा होशियार बनाने वाली पाठशालाएं महाराज (शाहू) ने खोली। उनके लिए छात्रावास खोलें। उन्होंने ठहराई हुई नीति, अपनाई हुई दृष्टि और किए हुए प्रयत्न इनके आधार पर उनका शैक्षिक सर्वस्पर्शित्व का दृष्टिकोण समझ में आता है।” सही अर्थों में शाहू महाराज आज के लोकतंत्र की, लोकशिक्षा और समान अधिकार के आधार पर नींव रखने वाले महान राष्ट्रपुरुष ही हैं।

शाहू महाराज का ऊंच-नीच का विरोध और दलितों द्वारा का कार्य, उनके जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है। उनके विचारों से जातीय अभिमान यह राष्ट्रीय कार्यों को पोषक होना चाहिए, राष्ट्रसेवा को नजरअंदाज करने वाला नहीं। लोगों का इस बात पर विचार करने से ही देश की उन्नति गति से या देर से होना आधारित है। “महात्मा फुले के बाद शाहू महाराज ने अपनी पूरी ताकत, संपत्ति, बुद्धि और प्रतिष्ठा दांव पर लगाकर अस्पृश्यता पर, धार्मिक गुलामी पर और सामाजिक विषमता पर कठोर प्रहार कर उसे नेस्तनाबूत करने का अविरत प्रयास किया।”³ शाहू महाराज के काल में अस्पृश्यता के कारण लोगों पर अगणित अत्याचार होते थे। उस समय सरकारी कार्यालयों, अस्पताल, पाठशालाएं आदि में अस्पृश्यता के कारण होने वाले अत्याचारों को उन्होंने करीब से देखा था। इसीलिए इसे नष्ट करने का उन्होंने बीड़ा उठाया। “अस्पृश्यों की गुलामी से मुक्ति कर उन्हें मानवीय स्वतंत्रता के अधिकार देने वाली घोषणा भारतीय इतिहास में तब तक दूसरे किसी भी राजा ने अपने राज्य में नहीं की थी। छत्रपति शाहू ही ऐसी एक मात्र व्यक्ति हैं, जिन्होंने अपना राजपद और जीवन सामान्य जनता के अधिकारों के लिए दांव पर लगाया।”⁴ उस काल में स्पृश्य समाज के आघातों को झेलकर और निर्भय बनकर वे जाति-भेद की दीवारों को तोड़ने में लगे थे। अस्पृश्यों के हित में उनके द्वारा किये गये कार्य ही आज भारतीय संविधान में ‘समता’ के रूप में विद्यमान है।

शाहू महाराज ने अपने राज्य की अस्पृश्यता नष्ट करने के लिए अस्पृश्यों को समता और ममता के आधार पर जीवन बिताने हेतु २३ अगस्त १९१९ में तीन परिपत्र जारी किए। इनमें “जो कोई भी अस्पृश्यता का पालन करेगा और महाराजा की आज्ञाका उलंघन करेगा, उन्होंने स्वेच्छा से अपनी नौकरी का त्यागपत्र देना अथवा उन्हें नौकरी से निकाला जाएगा और पेंशन के ऊपर भी उनका किसी प्रकार का अधिकार नहीं होगा।”⁵ इस प्रकार के परिपत्र से उन्होंने अपने राज्य की अस्पृश्यता उन्मुलन हेतु जनता को

स्पष्ट आदेश दिये। आज का 'एक गांव एक पानवठा' यह अस्पृश्यता निवारणकार्यक्रम शाहू महाराज ने सौ साल पूर्व अलग तरह से अपने राज्य में कार्यान्वित किया था। स्पृश्यसमाज की तथाकथित धार्मिक भावना को टुकराकर एक अस्पृश्य के होटल में चायपीने के लिए जाने वाला राजा शाहू महाराज ही थे!इसलिए इस युग के प्रथम श्रेणी के अलौकिक पुरुषों में उनका स्थान है। उनकी अस्पृश्यता की लड़ाई राष्ट्र की एकात्मता और राष्ट्र के हित के लिए थी।अतः स्पष्ट है कि मानवतावाद की दृष्टि से उनके विचार और कार्य देशवासियों के लिए अत्यंत प्रेरक है।

देश को स्वतंत्रता प्राप्ति के बादअनुसूचित जाति—जमातियों के लिए शैक्षिक संस्था और नौकरियों में विशिष्ट प्रमाण मेंआरक्षण रखने की नीति भारतीय संविधान ने अपनाई है। “यही भूमिका लगभग पचहत्तरसाल पूर्व जिस शाहू महाराज ने आचरण में लाई, उन्हें जितना धन्यवाद दे उतना थोड़ाही है।”^६ शाहू महाराज ने १९०२ में पिछड़ी हुई जाति, जन—जातियों के लिए नौकरियोंमें ५० प्रतिशत आरक्षण रखा। उस काल में उन्होंने अंतरधर्मीय विवाह का भी समर्थनकिया। इसी बात से उनका युग पुरुषत्व सिद्ध होता है। बीसवी शती में देश के सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक जीवन पर परिणाम करनेवाले जो चरित्र निर्माण हुए उनमें छत्रपति शाहू महाराज का स्थान सर्वोच्च है।शाहू महाराज की महानताबहुजनों को सामाजिक अन्याय, यातना, दारिद्र्य, इनसे मुक्त करने में नहीं थी, बल्किउनकी बौद्धिक, नैतिक और भौतिक प्रगति साध्य करने के लिए अविरत प्रयास करनेमें थी। वे नवयुग के सर्वांगपूर्ण राष्ट्रपुरुष थे।

संदर्भ :

१. प्रा. कुसुम कुलकर्णी प्रबेधन पर्व, पृ. ६८
२. प्रा. कुसुम कुलकर्णी प्रबेधन पर्व, पृ. ९९
३. प्रा. कुसुम कुलकर्णी प्रबेधन पर्व, पृ. ९९
४. प्रा. कुसुम कुलकर्णी प्रबेधन पर्व, पृ. ७८
५. प्रा. कुसुम कुलकर्णी प्रबेधन पर्व, पृ. ७०
६. प्रा. कुसुम कुलकर्णी प्रबेधन पर्व, पृ. ७१

थोर समाज सुधारक राजर्षी छत्रपती शाहू महाराज

डॉ.सुधीर ब.गायकवाड

जालना समाजकार्य महाविद्यालय, रामनगर जालना

प्रास्ताविक:-

आधुनिक महाराष्ट्राची जडणघडण करण्यात महात्मा ज्योतिबा फुले, राजर्षी छत्रपती शाहू महाराज, कर्मवीर भाऊराव पाटील, महर्षी धोंडो केशव कर्वे, विठ्ठल रामजी शिंदे, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचा सिंहाचा वाटा आहे. विठ्ठल रामजी शिंदे यांनी राजर्षी शाहू महाराजां बद्दल म्हटले होते की, " शाहू राजा नुसता मराठा नव्हता, ब्राह्मणेत्तर ही नव्हता, तर तो न युगातला सर्वांगपूर्ण पुरुष होता तो महाराष्ट्राचे विकासाचा एक मोठा तरुण होता हे जास्त खरे" असे गौरवोद्गार काढले आहेत.

स्वातंत्र्यापूर्वी आणि नंतरही समाजसुधारणा, समाज कल्याण आणि स्वातंत्र्यासाठी अहोरात्र अथक परिश्रम करणारे राजपुत्र व पैशाचा समाजासाठी वापर करणारे व्यक्तिमत्व म्हणजे राजर्षी छत्रपती शाहू महाराज होय. समाजाची सर्वांगीण सुधारणा करणाऱ्या महात्मा ज्योतिबा फुले यांच्या विचारांचे शाहू महाराज होते. समाजातील उपेक्षित आणि तळागाळातील समाज सुधारला तर देशभरातील समाज सुधारले असे विचार परंपरेतील समाजसुधारकांचे मत होते. इतर राजकीय नेते जीवन राजकीय स्वातंत्र्याचा प्रयत्न करत होते तेव्हा छत्रपती शाहू महाराज लोकांची मने स्वतंत्र झाल्याशिवाय स्वातंत्र्य कसे मिळेल, स्त्रियांना मुक्त केल्याशिवाय या देशात लोकशाही कशी येईल, ब्राह्मण आणि ब्राह्मणेतर असा भेद नष्ट केल्याशिवाय या देशात लोकशाही कशी येईल, सामाजिक सुधारणा घडवून न आणता राजकीय सुधारणा कशी होणार, यातून पुन्हा पेशवाई निर्माण होईल हे विचार शाहू राजांनी मांडले होते. आधुनिक भारतातील राजर्षी शाहू महाराज हे अष्टपैलू आणि महान व्यक्तिमत्व होऊन गेले. कलोपासक, ज्ञानोपासक मल्लविद्येचे पुरस्कर्ते, शेतकऱ्यांचे उद्धारक अशा महत्त्वाच्या भूमिका शाहू राजांनी बजावल्या.

इंग्रजी सत्तेचा दबदबा आणि स्थानिक ब्राह्मणवादी वर्ग यातून राजर्षी शाहू महाराजांनी जे बहुजन उद्धारक कार्य केले. भारताच्या इतिहासात सुवर्णाक्षरांनी नोंद करण्यासारखे आहे. दलित-शोषित, शेतकरी, स्त्रियांच्या उद्दाराचे कार्य म्हणजेच देशोद्धार याचे कार्य करणे असे राजर्षी शाहू महाराज मानत असत. जे पुरुष सामाजिक स्थित्यंतरे घडवून आणण्यासाठी जीवाची पर्वा न करता ह्यातभर धडपडत असतात ते महापुरुष ठरतात राजर्षी शाहू महाराज अश्या महा पुरुषांचे पैकीच एक होते. राजर्षी छत्रपती शाहू महाराजांनी महात्मा फुले यांची समाजप्रबोधनाची मशाल हाती घेऊन एक सामाजिक क्रांतिकारक दृष्ट नेता म्हणून जे कार्य केले ते महाराष्ट्रालाच नव्हे तर देशाला पुढे घेऊन जाणारे आहे त्यांचा विचार व त्यांची कार्ये आजच्या एकविसाव्या शतकातही अत्यंत उपयुक्त ठरतात आजच्या राज्यकर्त्यांनी शाहू राजांच्या विचार व कार्यांचे अनुकरण केले तर आपला देश जागतिक महासत्ता झाल्याशिवाय राहणार नाही यासाठीच त्यांनी केलेल्या कार्यांचा आढावा पुढील प्रमाणे घेतला आहे.

मोफत व सक्तीचे प्राथमिक शिक्षण:- सर्वसामान्य लोकांच्या बुद्धीवर ज्ञानाला जुलमी धार्मिक जी बंधने लागली होती ती झुगारून देण्याची शक्ती बहुजनांच्या अंगी येण्यासाठी सक्तीच्या व मोफत प्राथमिक शिक्षणाची आवश्यकता आहे असे शाहू राजांना वाटले आणि 1912 मध्ये एक आदेश काढून प्राथमिक शिक्षण सक्तीचे केले. भारतीय मुलांची यादी करून त्यांना शाळेत दाखल केले शाळेत शिकणाऱ्या विद्यार्थ्यांना पालकांनी गॅरेजवर कामाला पाठवले तर त्यांना दंड करण्यात येऊ लागला परंतु समाजाच्या सामाजिक व आर्थिक व्यवस्थेचा विचार करून आई-वडिलांच्या

अत्यावश्यक कामासाठी मुलांच्या मदतीची जरूरी असल्यास काही दिवस मुलांना घरी ठेवता येईल अशी तरतूद करण्यात आली. शाहू महाराज एवढ्यावरच थांबले नाही तर गोरगरिबांचे शिक्षण हालाखीच्या परिस्थितीत होऊ शकत नाही याची जाणीव ठेवून 25 जुलै 1917 रोजी प्राथमिक शिक्षण मोफत केले. रंजल्या-गांजल्या समाजाला सुशिक्षित करणे हे आपले आद्य कर्तव्य आहे यासाठी प्रत्येक समाजाने आपल्या समाजातील प्रत्येक व्यक्तीच्या शिक्षणासाठी प्रयत्न करणे आवश्यक आहे असे शाहू महाराजांना वाटत असेल म्हणून शाहू महाराजांनी प्राथमिक शिक्षणाचा प्रसार मोठ्या प्रमाणावर केला.

जातिभेद निर्मूलन:- माणसा माणसांत भेद करणारी कोणतीही समाजव्यवस्था त्यांना मान्य नव्हती. अस्पृश्यता हा समाजाचा कलंक आहे. पशु व्यक्तींना माणसासारखे जमीन नाकारणाऱ्या वर्णव्यवस्था आणि जाती व्यवस्थेबद्दल त्यांना तिटकारा होता ते म्हणत मी सर्वांचा राजा आहे महार मांग चांभार ढोर भंगी बेडर इत्यादी जाती सुद्धा माझ्या प्रजा आहेत त्यामुळे त्यांचा हवामान शाहू महाराजांना सहन होत नसेल त्यांना प्रतिष्ठा मिळवून देण्यासाठी सर्वांशी संबंध येतील असे उद्योग काढून दिले उदा. गंगाराम कांबळे यांना मध्यवस्तीत हॉटेल काढून दिले त्या हॉटेलमध्ये शाहू महाराज होता आपल्या लवाजम्यासह चहा घ्यायला येत असत लक्ष्मण मास्तर व गणपा पवार यांना शिलाई व्यवसाय करण्यास मदत केली त्यांना लागणारे साहित्य स्वतः शाहू महाराज मुंबईहून आणून देत असत.

दुर्बल घटकांचे कैवारी:- मागास जातींना अस्पृश्य दुर्बल घटकांना कित्येक शतके प्रशासना पासून दूर ठेवण्यात आले होते मागासवर्गीयांच्या उन्नतीचे सूत्र महात्मा ज्योतिबा फुले यांच्या आरक्षण धोरणात आहे या धोरणानुसार मागासवर्गीयांनी उच्च शिक्षण घ्यावे व त्यामुळे त्यांना सरकारी खात्यात पूर्वीपेक्षा अधिक नोकऱ्या मिळतील असे शाहू महाराजांचे मत होते म्हणून त्यांनी प्रत्यक्ष कृती करून 26 जुलै 1902 रोजी एक जाहीरनामा प्रसिद्ध करून मागासवर्गीयांना पन्नास टक्के जागा सरकारी कार्यालयात राखीव ठेवण्याचा आदेश काढला कारण जेव्हा शाहू महाराजांकडे राज्याची सूत्रे आली तेव्हा सर्वत्र सुशिक्षित समाजाचे वर्चस्व होते मागास जातीचा एकही नोकर दिसत नव्हता म्हणून मागासवर्गीयांना नोकरीत देण्याचे धोरण शाहू महाराजांनी आखले आणि ती प्रत्यक्ष कृती रुप आणले.

बहुजनांच्या शिक्षणावर भर:- महात्मा ज्योतिराव फुले यांनी समाज परिवर्तनाचे हात्यार शिक्षण असे सांगितले होते. " विद्येविना मती गेली, मतीविना नीती गेली नीतीविना गती गेली ,वित्ताविना शूद्र खचले, एवढे अनर्थ एका अविद्येने केले" असे महात्मा फुले यांनी बहुजनांच्या अविद्या चे कारण शिक्षण आहे असे सांगितले होते. शाहू राजांनी सर्व समस्यांचे मूळ अज्ञानात आहे असे सांगितले. त्यांनी आपल्या भाषणात सांगितले की, शिक्षणाशिवाय तरनोपाय नाही .शिक्षणाशिवाय कोणत्याही देशाची उन्नती होऊ शकत नाही .अज्ञानात बुडून गेलेल्या देशात उत्तम मुत्सद्दी कधीच घडणार नाही, म्हणून सक्तीच्या व मोफत शिक्षणाची भारताला आवश्यकता आहे शिक्षणाचा प्रचार आणि प्रसार करण्यासाठी शिक्षणाची सोय निर्माण करणे गरजेचे आहे याची जाणीव होऊन राजाराम कॉलेज व त्याला जोडून एक वस्तीग्रह निर्माण केले. वस्तीग्रह राहण्याच्या निमित्ताने विद्यार्थ्यांमध्ये जातीची एकात्मता निर्माण व्हावी हा त्यांचा उद्देश होता. शाहू महाराजांनी जातीपातीच्या पलीकडे जाऊन सर्व समाज एकसंघ व्हावा ही इच्छा होती. आपल्या भाषणात जातिभेद हा भारताला झालेला रोग आहे तो नष्ट होणे आवश्यक आहे असे सांगितले. सर्व जातीच्या मुलांना शिक्षण घेता यावे यासाठी जवळजवळ पंचवीस वेगवेगळी जातीची वस्तीग्रह स्थापन केली.

छत्रपती शाहू महाराजांनी सुरू केलेल्या जातीनिहाय वसतिगृहांची यादी पुढीलप्रमाणे 1) सार्वजनिक वस्तीग्रह 896 2) मराठा वस्तीग्रह 1901 3) जैन वस्तीग्रह 1901 4) मुसलमान वस्तीग्रह 1902 5) लिंगायत वस्तीग्रह 1907 6) अस्पृश्य वस्तीग्रह 1908 7) सोनार वस्तीग्रह 1908 8) श्री नामदेव शिंपी वस्तीग्रह 1911 9) पांचाळ ब्राह्मण वस्तीग्रह 1912 10) सारस्वत ब्राह्मण वस्तीग्रह 1915 11) कायस्थ प्रभू वस्तीग्रह 1912 12) इंडियन क्रिश्चन वस्तीग्रह 1915 13) आर्य समाज वस्तीग्रह 1981 14) कर्नल वूड हाऊस वस्तीग्रह 1920 15) सरदार वस्तीग्रह

1921 16) वैश्य समाज वस्तीगृह 1918 17) इंदुमती राणीसाहेब वस्तीगृह 1919 18) मिस क्लार्क वस्तीगृह 1912 19) शिवाजी वैदिक वस्तीगृह 1920 20) कारस्कर वस्तीगृह 1920 21) देवान वस्तीगृह 1921 22) सुतार वस्तीगृह 1921 23) नाशिक वस्तीगृह 1921 24) बोहरी वस्तीगृह 1921 .वरील वस्तीगृहांच्या यादीवरून हेच स्पष्ट होते की ,शाहू महाराजांनी सर्व जाती धर्माच्या मुलांसाठी वसतिगृहे सुरू केली होती एवढेच नव्हे तर त्यांच्या संस्थांना बाहेर आहे ही पंढरपूर ,धारवाड ,नाशिक, नगर आदी ठिकाणी शाहू महाराजांनी विद्यार्थी वस्तीगृह सुरू केली होती ,यावरून त्यांचा दूरदृष्टी पणा लक्षात येतो.

अस्पृश्यांच्या उद्धारासाठी कार्य:- अस्पृश्य हिंदू समाजातील अगदी शेवटचा वर्ग सर्व गोष्टी पासून दूर असलेला हजार वर्षांपासून या वर्गावर कायमची गुलामगिरीला देण्यात आली होती. अस्पृश्यता ही देवाने निर्माण केलेली असल्यामुळे ती टिकविणे आवश्यक आहे, असे धार्मिक शिक्षणही दिले जाई. गावाच्या बाहेर ज्यांच्या वस्त्या आहेत त्यांचा नव्हे तर त्यांच्या सावलीचा ही विटाळ होत असे त्यांनी जमिनीवर थुंकू नये यासाठी गळ्यात मडके बांधले जात असे, जमिनीवरून चालताना जागा लगेच खराट्याने स्वच्छ करावी लागेल मडकी व खराटा धर्ममार्तंडांनी त्यांना बांधलेल्या श्रंखला. होत्या शिक्षण घेणे तर दूरच त्यांनी ज्ञान ऐकण्याचा ही प्रयत्न केल्यास कानात शिसे ओतावे व जीभ छाटावी अशी शिक्षा ही मनुस्मृतीत सांगितलेली आहे या अस्पृश्य वर्गाच्या उदाहरणासाठी त्यांना मानवी हक्क मिळवून देण्यासाठी त्यांच्या शिक्षणाची व्यवस्था शाहू राजांनी केलेली आपल्या संस्थानात अस्पृश्यांसाठी पाच शाळा उघडल्या 1919 मध्ये त्यांची संख्या 27 झाली अस्पृश्यांसाठी शाळा काढल्या अस्पृश्य निरक्षर असल्यामुळे त्यांना नोकरी मिळत नसत . थोडी शिकलेल्या अस्पृश्यांना शिक्षक, तलाठी कारखान्याच्या पदावर नेमले संस्थानातील सर्व दवाखान्यात इतर जातीच्या रुग्णां यांच्याबरोबर येणे अस्पृश्यांना अस्पृश्य मानतात सुशुषा करावी तसेच सार्वजनिक इमारती धर्मशाळा विश्रामगृहे सरकारी अन्नछत्रे नदीची पाणवठे सार्वजनिक विहिरी या ठिकाणी कोणालाही अस्पृश्यता पाळता येणार नाही असे झाल्यास कामगार, तलाठी ,पाटील यांना जबाबदार धरले जाईल, असे जाहीर केले .माणसाने माणसा प्रमाणे वागावे असा धर्माचा अर्थ सांगतो नंतर अशीच संबंधीची स्वतंत्र भारताच्या राज्यघटनेत करण्यात आले.

प्रशासनाचा जाहीरनामा:- 2 एप्रिल 1894 रोजी छत्रपती शाहू महाराजांनी प्रशासनाची सूत्रे हाती घेतली यानिमित्ताने त्यांनी केलेल्या आपल्या भाषणात भावी कार्याची रूपरेषा सांगितली व आपले राज्य सामान्यांसाठी कल्याणकारी होणार याची ग्वाही दिली .आमची प्रजा सुखी आणि संपन्न व्हावी संतुष्ट असावी दिवसेंदिवस तिचे कल्याण व्हावे आणि आमच्या राज्याच्या चहुबाजूंनी विकास व्हावा अशी आमची इच्छा आहे असा मनोदय व्यक्त केला. त्यांनी काही आज्ञापत्रे काढली ती आजच्या राज्यकर्त्यांनी जरूर वाचून विचार करून अंमलबजावणी करण्यासारखी आहे.

अ) सरकारी अधिकारी दौऱ्यावर असताना त्यांना काही वस्तूंची गरज वाटल्यास त्यांनी गावकऱ्यांकडून पैसे देऊन विकत घ्याव्यात व त्याची पावती घ्यावी.

आ) दिवानी दाव्याने सावकारने शेतकऱ्यांच्या गुराढोरांचा लिलाव करू नये

इ) सावकारी पाशातून शेतकऱ्यांना सोडवण्यासाठी अल्प व्याजाच्या दराने दीर्घ मुदतीच्या व सुलभ हप्त्यांनी कर्ज देण्यात यावे

ई) वेठबिगारी पद्धत त्वरित बंद करण्यात यावी

उ) जंगलात जनावरांना विचारण्याची परवानगी देण्यात यावी.

अशा पद्धतीने प्रशासकीय जाहीरनामा राजर्षी शाहू राजांनी अवलंबला होता

स्त्री शिक्षणास प्रोत्साहन :- कोणती परिवर्तन सहजासहजी घडून येत नाही त्यासाठी अनेक योजना आखाव्या लागतात हीच युक्ती शाहू महाराजांनी मुलींच्या शिक्षणासाठी केली मुलींसाठी स्वतंत्र शाळा काढल्या.

प्रौढ महिलांसाठी शिक्षण

विधवा पुनर्विवाह कायदा जुलै 1917

अंतर धर्मीय व आंतरजातीय विवाह कायदा जुलै 1919

असे अनेक महत्त्वपूर्ण कार्ये शाहू राजांनी केले या कार्यामुळे महाराष्ट्र प्रगतीपथावर होता आणि आज जे काही महाराष्ट्राची आणि देशाची प्रगती आहे त्यात शाहू महाराजांच्या विचारांचा आणि कार्याचा खूप मोठा सहभाग आहे हे विसरता कामा नये. त्यांचा आदर्श पुढे ठेवून महाराष्ट्राची जडणघडण करणे गरजेचे आहे. महाराष्ट्रातील अनेक सुधारणावादी पुरोगामी विचारवंत समाजसुधारक राज्यकर्ते यांच्यामध्ये राजर्षी छत्रपती शाहू राजे यांचे कार्य हे अतुलनीय आहे त्यांच्या विचारांचा व कार्याचा अवलंब आजच्या राज्यकर्त्यांनी केला तर भारत महासत्ता होण्यास वेळ लागणार नाही.

संदर्भ:-

- 1) डॉ. जयसिंग पवार -राजर्षी शाहू छत्रपती -सुमेरू प्रकाशन डोंबिवली
- 2) प्रा.मोहित फडके- समाजशास्त्रीय विचारवंत- प्रकाशन कोल्हापूर
- 3) धनंजय कीर -राजश्री छत्रपती शाहू
- 4) ओम प्रकाश गायकवाड (संपादक)- लोक राजा राजर्षी शाहू महाराज
- 5) मीना कुलकर्णी- राजर्षी शाहू महाराज गुरु ग्रंथ
- 6) डॉ.आर.एस.कोंडकर - रयतेचा राजा राजर्षी शाहू महाराज -अरुण प्रकाशन लातूर
- 7) डॉ.वाघमारे एस पी (संपादक)21 व्या शतकातील राजर्षी शाहू महाराजांच्या विचारांची प्रासंगिकता- राजवीर प्रकाशन परभणी.
- 8) प्राचार्य डाॅ. रा.नु.भगत - राजर्षी शाहू छत्रपती जीवन शिक्षण कार्य.

हिंदी उपन्यास और दलित जीवन

डॉ सत्यद अमर फकीर

हिंदी विभाग प्रमुख शरदचंद्र महाविद्यालय शिराढोन

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। साहित्य में समाज, जीवन व्यवस्था सामाजिक समस्या तथा उन पर उपायों की चर्चा होती है। साहित्य सिर्फ मनोरंजन का साधन नहीं है बल्कि वह ज्ञानवर्धक और समाज व्यवस्था का यथार्थ चित्रण करने का साधन भी है। साहित्य समाज में स्थित मानवीय मूल्यों के प्रति सजग रहकर सामाजिक परिवर्तन को दिशा निर्देशित करता रहता है। साहित्यकार साहित्य के माध्यम से सशक्त सुसंस्कार समाज निर्माण में योगदान देने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। दलित साहित्य के संदर्भ में कहा जाए तो दलित साहित्य समाज के वास्तव का यथार्थचित्रण करता है। दलित साहित्य का कार्य इस दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। जाति व्यवस्था, मानवी असमानता, शोषण के खिलाफ विद्रोह चित्रित करने वाला यह साहित्य समाजवादी समाज रचना का कार्य करता है। मानव समाज के हित के लिए लिखी गई रचना साहित्य है और दलित साहित्य में भी मानव समाज के हित में सृजन होता है। इस साहित्य में सत्यम शिवम सुंदरम को महत्व दिया जाता है। दलित साहित्य समाज के अनेक स्तरों, वर्गों में विभाजित आम आदमी की मंगल कामना करते हुए उनकी आवाज बनता है, और उन्हें न्याय देने के लिए सतत प्रयत्नरत रहता है। दलित साहित्य आदर्श समाज रचना के लिए सतत प्रयत्नरत रहता है। समानता, न्याय, भेदभाव विहीन समाज और नैतिक आदर्श मूल्यों की बात करता है।

दलित शब्द की उत्पत्ति दल धातु से हुई है। जिसका अर्थ पिछड़ा, शोषित रौंदा हुआ, अविकसित, अछूत आदि है। अर्थात् जिसे दबाया गया, जिसे अपने अधिकारी से वंचित रखा गया, विकसित नहीं होने दिया, समाज व्यवस्था या परंपरा ने उन्हें उपेक्षित रखा ऐसा मानव दलित है। दलित शब्द के संदर्भ में अनेक विद्वानों ने अपने अपने मतों को रखा है। केशव मेथ्राम ने अनुसूचित जाति बौद्ध मजदूर आदिवासी गरीब किसान भूमिहीन को दलित माना है। डॉ वानखेडे की मान्यता है कि जो श्रमजीवी है वह दलित। गिरिराज किशोर के शब्दों में कहा जाए तो जो दलित जाति से नहीं होता, समाज में अपनी अस्वीकृति की पराकाष्ठा पर जीने वाला दलित। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने सर्वहारा वर्ग को दलित कहा तथा जातिवाद को नकारने वाला दलित माना। शंकरराव खरात ने शुद्र को दलित कहा है। इस प्रकार दलित के संदर्भ में अनेक विद्वानों ने अपने अपने मतों को रखा। अंतः कह सकते हैं कि दलित वह है जो समाज व्यवस्था में शोषित रहा, अपने अधिकारों से वंचित रहा वह दलित है।

हिंदी साहित्य में अनेक प्रवाह है। जिसके अंतर्गत दलित साहित्य भी एक प्रवाह है। दलित साहित्य आदर्श समाज रचना के लिए सामाजिक क्रांति का सपना देखता है। शोषित वंचित और दबे कुचले आदमी के हक की बात करता है। वैसे देखा जाए तो हिंदी साहित्य के अंतर्गत शोषित आदमी के हक के संदर्भ में अनेक हिंदी साहित्यकारों ने आवाज उठाने का कार्य किया है। संत कबीर, संत रैदास आदि भक्त कवियों ने जाति व्यवस्था का विरोध करते हुए आम आदमी के हक की बात करने का साहस किया था। महात्मा ज्योतिबा फुले, छत्रपति शाहू महाराज और डॉक्टर बाबा साहब अंबेडकर आदि समाज सुधारकों ने भारतीय समाज व्यवस्था में व्याप्त असमानता की भावना का विरोध किया है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षा के बढ़ते प्रभाव और डॉक्टर बाबा साहब अंबेडकर के विचारों से प्रभावित होकर हजारों बरसों से दासता की जंजीरों में अटका समाज स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते हुए जागृत होता हुआ दिखाई देता है। इसी परिप्रेक्ष्य में दलित साहित्य का उगम होता है और अपने हक की बात करता है। सामान्यतः दलित समाज के जीवन से जुड़ी रचना दलित साहित्य है, जो जाति व्यवस्था को नकारने वाला, शोषित मानव की व्यथा बताने वाला साहित्य दलित साहित्य। डॉ धर्मवीर भारती के शब्दों में दलित साहित्य की परिभाषा में दलित के स्वप्न, दलित की कल्पना, दलितों के ख्याल को छोड़ा नहीं जाता उसमें दलित जीवन की अभीधा, लक्षणा, व्यंजना की सारी खूबियां हैं। डॉ सत्यप्रेमी का कथन है, दलित साहित्य नकार का साहित्य है, जो संघर्षों से उपजता है, इसमें समता, स्वातंत्र्य और बंधुत्व का भाव है। इस तरह अनेक विद्वानों ने दलित साहित्य के संदर्भ में अपने विचारों को रखा। अंतः कह सकते हैं, कि दलित साहित्य दबे, कुचले, शोषित लोगों की आवाज को उठाता है, और उनके हक की बात करता है। दलित साहित्य यथार्थ की अनुभूति पर परखा जाता है, और सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक समता की बात करता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में दलित साहित्य का स्वरूप विस्तृत हो गया है क्योंकि यह साहित्य शोषित, उपेक्षित, अपमानित व्यक्ति की आवाज बना हुआ है।

हिंदी साहित्य के उपन्यास विधा में दलित जीवन का वास्तव अंकन करने का अनेक उपन्यासकारों ने प्रयास किया है। आजादी के बाद भारतीय समाज व्यवस्था में अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगे। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक दृष्टि से यह परिवर्तन हुए। जिसका परिणाम साहित्य जगत पर भी दिखाई देता है। दलित वंचित शोषित आदि लोगों को शिक्षा के द्वार खुल जाने के कारण चेतना की लहर दौड़ती है। इसी परिप्रेक्ष्य में दलित उद्धार संगठन, स्त्री उद्धार संगठन के द्वारा अनेक समाज सुधारकों ने कार्यारंभ किया। परिणाम शिक्षा, कानून, आरक्षण, समानता आदि पर विचार शुरू हुआ। अनेक साहित्यकारों ने अपने लेखनी के माध्यम से दलितों की दुर्दशा का चित्रण साहित्य की विभिन्न विधाओं में करने का चलन प्रचलित हुआ। वैसे देखा जाए तो हिंदी साहित्य की उपन्यास विधा ने दलित जीवन की त्रासदी पर लेखन आरंभ किया। हिंदी के महान उपन्यासकार प्रेमचंद जी ने सुधारवादी दृष्टिकोण रखकर अनेक उपन्यास लिखे जिसके अंतर्गत दलित जीवन की दुर्दशा का वास्तव चित्रण किया है। प्रेमचंद जी के कर्मभूमि और गोदान उपन्यास में समाजवादी और सुधारवादी दृष्टिकोण दिखाई देता है। प्रेमचंद के प्रेमाश्रय, कायाकल्प, रंगभूमि, गोदान आदि उपन्यासों के अनेक पात्र समता की बात करते हैं, वे सामाजिक समरसता और न्याय की बात करते हैं। मधुकर सिंह के सहदेव राम का इस्तीफा इस उपन्यास में दलितों का जीवन चित्रित करते हुए उनमें आई चेतना को भी चित्रित किया है। इस उपन्यास में हरिजन सहदेव राम और खानदानी परंपरा का निर्वाह करने वाला माधौसिंह के संघर्ष की कहानी है। सहदेव राम सप्लाई विभाग में अफसर पद पर नियुक्त एक कर्मचारी है। यह बात माधौसिंह को हर समय खटकती रहती है। सहदेव राम आते ही गंगाराम हरिजन नामक व्यक्ति राशन की दुकान के लिए अर्जी पेश करता है, लेकिन माधौसिंह का मानना है की कोई हरिजन राशन डीलर ना हो इसलिए वह उनकी फाइलें दबा कर रखता है। इतना ही नहीं वह उन लोगों को दफ्तरों में आना तक बंद कर देता है। इसी परिप्रेक्ष्य में विद्रोह आरंभ होता है। सहदेव राम एक पढा लिखा आत्मविश्वासी व्यक्ति है वह न्याय के लिए लड़ना जानता है। परंपरागत गुलामी उसे मान्य नहीं है। दफ्तर में जब उस पर दबाव बनाया जाता है, तब वह अपने तत्वों के साथ समझौता नहीं करता बल्कि इस्तीफा देता है। इस उपन्यास का सहदेव राम यह व्यवस्था द्वारा सताया हुआ प्रताड़ित व्यक्ति है। नरेंद्र वर्मा के सुबह की तलाश उपन्यास में अमोलीडीह गांव का चित्रण हुआ है। इस गांव में छुआछूत का प्रचलन है। इसी गांव में फगुवा सोमेश्वर जातिभेद मिटाना चाहते हैं। समता की बात करते हैं और गांव में स्थित मंदिर सभी के लिए खुलवाना चाहते हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में इस उपन्यास में संघर्ष दिखाई देता है। चमार सोमेश्वर अध्यापक बनकर दलितों में जागृति पैदा करता है, और गांव का मंदिर चमारों के लिए खुलवाता है। सोमेश्वर के जद्दोजहद को लेखक ने इस उपन्यास में चित्रित किया है। राकेश वत्स के जंगल के आसपास उपन्यास में दमकड़ी गांव की पहरुआ हरिजन औरतों का संगठन बनाकर पुलिस और जगतिया के साथियों का मुकाबला करती है। अमृतलाल नागर के नाच्यौ बहुत गोपाल उपन्यास में एक ब्राह्मणी का हरिजन बनने की क्रांतिकारी घटना का चित्रण हुआ है। मेहतर समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का वर्णन करते हुए निर्गुणी या मोहना मेहतरानी बनकर पतिव्रता धर्म निभाती है, उसका भी चित्रण किया गया है। उच्च जाति वाले लोग निम्न जाति के लोगों पर किस प्रकार से अन्याय करते हैं, इसका वर्णन प्रस्तुत उपन्यास में हुआ है। निर्गुणीया मोहना भंगी जाति में रहकर उच्च जाति वालों के विकृतियों का भांडा फोड़ती हैं। शिव प्रसाद सिंह के अलग अलग वैतरणी उपन्यास में दलित विमर्श का चित्रण हुआ है। प्रस्तुत उपन्यास में ठाकुरों द्वारा चमारों पर किए गए अत्याचारों का चित्रण है। जनतांत्रिक सुधारों के कारण निम्न जातियों में अधिकारों के प्रति आई जागरूकता और शोषण विरोधी भावना का विस्तृत वर्णन उक्त उपन्यास में हुआ है। गिरिराज किशोर के यथा प्रस्तावित उपन्यास में हरिजन बालेसर और उनके प्रति बाबू लोगों का व्यवहार चित्रित हुआ है। बाबू लोग बालेसर को किस प्रकार प्रताड़ित करते हैं, उससे किस प्रकार से काम लेते हैं। इसका विस्तृत वर्णन उपन्यासकार ने किया है। उपन्यास में बालेसर छुआछूत का विरोध करते हुए यह प्रश्न पूछता है, हरिजन के स्पर्श से अपवित्र बने ग्लास से पानी न पीने वाले बाबू लोग उससे एक काम क्यों करवा लेते हैं। जयप्रकाश कर्दम का छप्पर उपन्यास दलितों में आई चेतना को उजागर करता है। इस उपन्यास में दलितों के परिवर्तित रूप को उद्घाटित किया है। दलित परिवार के चंदन का पढ़ाई के लिए शहर जाना, दलितों के लिए स्कूल चलाना, उनका संगठन करना, विद्रोह करना, यह दलितों में आई चेतना का प्रतीक है। प्रस्तुत उपन्यास में दलित जीवन के शोषण के सभी आयामों को चित्रित करते हुए, उसके चेतित रूप को भी स्पष्ट किया है। पढ़े लिखे चंदन को आशीष देने की अपेक्षा उसकी उपेक्षा करते हुए पंडित अपमान करता है। चमारों का पढ़ना उन्हें मुंह पर पड़े चाटे के सामान लगता है। उक्त उपन्यास में दलितों में स्त्रियों की स्थिति को भी दर्शाया है। कमला के साथ हुई बलात्कार की घटना और पुलिस प्रशासन की भूमिका का यथार्थ अंकन छप्पर उपन्यास में हुआ है। मदन दीक्षित के मोरी की ईट में अछूत मेहतरों के जीवन की अंतरिक झांकी है। उत्तरांचल मुरादाबाद मेरठ में स्थित मेहतरों कि यह जीवन गाथा है। मदन दीक्षित ने जो देखा पाया उसे शब्द बंद किया है। यह रचना स्वानुभूति के आधार पर लिखी हुई प्रतीत होती है। मेहतरों कि जीवन व्यथा,

नारी की स्थिति, साहब की कोठी पर काम करने वाली नारी की दशा, अफसरों की मनोवृत्ति, अवैध संबंधों की प्रवृत्ति और अवैद्य संतान की स्थिति, जातीयता अर्थ अभाव, ईसाइयों द्वारा धर्मांतरण को प्रोत्साहन देना, धर्मांतरण की प्रवृत्ति, जमींदारों द्वारा शोषण आदि विभिन्न पहलुओं को प्रस्तुत उपन्यास में उजागर किया है।

निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि वेदना, नकार, विद्रोह का मिलाप इन उपन्यासों में दिखाई देता है। दलितों का उपेक्षित, वंचित जीवन चित्रण करने वाला यह उपन्यास साहित्य दलित जीवन का परिवर्तित रूप का भी अंकन करने में सफल रहा है। डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर के विचारों से प्रभावित इन साहित्यकारों ने स्वानुभूति के आधार पर दलित जीवन का यथार्थ चित्रण किया है।

महिलांचे प्रश्न आणि डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर

प्रा. डॉ. घोलप के.जी.

शरदचंद्र महाविद्यालय, शिराढोण

प्रस्तावना:

भारतातील दलित महिलांना सन्मानाचं जगणं वाट्याला यावं म्हणून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरसतत कार्यरत होते. भारतीय राज्यघटनेत महिलांना अनेक अधिकार देऊन बाबासाहेबांनी संपूर्ण स्त्रियांना सन्मान दिला. संसदीय लोकशाही बरोबरच बाबासाहेबांना सामाजिक आणि आर्थिक लोकशाही अपेक्षित होती. बाबासाहेबांना अपेक्षित असलेल्या सामाजिक लोकशाहीत महिलांचे स्थान महत्त्वाचे आहे. यासाठी बाबासाहेबांनी हिंदू कोड बिल वारसाहक्क समान वेतन प्रसूती रजा 50 टक्के आरक्षण यासारख्या महत्त्वाच्या प्रश्नाकडे लक्ष वेधले. आज सर्व धर्मातील स्त्रियांना कायद्याने जी सुरक्षितता मिळाली, ही बाबासाहेबांमुळे हे विसरताकामा नये. पण असे असूनही आज कधी नव्हती एवढी भारतीय महिला असुरक्षित का आहे? याचा अभ्यास प्रस्तुत शोधनिबंधात करावयाचा आहे.

संशोधनाची उद्दिष्टे:-

- 1) समाजातील सामन्ती वर्ग व महिला यावर प्रकाश टाकणे.
- 2) महिलांच्या अंधश्रद्धेवर प्रकाश टाकणे.
- 3) सोशल मीडिया आणि महिला यावर प्रकाश टाकणे.
- 4) आदिवासी महिलांच्या समस्येवर प्रकाश टाकणे.
- 5) स्त्री पुरुष समानतेवर भर टाकणे
- 6) महिला एक मनोरंजनाचे साधन, याचा अभ्यास करणे.

ग्रहीतके:-

- 1) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी महिलांना सर्व क्षेत्रात 50 टक्के आरक्षण मिळवून दिसून येते.
- 2) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी महिलांना शिक्षणाचा अधिकार दिलेला दिसून येतो.
- 3) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी महिलांना वडिलोपार्जित संपत्तीत समान वारसा हक्क मिळवून दिलेला दिसून येतो.
- 4) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी महिलांना समान वेतन अधिकार दिला.
- 5) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी महिलांना घटनेच्या नियमानुसार प्रसूती रजा मंजूर करून दिलेली दिसून येते.

संशोधन पद्धती:

प्रस्तुत शोध निबंध साठी दुय्यम संशोधन पद्धतीचा उपयोग करण्यात आलेला आहे. यामध्ये संदर्भग्रंथ, लिखित साहित्य, वर्तमानपत्र पत्रे, मासिके, साप्ताहिके इत्यादींचा उपयोग करण्यात आलेला आहे.

समाजातील उच्च वर्ग व महिला:-

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी संसदीय लोकशाहीचा विचार करताना आपल्या देशातील उच्चवर्गीय वर्चस्वाचा टेंभा मिरवणारे जात, आणि धर्माचा झेंडा मिळवणारे पुरुष महिलांना दुय्यम ठरवतील हे विचारात घेतलं होतं म्हणूनच डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी "सामाजिक आणि आर्थिक लोकशाही" चा आग्रह धरला होता. आपल्या देशातील महिला कोणत्याही जातीतील असो ती अति शुद्धच आहे. हे कुणी ठरवलं? ती ब्राह्मण असो वा दलित ती शुद्धच आहे हे ठरवणारे कोण आहे? आपल्या धर्मग्रंथांनी, पोथ्या पुराणे हे ठरवलं असेल तर ते अवैद्य करायला नको का? परंतु तसे होताना दिसत नाही अजूनही उच्चवर्गीयांचा समाजावरील पगडा दिसून येतो.

महिलांचा अंधश्रद्धाळूपाः-

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांना संपूर्ण स्त्री जातीनं विज्ञानवादी व्हावे असे वाटत होते तसा प्रयत्नही त्यांनी केला. परंतु वर्तमान काळात महिलांचा अंधश्रद्धाळू पणा कमालीचा वाढलेला दिसून येतो. आंबेडकरांच्या विचारांची कासधरून चालणाऱ्या महिलांनी अंधश्रद्धेला बळी न पडता विज्ञानवादी दृष्टिकोनमनाशी बाळगून स्वतःची प्रगती करायला हवी." महिलांनी स्वतःची श्रद्धाअंधश्रद्धेकडे झुकणार नाही याची दक्षता घेतली पाहिजे." त्याविचारांचे अनुकरण जोपर्यंत महिला करणार नाही तोपर्यंत महिलांची उन्नती होणार नाही. डॉ.बाबासाहेबांनी आंबेडकरांनी अनेक धर्मग्रंथांचा अभ्यास केला. तसेच सर्वधर्मातील रूढी परंपरा चा अभ्यास केला. त्यामध्ये महिलांच्या अधिकाराचा अभ्यास केला. अनेक बंधने महिलांवर लागलेली दिसून आली. म्हणून त्यांनी महिलांच्या हक्कासाठी लढा लढून त्यांना स्वातंत्र्य देण्याचा प्रयत्न केला. तसेच त्यांना अंधश्रद्धेच्या गर्तेतून बाहेर काढण्याचा प्रयत्न केला.

सोशल मीडिया आणि महिला:-

आज एकूणच महिलांमध्ये व्हाट्सअप ,एस .एम .एस .आणि मनोरंजनाची इतर साधने वापरण्याचे प्रमाण जास्त वाढले आहे. शहरातलं जाऊ द्या; पण आता खेड्यातही हातातली कामं बाजूला ठेवून टीव्हीवरील मालिका पाहणाऱ्या महिलांची संख्या वाढत आहे. घरातील काम, मुलांचा अभ्यास, किंवा नोकरीतील कामं, दुर्लक्षित करून व्हाट्सअप वर चॅटिंग करणाऱ्या महिला पाहिल्या की मनाला वेदना होतात. दर मिनिटाला मोबाईल वर आलेला मेसेज घेतलाच पाहिजे. ते आपल्या जीवनाचे किती कर्तव्य आहे. असा दळभद्री विचार महिलांमध्ये वाढतो आहे. अगदी जेवताना एखाद्या समारंभात असताना, शिक्षिका असेल तर शिकविताना सुद्धा आपलं सारं लक्ष मेसेज कडे देणाऱ्या महिला कमी नाहीत.

सोशल मीडियाचा वापर करून केला पाहिजे, पण तो कसा केंव्हा आणि कशासाठी हे महत्त्वाचं नाही का? " डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी ज्ञान वृद्धीसाठी वर्तमान पत्रसाराख्या माध्यमाचा फार प्रभावीपणे वापर केला होता हे न विसरता आज आपल्या हातात जी माध्यम आहेत त्याचा वापर ज्ञान मिळवण्यासाठी, समाज परिवर्तनासाठी ,समानता रुजवण्यासाठी करायचा की केवळ शैक्षणिक विरंगुळ्यासाठी हा विचार सर्व लहान-मोठ्यांनी करण्याची वेळ आली आहे."^३

आदिवासी महिलांच्या समस्या व डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे विचार:-

आदिवासी, भटक्या आणि विमुक्त जमातीतील स्त्रियांचे प्रश्न तर अधिक जटिल आहेत. भारतात अजूनही असे कितीतरी समूह आहे की त्यांना अजून आपले हक्क माहीत नाहीत. सामाजिक परिवर्तन कशाला म्हणतात, हे त्यांना माहित नाही. कष्ट करून पोटाची खळगी भरणे एवढेच त्यांचं भावविश्व आहे. अशा कष्टकरी, उपेक्षित महिलांना सामाजिक न्याय मिळावा म्हणून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी राज्यघटनेत तरतुदी केल्या परंतु त्यांना अज्ञानी ठेवण्यातच इथल्या राजकीयसत्तेचे भलं सामावलेल आहे. शासनाने घोषित केलेल्या शासकीय योजना अशा उपेक्षित महिला पर्यंत पोहोचत नाहीत, हे आपल्या लोकशाहीचे दुर्दैव म्हणावेलागेल. स्त्री पुरुष समानतेचे नारे आपण दिले, शासनाच्या पातळीवर अनेक कायदेही तयार झाले परंतु भारतीय माणसाच्या मनात स्त्री पुरुष समानता खरंच रुसले आहे का? या प्रश्नाचे उत्तर नाही असंच आहे. आपल्या अनेक धर्मग्रंथांच्या पानापानात स्त्री दुय्यम आहे तिला शूद्रातिशूद्र मानून कर्मठ धर्मग्रंथ आणि सतत दरी निर्माण केली आहे. "डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांसात त्यानं धर्मग्रंथाची चिकित्सा करा."^४ असे म्हणत होते, त्यात शूद्रातिशूद्र महिलांना न्याय मिळेल असा एक अर्थ होता.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या दृष्टिकोनातून स्त्री पुरुष समानता:-

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी स्त्रियांना पुरुषांबरोबरच समान हक्क देण्यासाठी अधिक परिश्रम घेतले. समाजातील उच्च वर्णांच्या महिलांला नेहमीच दुय्यम स्थान दिले. परंतु डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या प्रयत्नातून महिलांचे सक्षमीकरण झाल्याचे दिसून येते. महिलांच्या उद्धाराचे कार्य करत असताना आंबेडकरांनी "शिक्षणाचा अधिकार, वारसा हक्क, हिंदू कोड बिल, समान वेतन, प्रसूती रजा"^५ इ.चे हक्क मिळवून दिले. हे आपणाला विसरता येत नाही.

समाजाचा महिला कडे मनोरंजनाचे साधन म्हणून पाहण्याचा दृष्टिकोन:-

आपल्यासमाजात रुजलेल्या पारंपारिक लोककला मध्ये वावरणाऱ्या महिलांचे प्रश्नहीअधिक गंभीर आहेत. महिला जसे चूल आणि मुलाचे हकदार असते तशीच ती मनोरंजनाचंशुंगाराचं ठिकाण असते; अशी एक चुकीची समजूत तयार झालेली आहे. तमाशा, लावणी, संगीत वारी, जागरण गोंधळ, अशा कितीतरी लोककलांमध्ये नाचणाऱ्या महिला कडेसमाजाने सन्मानाला पाहिलं क? नाही. त्या नेहमीच पुरुषांच्या शुंगारिक भूकभागवणारी ठिकाण बनल्या." महात्मा फुले यांनी स्त्रियांच्या उद्धाराचे कार्यकेले. आंबेडकरांनी फुले यांच्या विचारांना कायद्याचा आधार देऊन कृतीतआणलं."6

निष्कर्ष:-

- 1) डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी समाजातील उच्चवर्णीयांचा महिलांकडे पाहण्याचा दृष्टिकोन बदलण्यासाठी कठोर कायदे तयार केले.
- 2)डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी हिंदू धर्मातील महिलांचे प्रश्न सोडवण्यासाठी संसदेत हिंदू कोड बिल मंजूर केले.
- 3)डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी महिलांना वडिलोपार्जित संपत्ती समान वारसाहक्क मिळवून दिला.
- 4)डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी महिलांना शैक्षणिक हक्क मिळवून दिला.
- 5)डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी महिलांच्या हक्कासाठी फुले यांच्या विचारांना कायद्याचा आधार देऊन कृतीत आणले.
- 6)डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या विचारातून महिला ही मनोरंजनाचे साधन नसून संस्कारांचे साधन आहे असे दिसून येते.

समारोप:-

भारतातस्त्री शिक्षणाचा पाया महात्मा ज्योतिबा फुले यांनी घातला. महात्माज्योतिबा फुले यांनी महिलांच्या उद्धाराचे कार्य केले. डॉ. बाबासाहेबआंबेडकरांनी फुले यांच्या विचारांना कायद्याचा आधार देऊन कृतीत आणलेसावित्रीबाई फुले, ताराबाई शिंदे अशा समाज मातांनी स्त्रियांना सन्मानमिळावा म्हणून आपला आयुष्य वेचलं: पण महात्मा ज्योतिबा फुले आणि डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांना अपेक्षित असलेला सन्मान महिलांना अजून मिळाला आहे, असं धाडसाने म्हणता येत नाही. अजूनही भारतात असंख्य पुरुषांच्या मनात महिलाबद्दल वर्चस्वाच्या पारंपारिक कल्पना आहेत. हे सर्वच पुरुषांच्या बाबतीतनाही. परंतु ज्या पुरुषांच्या मनात महिला बद्दल वर्चस्व भावना आहे. तीवर्चस्व भावना त्यांच्या मनात कुणी टाकली? कर्मठ धर्मग्रंथ, खुळचटपरंपरा,अंधश्रद्धा आणि निडर झालेली वर्चस्ववादी समाज भावना यांनी हे सारेअनर्थ केले असेच म्हणता येईल.

संदर्भ ग्रंथ:-

- 1)डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, ए.के. घोरपडे निराली प्रकाशन, पुणे, पा.न.44
- 2) आंबेडकर बी. आर. बहिष्कृत भारत, 3 जून 1927.
- 3)आंबेडकर बी. आर., जातीव्यवस्थेचे उच्चाटन, प्र.92
- 4) पत्राच्या अंतरंगातून, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, डॉ. माधुरी खरात, श्री. समर्थ प्रकाशन, पुणे- 30, 2001
- 5) भीमराव रामजी आंबेडकर- 'हिंदू नारी का स्थान और पतन' प्रथम संस्करण भाषांतरकार श्री श्रीवर्धनजी- लखनऊ 1963 प्र.क्र. 123
- 6) डॉ.आंबेडकरआणिस्त्रीमुक्ती, प्रतिमापरदेशी, पुणे.1996 प्र.11

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे आर्थिक विचार

डॉ. घन आनंद लक्ष्मीकांत

सहयोगी प्राध्यापक सैनिक शास्त्र पुण्यक्षोक अहिल्यादेवी होळकर महाविद्यालय

राणीसावरगाव ता. गंगाखेड जि. परभणी-४३१५३६

anandghan63@gmail.com

प्रस्तावना

महामानव, भारतरत्न, अर्थतज्ञ, घटनाकार डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी देशाच्या राजकीय, सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक अशा सर्वच क्षेत्रांमध्ये आमूलाग्र बदल घडवून आणण्याचे केवळ प्रयत्न केले नाही तर प्रत्यक्षात ते बदल घडवून आणले. आज जी काही प्रगती भारताची झालेली आपल्याला प्रत्यक्ष स्वरूपात दिसते त्याचे खूप मोठे श्रेय हे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या महान कार्याला जाते असे निःसंशय म्हणता येईल. बाबासाहेबांची अर्थनीती देशाला आजही मार्गदर्शक आहे. बाबासाहेबांच्या भारतीय आर्थिक विचार परंपरेतील योगदानाचा अभ्यास करण्याचा प्रयत्न केला आहे.

संशोधनाची उद्दीष्टे:

1. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे आर्थिक विचार जाणून घेणे.
2. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे आर्थिक कार्य जाणून घेणे.
3. सद्यस्थितीत डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या विचारांची समर्पकता अभ्यासणे.

प्रत्यक्षात जरी मुख्य विषय बाबासाहेब आंबेडकरांच्या आर्थिक विचार हा असला तरी बाबासाहेबांच्या आर्थिक विचारांचा उगम हा त्यावेळच्या भारतीय सामाजिक, धार्मिक व राजकीय परिस्थितीमधून निर्माण झालेला आहे. त्यामुळे याठिकाणी त्या सर्व परिस्थितींचा थोडक्यात आढावा घेणे गरजेचे आहे. भारताच्या एकूण प्रगतीसाठी आवश्यक असलेल्या सर्वच क्षेत्रांमध्ये बाबासाहेबांचे योगदान 'न भूतो ना भविष्यति' असे आहे. समाजाच्या शैक्षणिक विकासाचा राष्ट्राच्या विकासामध्ये सिंहाचा वाटा असतो, अशी बाबासाहेबांची ठाम धारणा होती. त्यामुळे त्यांनी प्राथमिक शिक्षण मोफत व सक्तीचे करण्याची तरतूद भारतीय राज्यघटनेमध्ये केली. त्याचाच दृश्य परिणाम म्हणजे स्वातंत्र्य मिळताना असलेली 10-12 टक्के असलेली साक्षरता आज 74-75 टक्के इतकी झालेली दिसते. स्त्रिया व समाजातील इतर सर्व उपेक्षित वर्गांच्या शिक्षणाबद्दल बाबासाहेब कमालीचे जागरूक होते. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचा असा विश्वास होता की, शिक्षणाशिवाय कोणत्याही व्यक्तीच्या सर्व क्षमतांचा पूर्णपणे विकास होणे अशक्य आहे. त्यामुळेच औरंगाबाद येथे मिलिंद महाविद्यालयाची स्थापना करत असताना त्यांनी असे म्हटले होते की, 'हिंदू समाजाच्या अगदी खालच्या थरातून आल्यामुळे शिक्षणाचे महत्त्व किती आहे, हे मी जाणतो. खालच्या समाजाची उन्नती करण्याचा प्रश्न आर्थिक असल्याचे मानण्यात येते. पण हे चूक आहे. कारण, हिंदुस्थानातील दलित समाजाची उन्नती करणे म्हणजे त्यांच्या अन्न, वस्त्र, निवाऱ्याची सोय करून पूर्वीप्रमाणे त्यांना उच्चवर्गाची सेवा करण्यास भाग पाडणे नव्हे. खालच्या वर्गाची प्रगती मारून त्यांना दुसऱ्याचे गुलाम व्हावे लागत असल्यामुळे त्यांच्यात निर्माण होणारा न्यूनगंड नाहीसा करणे, हे खरे शिक्षणाचे ध्येय आहे. आमच्या सर्व सामाजिक दुखण्यावर उच्चशिक्षण हेच एकमेव औषध आहे' आणि म्हणूनच डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी 'पीपल्स एज्युकेशन सोसायटी'ची स्थापना करून त्यामार्फत मुंबई येथे सिद्धार्थ कॉलेज व औरंगाबाद येथे मिलिंद कॉलेज सुरु करून समाजातील वंचित घटकांच्या मोफत शिक्षणाची आपल्या परीने सोय करण्याचा प्रयत्न केला. समाजसुधारणांच्या क्षेत्रांमध्ये डॉ.

बाबासाहेब आंबेडकर यांच्याइतके मोलाचे कार्य करणारा दुसरा एखादा समाज सुधारक क्वचितच सापडेल. त्यांच्यापूर्वी भारतीय सामाजिक सुधारणा चळवळींच्या इतिहासामध्ये अनेक विचारवंत जरी होऊन गेले असले तरी बाबासाहेबांचा दृष्टिकोन हा पूर्णपणे वेगळा असल्याचे दिसते कारण काही सन्माननीय अपवाद वगळता सर्वच विचारवंतांनी प्रचलित सामाजिक स्थितीमध्ये छोट्या-मोठ्या सुधारणा करण्याचा प्रयत्न केलेला होता. परंतु, बाबासाहेबांनी मात्र संपूर्ण प्रस्थापित समाज व्यवस्थाच नाकारून एकूण समाजाच्याच पुनर्रचनेची आग्रही मागणी केली. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे असे ठाम मत होते की, 'धर्म हा माणसासाठी, माणसाच्या भल्यासाठी असला पाहिजे ना कि माणूस हा धर्मासाठी.' प्रस्थापित समाजाने मागास जातीतील लोकांच्या न्याय्य हक्कांच्या संरक्षणासाठी जाणीवपूर्वक प्रयत्न केले पाहिजेत, अशी बाबासाहेबांनी भूमिका घेतली होती. परंतु जेव्हा प्रस्थापित धर्म धुरिणांनी त्यांच्या या न्याय्य मागणीकडे दुर्लक्ष केले. याचाच परिपाक म्हणजे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या नेतृत्वाखाली दि. १४ ऑक्टोबर, १९५६ रोजी नागपूरच्या पावनभूमीत त्यांच्या लाखो अनुयायांनी बौद्ध धर्माची दीक्षा घेऊन अन्यायी धर्मव्यवस्थेविरोधी पाऊल टाकले. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे कार्य भारतीय समाजाच्या एकूणच प्रगतीच्या दृष्टिकोनातून महत्त्वाचे ठरते. याचे प्रमुख कारण म्हणजे त्यांनी नेहमीच भारतातील सर्व जाती-धर्मांमध्ये विखुरलेल्या आणि संख्येच्या दृष्टीने अल्पसंख्य असलेल्या सर्व समाजघटकांच्या हिताचे रक्षण केलेले आढळून येते आणि म्हणूनच त्यांनी भारतीय राज्यघटनेचा मसुदा तयार करत असताना सर्व अल्पसंख्याकांच्या हिताचा विचार करून त्यासाठी खास तरतुदी केल्याचे दिसते. एकूणच गंभीरपणे विचार करण्यास प्रवृत्त करणार्या भारतीय सामाजिक-धार्मिक-शैक्षणिक-राजकीय परिस्थितीचा प्रभाव डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या आर्थिक विचारांवर पडल्याशिवाय राहिला नाही, असे त्यांच्या आर्थिक विचारांचा अभ्यास करताना दिसून येते. एवढेच नव्हे तर असेही म्हणता येईल की, बाबासाहेबांचे आर्थिक विचार हे त्यांच्या सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक व राजकीय विचारांचाच परिपाक आहेत.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी मुंबई विद्यापीठातून १९१२ साली अर्थशास्त्र व राज्यशास्त्र या विषयांची पदवी मिळविली होती. त्यानंतर १९१५ साली त्यांनी अमेरिकेच्या कोलंबिया विद्यापीठातून अर्थशास्त्र हा विषय घेऊन एम.ए. ही पदवी संपादन केली. त्यासाठी त्यांनी 'Ancient Indian Commerce' या विषयावर प्रबंध सादर केला होता. येथूनच बाबासाहेबांनी एम.ए.ची दुसरी पदवी 'National Dividend of India--A Historic and Analytical Study' हा प्रबंध सादर करून मिळविली. त्याशिवाय त्यांनी कोलंबिया विद्यापीठाला सादर केलेल्या "The Evolution of Provincial Finance in British India" या प्रबंधास डॉक्टरेटची पदवी मिळाली. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी इंग्लंड येथे 'लंडन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स'मधून एम.ए. व डी. एस्सी या पदव्या मिळविल्या. त्यांनी सादर केलेला 'The problem of the Rupee' हा प्रबंध फार गाजला. डॉ. आंबेडकरांना एक अजोड अर्थतज्ज्ञ अशी ख्याती मिळवून देण्यात यशस्वी ठरला. याचाच अर्थ असा आहे की, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचा मुख्य विषय अर्थशास्त्र होता. ते एक प्रशिक्षित अर्थशास्त्रज्ञ होते. त्यावेळच्या शैक्षणिक मानदंड व गरजेनुसार त्यांनी अर्थशास्त्र या विषयावर विपुल लेखनही केले आहे. या लिखाणामध्ये प्रामुख्याने कृषी-उद्योग विषयक विचार, शेती व शेतकऱ्यांचे शोषण करणारी खासगी सावकारी बंद करण्याबाबतचे विचार, आदर्श चलन पद्धतीबाबतचे विचार, आर्थिक व्यवस्थेमधील जातींचे स्थान याविषयीचे सखोल विवेचन, ईस्ट इंडिया कंपनीचे अर्थकारण, भारतीय रिझर्व्ह बँकेच्या स्थापनेबाबतचे विचार, देशातील आयुर्विम्यासारख्या काही मूलभूत उद्योगांचे राष्ट्रीयीकरण करण्याबाबतचे विचार, स्त्रियांच्या आर्थिक स्वातंत्र्याबाबतचे विचार, कामगारांच्या आर्थिक उन्नतीबाबतचे विचार आणि सर्वांत महत्त्वाचे म्हणजे भारतातील अस्पृश्य जातींच्या आर्थिक-सामाजिक-राजकीय उत्थानाबाबतचे विचार इत्यादींचा याठिकाणी उल्लेख करणे आवश्यक आहे.

बाबासाहेबांनी अर्थशास्त्रात विपुल लिखाण केले असून, या विषयावर त्यांची तीन प्रमुख पुस्तके आहेत.

1. अॅडमिनिस्ट्रेशन अॅड फायनान्स ऑफ दि ईस्ट इंडिया कंपनी
2. दि इव्होल्यूशन ऑफ प्रोव्हिन्शियल फायनान्स इन ब्रिटिश इंडिया आणि
3. दि प्रॉब्लेम ऑफ द रुपी : इट्स ओरिजिन अॅड इट्स सोल्यूशन.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी अर्थशास्त्राविषयक जे प्रमुख ग्रंथ लिहिले, त्यामध्ये त्यांच्या 'Ancient Indian Commerce' या ग्रंथाचे महत्त्वाचे स्थान आहे. येथे बाबासाहेबांनी ईस्ट इंडिया कंपनीच्या १७९२ ते १८५८ या काळातील आर्थिक व्यवहाराबाबत अतिशय सखोल असे विवेचन केले आहे. त्यांच्या 'The Evolution of Provincial Finance in British India' या ग्रंथामध्ये त्यांनी १८३३ ते १९२१ या ब्रिटिशकालीन भारतात वित्तीय व्यवहारांमधील केंद्र आणि राज्य संबंधांचा ऊहापोह केला आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी लंडन विद्यापीठाला सादर केलेल्या 'The Problem of the Rupee' या प्रबंधाचे पुढे जाऊन 'लंडन पी. एस. किंग सन' प्रकाशकाने 'The Problem of the Rupee' या नावाने १९२३ साली पुस्तक रूपात प्रकाशित केला आहे. सदर 'The Problem of the Rupee' या पुस्तकाची मांडणी जरी डॉ. आंबेडकरांनी अर्थशास्त्राचा केवळ एक विद्यार्थी या नात्याने केलेली असली तरी हे पुस्तक वाचत असताना असे आढळून येते की, डॉ. आंबेडकरांनी व्यक्त केलेली मते आणि ती सिद्ध करण्यासाठी त्यांनी मांडलेले मुद्दे एखाद्या निष्णात अर्थतज्ज्ञासारखे आहेत. सदर पुस्तकात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी इ.स. १८०० ते इ.स. १८९३ पर्यंतच्या जवळ-जवळ १०० वर्षांच्या कालखंडात विनिमयाचे एक माध्यम म्हणून भारतीय रुपयाची उत्क्रांती कस-कशी होत गेली व भारतासारख्या देशाला कोणती परिमाण पध्दती अधिक उपयुक्त किंवा फायदेशीर ठरेल याबाबतचे अतिशय सखोल व अभ्यासपूर्ण विवेचन केलेले आहे. त्यावेळी प्रचलित असलेल्या सुवर्ण परिमाण (अर्थव्यवस्थेतील देवाण-घेवाणीसाठी सुवर्ण नाण्यांचा वापर करणे) व सुवर्ण विनिमय परिमाण (अर्थव्यवस्थेतील देवाण-घेवाणीसाठी कागदी चलनाचा वापर करणे) या दोहोंपैकी भारताला कोणती पध्दत अधिक उपयुक्त ठरेल याविषयीचा वाद अर्थशास्त्रज्ञांमध्ये चालू होता. त्यावेळचे प्रसिद्ध अर्थशास्त्रज्ञ प्रा. केन्स यांचे असे मत होते की, इतर अनेक देशांप्रमाणे भारताला सुवर्ण विनिमय परिमाण पध्दती ही अधिक उपयुक्त व परिणामकारक ठरेल कारण त्यातील लवचिकतेमुळे जेव्हा हवे तेव्हा कागदी चलनाचे सोन्यामध्ये रूपांतर करता येऊ शकते. परंतु प्रा. केन्स यांच्या या मताशी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर सहमत नसल्याचे त्यांच्या पुस्तकात नमूद करण्यात आलेले आहे. डॉ. आंबेडकरांच्या मते, सुवर्ण विनिमय परिमाण पध्दतीतील लवचिकता हा गुणधर्म जरी चांगला असला तरी त्यामुळे भारतातील प्रत्यक्ष चलन निर्मितीवर त्याचे काहीही नियंत्रण असणार नाही. याचा परिणाम अतिरिक्त चलन निर्मितीमध्ये होऊन देशांतर्गत बाजारपेठेमध्ये महागाई वाढेल. याचाच अर्थ असा की, रुपयाची एकूणच क्रयशक्ती कमी होईल आणि त्यामुळे विनिमयाचे साधन म्हणून रुपया अस्थिर होईल. आपला मुद्दा अधिक स्पष्ट करण्यासाठी डॉ. आंबेडकर म्हणतात की, "रुपयाला सोन्याच्या किंमतीबरोबर असलेले साम्य कायम ठेवण्यात अपयश आलेले आहे. त्यामुळे तो आपली क्रयशक्ती गमावून बसला आहे" आणि म्हणूनच त्यांचे ठाम मत होते की, रुपयाचे मूल्य स्थिर राहण्यासाठी चलन निर्मितीवर नियंत्रण असले पाहिजे. आणि ते करण्यासाठी ज्याप्रमाणे लोकांना टांकसाळी बंद असतात, त्याप्रमाणे त्या सरकारलाही बंद केल्या पाहिजेत. जेव्हा वाटेल तेव्हा व जितकी वाटेल तितकी चलन निर्मिती केल्यामुळेच चलन फुगवटा होऊन महागाई वाढेल आणि आंतरराष्ट्रीय पातळीवर रुपयाचे मूल्य कमी होईल. म्हणजेच आपल्या काही मूलभूत गरजा भागविण्यासाठी भारताला आंतरराष्ट्रीय बाजारपेठेमध्ये अधिक रुपये देऊन खरेदी करावी लागेल. याचा पुढील परिणाम म्हणजे देशावरील परकीय कर्जाचा डोंगर वाढत जाऊन शेवटी देशाच्या आर्थिक स्वातंत्र्याचा व पर्यायाने सार्वभौमत्वाचा प्रश्न निर्माण होईल. आणि असे होऊ देणे, हे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्यासारख्या प्रखर देशभक्ताला कदापीही मान्य होण्यासारखे नव्हते. म्हणजेच प्रचलित विनिमय पध्दती ही इंग्लंडच्या फायद्याची होती कारण पौंड खरेदी करण्यासाठी भारताला अधिक रुपये द्यावे लागत होते. म्हणूनच त्यांचा या विनिमय पध्दतीला विरोध होता, असे

दिसून येते. यावर उपाय सुचविताना डॉ. आंबेडकर म्हणतात की, निर्गमनाची एक निश्चित मर्यादा असलेला अपरिवर्तनीय रुपया हाच स्थिर राहू शकतो आणि त्यासाठी भारताने योग्य ती पावले उचलली पाहिजेत.

बॉम्बे लेजिस्लेटिव्ह असेम्ब्लीचे सदस्य असताना (१९२६) ग्रामीण भागातील गरिबांच्या समस्यांविषयीचे त्यांचे समग्र आकलन त्यांनी उभारलेल्या जनआंदोलनांमध्ये प्रतिबिंबित होते. शेतीमधील खोती पद्धतीविरुद्ध त्यांनी केलेल्या यशस्वी आंदोलनामुळे अनेक ग्रामीण गरिबांची आर्थिक शोषणातून मुक्तता झाली. महार वतन या नावाखाली सुरू असलेल्या शुद्ध गुलामगिरीविरुद्ध त्यांनी आवाज उठविल्यानंतर ग्रामीण भागातील गरिबांचा मोठा वर्ग शोषणमुक्त झाला. सावकारांच्या मनमानीला चाप लावण्यासाठी त्यांनी असेम्ब्लीमध्ये विधेयक आणले. औद्योगिक कामगारांच्या क्षेत्रात डॉ. आंबेडकरांनी १९३६ मध्ये स्वतंत्र मजूर पक्षाची स्थापना केली. त्याकाळी कामगारांचा आवाज बुलंद करणाऱ्या अन्य संघटना होत्याच; मात्र त्यांना अस्पृश्य कामगारांच्या मानवाधिकारांशी काहीही देणे-घेणे नव्हते. नव्या राजकीय पक्षाने ही उणीव भरून काढली. त्याचप्रमाणे व्हॉइसरॉयज् एक्झिक्युटिव्ह कौन्सिलचे कामगार सदस्य या नात्याने १९४२ ते १९४६ या काळात डॉ. आंबेडकर यांनी कामगारविषयक धोरणात आमूलाग्र सुधारणा घडवून आणल्या. त्यात सेवायोजन कार्यालयाची स्थापना ही महत्त्वपूर्ण घटना होती आणि स्वतंत्र भारतातील औद्योगिक संबंधांची तीच पायाभरणी ठरली. बाबासाहेबांनी पाटबंधारे, ऊर्जा आणि इतर सार्वजनिक बांधकामे ही खातीही सांभाळली. देशाचे पाटबंधारे धोरण निश्चित करण्यात त्यांनी महत्त्वाची भूमिका बजावली. दामोदर व्हॅली प्रकल्पाचा यात प्राधान्याने समावेश करावा लागेल. स्वातंत्र्यानंतर डॉ. आंबेडकर भारताचे पहिले कायदामंत्री बनले. १९४८-४९ मध्ये घटना समितीचे अध्यक्ष म्हणून भारतीय राज्यघटनेला आकार देतानाही त्यांच्यातील अर्थतज्ज्ञ आपल्याला दिसून येतो. मानवी अधिकारांचे मूलतत्त्व म्हणून त्यांनी लोकशाही राज्यव्यवस्थेचा ताकदीने पुरस्कार आणि पाठपुरावा केला. समता, स्वातंत्र्य आणि बंधुभाव या तीन लोकशाही तत्त्वांचा केवळ राजकीय हक्क असा संकुचित अर्थ लावला जाऊ नये, असे त्यांनी म्हटले आहे. सामाजिक आणि आर्थिक लोकशाहीचे ते खंदे पुरस्कर्ते होते आणि सामाजिक-आर्थिक लोकशाहीकडे दुर्लक्षून राजकीय लोकशाही टिकू शकणार नाही, असा इशाराही द्यायला ते विसरले नाहीत. डायरेक्टिव्ह प्रिन्सिपल्स ऑफ दि स्टेट पॉलिसी हा अनुच्छेद घटनेत समाविष्ट करून त्यांनी आर्थिक लोकशाहीचा हेतू विषद केला.

वरील सर्व ग्रंथातील डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या मतांचा व विचारांचा सखोल अभ्यास करता असे दिसून येते की, डॉ. आंबेडकर हे एक आंतरराष्ट्रीय दर्जाचे निष्णात अर्थतज्ज्ञ होते. सर्वात महत्त्वाचे म्हणजे त्यांचे अर्थशास्त्रीय विचार हे नेहमीच त्यांच्या समाजशास्त्रीय दृष्टिकोनावर आधारित होते व त्यामध्ये त्यांची समाजातील सर्व घटकांच्या सर्वांगीण विकासाची कळकळ असलेली दिसते. आणि म्हणूनच डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची ओळख ही केवळ एक अर्थशास्त्रज्ञ म्हणूनच नव्हे तर एक सहृदय समाजशास्त्री, आंतरराष्ट्रीय कीर्तीचे विधिज्ञ, न्याय व समतेचे पुरस्कर्ते, अभ्यासू मानव्यवंशशास्त्रज्ञ व भारतातील करोडो वंचितांचे उद्धारकर्ते म्हणून त्यांची ओळख असलेली त्यांच्या कार्यातून दिसून येते.

निष्कर्ष :

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची दृष्टी अतिशय सुक्ष्म होती. त्यांच्या सखोल अभ्यासामुळेच ते जगाच्या आर्थिक परिवर्तनाशी अवगत होते. भारतीय समाजात असलेली गरीबी व विषमता दूर करण्यासाठी त्यांनी ठोस उपाय सांगितले. शेती संदर्भातील विशेषतः छोट्या धारणक्षेत्राच्या बाबतीत मांडलेले विचार आजच्या परीस्थितीमध्ये उपयुक्त ठरतात. त्यांच्या विचारांच्या आधारे जर आपण धोरणे आखलीत तर निश्चीतपणे ग्रामीण भागातील शोषितांना त्यांचा न्याय हक्क मिळेल. आजही भारतीय राज्यघटनेत राज्य सरकार आणि केंद्र सरकार यांचे हितसंबंध ठरविण्यासाठी दर पाच वर्षांनी वित्त आयोग नेमावा लागतो. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे या संदर्भातील विचार पायाभूत मानावे लागतील. डॉ. आंबेडकरांच्या आर्थिक विचारांमध्ये स्वार्थाला कोणतेही स्थान नव्हते. त्यांच्या जीवनाचा उद्देश कमजोर वर्गाचा उद्धार करणे हो होता. बाबासाहेबांच्या मते विकासाच्या नैतिकतेचा मापदंड सामाजिक न्याय आहे. जोपर्यंत देशामध्ये बहुसंख्य लोकांना रोजगार व रोट्टी मिळणार नाही तोपर्यंत सामाजिक न्याय

हा केवळ देखावा आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या संपूर्ण विचारांमध्ये मानवतावादी सूत्रच सर्वत्र दिसते. त्यांनी खऱ्या स्वरूपात मानवतावादाच्या उपलब्धीसाठी श्रमाचे महत्त्व स्वीकारले आहे. ते मानवतावादी भावनांच्याप्रती समर्पित असे क्रांतीकारी अर्थतज्ञ होते.

संदर्भ :

1. पाटील जे. एफ., आर्थिक विचारांचा इतिहास, फडके प्रकाशन, कोल्हापूर, 2009
2. जाधव नरेंद्र, डॉ. आंबेडकरांचे अर्थशास्त्रीय लेखन, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर गौरव ग्रंथ, महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि संस्कृती मंडळ, मुंबई
3. <https://drambedkarbooks.com/2015/07/07/what-amartya-sen-said-about-dr-mbedkar/>
4. <https://drambedkarbooks.com/2015/02/23/dr-ambedkar-as-an-economist/>
5. पुढारी दि. १३/०४/२०१६ रोजीचा डॉ. नरेंद्र जाधव यांचा लेख
6. तरुण भारत 06/12/2020 डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर व त्यांचे भारतीय आर्थिक विचार परंपरेतील योगदान

थोर समाजशास्त्रज्ञ, सर्वांगपूर्ण राष्ट्रपुरुष: राजर्षी शाहू महाराज

डॉ. हिराचंद्र रोहिदास मोरे

मु. पो. पोखरापूर, ता. मोहोळ. जि. सोलापूर

hirachandramore@gmail.com

प्रास्ताविक:

हजारो वर्षे भारतीय समाज हा चातुर्वर्ण्य सरंजामशाही, जातीव्यवस्था, असामान, विषमतापूर्ण अशी ग्रामसंस्था यांना जोपासणारी असा होता. जात, कुळ, वतणे यांनी समाजाला नियंत्रित केल्याने ही समाजरचना हजारो वर्षे अबाधित राहिली. 'ठेविले अनंते तैसेचि रहावे | चित्ती असू द्यावे समाधान।' ही भावना जनमानसात रुढ केली गेली. समाज नियंत्रित ठेवण्यासाठी व्रतवैकल्ये, मंत्र-तंत्र, जारण-मारण, शकुन-अपशकुन, धर्मभोळेपणा, धर्मखुळेपणा, देवखुळेपणा, रुढी, दास्य, ग्रंथप्रामाण्यवाद, कर्मकांड यांना समाजात अशा पध्दतीने पेरले गेले की, हीच जीवन जगण्याची रीत आहे हे समाजाने पिढ्यानपिढ्या मनोमन स्विकारले. याला गौतम बुध्द, चार्वाक, म.वसवेश्वर, छ.शिवाजी महाराज यांनी वारंवार धक्के देऊन ही मानवताविहित समाजरचना मोडण्याचे प्रयत्न केले. परंतु ही विषमताधिष्ठित समाजरचना पुन्हाउभी करण्यास धर्माचे ठेकेदार वारंवार यशस्वी झाले. मावळयांच्या, रयतेच्या श्रमातून निर्माण झालेले छत्रपती शिवाजी महाराजांचे राज्य पेशव्यांनी बळकावले. परंतु 1918 रोजी पेशवाईचा अंत झाला आणि इंग्रजी राजवट आली. इंग्रजी राजवटीसोबत पाश्चात्य संस्कृतीचा उदय भारतामध्ये झाला. पाश्चात्य संस्कृती ही इहवादी, उद्योगप्रधान, विज्ञाननिष्ठ अशी होती. यातूनच भारतात आधुनिकतेचे वारे वाहू लागले. शिक्षणाचा प्रसार हे एक महत्वाचे कारण याला कारणीभूत होते. तरीही इंग्रजी राजवटीत मुठभर उच्चवर्गियांनी महत्वाच्या पदावर कब्जा करून पुन्हा बहुजन समाजावर अन्याय-अत्याचार सुरु ठेवले. परंतु बुध्द, चार्वाकाचे वैचारिक वंशज असणाऱ्या महात्मा फुले, राजर्षी शाहू महाराज, महाराज सयाजीराव गायकवाड, पंजाबराव देशमुख, राष्ट्रसंत गाडगे महाराज, महर्षी शिंदे, माधवराव बागल अशा अनेक अनेक समाजशास्त्रज्ञांनी सनातनी समाजरचना बदलण्यासाठी सामाजिक लढे दिले. पुढे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर या महान समाजशास्त्रज्ञाने या सर्वांच्या कार्यावर राज्यघटनानिर्मितीच्या माध्यमातून अखेरचा हात मारून या सर्वांचे नवसमाज निर्मितीचे स्वप्न सिध्दीस नेले.

यामध्ये महात्मा फुले यांनी शुद्रातिशुद्र, बहुजनांचा कैवार घेऊन अमुल्य अशी ग्रंथनिर्मिती केली. बहुजनांना लढण्याचे वैचारिक हत्यार दिले आणि हजारो वर्षांपासून सुरु असलेल्यावर्गीय, जातीय संघर्षाला वेगळे वळण दिले. त्यांच्याच विचारांचा वारसा घेऊन राजर्षी शाहू महाराज यांनी नवसमाजनिर्मितीचे, नवसमाज बाधणीचे कार्य केले. सत्तेच्या माध्यमातून हजारो वर्षांची परंपरा असणारी समाजरचना खिळखिळी केली आणि मानवतेची, समतेची मूल्ये जोपासणारा, डोळस समाज निर्माण केला.

राजर्षी शाहू महाराज:

आजवर जगात अनेक सत्ता आल्या आणि गेल्या. या सर्व सत्तांचा इतिहास हा जुलूमाचा, अन्यायाचा, अत्याचाराचा आहे. याला अपवाद फक्त छ. शिवाजी महाराज व राजर्षी शाहू महाराजांचा आहे. राजर्षी शाहू महाराजांचा जन्म कागलच्या घाटगे घराण्यात 26 जून 1874 साली झाला. कागलचे जहागीरदार जयसिंगराव आबासाहेब घाटगे व राधाबाई यांच्या पोटी त्यांचा जन्म झाला. त्यांचे मूळ नाव यशवंतराव होते. वयाच्या दहाव्या वर्षी कोल्हापूरचे राजे चौथे शिवाजी यांची राणी आनंदीबाई यांनी 18 मार्च 1884 रोजी त्यांना दत्तक घेतले व ते कोल्हापूर संस्थानाचे छत्रपती शाहू महाराज झाले. त्यांना 1885 मध्ये शिक्षणासाठी धाखाडला पाठवण्यात आले. तेथील चार वर्षांचे शिक्षण आटोपून पुढे ते एस.एम.क्रेजर यांच्या मार्गदर्शनाखली शिक्षण घेण्यासाठी धाखाडला गेले.

तेथे त्यांनी राज्यकारभार इंग्रजी भाषा, इतिहास या विषयांचे सखोल अध्ययन केले. 1891 साली त्यांचा विवाह लक्ष्मीबाई यांच्याशी झाला व 2 एप्रिल 1894 साली त्यांनी कोल्हापूर संस्थानच्या राज्यकारभाराची धुरा आपल्या हाती घेतली.

राजर्षी शाहू महाराजांचे सामाजिक कार्य:

1894साली वयाच्या विसाव्या वर्षी राजर्षी शाहू महाराजांच्या हाती सत्ता आली. त्यावेळी त्यांनी आपल्या संस्थानाची बारकाईने पाहणी केली असता असे आढळून आले की, संस्थानातील समाजात मागासलेपणा अधिक आहे. तो जातीपातीत विखुरलेला आहे. जातीयवादाने उच्छ्वाद मांडलेला आहे. साक्षरतेचे प्रमाण अत्यल्प आहे. जनतेला अज्ञान, अंधश्रद्धा, अनिष्ट रुढी, परंपरांनी जखडून ठेवलेले होते. चातुर्वर्ण्य समाजरचनेमूळे समाजात जातीभेदाची दरी फारच वाढली होती. मुठभर उच्चवर्णीय लोकांनी साऱ्या बहुजन समाजालाज्ञान, सत्ता, संपत्ती, शिक्षण यासर्वापासून लांब ठेवले होते. त्यामूळे सर्व बहुजनांचे, दीन-दलितांचे, अस्पृश्यांचे सर्वच क्षेत्रात शोषण होत होते. धर्माचे अवडंबर माजले होते. त्यामुळे महाराजांनी आपल्या सत्तेचा उपयोग बहुजनांच्या, दीन-दलित, दुःखी-पिडीत, शोषितांच्या उत्थानासाठी, प्रगतीसाठी करण्याचे ठरवले आणि त्यांनी आपले सारे आयुष्य या सर्वांच्या कल्याणासाठी झिजवले. शाहू महाराजांच्या रयतेच्या हितासाठीच्या लोककल्याणकारी कार्यामुळे विठ्ठल रावजी शिंदे यांनी त्यांना सर्वांगपूर्ण राष्ट्रपुरूष म्हणून गौरविले होते. राजर्षी शाहू महाराजांवर महात्मा फुले यांच्या विचारांचा फार मोठा प्रभाव होता. त्यांनी बहुजनांच्या उत्थानासाठी महात्मा फुल्यांनी बनवलेल्या सत्यशोधक समाजाचे विचार अंगिकारले होते. महात्मा फुले यांच्या प्रमाणेच महाराजांनीही शिक्षणाचे महत्व ओळखले होते. सर्व समाजाचा विकास करायचा असेल तर समाज सुशिक्षित बनवला पाहिजे हा विचार मनी ठेवून त्यांनी 1907 मध्ये 'मिस क्लार्क बोर्डिंग' नावाचे वसतिगृह स्थापन करून ज्या विद्यार्थ्यांना परिस्थितीमूळे शिक्षण घेता येत नव्हते अशा तळागाळातील विद्यार्थ्यांसाठी वसतिगृह सुरू केले. 1916 मध्ये त्यांनी प्राथमिक शिक्षण सक्तीचे व मोफत केले व शाळा, बोर्डिंग, महाविद्यालयातील विद्यार्थ्यांसाठी शिष्यवृत्त्या सुरू केल्या. त्यांना बहुजनाप्रतीफारच कळवळा होता. दलितांचे उध्दारक, घटनाकार डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे त्यावेळी शिक्षण घेत होते. बाबासाहेबांविषयी त्यांना फार अभिमान होता. अस्पृश्यातील एक मुलगा एवढे मोठे शिक्षण घेतो आहे हीच त्यांच्यासाठी फार कौतुकाची गोष्ट होती. त्यामूळे महाराज बाबासाहेबांचा सत्कार करण्यासाठी मुंबईतील बाबासाहेबांच्या घरी गेले. त्यांचा यथोचित सत्कार केला. त्यांच्या शिक्षणासाठी व 'मूकनायक' या वृत्तपत्रासाठी त्यांनी आर्थिक मदत केल्याने बाबासाहेबांना आर्थिक व मानसिक असा हातभार लागला.

वेदोक्त प्रकरण हे महाराजांच्या आयुष्यातील एक संघर्षशील पर्व होते. त्या प्रकरणाने सारा समाज ढवळून निघाला. राजघराण्यातील लोकांचे संस्कार हे वेदोक्त खोत्रानुसार करण्याचा पुर्वापार चालत आलेला प्रघात होता. परंतु महाराजांचे संस्कार तात्कालिन राजघराण्यातील ब्राम्हण पुजाऱ्यांनी वेदोक्त पध्दतीने करण्याचे नाकारले. व ते पुराणोक्त पध्दतीने सुरू केले. त्याला महाराजांनी हरकत घेतली. पुरोहित काही केल्या ऐकत नाहीत, वेदोक्त खोत्रांनी संस्कार करण्याचे नाकारत आहेत हे पाहिल्यानंतर त्यांनी पुजाऱ्यास हटवून एका मराठा तरूणाची ब्राम्हणेतर क्षत्र जगदगुरू (धर्मगूट) म्हणून नियुक्ती केली. 'आम्ही क्षत्रिय आहोत तर आमचे क्षत्रिय कर्म आम्हीच करू. त्यांच्यासाठी ब्राम्हणावर अवलंबून राहण्याचे वा जगदगुरू आज्ञा घेण्याचे काहीच कारण नाही. आमचा अधिकार स्वयंसिद्ध आहे, तो कोणी देण्याचे कारण नाही' असे त्यांनी पुजाऱ्यांना ठणकावून सांगितले. मुठभर मंडळी धर्माच्या जोरावर राजसत्तेला कशी जेरीस आणतात, हे साऱ्या महाराष्ट्राने पाहिले. परंतु महाराज मागे न हटता लढून राहिले. व लवकरच ते पुढे ब्राम्हणेतर चळवळीचे नेते बनले. साऱ्या बहुजन समाजाला त्यांनी एकत्र आणले. राजर्षी शाहू महाराज हे कर्ते समाजसुधारक होते. त्यांनी महिला मुक्तीसाठीही महत्वपूर्ण असे कार्य केले. 'देवदासी' ही समाजातील अशीच एक वाईट प्रथा होती. देवाच्या नावाने सोडलेल्या महिजेचे जीवन अतिशय किळसवाणे, त्रासदायक, अपमानकारक असे. ती संपूर्ण समाजाची भोगवस्तू मानली जायची. त्यांच्या अनौरस मुलांना बापही मिळत नसे या सर्वांचा विचार करून महाराजांनी 17 जानेवारी 1921ला अनौरस संतती व जोगतिणीचा कायदा केला. बालविवाहास प्रतिबंध केला. आंतरजातीय विवाहास कायद्याने मान्यता दिली. त्यांनी बहुजननांनी शिक्षण

ध्यावे म्हणून कोल्हापूराला वसतिगृहाचे जाळे निर्माण केले. शिक्षण सक्तीचे केले. कृषी व तंत्रशिक्षणाला प्राधान्य दिले. शिक्षणाची सक्ती मोडणाऱ्या पालकांना दंड सुरू केला. गावोगावी शाळा सुरू केल्या. इंग्रजी शिक्षणामुळे भारतीयांना तिसरा डोळा मिळाला असे महाराज सणसमारंभात सांगत. 1910 साली मोफत शिक्षणाचा कायदा केला. शिक्षणात स्त्री-पुरुष असा भेद केला नाही. मुलांबरोबर मुलीही शिकत होत्या. पुस्तकपेढी योजनासुरू करण्यात आली.

समाजात जाती-जातीमध्ये उच्च-नीचतेवरून, श्रेष्ठ-कनिष्ठतेवरून फार मोठी दरी असल्याचे महाराजांनी पाहिले होते. स्त्री शुद्रांना याचा त्रास होताच, परंतु याचा सर्वात जास्त फटका अस्पृश्यांना बसत होता. त्यांना सार्वजनिक ठिकाणी येण्यास मज्जाव होता, त्यांच्या सावलीचाही विटाळ मानला जात असे. महाराजांनी अस्पृश्यता ही संकल्पना दूर करण्यासाठी प्रयत्न केले. सर्व भारतवासीयांना स्वातंत्र्यानंतर आरक्षणाचा लाभ मिळाला परंतु महाराजांनी अस्पृश्य जातीसाठी आपल्या संस्थानामध्ये सरकारी नोकऱ्यांमध्ये आरक्षणाची तरतूद केली. समाजातील प्रत्येक सदस्यांसाठी, अस्पृश्यांसाठी शाळा, तलाव, विहीरी यासारख्या सार्वजनिक आस्थापनांचा समान वापर करण्याचा आदेश दिला. महाराजांनी आपल्या प्रजेच्या हितासाठी अनेक प्रकल्प सुरू केले. त्यांनी छत्रपती सुत आणि विणकाम गिरणीची स्थापना केली. बाजारपेठा व सहकारी संस्थांची स्थापना केली. शेतीचे आधुनिकीकरण करण्यावर भर देतानाच त्यांनी कृषीशी संबंधित आधुनिक उपकरणे घेण्यासाठी कर्ज देण्याची व्यवस्था केली. कृषी सुधारणा व प्रशिक्षण देण्यासाठी त्यांनी किंग एडवर्ड कृषी संस्था स्थापन केली. शेतीसाठी पाणी हा घटक महत्वाचा असल्याने त्यांनी 18 फेब्रुवारी 1907 रोजी राधानगरी धरणाचे काम सुरू केले. आणि हा प्रकल्प 1935ला पूर्ण झाला. आज कोल्हापूर संस्थान सुजलाम सुफलाम दिसते आहे. त्यात या धरणाचा महत्वाचा वाटा आहे. राजर्षी शाहू महाराज हे कला, क्रिडा, साहित्य, संस्कृतीचे फार मोठे संरक्षक होते. महाराजांनी अस्पृश्यांना हॉटेल, दुकान, उपहारगृहे चालवण्यासाठी आर्थिक मदत दिली. पारध्याच्या लोकांना तिजोरीच्या चाव्यादिल्या. त्यांना संस्थानात नोकऱ्या दिल्या. शेतीसाठी बंधारे बांधले. अल्लादिया खान यांसारख्या गायकाला, बाबुराव पेंटला राजाश्रय दिला. नाटक कंपन्या सुरू केल्या. शाहूपूरी ही बाजारपेठ सुरू गेली. समाजात बदल हे एका रात्रीत घडत नसतात. त्यासाठी राज्यकर्त्यांजवळ दूरदृष्टी आणि प्रामाणिकपणा असावा लागतो. महाराजांजवळ हे दोन्ही गुण होते. प्रजेसाठी राज्य यांच न्यायाने ते आयुष्यभर झटले. अशा या थोर महापुरुषांचे निधन 6 मे 1922 रोजी झाले.

समारोप:

राजर्षी शाहू महाराज हे आयुष्यभर सामाजिक समता प्रस्थापित करण्यासाठी, अस्पृश्य-बहुजन समाजाचा उध्दार करण्यासाठी झटले. राजर्षी शाहू महाराज आणि सामाजिक समता हे समीकरण महत्वपूर्ण आहे. त्यांनी महिला, बालविवाह, अस्पृश्य, बहुजन, शेतकरी, व्यापारी, कलाकार या सर्वांसाठी आपल्या सत्तेच्या माध्यमातून विकासाचा मार्ग उपलब्ध करून दिला. ते आयुष्यभर बहुजनांच्या विकासासाठी कार्य करीत राहिले. ते कृतिशील, प्रयोगशील राजे, समाजसुधारक, विचारवंत होते. त्यांनी कला, साहित्य, संस्कृती यांची वाढ होण्यासाठी प्रोत्साहन दिले. ते लोकांसाठी, सर्वसामान्यांसाठी झटणारे राजे होते. त्यांनी सर्वांना न्याय मिळावा, माणुसकीचे हक्क मिळावेत, अस्पृश्यांना समानतेची, माणुसकीची वागणूक मिळावी, वैज्ञानिकता अंगी यावी सासाठी सत्तेचा उपयोग केला.

राजर्षी शाहू महाराज यांचा जीवनपट:

26 जुलै 1874	लक्ष्मीविलास पॅलेस, बावडा, कोल्हापूर येथे जन्म
17 मार्च 1884	शाहूंचा दत्तकविधानाचा समारंभ राज्यारोहणाप्रीत्यर्थ करवीरच्या जनतेकडून शाहूंना मानपत्र. याप्रसंगी सार्वजनिक सभेकडूनही मानपत्र.
8 मे 1888	शाहूंच्या हस्ते 'कोल्हापूर-मिरज रेल्वेमार्गा'ची पायाभरणी
1 सप्टेंबर 1895	सौ. राधाबाई ऊर्फ खमाबाई कृष्णराव केळवकर यांची 'स्त्री-शिक्षण खात्याची अधीक्षक' म्हणून नेमणूक.
31 जुलै 1897	शाहूंना पहिले पुत्ररत्न-राजाराम महाराज यांचा जन्म

इ.स. 1898	करवीर संस्थानात प्लेग व दुष्काळ यांचे थैमान, त्यांच्या निवारणार्थ शाहूंच्या अनेक उपाययोजना
नोव्हेंबर 1899	शाहू स्नानासाठी पंचगंगा नदीवर गेले असतावेदोक्त प्रकरण घडले. कोल्हापूरचा राजवाडा, पन्हाळयाचा राजवाडा व ब्रिटिश राजप्रतिनिधींचे कार्यालय ही ठिकाणे प्लेगविरोधी कार्याला वेग यावा म्हणून दूरध्वनीने जोडली.
24मे 1900	सम्राज्ञी व्हिक्टोरियाकडून वाढदिवसानिमित्त शाहूंच्या प्रजाहिताची कर्तव्यनिष्ठा पाहून त्यांना 'महाराज' ही पदवी.
1ऑक्टोबर 1901	राजवाडयातील धार्मिक विधी वेदोक्त पध्दतीनेच करावेत अशी शाहूंची राजाज्ञा.
16एप्रिल 1902	वेदोक्त समितीचा अंतिम अहवाल. शाहूंना वेदोक्तांचा संपूर्ण अधिकार.
6मे 1902	राजोपाध्ये यांचे इनाम व अधिकार जप्त.
26जुलै 1902	नेपल्समधील 'माऊंट व्हेसुव्हिअस' ज्वालामुखीस शाहूंची भेट.
10जुलै 1905	शाहूंना वेदोक्तांचा पूर्ण अधिकार असल्याचे करवीर शंकराचार्यांकडून जाहीर.
14 एप्रिल 1908	अस्पृश्य वसतिगृहाची कोल्हापुरात सुरुवात. दलितोद्धाराचे कार्य करणाऱ्या वसतिगृहास 'मिस क्लार्क वसतिगृह' हे नाव.
नोव्हेंबर 1909	'राधानगरी धरणा'च्या बांधकामास लक्ष्मीबाई राणीसाहेबांच्या हस्ते शुभारंभ.
11जानेवारी 1911	कोल्हापूर येथे 'श्री शाहू सत्यशोधक समाजा'ची स्थापना. अध्यक्षपदी भास्करराव जाधव.
20मे 1911	आर्थिकदृष्ट्या दुर्बल असलेल्यांनाफी माफीचाशाहूंचा निर्णय.
सप्टेंबर 1911	महारांच्या वतनी जमिनी रयतावा.
24सप्टेंबर 1911	मागासलेल्या जातीच्या विद्यार्थ्यांना फी माफ.
28मे 1913	प्रत्येक गावात शाळा स्थापण्याचा शाहूंचाजाहिरनामा.
जुलै 1913	धार्मिक विधींचे प्रशिक्षण देण्यासाठी 'सत्यशोधक शाळा' स्थापन. विठ्ठलराव डोणो प्रमुख.
जुलै 1917	'विधवा पुनर्विवाह कायदा' व 'विवाहनोदणी कायदा' याची अंमलबजावणी.
8 सप्टेंबर 1917	सक्तीच्या मोफत प्राथमिक शिक्षणाचा जाहिरनामा.
30 सप्टेंबर 1917	शाहूंच्या हस्ते 'सक्ती-शिक्षण' मोहिमेला शुभारंभ.
22फेब्रुवारी 1918	'बलुतेदारी पध्दत' कायद्याने बंद.
23 फेब्रुवारी 1918	कोल्हापूर संस्थानात 'मिश्र वा आंतरजातीय विवाहाला पाठिंबा देणारा कायदा' जारी.
25 जून 1918	परंपरागत कुलकर्णी वतने रद्द.
26जून 1918	महारांवर कामाची सक्ती न करण्याचा व त्यांच्याजमिनी त्यांच्या नावावर करण्याचा शाहूंचा जाहिरनामा.
27जुलै 1918	अस्पृश्यांची गुलामगिरी नष्ट करणारा व त्यांना मानवी स्वातंत्र्याचे हक्क देणारा शाहूंचा जाहिरनामा.
29जुलै 1918	वंशपरंपरागत कुलकर्णी नेमणूक पध्दत बंद. त्याऐवजी पगारी तलाठी

- नेमण्याची पध्दत सुरू केल्याची शाहूंची राजाज्ञा.
- 1ऑगस्ट 1918 गुन्हेगारी जातीच्या लोकांची हजेरी पध्दत बंद करावी म्हणून शाहूंची राजाज्ञा.
- 8ऑगस्ट 1918 राज्यातील सरकारी व सर्वसाधारण खात्यांत अस्पृश्यांना अग्रक्रम द्यावा म्हणून शाहूंचा आदेश.
- 10ऑगस्ट 1918 अस्पृश्य समाजातील जे तलाठी बुद्धिमान व कार्यक्षम आढळतील त्यांना कारकून किंवा अव्वल कारकूनही नेमावे म्हणून शाहूंची राजाज्ञा.
- 1जानेवारी 1919 प्राथमिक, माध्यमिक शाळा व महाविद्यालयातील अस्पृश्य मुलांना स्पृश्य मुलांसारखीच समानतेची वागणूक द्यावी, म्हणून शिक्षण खात्याला शाहूंची राजाज्ञा.
- 5फेब्रुवारी 1919 डॉ. कुर्तकोटी यांची करवीर पीठाच्या शंकराचार्य पदावरून हकालपट्टी.
- 2ऑगस्ट 1919 'स्त्रियांचा छळ व घटस्फोट' याविषयी स्त्रियांना संरक्षण देणारा कायदा जारी.
- 30सप्टेंबर 1919 अस्पृश्यांच्या वेगळ्या शाळा बंद.
सरकारी शाळांमध्ये सर्व जाती-धर्मांच्या मुलांना प्रवेशा.
शाळांतील स्पर्शास्पर्श प्रथा बंद-शाहूंची राजाज्ञा.
- 6ऑक्टोबर 1919 मागासलेल्या वर्गातील मुलींना व स्त्रियांना मोफत शिक्षण.
खर्चाची सोय.
- 8ऑक्टोबर 1919 संस्थानातील सर्व सरकारी व सार्वजनिक ठिकाणे अस्पृश्यांना खुली.
- 17जानेवारी 1920 हिंदू वारसा हक्काचा नवीन कायदा संमत.
जोगिणी-देवदासी प्रथेचे निर्मूलन करण्याचा प्रयत्न.
- 31जानेवारी 1920 शाहूंच्याआश्रयाखली डॉ. आंबेडकरांच्या 'मूकनायक' साप्ताहिकाची सुरुवात.
फ्रेजर यांच्या हस्ते 'दि किंग एडवर्ड मोहमेडन एज्युकेशन सोसायटी'च्या वसतिगृहाच्या इमारतीची पायाभरणी.
- 22मार्च 1920 माणगाव येथे 'दख्खन अस्पृश्य समाज परिषद' -परिषदेचे शिल्पकार शाहू-अध्यक्ष डॉ. आंबेडकर-शाहूंकडून आंबेडकरांचा गौरव.
- 15एप्रिल 1920 शाहूंच्या हस्ते नाशिक येथे 'श्री उदाची मराठा विद्यार्थी वसतिगृहा'ची पायाभरणी.
- 7जून 1920 महारांना गुलामगिरीतून पूर्णपणे मुक्त केल्याची शाहूंची राजाज्ञा.
- 15जून 1920 राजवाड्यातील धार्मिक विधी ब्राम्हणेतर पुरोहितांकडून करण्याची शाहूंची राजाज्ञा.
- फेब्रुवारी 1922 महात्मा गांधी व शाहू यांची कुरुक्षेत्र येथे भेट.
- 6 मे 1922 सकाळी 6 वाजता, वयाच्या 48व्या वर्षी मुंबईतील खेतवाडीतील 'पन्हाळा लॉज' बंगल्यात शाहूंचे आकस्मिक निधन.
युवराज राजाराम हे 'छत्रपती' म्हणून घोषितत.
मध्यरात्री शाहूंचे शव कोल्हापुरात पोहोचले.

संदर्भ:

- 1.राजर्षी शहू महाराज- धनंजय कीर
- 2.समाजक्रांतीकारक राजर्षी शाहू छत्रपती- डॉ. जयसिंगराव पवार

सामाजिक क्रांतीचे प्रणेते : महात्मा जोतीबा फुले

प्रा. डॉ. अभिमन्यू गेना ओहळ

सहयोगी प्राध्यापक, मराठी विभाग छ. शिवाजी रात्र महाविद्यालय, सोलापूर.

abhimanyuohal@gmail.com

प्रास्ताविक:

आज महाराष्ट्राची ओळख ही एक पुरोगामी, पुढारलेले कला, विज्ञान, साहित्य, उद्योग या सर्वच क्षेत्रात आघाडीवर असलेले राज्य म्हणून ओळखले जाते. ही प्रगती, हा विकास कधीही एका दिवसातून झालेला नसतो. तर यासाठी त्या प्रदेशाची सामाजिक, सांस्कृतिक, वैचारिक जडणघडण कारणीभूत असते. ही जडणघडण थोर महापुरुषांच्या, विचारवंतांच्या, समाजसेवकांच्या कष्टातून, त्यागातून प्रसंगी बलिदानातूनही साकार होत असते. महाराष्ट्रालाही अशीच थोर महापुरुषांची, विचारवंत-समाजोध्दारकांची थोर परंपरा लाभलेली आहे. सर्व समाजाला बरोबर घेऊन जाणारे सर्व संत समानतेची शिकवण देणारे महात्मा बसवेश्वर, तळागाळातील सर्वांना सामावून घेऊन स्वराज्य निर्माण करणारे छ. शिवाजी महाराज, सामाजिक, शैक्षणिक आरक्षण देऊन सर्व जाती-धर्माचा उध्दार करणारे शाहू महाराज, म.वि.रा.शिंदे, म. जोतीबा फुले, न्या. रानडे, लोकहितवादी, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अशी अनेक महापुरुष-विचारवंतांची खाण याच महाराष्ट्राला मिळाली आणि आजचा हा प्रगत-विकसित महाराष्ट्र संपूर्ण देशाचा दिशादर्शक बनला आहे. यामध्ये महात्मा फुले यांचे योगदान हे खूपच अमूल्य असे आहे. त्यांनी सामाजिक, सांस्कृतिक, राजकीय, साहित्यिक अशा सर्वच आघाड्यांवर लढा देऊन सर्वसामान्यांना न्याय मिळवून देण्याचा प्रयत्न केला. यामध्ये शेतकरी, महिला, दीन-दलित, दुःखी-पिडीत, शोषित या सर्वांचाच समावेश होतो. या सर्वांसाठी ते पत्नी क्रांतीज्योती सावित्रीबाईंना घेऊन आयुष्यभर झगडले.

महात्मा ज्योतीबा फुले:

महात्मा फुले यांचे पुर्ण नाव जोतिराव गोविंदराव फुले. त्यांचा जन्म 20 फेब्रुवारी 1827 रोजी पुणे येथे झाला. त्यांच्या आईचे नाव चिमणाबाई हे होते. त्यांचे मूळ घराणे सातारा जिल्ह्यातील कटगुण येथील होते. त्यांचे मुळ आडनाव गोऱ्हे हे होते. परंतु त्यांच्या वडिलांचा फुलांचा व्यवसाय असल्याने त्यांना कालांतराने फुले हे आडनाव मिळाले व हेच आडनाव पुढे रुढ झाले. गोविंदरावांना राजाराम व ज्यातिराव ही दोन मुले होती. ज्योतीराव नऊ वर्षांचे असतानाच त्यांचे मातृछत्र हरपले व पुढे त्यांचा सांभाळ वडील गोविंदरावांनी केला. त्यांचे शिक्षण पुर्ण केले आणि महाराष्ट्रासह संपूर्ण देशाच्या जडणघडणीत महत्त्वाचा ठरलेला एक महान असा समाजोध्दारक तयार झाला.

महात्मा फुले यांचे जीवनचरित्र :

ज्योतिरावांच्या बालपणाचा काळ हा देशात धार्मिक अंधांधुंदाचा काळ होता. जातीवाद, सामाजिक विषमता, ब्राम्हण्यवादाचे वाढलेले प्रस्थ, स्त्री-शुद्रांची पिळवणूक या साऱ्यांनी समाज हा पोखरला गेला होता. शिक्षण ही फक्त उच्चवर्णियांची मक्तेदारी असल्यामुळे इतर जमातींना शिक्षणाची दारे बंद होती. जोतिरावांना गोविंदरावांनी शाळेत घातले खरे, परंतु इतरांनी शिक्षण घेऊन नये हा सर्वमान्य समज रुढ असल्याने ज्योतिरावांचे शिक्षण बंद झाले. परंतु नंतरच्या काळात गोविंदरावांनी शिक्षणाचे महत्व ओळखले आणि ज्योतिरावांना शाळेत घातले. त्यामुळेच त्यांची शारिरीक आणि शैक्षणिक अशा दोन्ही गोष्टीत प्रगती झाली. ज्योतिरावांना, पुस्तके वाचण्याची आवड होती. यातूनच त्यांच्यावर थॉमस पेन यांच्या 'The Rights of man' या पुस्तकाचा प्रभाव पडला. या पुस्तकातील विचारामुळे ते प्रभावित होऊन त्यांच्या मनात जातीव्यवस्था, अनिष्ट रुढी, परंपरा, स्त्री-शोषण, शुद्रांना दिली जाणारी हीन वागणूक या सर्वांबद्दल निर्माण झाली. जातीव्यवस्था या मानवनिर्मित असून कला फक्त उच्चवर्णियांनी कनिष्ठ वर्गीयांची पिळवणूक करण्यासाठी, त्यांचे वर्चस्व अबाधित ठेवण्यासाठी केल्या आहेत हे त्यांनी

पुर्णतः जाणले. त्यांना एक ब्राम्हण मित्रांच्यावरातीतून ते केवळ शूद्र आहेत या कारणावरून हाकलून दिले. या सर्वांचा परिणाम म्हणूनच त्यांनी समाजोध्दाराचे कार्य सुरु केले. समाजातून जातिव्यवस्था नाहिशी होण्यासाठी त्यांनी प्रयत्न केले. महात्मा फुले यांचा विवाह 1840 साली सावित्रीबाई त्यांच्याशी झाला. अशिक्षित असणाऱ्या सावित्रीबाईंना ज्योतिरावांना शिक्षण दिले आणि स्त्री शिक्षणाचा पाया घातला. देशभरातील महिलांनी आज जी गगनभरारी घेतली आहे त्याचा पाया ज्योतिरावांनी सावित्रीबाईंना शिक्षण देऊन घातला गेला.

महात्मा फुले यांचे साहित्य :

महात्मा फुले यांनी समाजाला जातीयतेच्या अज्ञानाच्या धर्माधतेच्या दृष्टिक्रातून बाहेर काढण्यासाठी शिक्षणाशिवाय पर्याय नाही हे ओळखले होते. त्याबरोबरच त्यांनी समाजाला योग्य दिशा देण्यासाठी साहित्याची निर्मिती केली. त्यांनी सर्व बहुजन समाजाला केंद्रस्थानी ठेवून, त्यांच्या समस्यांना केंद्रवर्ती ठेवून आपल्या साहित्याची निर्मिती केली. त्यांच्यावर संत तुकारामांचा आणि त्यांच्या अभंगांचा प्रभाव होता. या अभंगावरूनच त्यांनी अभंगाला साजेल अशी 'अखंडाची निर्मिती केली. त्यांनी 'तृतीयरत्न' (नाटक), 'छत्रपती शिवाजीराजे भोसले यांचा पोवाडा', 'विद्याखात्यातील ब्राम्हण पंतोजी' (पोवाडा), तसेच 'ब्राम्हणाचे कसब', 'गुलामगिरी', 'शेतकऱ्यांचा आसूड', 'सत्सार अंग 1,2', 'इशारा', 'सार्वजनिक सत्यधर्म', 'सत्यशोधक समाजोक्त मंगळाष्टकासह सर्व पुजा विधी इत्यादी पुस्तके, याशिवाय 'सत्यशोधक समाजाची तिसऱ्या वार्षिक समारंभाची हकीकत (अहवाल), 'पुणे सत्यशोधक समाजाचा रिपोर्ट' (अहवाल), 'पुणे सत्यशोधक समाजाचानिबंध व वक्तृत्व समारंभ' (निबंध), 'दुष्काळविषयक पत्रक' (पत्रक), 'शिक्षण आयोगापुढे सादर केलेले निवेदन' (निवेदन), 'महात्मा फुले यांचे मलबारींच्या दोन टिपणाविषयी मत' (निबंध), 'मराठी ग्रंथगौरव सभेस पत्र' (पत्र), 'ग्रामजोशासंबंधी जाहिर खबर' (जाहिर प्रकटन), 'मामा परमानंद यांस पत्र' (पत्र), 'महात्माफुले यांचे उडलपत्र' (मृत्युपत्र) इत्यादी ग्रंथसंपदा प्रसिद्ध आहे. त्यांची ही पत्रे, पुस्तके आजही समाजाला सुधारण्याचे कार्य करीत आहेत. लोकांना सामाजिक मुल्ये शिकवत आहेत.

महात्मा फुले यांचे सामाजिक कार्य :

महात्मा फुले यांचा काळ हाधर्मांध, कर्मटांचा काळ होता. ब्राम्हण्यवादाचे प्रस्थ समाजत वाढले होते. दीन दलितांना, स्त्री-शुद्रांना पशुपेक्षाही वाईट वागणूक मिळत होती. अस्पृश्यांच्या सावलीचाही विटाळ मानला जात होता. अशा काळात अस्पृश्यांना वण-वण भटकूनही कोणी पिण्यासाठी पाणी देत नव्हते. अशावेळी त्यांनी अस्पृश्यांसाठी आपला पाण्याचा हौद खुला केला. ही भारताच्या इतिहासातील महत्वाची घटना होती. आठरावे शतकातील स्त्रीयांना शिक्षणाचा अधिकार नव्हता. स्त्रीयांचे चुल आणि मूल एवढेच विश्व निर्धारित केले होते. त्यांना केवळ घरातील पुरुषांवरच अवलंबून रहावे लागत असे. स्त्रीयांना कोणत्याही बाबतीत स्वातंत्र्य नव्हते. अशा काळात जोतिरावांनी सावित्रीबाईंना शिक्षण दिले. सावित्रीबाईंनीही समाजाचा, घराचा, समाजकंटकांचा विरोध पत्करून, प्रसंगी शेण, दगडाचा मार सहन करून शिक्षण घेऊन पुण्यातील भिडे वाड्यात 1848 साली पहिली मुलींची शाळा सुरु केली. सावित्रीबाई या पहिल्या शिक्षिका, मुख्याध्यापिका झाल्या. सावित्रीबाईंनी ज्योतिरावांना त्यांच्या समाजकार्यात कायम साथ दिली. तात्कालिन समाजकंटकांना हे समाजकार्य मान्य नव्हते. त्यांनी फुले दांपत्यांना भरपूर त्रास दिला. तरीही ते डगमगले नाहीत आणि त्यांनी हा स्त्रीशिक्षणाचा, दीन दलितांप्रती असणाऱ्या कळवळ्याचा वसा कायम ठेवला. शिकणाऱ्या मुलींची संख्या वाढत गेली आणि त्यातूनच 4 मार्च 1851 साली पुण्यातील दुसरी मुलींची शाळा सुरु झाली.

शिक्षणाचे महत्त्व त्यांनी अचूक ओळखले होते. म्हणूनच ते म्हणत,

विद्येविना मती गेली |

मतिविना नीती गेली |

नीतिविना गती गेली |

गतीविना वित्त गेले |

वित्तविना शुद्र खचले |

एवढे अनर्थ एका अविद्येने केले |

त्याकाळी बालविवाहाचे प्रमाण जास्त होते, त्यातच साथीचे आजार, जरठकुमारी विवाह व इतर कारणांमुळे बालवयातच मुलींना वैधव्य येत असे. 1856मध्ये विधवा पुनर्विवाहाचा कायदा येऊनही समाजमान्यता नसल्यामुळे त्यांना समाजातील, घरातील वासनांना बळी पडावे लागे. व गर्भवती झाल्यामुळे त्यांना लहान वयातच गरोदर व्हावे लागून त्यांना भ्रूणहत्येला सामोरे जावे लागे किंवा आत्महत्या करावी लागे. या कारणांमुळे ज्योतिरावांनी 1963मध्ये विधवा मातांसाठी बालहत्या प्रतिबंधक गृहाची स्थापना केली. विधवा महिलांना गुप्तपणे प्रसूतीची सोय केली गेली. त्यांच्या मुलांना सांभाळण्यासाठी अनाथाश्रमांची स्थापना केली. त्यामुळे अनेक अनाथांना या अनाथाश्रमात आश्रय मिळावा व त्यांचे संगोपन केले गेले. तेव्हाच्या पुरोहितांना, समाजकंटकांना महात्मा फुलेंचे हे कार्य ब्राम्हणांच्या धर्मविरोधी वाटत होते. त्यामुळे त्यांनी फुले दांपत्याला मारण्यासाठी मारेकरी धाडले. परंतु ज्योतिरावांच्या विचाराने मारेकऱ्यांचेही मतपरिवर्तन झाले आणि या दोन्ही मारेकऱ्यांनी पुढे महात्मा फुले यांच्या कार्यात स्वतःला वाहून घेतले. त्यातील एक ज्योतिरावांचा अंगरक्षक बनला तर दुसरा पुरोहित. ज्योतिरावांची ही कृती भगवान गौतम बुद्धांच्या अंगुलीमालाचे मतपरिवर्तन करून त्याला सदमार्गावर आणले होते, याचीच प्रचिती देऊन जाते. महात्मा फुले दूरदृष्टी असणारे महात्मा होते. त्यांनी 1883 मध्ये 'शेतकऱ्यांचा आसूड' हा ग्रंथ लिहून शेतकऱ्यांची स्थिती नैसर्गिक संकटे, सावकारी, नोकरशाही, जातीयतात, बाजाराची व्यवस्था याविषयी भाष्य केले आहे. याच समस्या आजही शेतकऱ्यांच्या अधःपतनाला कारणीभूत असल्याचे दिसून येते. शेती किफायतशीर होण्यासाठी त्याला जोडधंद्याची आवश्यकता आहे, पाण्याचे योग्य नियोजन आवश्यक आहे, सावकारी, नोकरशाहीतील भ्रष्टाचार, सरकारी धोरणांचा अभाव हेच शेतकऱ्यांच्या अधोगतीसाठी जबाबदार आहेत, म.फुले यांनी सांगितले होते. त्यांनी केवळ शेतकऱ्यांचे प्रश्नच मांडले नाहीत तर त्यावर उपायही सांगितले आहेत.

शिवाजी महाराजांचे स्वराज्यनिर्मितीचे कार्य हे जाज्वल्य असे होते. त्यांनी सर्वसामान्यांना, तळागाळातील रयतेला घेऊन स्वराज्याची उभारणी केली, स्वराज्य वाढवले, रयतेचे राज्य निर्माण केले. महाराजांपश्चात स्वराज्याची सुत्रे पेशव्यांच्या हातात गेली. आणि महाराजांच्या इतिहासाकडे हेतुपुरस्सर दुर्लक्ष केले गेले. रयतेच्या या राजाला स्मरणतातून काढण्याचे कारस्थान केले गेले आणि हा महान पराक्रमी, रयतेचा वाली असणारा राजा तत्कालिन रयतेच्या विस्मरणात गेला. महात्मा फुले यांनी इतिहास अभ्यासातून बहुजनांच्या माथी मारलेल्या खोट्या इतिहासाची पुनःमांडणी केली. रायगडावरील स्वराज्यसंस्थापक छ. शिवाजी महाराजांची समाधीशोधून काढली आणि तिचा जिर्णोध्दार केला. त्यांचे इतिहास घडवणारे असे होते. महात्मा फुले यांच्या कौशल्यविकासावर भर होता. त्यांना वाटे की शेतकऱ्यांच्या मुलांनी सुतारकाम आणि लोहारकाम शिकले पाहिजे. याचे शिक्षण घेण्यासाठी त्याला विलायतेला जावे लागले तरी त्याने तेथे जाऊन शिकून यावे. शेतीमध्ये काळानुरूप बदल करून कौशल्य विकसित करावीत असे त्यांना वाटत होते. सर्वसामान्यांची या सनातनी धर्मात पिळवणूक होते आहे. त्यांची या पिळवणूकीतून मुक्तता व्हावी समानता प्रस्थापित व्हावी या उद्देशाने त्यांना 27 सप्टेंबर 1873 रोजी सत्यशोधक समाजाची स्थापना केली. तळागाळातील लोकांपर्यंत शिक्षण पोहोचवणे व त्यांचा विकास घडवून आणणे हे या समाजाचे मुख्य उद्दिष्ट होते. या कार्यात सावित्रीबाईंनीही 19 स्त्रियांना बरोबर घेऊन महाराष्ट्रात तळागाळात ही चळवळ पोहोचवली. समाजातील सती जाणे, बालविवाह या रूढी, प्रथा बंद केल्या, स्पृश्य-अस्पृश्य भेद नष्ट करण्याचा प्रयत्न केला. विधवा विवाहाला प्रोत्साहन दिले. त्यांचा 'अस्पृश्यांची कैफियत' हा अप्रकाशित ग्रंथ आहे.

त्यांच्या या विविधांगी कार्याची दखल घेऊन 1988 मध्ये मुंबईतील एका सभेत जनतेने त्यांना 'महात्मा' ही पदवी दिली. अशा या महामानवाचा मृत्यू 18 नोव्हेंबर 1890 मध्ये झाला.

समारोप :

महात्मा फुले हे केवळ समाजसुधारकच नव्हते तर ते दूरदृष्टी असणाऱे थोर विचारवंत होते. समाजात अमुलाग्र बदल घडवून आणणारे एक समाजशास्त्रज्ञ होते. समाजात जर बदल घडवून आणायचा असेल तर त्यासाठी पुरुषांपेक्षाही स्त्रियांना शिक्षणाची गरज आहे हे ओळखूनच स्त्री-शिक्षणाचा पाया घातला आणि याची सुरुवात आपल्या घरापासून, सावित्रीबाईंना शिकवून केली. अस्पृश्यांच्या सावलीचाही विटाळ माणण्याच्या काळात स्वतःचा

हौद अस्पृश्यांसाठी खुला करणे हे काही सोपे काम नव्हते, परंतु ते त्यांनी केले. त्यांची साहित्य संपदा ही बहुमुखी अशी आहे. सर्वसामान्य, बहुजन, शोषित-पिडीत, स्त्रीया, शेतकरी, धर्मांध पुरोहित अशा चौफेर विषयांना त्यांनी आपल्या साहित्यातून मांडले. समाजाच्या केवळ उणिवांचे दाखवल्या नाहीत तर त्यावर उपायही सुचविले. बालविवाह, सती जाणे अशाजुनाट प्रथांना त्यांनी कडाडून विरोध केला. विधवांपासून होणारी भ्रूणहत्याथांबवण्यासाठी निर्माण केलेले बालहत्या प्रतिबंधक गृह, अनाथाश्रम हे त्याकाळातील एक धाडसी पाऊल होते. धर्मांधा पुरोहितांच्या तावडीतून, त्यांच्या शोषणातून सर्वसामान्यांना, बहुजनांना मुक्त करण्यासाठी त्यांनी सार्वजनिक सत्यधर्माची स्थापना करून एक पर्यायी धर्म, एक पर्यायी विचारप्रणाली, एक पर्यायी समाजरचना यांची निर्मिती केली. त्यांचे हे कार्य सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, राजकीय अशा सर्वच आघाड्यांवर, क्रांती करणारे ठरले आणि त्याच कार्याच्या पायावर आजचा हा प्रगत, सुशिक्षित, सुशील असा समाज निर्माण झाला आहे.

संदर्भ :

1. महात्मा ज्योतिराव फुले- धनंजय कीर
2. महात्म फुले यांचे वैचारिक चरित्र- डॉ. सदानंद मोरे

महात्मा फुले यांचे शेती व शेतकऱ्याविषयाचे सद्यस्थितीशी पूरक असे विचार

प्रा. डॉ. मधुकर बाबूराव अनंतकवळस

प्रोफेसर अर्थशास्त्र विभाग, कर्मवीर भाऊराव पाटील महाविद्यालय, पंढरपूर, जि. सोलापूर

ई-मेल- madhukar.anantkawlas@gmail.com

गोषवारा :-महात्मा फुले यांनी वेगवेगळे विचार वेगवेगळ्या विषयावर मांडलेले दिसून येतात. त्यांचे शैक्षणिक, सामाजिक, समाज प्रबोधनाचे कार्य महत्वाचे आहे. महात्मा फुले यांचे शिक्षण, समाजसुधारणा यासोबत शेती विषयक विचार आजही प्रासंगिक आहेत. डॉ. आंबेडकरानी सांगितलेला राज्य समाजवाद आणि सरकारने आर्थिक लोकशाहीसाठी काय करावे याचे मार्गदर्शन करण्यासाठी सांगितलेली राज्यनितीची मार्गदर्शक तत्वेही सामाजिक व आर्थिक लोकशाही प्रस्थापणेसाठीच आहेत. ही तत्वे म्हणजे फुले यांच्या विचारांचाच परिपाक आहे. शेतकऱ्यांचे प्रश्न फुले काळापासून आहेत ते तसेच आहेत. इतर उत्पादने आणि शेती उत्पादने यात लोक फरक समजतात. शेती उत्पादन जणू कांही उत्पादन नाहीच, असे त्यास वागविले जाते. सरकार दरबारी, ग्राहकांच्या स्थरावर तेच आहे. शेतकरी आणि शेतकऱ्यांच्या पिकांचे महत्व हे अजून समाजाला व व्यवस्थेला कळालेले नाही, त्यांनी शेतकऱ्यास गृहीत धरलेले आहे. समाजाची ही प्रवृत्ती पूर्वीपासून असून ती अब्याहतपणे चालू आहे. त्यामुळेच समस्या वाढत आहेत. काळानुसार या समस्यांची संकल्पना वेगवेगळी होईल. फुले यांना असे वाटत कि, यामागे जातीय कारण आहे, परंतु चालू काळात तसे दिसत नाही. अनेक वेळा वेगवेगळ्या पक्षांच्या माध्यमातून, शेती समुदायातून लोक पुढे जातात आणि सरकार स्थापन करतात. मानसिकता मात्र बदलत नाही हे दुर्भाग्य वाटते. एकूण समाजाचा दृष्टीकोन पूर्वीप्रमाणेच आहे. फुले यांच्या मांडणीनंतरही झालेल्या अनेक वर्षांनंतरच्या सुधारणेतूनही समाजाचा व शासकीय व्यवस्थेचा शेती व शेतकऱ्याकडे पाहण्याच्या दृष्टीकोनातही काही फरक पडलेला नाही असे दिसून येते.

प्रस्तावना:-

महात्मा ज्योतिबा फुले त्या शतकातील मुख्य 'समाजसुधारक' मानले जातात. भारतीय समाजात पसरलेल्या बऱ्याच वाईट गोष्टी दूर करण्यासाठी त्यांनी अविरत संघर्ष केला. अस्पृश्यता, महिला शिक्षण, विधवा-विवाह आणि शेतकऱ्यांच्या हितासाठी महात्मा ज्योतिबा फुले या महान समाजसुधारकाने उल्लेखनीय काम केले आहे. शेतकरी आणि बहुजन समाजांच्या समस्यांना केंद्रस्थानी ठेवून पुरोगामी विचारांची मांडणी करणारे आणि महाराष्ट्रातील स्त्री शिक्षणाची मुहूर्तमेढ रोवली. सत्यशोधक समाजाची स्थापना करणारे आणि आपले संपूर्ण आयुष्य समाजासाठी वेचणाऱ्या ज्योतिबा फुले यांना जनतेने 'महात्मा' पदवी बहाल केली. 'शेतकऱ्याचा आसूड' (१८८३) या ग्रंथात जोतीरावांनी शेतकरी व शेती यांची परखड चिकित्सा केली आहे. अडाणी शेतकऱ्यांच्या दृष्टीने 'ब्राम्हण सांगतील तो धर्म आणि इंग्रज करतील ते कायदे' आहेत शेतकऱ्यांच्या दुरावस्थेची कारणे सांगून ते थांबत नाहीत तर महात्मा फुले यांनी शेतीच्या विकासाच्या दृष्टीने उपायही सुचविले आहेत. जोतीरावांच्या मते शेतकऱ्यांच्या या अगतिकतेचे मूळ त्यांच्या अज्ञानात आहे. त्यामुळेच ' इतके सारे अनर्थ एका अविद्येने केले' असे ते सांगतात. अश्वारितीने महात्मा फुले यांचे शिक्षण, समाजसुधारणा यासोबत शेती विषयक विचार आजही प्रासंगिक आहेत. डॉ. आंबेडकरानी सांगितलेला राज्य समाजवाद आणि सरकारने आर्थिक लोकशाहीसाठी काय करावे याचे मार्गदर्शन करण्यासाठी सांगितलेली राज्यनितीची मार्गदर्शक तत्वेही सामाजिक व आर्थिक लोकशाही प्रस्थापणेसाठीच आहेत. ही तत्वे म्हणजे फुले यांच्या विचारांचाच परिपाक आहे. परंतु सरकारच्या राजकीय इच्छा शक्तिचा अभाव व अनास्थेमुळे शेतकरी राजाची दैनावस्था झाली आहे. शेतकऱ्यांच्या शोषणाविरुद्धचे आंदोलन, खतफोडीचे बंड म्हणून ओळखले जाते, नांगर चालणार नाही आणि जमीन विकणार नाही ही भूमिका या आंदोलनात होती. पुढे १८७७ मध्ये त्यांनी दुष्काळाबाबत ब्रिटीश सरकारला पत्रक पाठविले यावेळी दुष्काळग्रस्त विद्यार्थ्यांनाही आश्रय दिला. १८८८ मध्ये

व्हिक्टोरिया राणीच्या मुलाच्या कार्यक्रमात त्यांना निमंत्रित केले होते. तेव्हा फुले यांनी शेतकऱ्यांचे प्रतिनिधी म्हणून पारंपारिक वेशात उपस्थित राहून शेतकऱ्यांची गाऱ्हाणीमांडली होती. महात्मा फुले यांचे शिक्षण, समाजसुधारणा यासोबत शेती विषयक विचार आजही प्रासंगिक आहेत.

संशोधनाची उद्दिष्टे :- प्रस्तुत शोधनिबंधात पुढील विविध उद्दिष्टांचा समावेश करून मांडणी करण्यात आलेली आहे.

१. महात्मा फुले यांचे शेतीविषयक विचार जाणून घेणे.
२. फुले यांचे शेतकऱ्याविषयी असणाऱ्या विचारांचा आढावा घेणे.
३. फुले यांचे शेती विकासाबाबतचे विचार जाणून घेणे.
४. फुले यांनी सांगितलेल्या शेतकऱ्यांच्या गरीबीबाबतच्या कारणांचा आढावा घेणे.
५. फुले यांच्या विचारातून शेतकऱ्यांचेदारिद्र्य दूर करण्याविषयीचा आढावा घेणे.

संशोधन पद्धती:-

प्रस्तुत शोधनिबंधाची मांडणी ही दुय्यम साधनाचा वापर करून करण्यात आलेली आहे. यासाठी या संशोधनात अभ्यासावर आधारित मुलभूत ग्रंथ, संशोधन ग्रंथ, महात्मा फुले यांचे वाडःमय, सध्याच्या सरकारची विविध धोरणेविषयीचे अहवाल, मासिके, साप्ताहिके, दैनिक वृत्तपत्रे यामधील लेख, बातम्या या साधनांचा वापर करण्यात आलेला आहे. या माध्यमातून प्राप्त झालेल्या माहितीची सत्यता पडताळून पाहण्यासाठी सर्व माहितीचे विश्लेषण करून त्या आधारे अभ्यासात निश्चित केलेली गृहीतके तपासण्यात आलेली आहेत. त्यामुळे त्याचा उपयोग सध्याची सरकारी धोरणे तपासण्यास मदत होणार आहे.

संशोधनाचे महत्व:-

महात्मा फुले यांनी वेगवेगळे विचार वेगवेगळ्या विषयावर मांडलेले दिसून येतात. त्यांचे शैक्षणिक कार्य, सामाजिक कार्य, समाज प्रबोधनाचे कार्य जसे महत्वाचे आहे तसेच शेती विकासाबाबतचे व शेतकऱ्या विषयीचे विचार महत्वाचे आहेत. शेतकरी त्याकाळीसावकाराकडून कर्ज काढून शेती करत त्यावेळी त्यांची फसवणूक होत होती. आपल्या मुलाचे, मुलीचे लग्न कार्यात अतिरिक्त पैसा खर्च करत. त्यामुळे शेतीला वीज, पाणी, बी-बियाणे वेळेवर मिळत नसल्यामुळे धान्य पिकत नसे आणि जरी पिकले तरी बाजारपेठेत त्याला किंमत नसे. शेतकरी कंगाल व कर्जबाजारी व्हायचं दुसरे कारण शेतीमधील वाढती भाऊ- बंधकी व त्यातून वाढत्या कोर्टकचेऱ्या यामुळे त्यांची हलाखीची स्थिती पहावयास मिळते. यावर उपाय म्हणून ते काही उपायही सुचवितात. शेतकऱ्यांनी नव्या उपकरणांचा वापर करावा, धरणे व कालवे बांधावी, दुष्काळात कर्ज द्यावे, शेतीसाठी आवश्यक पाणी देण्याची व्यवस्था सरकारने करावी. शेतकऱ्यांच्या मालास योग्य तो हमी भाव सरकार देत नाही, त्यामुळे शेतकऱ्यांचे प्रश्न सुटत नाहीत, या वरील विविध प्रश्नांची फुले यांनी मांडणी केल्याचे दिसून येते. याचे महत्व लक्षात घेऊन सदर शोधनिबंधात त्याची मांडणी करण्याचा प्रयत्न केला आहे.

महात्मा फुल्यांचे शेतीविषयक विचार:-

फुले यांच्या 'शेतकऱ्यांचा आसूड' (१८८३) या ग्रंथात शेतकरी व शेती यांची परखड चिकित्सा केली आहे. अडाणी शेतकऱ्यांच्या दृष्टीने 'ब्राम्हण सांगतील तो धर्म आणि इंग्रज करतील ते कायदे' आहेत. कितीही अन्याय व जुलूम झाले तरी तो आपल्या नशीबाचाच भाग समजून ते सहन करतात. तोंड दाबून बुक्क्यांचा मार, अशी त्यांची अवस्था आहे. जोतीरावांच्या मते शेतकऱ्यांच्या या अगतिकतेचे मूळ त्यांच्या अज्ञानात आहे. फुले यांचे मते, शेतकऱ्यांच्या दुरावस्थेची कारणे 'शेतकऱ्यांचा आसूड' मध्ये बारकाईने वर्णन करताना. ते लिहितात, "आता मी चालू सालचा शेतसारा द्यावा तरी कोठून, बागायतात नवीन मोटा विकत घेण्याकरिता जवळ पैसा नाही. जुन्या तर अगदी फाटून त्यांची चाळण झाली आहे. उसाचे बाळगे मोडून हुंडीचीही तीच अवस्था झाली आहे. मकाही खुरपणीवाचून वाया गेला. भूस सरून बरेच दिवस झाले आणि सरमड गवत कडव्याच्या गंजी संपत आल्या आहेत. जनावरांना पोटभर चारा मिळत नसल्यामुळे कित्येक धट्टेकट्टे बैल उठवणीस आले आहेत. त्यांच्या मते, 'शेतकऱ्यांनी लागवडीकडे केलेला खर्चसुद्धा उभा राहण्याची मारामार पडते. गाडी भाड्याचाही खर्च निघत नाही, हेच आहे. याबाबत उदाहरण देताना ते म्हणतात, कधी कधी शेतकऱ्याने गाडीभर माळवे शहरात विकण्याकरिता पाठविल्यास त्या सर्व मालाची किंमत बाजारात कमी किमतीने घेणारे दगेबाज दलालांचे व म्युनिसिपालिटीचे जकातीचे कर भरून शिल्लक काही रहात

नाही, घरी जाऊन मुलाबाळांपुढे शिमगा करावा लागतो." शेतकऱ्यांच्या दुरावस्थेची कारणे सांगून ते थांबत नाहीत तर महात्मा फुले यांनी शेतीच्या विकासाच्या दृष्टीने उपायही सुचविले आहेत.

महात्मा जोतीबा फुले यांचे शेतकऱ्याविषयी मत :-

शेतीविषयी जोतीबा फुले यांनी दिलेला संदेश आज ही आपणास उपयोगी आहे. शेती आणि शेतकरी हा त्यांचा जीवनातील लिखाणाचा अविभाज्य घटक आहे. त्यांनी १०० वर्षांपूर्वी " पाणी आडवा - पाणी जिरवा " ही संकल्पना सांगितली होती, ती आज ही आपणास उपयोगी पडते आहे. शेतकऱ्यास त्यांच्या मालाचा योग्य फायदा मिळावा त्याचबरोबर शेतकऱ्यांच्या अडचणी, त्यांचा होणारा अनावश्यक खर्च, कर्जकाढून केलेली लग्न कार्य त्यामुळे होणारा त्रास गोष्टी आपल्या 'शेतकऱ्याचा असूड' या ग्रंथामध्ये अचूक भाष्य केलेले आहे. शेतीवर अतिरिक्त लोकसंख्येचा बोजा पडलेला आहे. आपण आजच्या शेतकऱ्यांच्या अडचणी कोणत्या आहेत त्यांना कायपाहिजे, त्यांच्या साठी वीज, पाणी, आधुनिक तंत्रज्ञान, वाहणे उपलब्ध करून द्यावे लागणार आहे. पूर्वीचे शेतकरी अज्ञानी होते त्यांना पुस्तकी ज्ञान नव्हते असे हतबल झालेले शेतकरी, सावकाराकडून कर्ज काढून शेती करत त्यावेळी त्यांची फसवणूक होत होती आजचा शेतकरी आपल्या गरजा भागवण्यासाठी आपली शेती गहाण ठेवतो त्या शेतीस माय म्हटले जाते. तिला गहाण ठेवण म्हणजे मूर्खाचे लक्षण. त्या आपल्या आईस गहाण ठेऊन आपल्या मुलाचे, मुलीचे लग्न कार्य करतात. लग्नात अतिरिक्त पैसा खर्च करतात, त्यानंतर व्हायचे तेच होते, शेतीला वीज, पाणी, बी-बियाणे वेळेवर नसल्यामुळे धान्य पिकत नाही आणि जरी पिकले तरी बाजारपेठेत त्याला किंमत नसते. म्हणून शेवटी निराश होऊन आजचा शेतकरी कर्जाला कंटाळून आत्महत्या करतात, त्या आत्महत्या का होतात ? याचा कोणत्याच सरकारने विचार केला नाही. त्यांनी शेतकऱ्यांच्या अडचणी कधी समजून घेतल्या नाहीत जो शेतकरी भारत देशाला अन्न पुरवण्यासाठी दिवस-रात्र मेहनत करतो. त्याच शेतकऱ्यावर जास्त प्रमाणात शेतसारा लादला जातो, वीज महागली, बाजारपेठा शेती पासून दूर, दलालाचे वाढते प्रमाण याचा कधी विचार झालाच नाही.

शेतकरी कंगाल व कर्जबाजारी व्हायचं दुसरे कारण शेतीमधील वाढती भाऊ-बंधकी होय. शेतकऱ्यांविषयी महात्मा फुलेंनी त्याकाळी केलेले वर्णन आपणास तसेच आजही असल्यासारखे वाटते आहे. त्याच अडचणी दिसून येतात, त्यांचे त्यांच्या कोणा नातेवाईकास शिक्षणाची संधी उपलब्ध झाली अथवा कोणती सरकारी नोकरी मिळाली तर ते आपल्या शेतकऱ्यांच्या अडचणीकडे, त्यांच्या अवस्थेकडे फार लक्ष देत नाहीत. म. फुले यांच्या काळी हीच परिस्थिती होती आणि आजही आपणास तीच परिस्थिती दिसते आहे.

शेतकऱ्यांच्या प्रश्नाला जोतीबानी हात घातला तो मोठ्या व्यापक भूमिकेत शेतकऱ्यांची परिस्थिती केविलवाणी आहे, त्यांच्यावर दया करा, अशी भिकेची किंकाळी मारली नाही, शेतकरी कष्ट करतो, राबतो पण त्या कष्टाचे फळ त्यांना मिळत नाही, त्यांच्या कडून ते लुबाडून घेतले जाते. म्हणून महात्मा फुले यांचा शेतकापूर्वीचा विचार सर्वसामान्य लोकापर्यंत पोहचवा म्हणून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी पुढेचालू ठेवला. शेतकऱ्याची, कामगाराची शेतातील मजुरासाठी, बलुतेदारासाठी त्यांच्या न्यायासाठी लढा दिला. हा लढा फक्त पुस्तकापर्यंत मर्यादित राहिला. म्हणून आज आपणास महागाई, गुन्हेगारी, आत्महत्या, भ्रष्टाचार या सारख्या समस्यास तोंड द्यावे लागत आहे. शेतकऱ्यांच्या मालास योग्य तो हमी भाव सरकार देत नाही, त्यामुळे शेतकऱ्यांचे प्रश्न सुटत नाहीत, म्हणून आजचे शेतकरी ऊस प्रश्न, कापूस प्रश्न, वीज, पाणी असे अनेक प्रश्न घेऊन रस्त्यावर सरकारच्या विरोधात उतरतात, त्यांना त्यासाठी विविध पक्षाचा, संघटनाचा पाठींबा मिळतो आहे. पण प्रत्यक्षात या आंदोलनाचा त्यांना फायदा होतो का ? या प्रश्नांचे सिंहवलोकन करणे गरजेचे आहे. फुले - आंबेडकर यांनी जो शेतकरी व हल्लीची स्थिती त्यांच्या अडचणी त्यावर उपाय यासाठी व्यापक दृष्टिकोनाचा लोकलढा दिला याची रुजवण शासनदरबारापासून सर्व सामान्य तळागाळातील शेतकरी, कष्टकरी या माणसापर्यंत गेला पाहिजे.

महात्मा फुले यांचे शेती विकासाबाबतचे विचार :-

फुले प्रगतीशील शेतकरी होते, शेतीमालाला उत्पादन खर्च भरून निघेल आणि किमान १५ ते २० टक्के नफा मिळेल इतका बाजारभाव मिळाला पाहिजे. शेतकऱ्यांना पिकांसाठी पुरेसे आणि बारमाही पाणी सिंचनासाठी

मिळाले पाहिजे, ते वाया जाऊ नये म्हणून नळाद्वारे देण्यात यावे, आधुनिक पद्धतीच्या शेतीचा अभ्यास करण्यासाठी शेतकऱ्यांना सरकारने परदेशात पाठवावे. यासारख्या त्यांनी अनेक मुद्द्यांची मांडणी केली आहे, त्यांनी त्या वेळेत केलेल्या सूचना आजही मार्गदर्शक ठरतात. शेतकरी सुखी व्हायचा असेल तर त्यांची त्रिसूत्री मांडली ती अशी-

अ) उत्पादन खर्चावर आधारित बाजारभाव शेतीमालाला मिळाला पाहिजे.

ब) शेती आधुनिक पद्धतीने केली पाहिजे. शेतीजलसिंचनासाठी धरणे, विहिरी, तलाव तळी बांधली पाहिजेत, कायमस्वरूपी सिंचन सुविधा हवी, नैसर्गिक खाते आणि संकरीत बियाणे वापरली पाहिजेत.

क) शेतीधंद्याला उद्योग, व्यापाराची जोड दिली पाहिजे. दुध, अडी, लोकर असे पूरक उद्योग सुरु केले पाहिजेत. शेतीबरोबरच शेतकऱ्यांनी उद्योग व व्यापारात उडी घेतली पाहिजे. एकटी शेती कधीच परवडत नसते. व्यापारी पिके, कॅनालचे पाणी आणि आधुनिक पिक पद्धती यांचा आश्रय घेणे कसे गरजेचे आहे ते पटवून देतात. दुध, लोकर, अंडी असे पूरक उद्योग सुरु केले पाहिजेत. शेती परवडत नाही म्हणून आजवर लाखो शेतकऱ्यांनी आत्महत्या केलेल्या आहेत. सव्वाशे वर्षांपूर्वी त्यांनी शेतीमालाला उत्पादन खर्चावर आधारित बाजारभाव मिळाल्याशिवाय शेती आणि शेतकरी यांचे दैन्य संपणार नाही असे सांगितले. जलसिंचन, शेतीला जोडधंडे, पूरक उद्योग यातून शेती किफायतशीर बनविण्याचा नकाशा त्यांनी त्याकाळात मांडला होता.

फुले यांच्या काळात शेतकऱ्यांना आपल्या शेतीचा शेतसारा नगदी स्वरूपात व सक्तीने भरावा लागत असे. तो भरण्यासाठी सावकाराकडे जमीन लिहून देवून कर्ज काढावे लागत असे. शेतकऱ्यांचे ते कर्ज अधिक व्याजदरामुळे फिटत नसे, त्यामुळे त्यांच्या जमिनी सावकार जप्त करत, अशा जप्त केलेल्या जमिनीवर त्यांनाच कामगार म्हणून कामास जावे लागे. कायद्याच्या व शिक्षणाच्या अज्ञानापोटी भरमसाठ जमिनी किरकोळ किमतीस विकल्या जात. गुजर, मारवाडी, सावकार अज्ञानी शेतकऱ्यांची फसवणूक करून त्यांच्या जमिनी लुटत असे. त्यांच्या जमिनी खरेदी करणे, कर्जाचे व्याज वाढवणे यासारखे कृत्य केले जात असे. त्याकाळी काही लेखी करारांना महत्व आल्याने ठराविक शेतकऱ्यांच्याच जमिनी त्यांना परत मिळत असत.

शेतकऱ्यांसाठी केलेला नवा कायदा :-

शेती आणि शेतकरी यांच्या प्रश्नाविषयी जोतिरावांना विशेष आस्था होती. मराठेशाहीमध्ये शेतकरी शेती करतानाच शिपाईगिरी करत असल्यामुळे संपन्न होते. ब्रिटिशांच्या राज्यात मात्र शेतीवरच अवलंबून राहाव लागत होत. दुष्काळ, अज्ञान, अंधश्रद्धा, शेतसारा वसुली, या सगळ्यात शेतकऱ्यांची दैना झाली. शेतकऱ्यांची कैफियत जोतिरावांनी 'शेतकऱ्यांचा असूड' या पुस्तकातून मांडली. जोतिरावांच्या शेतकऱ्यांच्या भूमिकेचा इंग्रज सरकारलाही विचार करावा लागला आणि त्यांनी १८७९ मध्ये शेतीविषयक कायदा पास केला. नोकरशाहीचा लठ्ठ पगार, ब्रिटिशांचा लष्करी खर्च त्यांच्यामुळे भारतीय उद्योजकांची पिछेहाट झाली. यामुळेच शेतकऱ्यांना दारिद्र्य आलं, हे जोतिरावांचे निदान होत. शेती, शेतकरी, शिक्षण या संदर्भात जोतिरावांनी सातत्याने सरकारला सूचना केल्या. जोतिरावांनी आपलं 'गुलामगिरी' हे पुस्तक अमेरिकेतल्या निग्रो गुलामांना मुक्त करणाऱ्या सदाचारी आणि परोपकारी लोकांना अर्पण केलं. आर. एस. घाटगे या अस्पृश्य समाजातील सैनिकानं लिहिलंय की, देवानं आम्हाला मनुष्य जन्म दिला असला, तरी मनुष्यत्वाची ओळख जोतिरावांनी करून दिली. ते अगदी खरं आहे. भारतात, सांस्कृतिक वारसा असलेले महाराष्ट्र हे सामाजिक विचारवंतांची भूमी आहे, सामाजिक सुधारणा आणि सामाजिक क्रांतिकारक ज्यांनी महाराष्ट्राला समृद्ध केले आहे. फुले यांनी भारताच्या वाढीसाठी आणि विकासासाठी एकवचनी योगदान दिले आहे. त्यांचा काळ केवळ महाराष्ट्राच्या इतिहासातच नव्हे तर संपूर्ण देशातील शिक्षण, जातीव्यवस्था, शेती, अर्थशास्त्र, महिला आणि विधवा उन्नती, मानवाधिकार यासारख्या विविध क्षेत्रात क्रांतीची पहाट म्हणून वर्णन केले जाऊ शकते. महात्मा फुलेंच्या वादळी जीवनाची कहाणी ही सतत संघर्षाची प्रेरणादायक गाथा आहे, त्यांनी जे प्रतिक्रियेच्या शक्तीविरुद्ध कठोरपणे प्रयत्न केले. एकही भांडण न करता सर्व प्रकारच्या दबावाविरुद्ध उभे राहायची त्यांची क्षमता अद्भुत होती. आणि त्यांच्या विश्वासानुसार नेहमी कार्य करण्याची त्यांची क्षमता ही उल्लेखनीय होती.

म. फुले यांनी शेतकऱ्यांच्या दारिद्र्याची जी कारणे सांगितली आहेत, तीच कारणे आजही शेतकरी आत्महत्या करण्याची दिसून येतात. फुले यांनी फक्त कारणे सांगितली नाहीत तर त्यावर उपाय देखील सांगितले आहेत. ते पुढीलप्रमाणे-
१. शेतकऱ्यांमधील व्यसनाधीनता कमी व्हावी :- शेतकऱ्यांच्या शेतीत उत्पन्न कमी निघत असल्याने त्यांचा परिणाम त्यांच्या कौटुंबिक स्थैर्यावर होऊन आर्थिक स्थिती बिघडत आहे. त्यातच व्यसनाधीनता, वाढून बहुपत्नीत्वाची पद्धत, हुंडा, बालविवाह या प्रथा सुरु होत्या. या प्रथा बंद झाल्यास निश्चितच शेतकऱ्यांची गरिबीतून सुटका होईल असे

त्यांना वाटे. या प्रथा कमी-अधिक प्रमाणात आजही सुरु आहे. या बंद व्हावयाच्या असतील तर शेतकऱ्यांनी व्यसनापासून दूर राहिले पाहिजे.

२. शेतीचा महसूल शेतीवर खर्च करावा :- विविध माध्यमातून कर लादण्याचे धोरण ब्रिटीश सरकारने स्वीकारले होते. या करातून जेवढा पैसा इतर खात्यावर व योजनावर खर्च करित असे म्हणून फुले म्हणतात, शेतीवरील करापासून मिळणाऱ्या उत्पन्नापैकी काही उत्पन्न शेतकऱ्यावर खर्च केल्यास त्यांचे दारिद्र्य कमी होण्यास मदत होईल. आज शेतीवरील कर कमी करण्याचे धोरण शासनाने स्वीकारले असले तरी शेती उत्पन्नातून मिळणार्या करापैकी फार कमी पैसा सरकारकडून शेतीसाठी खर्च केला जात आहे. म्हणजेच शेतीतील गुंतवणूक कमी होताना दिसत आहे. ती वाढवण्याची गरज आहे.

३. शेतीचे आधुनिकीकरण करावे :- फुले यांच्या मते शेतीचे आधुनिकीकरण करण्यासाठी शेतकऱ्यांना आधुनिक तंत्रज्ञान पुरवावे, निरोगी पशुधन, नवीन जनावरांची पैदास, गोरक्षणाची जबाबदारी असे उपाय त्यांनी सुचविले आहेत. परंतु सध्या शेतीच्या आधुनिकीकरणाच्या सर्व साधनावर भांडवलदारांचे, खाजगी कंपन्यांची मालकी स्थापन करण्यात आलेली आहे. त्यामुळे जगाच्या तुलनेत या कृषिप्रधान देशाच्या शेतीचे पाहिजे तया प्रमाणात आधुनिकीकरण झालेले नाही.

४. शेती उत्पादनास प्रोत्साहन द्यावे :- शेतकऱ्याकडे पाहण्याचा दृष्टीकोन नकारात्मक झालेला आहे, त्यांना मानसन्मानाने वागवण्याची गरज आहे. जे शेतकरी जास्त उत्पादन करतात, काढतात त्यांना कृषी पदव्या द्याव्यात, त्यांचा गौरव करावा, शेतमालाची प्रदर्शने सरकारने भरवून कार्यक्षम शेतकऱ्यांना, त्यांच्या मुलांना परदेशात पाठवून शेतीचे शिक्षण द्यावे. आजच्या काळात काही प्रमाणात याची अमलबजावणी केली जात असली तरी याचा फायदा सामान्य शेतकऱ्यांना होत नाही. शेतीचे प्रशिक्षणही प्रभावी नाही, कारण काही ठिकाणी अनुभवी शेतकऱ्यासमोर प्रशिक्षक अज्ञानी वाटतात. कृषीपदव्या, गौरव, मानसन्मान, शेतीच्या विविध योजना भारतात बांधावरून शेती करणाऱ्याच मिळत आहेत.

५. शेतीस संरक्षण द्यावे :- फुले यांनी पिकांची हानी, चोरी, याबद्दल पोलीस संरक्षण असावे. रानटी पशुंचा बंदोबस्त करावा. परंतु हे सुचविलेले उपाय आजही पूर्ण होत नाहीत, हत्ती, रानडुकरे, वानरे व इतर प्राण्याकडून शेतीचे नुकसान होते तेव्हा तक्रार घेतली जात नाही. बिबट्याकडून किवा हिंस्र प्राण्याकडून ग्रामीण भागात महिला व लहान मुलांवर हल्ले होतात, तेव्हा त्यांच्या बंदोबस्तासाठीची सोय होत नाही कारण त्यावेळेस शहरी भागात एसी मध्ये बसून पर्यावरण प्रेमीस त्यांचा पुढका येतो आणि त्यांच्या बंदोबस्तासाठीही विरोध होतो. यामुळे शेतीचे तर नुकसान होतेच, शिवाय लोकांच्या जीवासही मुकावे लागते.

६. काम नसणाऱ्या वर्गास कामास लावावे :- फुले यांच्या मते, देशाच्या आरमारात असणारे पोलीस, लष्करातील सैनिक यांना काम नसताना शेतीउपयुक्त तलाव, तळी बांधण्यास वापरावे, परंतु आजच्या शत्रुत्वपूर्ण जगात ही गोष्ट शक्य नाही, कारण हल्ली सैन्यास सतत युद्ध सज्ज राहावे लागते, पोलिसांना नेहमी मंत्र्यांच्या बंदोबस्तासाठी तैनात राहावे लागते. नैसर्गिक आपत्ती त्यामध्ये, भूकंप, महापूर, वादळी वारे, त्सुनामी, देशांतर्गत कलह यामुळे ते शक्य होत नाही. त्यांच्यावरच प्रचंड ताण येतो आहे.

७. पडीक जमीन उपयोगात आणणे :- फुले यांनी शेतीची आर्थिक स्थिती सुधारण्यासाठी सरकारने युद्धावरील खर्च कमी करावा असे सुचविले. तो पैसा शेतकऱ्यावर खर्च करावा असे सुचवितात, परंतु यामध्ये अनेक धोके आहेत कारण शेजारील देश त्यांच्या लष्करासाठी खर्च वाढवत असताना आपण त्याकडे दुर्लक्ष करणे म्हणजे पुन्हा परकीयांची गुलामी ओढवून घेण्यासारखे आहे.

८. शेतकऱ्यांनी आपल्या विचारात बदल करावेत :- जमीन हा महत्वाचा दुर्मिळ घटक आहे. तरीही मोठ्या प्रमाणात जमीन पडीक आहे. अशी जमीन लागवडीखाली आणल्यास शेतकऱ्यांचे दारिद्र्य कमी होण्यास मदत होईल. पडीक जमिनीची उत्पादन क्षमता वाढविण्याची गरज आहे. हे कार्य एकट्या शेतकऱ्यास शक्य नाही. त्यासाठी सरकारने शेतीतील गुंतवणूक वाढविण्याची गरज आहे.

निष्कर्ष :- वरील विविध विचारातून महत्वाचे पुढील निष्कर्ष दिसून येतात-

१. अजूनही शेतकरी सावकारी पाशातून मुक्त झालेला नाही.

२. शेतीपासून मिळणाऱ्या उत्पन्नाएवढा खर्च शेतीत केला जात नाही.

३. सरकारची अनेक जाचक धोरणे सामाजिक कल्याणकारी योजनेमुळे शेतकऱ्यांचे दारिद्र्यास कारणीभूत ठरत आहेत.

४. अजूनही भाऊबंधगी, बांधासाठी वाद, कोर्ट, कचेऱ्या अशी अनेक कारणे शेतकऱ्यांच्या गरीबीस कारणीभूत ठरत आहेत.

५. प्रशासकीय व्यवस्थेकडून शेतकऱ्यांचे मोठ्या प्रमाणात शोषण व नुकसान होत आहे.
६. शेतकरी अजूनही धार्मिक, रूढी, परंपरा यात गुंतून असल्याने त्याचे धार्मिक व सांस्कृतिक शोषण होत आहे.
७. शेतकऱ्यांचे अयोग्य नियोजन आणि राजकारणात भाग घेवून प्रतिष्ठेसाठी काही अंशी स्वतःच गरीबीस कारणीभूत आहे.

सारांश :-

फुले याचे शेतीविषयी असणारे विचार आणि शेतकऱ्यांची असणारी दयनीय अवस्था ही फुले यांच्या काळात होती ती अजूनही तशीच पहावयास मिळत आहे. यातून मार्गाकढण्यासाठी त्याकाळात सांगितलेले शेती सुधारणेचे आणि शेतकऱ्यांची आर्थिक परिस्थिती सुधारणेचे उपाय व त्यातून दारिद्र्य दूर होण्याचे उपाय विचार आपणास आजही मार्गादृषक असेच आहे. त्याची योग्य अमलबजावणी झाली तर यातून योग्य मार्ग निघून देशाची व पर्यायाने शेताकार्यची थिती सुधारण्यास मदत होईल. अश्यारितीने महात्मा फुले यांचे शिक्षण, समाजसुधारणा यासोबत शेती विषयक विचार आजही प्रासंगिक आहेत. डॉ. आंबेडकरानी सांगितलेला राज्य समाजवाद आणि सरकारने आर्थिक लोकशाहीसाठी काय करावे याचे मार्गदर्शन करण्यासाठी सांगितलेली राज्यनितिची मार्गदर्शक तत्वेही सामाजिक व आर्थिक लोकशाही प्रस्थापीत करण्यासाठीच आहे. ही तत्वे म्हणजे फुले यांच्या विचारांचाच परिपाक आहे. परंतु सरकारच्या राजकीय इच्छा शक्तिचा अभाव व अनास्थेमुळे शेतकरी राजाची दैनावस्था झाली आहे.

संदर्भग्रंथ -

1. सरदार गं. बा. (१९८२) : 'महाराष्ट्राच्या सामाजिक प्रबोधनाची वाटचाल' नव निर्माण न्यास - महात्मा फुले - १९८२, ग्रंथाली.
2. जी. एल. भिडे आणि एन. जे. पाटील : 'महाराष्ट्रातील समाज सुधारणेचा इतिहास' फडके प्रकाशन, कोल्हापूर.
3. प्रा. वसंत जाधव ; ' आधुनिक महाराष्ट्रातील परिवर्तनाचा इतिहास ' विद्या प्रकाशन, नागपूर.
4. प्रा. डॉ. व. गो. दांडेकर : 'राजकीय विचार आणि विचारवंत' डायमंड प्रकाशन, पुणे.
5. प्रा. दिनेश मोरे (१८१८ - १९६०) : 'आधुनिक महाराष्ट्रातील परिवर्तनाचा इतिहास' के. एस. प्रकाशन, पुणे.
६. प्रा. गणेश राऊत आणि ज्योती राऊत (१८१८ - १९२०) : ' महाराष्ट्रातील परिवर्तनाचा इतिहास' डायमंड प्रकाशन, पुणे.
6. महात्मा फुले यांचे समग्र वाडमय. विविध वर्तमानपत्रे, Website, फुले यांच्या विचारावरील लिखाण,

छ.शाहू महाराजांचे आरक्षण धोरण आणि सद्यस्थिती

डॉ. दत्ता कुंचेलवाड

सहयोगी प्राध्यापक, नागनाथ महाविद्यालय, औंढा नागनाथ तथा सदस्य, राज्यशास्त्र अभ्यासमंडळ

स्वारातीम विद्यापीठ, नांदेड.

dkunchelwad@gmail.com

गोषवारा(Abstract) :

रयतेच्या हिताचे व कल्याणकारी शासन करणारे छ. राजर्षी शाहू महाराज यांचे आधुनिक भारताच्या जडणघडणीत अत्यंत मोलाचे स्थान आहे. एक उत्कृष्ट, राजा, बहुजन उध्दारक, आरक्षणाचे जनक आणि आपल्या अथक परिश्रमातून सामाजिक समतेची मुहूर्तमेढ रोवणारे कल्याणकारी राजा म्हणून राजर्षी शाहू महाराजांचा उल्लेख इतिहासात आहे. त्यांचे कर्तव्य हिमालयाच्या उंचि एवढे आहे. आपल्या सत्तेचा उपयोग लोककल्याणकारी धोरणे राबविण्यासाठी केला. त्यांच्या राजसत्तेचा कालखंड अखिल मानवी उत्थानासाठी होता हेच आता सिध्द झाले आहे. हजारो वर्षांपासून चतुर्वर्ण्य व्यवस्थेने येथील मागास, दुर्लक्षित, वंचित समुदायाचे जे हक्क या व्यवस्थेने हिरावले होते ते परत नैसर्गिक न्यायाने लोकांना मिळवून दिले त्यापैकीच एक धोरण जे संबंध भारतीय समाजाला गती व दिशा देणारे ठरले, ते म्हणजे आरक्षण धोरण होय. आरक्षणांमुळे वर्णवाद, वंशवाद, जातीयव्देष आणि विशिष्ट लोकांची मक्तेदारी मोडीत निघत आहे. पण सध्या सरकारच्या नकारात्मक भूमिकेत आरक्षणावर कुऱ्हाड घातली जात आहे. त्या संदर्भाने लेखाजोखा मांडण्याचा प्रयत्न.

बीज शब्द(Keywords): आरक्षण धोरण, बहुजनहिताय, बहुजन सुखाय, समतेचा पुजारी, मंडळ आयोग, कर्मंडळ, राजर्षी, संवैधानिक तरतुद व लोकशाही इ.

प्रस्तावना (Introduction):-

भारतीय समाजाला चातुर्वर्ण्य व्यवस्थेने विभाजित करून आपली वर्गवर्चस्वाच्या नावाखाली पिळवणूक केली. याचा फायदा घेत सन 1600 मध्ये ब्रिटिशांनी भारतावर साम्राज्य पसरविले आणि फुटीरतेच्या प्रकृतीचा फायदा घेत भारताची आर्थिक लुट केली ब्रिटिशकालीन भारतात 565 संस्थाने होती. बहुतांश राजे-शासक ब्रिटिशांच्या सत्तेखाली सामंत म्हणून वावरत होते. जनतेच्या विकासाचे त्यांना फारसे स्वारस्य नव्हते हे शासन राजवाडा, आपली नातीगोती आणि हितसंबंधातील लोकांसाठी फायद्याचे होते परिणामी येथे काही लोक तुपाशी, तर बरेच उपाशी राहत होते. या व्यवस्थेने त्यांना एक प्रकारे गुलाम केले होते. महाराष्ट्रातील कोल्हापूरच्या करवीर गादीवर एप्रिल 1894 ला शाहूंचा छत्रपती म्हणून राज्यभिषेक झाला आणि हा राजा मात्र जनतेच्या कल्याणाची भूमिका घेत प्रत्येक क्षण, प्रत्येक दिवस लोककल्याणाचे निर्णय घेऊ लागले त्यांना प्रस्थापित लोकांकडून तिब्र विरोध झाला तरी न जुमानता अगदी निश्चयाने विकासाचा रथ गतीमान केला. संस्थानातील अस्पृश्य, दलित, भटके, इतर मागासांना त्यांच्या क्षमतेप्रमाणे नोकऱ्या दिल्या, संधी दिली आणि मानवी मुक्तीचा संग्राम उभा केला. ज्यांच्या वंशात कामाची संधी नव्हती त्यांना संधी दिली. जातीयता संपवण्यासाठी 1902 साली जातवार आरक्षण देऊन सामाजिक सुधारणेचा प्रारंभ केला. त्यांचा हेतू शुध्द होता की जे सत्तेमध्ये येतील ते सुधारतील हि भूमिका होती. 1894 ते 1922 पर्यंत छ. शाहूंनी 28 वर्षे राज्यकारभार केला हे करताना हुकूम लेखी काढले आणि पारदर्शी राज्याकारभार केला हा राजा भारताच्या राजकारण, समाज कारणाला दिशा देणारा ठरला. आज भारतीय संविधानाच्या माध्यमातून कलम 14 ते 18 दरम्यान जे मूलभूत हक्क दिले याची प्रेरणा छ.शाहू महाराज आहेत. 19.07.1902 साली आरक्षणाचा जाहिरनामा, कुलकर्णी जतीचा आदेश, प्राथमिक शिक्षण सक्तीचे, अस्पृष्यांना सार्वजनीक ठिकाणी मुक्त प्रवेश, दुष्काळ निवारण शेतकऱ्यांच्या हिताचे निर्णय असे अनेक निर्णय घेत जनु क्रांतीच घडवून आणली. त्यांच्या विचाराने प्रभावीत होऊन संविधानाच्या कलम 330 एस.सी., एस.टी. ना राजकीय आरक्षण देऊन कर्तृत्वाची संधी दिली. परंतु भारतीय पक्षांची स्वार्थी प्रवृत्ती जातीचे मतपेटीचे राजकारण आणि विशिष्ट समुहाची राजकीय क्षेत्रातील मक्तेदारीमुळे आरक्षणाचा खेळखंडोबा होत आहे परिणामी अद्यापही आरक्षणाच्या बेगडी प्रवृत्तीमुळे सामाजिक स्वास्थ्य व निकोप लोकशाही धोक्यात आली म्हणून छ.शाहू महाराजांच्या आरक्षण धोरणाचा बोध घेत नव्याने विचार करण्याची गरज वाटते.

छ.शाहू महाराजांचे आरक्षण धोरण:

भारतीय समाजात आर्य प्रभावीत लोकांची एकाधिकारशाही संपवण्यासाठी छ. शाहू महाराजांनी सामान्य गरिब, मागास, वंचित लोकांना कोल्हापूर संस्थानात समावून घेण्यासाठी 50% जागा आरक्षित करून सेवेची संधी दिली. सनातनी वर्गाच्या रोषाला न जुमानता त्यांनी दलित, आदिवासी व भटक्या विमुक्तांना राज्यात समावून घेत त्यांच्या गुणवत्तेला संधी दिली. हे भारताच्या विकासाचे पाऊल होय असे वाटते. अस्पृश्यता नष्ट करण्यासाठी 1919 साली त्यांना वेगळ्या शाळा भरण्याची पध्दत बंद केली. जातिभेद दूर करण्यासाठी आंतरजातीय विवाह लावले. मागासलेल्या लोकांना प्रगतीच्या प्रवाहात आणण्यासाठी आरक्षण जाहिर केले. संस्थानात मागास जातींसाठी 50% जागा ठेवल्या आणि अंमलतबजावणी करून अधिकाऱ्यांकडून अहवाल मागविले. या निर्णयांना अनेक उच्च वर्गियांनी विरोध केला. मागास मुलांना शिक्षणाची संधी निर्माण केली. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांना परदेशात शिक्षणासाठी आर्थिक मदत केली. या आरक्षण धोरणाविरोधात अभ्यंकर नावाच्या वकिलांनी आक्षेप घेतला त्याला कडक शब्दात विरोध करत आरक्षण धोरण गतीने राबविले सांगण्याचा हेतू असा की, त्यांनी ठाम निर्णय घेऊन त्याचा पाठपुरावा केला याची फळे बहुजन समाजाला मिळत आहेत.

भारतीय संविधानातील आरक्षणाची तरतुद:- भारतीय समाजाचा इतिहास विषमतेने भरलेला आहे धार्मिक कर्मकांड आणि वर्गवर्चस्वाच्या हेतूने प्रेरीत असल्यामुळे विशिष्ट लोकांची सर्वच क्षेत्रात मक्तेदारी होती. देशातील नैसर्गिक साधनसंपत्तीवर मोजक्याच समुहांनी कब्जा मिळवला. परिणामी काही समाजाचे जातीय, वंशिकतेवरून शोषण होऊ लागले याला वाचा फोडण्याचे मानवावादी काम छ. शिवाजी महाराज, म. फुले, राजर्षि राहु महाराज यांनी केले. या महापुरुषांच्या विचाराचा पगडा डॉ. बी.आर. आंबेडकरांवर होताच त्यांनी संविधान निर्मातीवेळी सामाजिक न्यायाचे तत्व डोळ्यासमोर ठेऊन भारतीय संविधानात कल्याणकारी तरतुदी केल्या. भारतीय राज्य घटनेची सुरुवात "आम्ही भारतीय लोक" अशी करून देशातील सर्वच स्त्री-पुरुषांना समानतेची, हक्काची, विकासाची हमी दिली. राज्याने सर्व नागरिकांना जात, वंश, वर्ण, धर्म, लिंग इ. आधारे भेदभाव न करण्याचे आश्वासन दिले.

1. संविधानाच्या कलम 15(4) अन्वये सामाजिक आर्थिक दृष्ट्या मागासवर्गीयांसाठी विकासात्मक संधी दिली.
2. संविधानाच्या कलम 16(4) नुसार मागासलेले वर्ग आहेत त्यांना योग्य प्रतिनिधीत्व मिळण्यासाठी शासकीय नोकऱ्यात तरतुद करण्याची संधी दिली.
3. संविधानातील कलम 46 नुसार मार्गदर्शक तत्वात सांगाताना म्हटले की, राज्याने दुर्बल घटकातील नागरीकांकरीता शैक्षणिक व आर्थिक उन्नतीसाठी प्रयत्न करावे.
4. संविधानाच्या कलम 330 व 332 नुसार राजकीय क्षेत्रात आरक्षण देण्यात आले.
5. कलम 338 अन्वये एस.सी. व एस.टी. प्रवर्गासाठी सामाजिक शैक्षणिक व आर्थिक परिस्थितीचा अभ्यास करण्यासाठी राष्ट्रीय आयोगाची निर्माती करावी असे सांगितले.
6. 340 नुसार भविष्यात राज्याने इतर मागासवर्गीयांना आरक्षण लागू करण्याचे पाऊले उचलावीत असे निर्देश दिले.

आरक्षण हि मानवनिर्मित विषमता आणि गुलामी संपवण्याचा भाग आहे. त्यामुळे समाजात ऐक्य, बंधुभाव जोपासावा हा हेतू होता परंतु स्वातंत्र्यानंतर 75 वर्षांतही अपेक्षित बदल झाला नाही हे शासनकर्ते, नागरिक आणि प्रशासकांचे अपयश आहे असे वाटते.

आरक्षणाची सद्यस्थिती: स्वतंत्र्य भारतात संविधानाच्या माध्यमातून सामाजिक, राजकीय शैक्षणिकदृष्ट्या सर्वांना समान संधी निर्माण करून देण्यासाठी मागास दुर्लक्षित, दिव्यांग, महिला इ.ना आरक्षण देऊन मुख्य प्रवाहात आरण्याचे धोरण आखले गेले. ही सामाजिक समतेची प्रक्रिया ब्रिटिशकालीन भारतात छ. शाहू महाराजांनी 1902 मध्ये प्रभावीपणे राबविली हिच भूमीका संविधानकर्त्यांनी अवलंबविली त्यांना अनुसरून डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी कलम 14,15,16 17 व 21 अंतर्गत आरक्षण दिले संविधान निर्मातीपासून 2021 पर्यंत जवळपास 71 वर्षांच्या कालखंडात अपेक्षेप्रमाणे सामाजिक, राजकीय, आर्थिकदृष्ट्या सुधारणा झालेल्या नाहीत. आजही जातिय, धार्मिक तेड आहे. आर्थिक व राजकीय क्षेत्रात तर कमालीचे अंतर आहे. या देशात सत्ताध्याऱ्यांनी आपली घराणेशाहीचे बस्तान बांधले तर भांडवलदारांनी या देशातील साधन संपत्तीवर कब्जा मिळवून अर्थव्यवस्था बंदिस्त केली आहे. तर 70% लोक प्राथमिक गरजा भागवण्यास असमर्थ आहेत. कमालीची बेरोजगारी आणि बेकारीने युवक त्रस्त आहेत हे आजच्या भारताचे विदारक चित्र आहे. भारतीय संविधानाच्या कलम 340 नुसार मार्गदर्शक तत्वात इतर मागासवर्गीयांना प्रगतीसाठी आरक्षण लागू करण्याचे सांगितले त्याला अनुसरून जनतापक्षाच्या सरकारातील मोराजी

देसाई यांनी 1979 मध्ये मंडळ आयोगाची स्थापना केली. मंडळ आयोगाने आपल्या अहवालात 1257 समुदायाला मागास घोषित करून आरक्षणासाठी शिफारस करतांना 52% समुहांना आरक्षण देण्याचे सांगितले परंतु स्वार्थी काँग्रेस पक्षाच्या नेत्यांनी केली नाही. धुळ खात पडलेला मंडळ आयोगाची अंमलबजावणी पंतप्रधान व्ही.पी.सिंह यांनी केली पण भाजपाच्या नेत्यांनी विरोध दर्शवण्यासाठी अडवाणी यांनी कमंडल यांना काढली व व्ही.पी. सिंह यांचे सरकार पाडले. 52% असलेल्या ओबीसींना केवळ 27% शिक्षणात व नोकऱ्या आरक्षण दिले यामुळे समस्त ओबीसी वर अन्यायच ठरला आहे. ओबीसी आरक्षणात येण्यासाठी मराठा समाजाने 3 वर्षांपासून मोठे आंदोलन करत आरक्षण मिळवण्याच्या प्रयत्नात आहेत पण आरक्षणाचा कोठा आहे तोच ठेऊन इतर जातींना आरक्षण दिले तर कुणालाही याचा लाभ होणार नाही. 2020 साली महाराष्ट्र सरकारने मराठा समाजाला ओ.बी.सी. मध्ये दिलेले आरक्षण सर्वोच्च न्यायालयाने अवैध ठरवले आणि हा प्रश्न अधिकच गुंतागुंतीचा ठरला आहे. आता ओ.बी.सी. प्रवर्गात वास्तविकदृष्ट्या दबलेले, पीचलेले जातीसमुह हवे होते परंतु जनतेच्या रेट्यामुळे आणि मतपेटीवरील डोळा ठेऊन काँग्रेस, भाजपा या दोन्ही पक्षांच्या सरकारनी प्रगत समुहालाही आरक्षणाच्या खैराती वाटत आहेत. यात आवश्यकता नसणाऱ्या जातींनाही आरक्षण देऊन परत जाती-जातीत भांडणे व तेढ निर्माण करणारे आहे असे वाटते आज ओबीसी प्रवर्गात श्रीमंत, भांडवलदार, समुहांनाही समाविष्ट केल्यामुळे खरे ओबीसी लाभार्थी वंचित राहत आहेत यासाठी या देशातील राजकीय, सामाजिक आर्थिकदृष्ट्या समानता आणण्यासाठी केवळ विकलांग व दुर्बल, दुर्लक्षितांनाच आरक्षण देण्यासाठी आयोग नेमून गरजूनाच आरक्षण द्यावे व इतर प्रगत जाती समुहांना आरक्षण देणे बंद करावे. संविधान कर्त्यांनी देशात समता रुजवण्यासाठी 10 वर्षांपर्यंत आरक्षण द्यावे नंतर त्यांचे मूल्यामापन/तपासणी करून पुर्नमांडणी व्हावी ही अपेक्षा होती. पण आरक्षणाची कालमर्यादा दर 10 वर्षांनी वाढवावी लागत आहे. कारण केवळ आरक्षण देऊन सामाजिक, राजकीय समानता येणार नाही तर या देशातील जमीनदार, भांडवलदार व उच्चभू समाजाला जाणाऱ्या समुहांनी समता आणण्यासाठी चार पाऊले उदार मनाने पुढे टाकावीत म्हणजे समतेचे तत्व रुजण्यास मदत होईल आणि राजर्षी शाहू महाराजांचे स्वप्न साकार होईल असे वाटते.

समारोप: मानव हा प्राणी निसर्गतः समान आहे त्याच्या विवेकाप्रमाणे आचरण करण्याचा व विकासाचा मार्ग अवलंबण्यात तो सक्षम आहे नैसर्गिक विविधता (विषमता) गृहित धरून मानवनिर्मित विषमता नष्ट करून विवेकी शासनकार्याचे लक्षण आहे. तसे जीवन जगवण्याचा नैसर्गिक अधिकार आहे तत्व गृहीत धरून म. गौतमबुद्ध, वर्धमान महाविर, म. बसवेश्वर, छ. शिवाजी महाराज, राजा राममोहन राय, म. फूले, सावित्रीबाई फूले यांनी सदैव आपल्या कर्तृत्वातून न्याय देण्याचा प्रयत्न केला आहे. हीच परंपरा छ.शाहू महाराजांनी एक शासक म्हणून राबविली म्हणून ते आरक्षणाचे जनक ठरतात. त्यांनी आरक्षणाची भूमिका न्याय समाज निर्माणासाठी केली आहे. तेच धोरण भारतीय संविधानात अवलंबीले आहे. परंतु स्वार्थी नेते, मतलबी समाज धुरिनांनी आरक्षणाला तिलांजली दिली आहे. मा. नरेंद्र मोदी सरकार आणि पूर्वीच्या काँग्रेस नेतृत्वानी भारतीय समाजाचा समतोल विकास साधू शकले नाही. म्हणून आज प्रत्येक समाज(पूर्वीचा श्रीमंत व प्रतिष्ठित समुह) देखील आरक्षणाच्या रांगेत उभा आहे. कारण याच मार्गाने आपली प्रगती होईल ही अंध आशा बाळगली जाते. जर असेच सरकारचे नाकर्तेपणा चालू राहीला तर आरक्षणाची धार कमी होईल. खऱ्या अर्थाने देशाची प्रगती साधण्यासाठी खाजगी क्षेत्रातही आरक्षण 10 वर्षे लागू करून सामाजिक, राजकीय, आर्थिक व शैक्षणिक क्षेत्रात नेत्रदिपक विकास साधेल. अन्यथा सरकारच्या जातीयवादी व धार्मिक अभिवेधातून आरक्षणचा खेळखंडोबा होईल परत भारत गुलामीकडे वाटचाल करेल. यातून सावरण्यासाठी मागास वंचित दुर्लक्षित उपेक्षितांना आरक्षणाचा योग्य लाभ झाला तर हा देश येत्या 10 वर्षांत महासत्ताक देश होईल.

संदर्भ (References):-

1. डॉ.बी.आर.आंबेडकर, भारताचे संविधान,समता प्रकाशन, नागपूर-2001.
2. राजर्षी शाहू छत्रपती, चरित्र, समता व सामाजिक न्याय विभाग, बार्दी, पुणे,-2015.
3. कमलनयन चौबे, जातियोंका राजनितीकरण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,-2012.
4. गरुड आचार्य शांताराम (संपा.) आरक्षण आणि सामाजिक न्याय, प्रबोधन प्रकाशन इचलकरंजी,-2003.
5. जैमिनी कडू, ओबीसी दशा और दिशा, मुलनिवासी पब्लिकेशन, दिल्ली,-2006.
6. डॉ.एफ.एम. सौदागर (संपादक) आरक्षणाचे धोरण, सामाजिक न्याय आणि भारतातील लोकशाहीवादी राजकारण, शिवाजी प्रकाशन पुणे, जाने-2017.
7. अॅड विष्णू ढोबळे, मंडळ आयोग काल, आज आणि उद्या, कौशल प्रकाशन, औरंगाबाद,-2013.
8. प्रा.देवरे श्रावण, मंडळ आयोग ओबीसीच्या लोकशाही मुक्तीचा जाहिरनामा, भाग-1, 11 मे-1990.

प्रजातंत्र भारत में विद्रोह का आगाज :आंबेडकरवाद

डॉ. सुरेश शेळके

नागनाथ महाविद्यालय, औंढा

प्रस्तावना :

विश्वकी श्रेष्ठ तमसभ्यताओं में भारतवर्ष की सिंधू घाटी की सभ्यता संसार के समस्त देशों का आकर्षण रही है। सिंधू सभ्यता अर्थात् द्रविड, अनार्य, नाग संस्कृति जो अत्यंत प्रगत तथा प्रभावी मानी जाती है। आधुनिक भारत के प्रजातंत्र की नींव निश्चित ही प्राचीन गणराज्य पद्धति रही है। भारत वर्ष की गरिमा अद्भूत थी। भारत की समृद्धता का परिचय 'सोने की चिडिया' संबोधन समीचिन लगता है। सुजलाम, सुफलाम, सहोदर भारत की ख्याति चारों दिशाओं में फैल चुकी थी। इस पर अपना साम्राज्य हो यह धारणा अनेक शासकों की रही। इसी कारण इस भूमिपर अनेक आक्रमण भी हुए। भारत का इतिहास क्रांति एवं प्रतिक्रांतिका दौर रहा है। भारत वर्ष में पहला क्रांति का आगाज तथागत बुद्धद्वारा हुआ। जिसने वैज्ञानिक दर्शन का निर्माण कर मानवतावाद की प्रस्थापना की। शांति और अहिंसा का वैश्विक मंत्र प्रदान करनेवाले तथागत गौतम बुद्ध की भूमि का आकर्षण समस्त संसारको रहा। नालंदा, तक्षशिला आदि विश्वविद्यालयों द्वारा भारतका ज्ञान-विज्ञान तथा व्यापार दर्शन विश्व के कोने-कोने में जा पहुँचा। बुद्ध कालीन गणराज्य व्यवस्था अत्यंत समृद्ध एवं लोक हितैशी थी। जिसके अनेक प्रमाण हैं। प्रियदर्शी चक्रवर्ती सम्राट अशोक ने गणराज्य का विस्तारकर समतामूलक समाज निर्माण का चक्र गतिमान किया भारत देश के साथ विश्व के चारो दिशाओं में बौद्ध दर्शन का विस्तार कर सभ्यता, संस्कृति तथा परिवर्तन का स्वर नीलांबर तक पहुँचाने का महान कार्य किया। हजारो वर्षों की बेडियाँ केवल 1947 में भारत के आजाद होने से मुक्त नहीं हुई बल्कि 26 जानेवारी 1950 को भारत गणराज्य घोषित हुआ और सही अर्थों में पुनः प्रजातंत्र भारत का सफर शुरु हुआ। प्रजातंत्र इस देश के लिए संविधान की सर्वोत्कृष्ट देन है, जो इस देश को एक वरदान के रूप में प्राप्त हुआ है।

भारत का 1950 के पश्चात का प्रजातंत्र:

स्वतंत्रता के बाद भारत के हर नागरिक ने एक सुनहरा सपना देखा था कि देश में खुशहाली होगी, रोजगार मिलेगा, सुख, शांति से सबका विकास होगा, जो केवल सपना ही बनकर रह गया। केवल आर्थिक विकास ही जनतंत्र को मजबूत नहीं करता, केवल शिक्षा एवं रोजगार में चंद लोगो के उन्नति से देश एवं जनतंत्र मजबूत नहीं होता। राष्ट्र एवं प्रजातंत्र तब मजबूत होता है, जब संविधान के आधारपर हम सभी वंचित वर्गों विशेष कर आदिवासी, दलित, अल्पसंख्याक, घुमंतु एवं पिछड़े समाज के लोगों के अधिकारों को उपलब्ध कराये। प्रजातंत्र की व्यवस्था में लोगो को कुछ अधिकार प्राप्त हैं। जैसे राजनीति, आर्थिक, एवं सामाजिक जिसके माध्यमसे स्वतंत्रता, समता, बंधुता तथा न्याय के आधारपर संसदीय लोकतंत्र को प्रतिनिधित्वकारी बना सकते हैं। जिसके लिए लोकतंत्र का सामाजिकरण आवश्यक है।

स्वतंत्र भारत के प्रजातंत्र में विभिन्न आंदोलन:

अपना हक एवं अधिकार प्राप्त करने के लिए हर नागरिक एवं समूह को आंदोलन करने के लिए संविधान में प्रावधान है। वैसे प्रजातंत्र की कोई एक परिभाषा नहीं है। हमें यह भी पता है कि अरस्तू, जॉन स्टुअर्ट मील्स, ताकविल, रुसो तथा राबर्ट डाल आदिने लोकतंत्र के अनेक लक्षणों को समय-समय पर उद्धृत किया है और उस को स्थापित करने की कोशिशें भी की हैं। लोकतंत्र की परिभाषा देते हुए अब्राहम लिंकन लिखते हैं, "लोकतंत्र, लोगों का लोगों द्वारा एवं लोगों के लिए चलानेवाली स्वतंत्र व्यवस्था है"। जबकि भारत के प्राचीन कालमें लोकतंत्र विकसित था। उसी आधारपर आधुनिक भारत के निर्माता डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के दृष्टि से "व्यक्ति के जीवन में खून का एक कतरा भी न बहाकर उसके सामाजिक, आर्थिक, तथा राजनीतिक जीवन में समूचा बदलाव लाना ही सही लोकतंत्र है"।

इसी प्रेरणा से भारत में 'आंबेडकरवाद' का अपना संघर्ष सदैव चलाआ रहा है। इस देश की विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका और मीडिया शासक जातियों का ही पक्ष लेकर पूँजीवाद को सहायता दे रही है। इसलिए

बाबासाहेब को ही अपनी प्रेरणा मानकर अनेक समूह अपना आंदोलन चला रहे हैं। जिसमें पद्मश्री दादासाहेब गायकवाडजी के नेतृत्व में भूमिहीनों का सत्याग्रह आंदोलन चला अंततः उनकी जीत हुई। दलित-आदिवासी उत्पीड़न की पुकार 'दलित पंथर'के जाबाज आंदोलन से आक्रामक प्रवृत्ति निर्मित होकर संरक्षण के अपने पैतरे स्थापित करने का प्रयत्न हुआ। 'रिडल्स इन हिंदूइजम' ग्रंथ को लेकर जो जन आंदोलन हुआ जिसका नेतृत्व स्वयं बाबासाहेब के पौत्र श्रद्धेय अँड प्रकाश आंबेडकर जी ने किया और देश में एक हंगामा खड़ा हुआ। उनके ही नेतृत्व में मंडल आयोग लागू करने के लिए देशमें जन आंदोलन हुआ। जिससे संविधान के धारा 340 के अनुसार देश के समस्त पिछड़े वर्गों को आरक्षण मिलने का रास्ता आसान हो गया था।

मराठवाडा विश्वविद्यालय नामांतर आंदोलन : अस्मिता का संघर्ष

परिवर्तनवादी तथा मानवतावादी विश्व साहित्य के प्रेरणास्थान डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर को माना जाता है। मराठवाडा तथा महाराष्ट्र उनकी कर्मभूमि रही है। औरंगाबाद स्थित मराठवाडा विश्वविद्यालय को डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के नाम से अलंकृत करने के लिए जो 17 साल 'नामांतर आंदोलन' चला जो एक मिसाल बनकर रह गया। भारत वर्ष के तमाम प्रगतिशील आंदोलन तथा विचारकों के लिए स्फूर्ति केंद्र जो बाबासाहेबने 1944 में दादर, मुंबई में आंबेडकर भवन स्थापित किया था। जिसमें 'भारत भूषण प्रिंटिंग प्रेस' द्वारा 'प्रबुद्ध भारत', 'जनता' की पुस्तिका छपती थी। दूसरे विश्व महायुद्ध में इसी भवन से 18 महार बटालियन निर्मिती का यह केंद्र रहा। आईएएस अधिकारी रत्नाकर गायकवाड ने 24-25 जून 2016 के मध्य रात्रि को यह भवन उध्वस्त करने की कोशिश की पर समस्त आंबेडकरवादी आंदोलकों ने भारी वर्षा में भी आंदोलन में सम्मिलित होकर कड़ा विरोध किया।

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर आंतरराष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र इंदुमील आंदोलन :

वैश्विक पटल पर अनुसंधान एवं देश के विकास की नीतिनिश्चित करने के लिए आंतरराष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र और स्मारक का निर्माण करने के लिए जनआंदोलन चला उसके परिणाम स्वरूप 2018 को सरकार द्वारा भूमिपूजन हुआ।

किसान आंदोलन :

17 सितंबर 2020 को लागू किए गये तीन विवादास्पद कृषि कानून के विरोध में राजधानी दिल्ली के बॉर्डर पर 25 नवंबर 2020 से लगभग एक वर्षतक जो किसान आंदोलन चला उसके लिए बाबासाहेब और संविधान ही उनके लिए प्रेरणा थी। इतनाही नहीं भारत वर्ष में मानवाधिकार के जितने भी आंदोलन चलाये जाते हैं उनकी मूल प्रेरणा आंबेडकरवाद ही है।

अभिव्यक्ति स्वतंत्रता का आंदोलन :

भारतीय संविधान अभिव्यक्ति स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान करता है। पर यहाँ जो सच्चाई बयान करता है उसे समाप्त किया जाता है। जनमानस के हीत / कल्याण की बात करनेवाले नरेंद्र दाभोळकर, कॉमरेड गोविंद पानसरे, कुलपती डॉ. कलबुर्गी तथा पत्रकार गौरी लंकेश की हत्या कर दी गयी परंतु उनके विचारों को समाप्त करना असंभव है।

सिनेमा , रंगमंच, तथा साहित्य सम्मेलनों में आंबेडकरवाद:

अस्मितादर्श साहित्य संमेलन, आंबेडकरवादी साहित्य संमेलन, विद्रोही साहित्य संमेलन तथा महाराष्ट्र बौद्ध साहित्य परिषद आदि के साथ बोधी रंगमंच अर्थात आंबेडकर नाट्यभूमि का प्रचलन बढ़ने लगा है। नागराज मंजुळे की 'सैराट' फिल्मने अब तक के सारे रेकॉर्डतोड़ दिये, वर्तमान 'जयभीम' फिल्म ने विश्वविक्रम स्थापित किया है उन सबकी प्रेरणा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर रहे हैं।'आंबेडकरवाद' का दायरा व्यापक होकर वह राष्ट्रीय एवं आंतरराष्ट्रीय स्तर तक पहुँच चुका है। आंबेडकरवाद से तात्पर्य है अस्मिता, स्वाभिमान, निडरता, स्फूर्ति, चेतना, वैश्विक मानवता आदि। प्रजातंत्र भारत में सामाजिक विकलांगता को लताडकर महानसंतो, विचारको एवं समाजसुधारकों के सपनों को साकार करने के लिए 'आंबेडकरवाद' एक महाप्रवेश द्वार है। जो विभिन्न क्षेत्र में अपना स्थान निर्माणकर अस्मिता की तलाश कर रहा है। साहित्यिक गतिविधि में यशवंत मनोहर, गंगाधर पानतावणे, ज.वि. पवार, आविनाश डोळस, शांताराम पंदेरे, जयप्रकाश कर्दम, कालीचरण स्नेही, कौशल पवार, रत्नकुमार सांभरिया, दामोदर मोरे, अजय

नावरिया, सूरजबडतिया, विमल थोरार, आदिने आंबेडकरवादी लेखन कर भारतीय साहित्य को वैश्विक साहित्य में गौरवान्वित किया है।

राजनीतिक क्षेत्र में राष्ट्रपति पदपर के.आर.नारायणन, प्रतिभाताई पाटील, प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी, मुख्यमंत्री मायावती, जयललीता, ममता बॅनर्जी, कांशीराम, अॅड. प्रकाश आंबेडकर, रामविलास पासवान आदिने आपना राजनीतिक स्थान विकसित किया है। साथ ही संगीत के क्षेत्र में प्रल्हाद शिंदे, महाकवी वामनदादा कर्डक, आनंद शिंदे, मिलिंद शिंदे, उत्कर्ष शिंदे, आदर्श शिंदे आदिने अपना स्थान उँच्चा किया है। इसके अतिरिक्त नाटक, अनुसंधान, कला, सांस्कृतिक, आदि क्षेत्र में वंचित समूह का स्थान निश्चित हो रहा है। जिसका श्रेय मात्र आंबेडकरवाद को जाता है।

उपसंहार :

दिन प्रतिदिन होनेवाली सरकार की सुधारवादी घोषणाओं और ढेर सारे कानूनों के रहते भी दलित, आदिवासी, घुमंतु, अल्पसंख्याक और महिला को न्यायोचित अधिकारों से वंचित रखा जा रहा है। जिसके लिए संवैधानिक जो आंदोलन किए जा रहे हैं वह 'आंबेडकरवाद' को प्रेरणा मानकर संघर्षरत हैं।

संदर्भ :-

1. प्रजातंत्रमेंजाति, आरक्षणएवंदलित – डॉ.विवेककुमार
2. आंबेडकरसमाजदर्शन – संपादक, एकनाथभैसोर
3. आंबेडकरवादीसाहित्य – संपादक, प्रा. दीपकखोत्रागडे
4. हमहोंगेकामयाब – ए.पी.जे.अब्दुलकलाम
5. आंबेडकरभवन - संपादक, काँ. रामबाहेती
6. वामनदादाकर्डक – डॉ. अशोकजोंधळे.

राजर्षी शाहू महाराजांच्या कृषि विषयक विचाराचे विश्लेषण

प्रा. डॉ. ज्ञानेश्वर आनंदराव पुपलवाड

सहा. प्राध्यापक, पदवी व पदयुक्तर अर्थशास्त्र विभाग यशवंत महाविद्यालय, नांदेड

प्रास्ताविक :

ब्रिटिश राजवटीत महाराष्ट्राची जडणघडण करण्यात ज्या थोर पुरुषांनी मोठा वाटा उचलला त्यापैकी राजर्षी शाहू महाराज एक होते. राजर्षी शाहू महाराज हे एक प्रगतीशील विचारवंत होते. ब्रिटिश राजसत्तेच्या काळामध्ये सामान्य जनतेला न्याय मिळवून देण्यासाठी व बहूजन समाजाच्या सामाजिक, आर्थिक व राजकीय उन्नतीसाठी शाहू महाराजांनी मोठ्या प्रमाणात प्रयत्न केले आहेत. शेती हा आपल्या अर्थव्यवस्थेचा कणा आहे आणि 'शेतीचा उध्दार म्हणजे शेतकऱ्यांचा उध्दार, पर्यायाने देशाचा उध्दार' हे सूत्र ध्यानात घेऊन राजर्षी शाहू महाराजांनी आपल्या संस्थानात शेतीसाठी मुलभूत सुधारण केल्याचे दिसून येते.

प्रस्तुत शोधनिबंधामध्ये राजर्षीशाहू महाराज यांच्या कडून कोल्हापुर संस्थानामध्ये कृषिक्षेत्रामध्ये अनेक नवनवी प्रयोग, सुधारण करण्यात आल्या ज्यांचा हेतू कृषिची उत्पादकता सुधारावी आणि कृषिमालाला शाश्वत बाजारपेठ मिळावी परंतु त्यांच्या कृषि विषयक विचाराकडे म्हणावे तेवढे लक्ष वेधले नाही म्हणून प्रस्तुत शोधनिबंधात त्यांनी केलेल्या कृषि सुधारणांचा व विचारांचा अभ्यास करून शोधनिबंधाचे लेखन करण्यात आले आहे.

संशोधनाची उद्दिष्टे :

१. राजर्षी शाहू महाराजांच्या कृषि विषयक उष्टिकोनाचा अभ्यास करणे.
२. राजर्षी शाहू महाराजांनी कृषि विकासासाठी राबवलेल्या विविध प्रयोगांचा व निर्णयांचा अभ्यास करणे .
३. राजर्षी शाहू महाराजांचे कृषि विषयक विचाराची वर्तमान काळातील कृषि प्रश्न सोडवण्याची उपयुक्तता तपासणे
४. शेतीची उत्पादकता वाढविण्यासाठी राजर्षी शाहू महाराजांनी सांगितलेल्या उपायांचा अभ्यास करणे.

गृहितके :

भारतीय शेती समोरील समस्या सोडविण्यासाठी राजर्षी शाहू महाराजांचे शेती संबंधी आर्थिक विचार आजही अंत्यत उपयुक्त आहेत.

संशोधन पध्दती :

प्रस्तुत शोधनिबंध लिहिण्यासाठी प्रामुख्याने द्वितीय स्त्राताद्वारे संकलित केलेली आहे. माहिती संग्रहनासाठी विविध संदर्भग्रंथ, शासकीय अहवाल, नियतकालिके व वृत्तपत्रे इ. चा आधार घेतला आहे.

राजर्षी शाहू महाराजांचे शेतीविषयक विचार

राजर्षींच्या शेतीविषयक विचारांचा तसेच योगदानाचा अभ्यास आपणास खालील मुद्द्यांच्या आधारे करणे सुलभ होईल.

शेतीला पाण्याची (सिंचनाची) जोड

भारतीय शेती हा मान्सुनचा जुगार आहे. असे मत राजर्षीशाहू महाराजांचे होते. शेतीचा विकास घडवून आणावयाचा असेल तर शेतीला सिंचनाची जोड देण्याची आवश्यकता असल्याचे त्यांचे ठाम मत होते. यासाठी महाराजांनी सन १८९४ पासून संस्थानात जलसिंचन सुविधांचा विस्तार करण्यास प्रारंभ केला या अंतर्गत संस्थानात वेगवेगळ्या ठिकाणी कोल्हापुरी बंधारे, पाझर तलाव आणि विहीरी मोठ्या प्रमाणात बांधल्या तसेच दुरुस्त केल्या यामाध्यमातून संस्थानातील जमीन जास्तीत जास्त ओलीता खाली आणण्याचा प्रयत्न केल्याचे दिसून येते. राजर्षीशाहू महाराजांनी सन १९०२ मध्ये संपूर्ण कोल्हापूर संस्थानचा इरिगेशन सर्व्हे तज्ज्ञांकडून घेतला.

संस्थानात सातत्याने पडणाऱ्या दुष्काळांचा वाईट अनुभव महाराजांना आला होता. दुष्काळावर मात करण्यासाठी तात्पुरती व अल्पजीवी उपाययोजना उपयुक्त ठरत नाही हे जाणून राजर्षींनी त्या काळातील पाण्याशी संबंधित सर्वात मोठी योजना हाती घेतली. राजर्षींची ही महत्वाची योजना म्हणजे 'राधानगरी धरण योजना' होय. विशेष म्हणजे त्या काळातील संपूर्ण भारतातील सर्वात मोठा प्रकल्प होता यामाध्यमातून राजर्षी संस्थानच्या शेतीला बारामाही पाण्याची जोड देण्याचा प्रयत्न व दुश्काळ निर्मुलनाचा प्रयत्न केल्याचे दिसून येते.

कृषि शिक्षण :

शेतकऱ्याला शिक्षणाची आवश्यकता आहे असे मत राजर्षींचे होते. त्यासाठी राजर्षीशाहू महाराज असे म्हणतात "शेतकीच्या व्यवसायामध्ये जरी आमच्यातील बहुतेक लोक गुंतले असले तरी त्यातसुध्दा शिक्षणाची आम्हास जरूरीच आहे. शिक्षणाची जरूरी नाही अशी कोणतीही चळवळ नाही. हल्लीच्या काळी शेतकी इतकी पध्दशीर झाली आहे की, ज्याला यात यश मिळवायचे आहे त्याला या विषयातील पुस्तके वाचता आली पाहिजेत व समजली पाहिजे" राजर्षींनी जाणले होते की, भारतीय शेतकरी कष्टाला कमी पडत नाही परंतु कष्टाच्या मानाने त्याला उत्पादन व उत्पन्न मिळत नाही त्यामुळे शेतकऱ्यांला सर्वप्रथम शेतकी शिक्षण देण्याची आवश्यकता आहे. ज्यामुळे तो शेतीत आधुनिकता आणून त्यांची उत्पादकता व उत्पन्न वाढेल. यासाठी राजर्षी शाहू महाराजांनी संस्थानात प्राथमिक शिक्षण सक्तीचे व मोफत करण्या अगोदर शेती शिक्षणाला उत्तेजन देण्याचा प्रयत्न केला असल्याचे दिसून येते. सन १८९६ मध्ये राजर्षींनी राजाराम हायस्कूलमध्ये शेती हा नवीन विषय सुरु

केला होता जेणे करून विद्यार्थ्यांना लहान वयातच शेतीची गोडी लागावी. महाराज येवढ्यावर थांबले नाहीत त्यांनी युवराजाना म्हणजेच राजाराम महाराजांना इंग्लंडमधील शिक्षणात शेती विषय घेण्यास लावले होते. सन १९१२ मध्ये त्यांनी 'दि किंग एडवर्ड ॲग्रिकल्चर इन्स्टिट्यूटची' स्थापना कोल्हापुरात केली यावरून महाराजाना कृषि शिक्षाशिवाय शेतीचा विकास शक्य नसल्याचे लक्षात आले होते हे दिसून येते.

शेती वित्त पुरवठा :

भारतीय शेतकरी हा भांडवलाच्या कमतरतेमुळे मागासलेला असल्याचे राजर्षीचे मत होते. त्यासाठी त्यांनी राज्यकारभाराची सुत्रे स्वीकारल्यापासून शेतकऱ्यांची भांडवलाची कमतरता दूर करण्याचे प्रयत्न केले त्यामध्ये शेतकऱ्यांना तगाईच्या रूपाने कर्जे दिली. तसेच शेतकऱ्यांची सावकाराकडून होणारी पिळवणूक थांबवण्यासाठी संस्थानात अनेक सहकारी संस्था स्थापन केल्या व यामार्फत शेतकऱ्यांना अल्प व्याजदराने कर्ज पुरवठा केल्याचे दिसून येते. शेतकऱ्यांना मदत करण्यासाठी सन १९०४ मध्ये 'व्हिक्टोरिया मेमोरिअल फंडाची' आणि 'द किंग एडवर्ड फंडाची' उभारणी केली व यामाध्यमातून गरीब शेतकऱ्यांना अल्प व्याजदराने कर्जपुरवठ्याची शाश्वत सोय करून दिल्याचे दिसून येते.

शेतीच आधुनिकीकरण व प्रयोगशील वृत्तीस चालना :

संस्थान पूर्णतः शेतीवर आधारित होते. शेतीवर अतिरिक्त लोकसंख्येचा भार निर्माण झाला होता. तसेच संस्थानातील शेती पारंपारिक पध्दती केली जात असल्यामुळे छुप्या बेरोजगारीचे प्रचंड प्रमाण होते. अशा विविध प्रश्नाच्या गाळाता शेतकरी अडकला होता या सर्व प्रश्नातून मुक्तता करण्यासाठी राजर्षींनी शेतीतील अतिरिक्त मजूरांना उद्योगधंद्याकडे वळविण्याचा यशस्वी प्रयत्न केलेला दिसून येतो. यामध्ये संस्थानात वेगवेगळ्या ठिकाणी विविध पिके घेण्याचा प्रयत्न केला अशा प्रयोगामध्ये अनेक वेळा राजर्षींना तोटादेखील सहण करावा लागला तरी देखील त्यांनी आपले प्रयोग करणे थांबवले नाही. यासर्व प्रयोगामध्ये राजर्षींचा सर्वात यशस्वी प्रयोग म्हणजे पन्हाळगड व भुदरगड येथे लावण्यात आलेले चहाचे व काफीचे मळे होय. राजर्षींचे मत होते की जो पर्यंत शेतकरी व्यावसायिक पिके घेणार नाही तो पर्यंत उत्पन्नात वाढ होणार नाही म्हणून त्यांनी चहा व कॉफीचे पिक घेण्यासा सुरुवात केली व नंतर त्यांनी संस्थानात वेलदोडे, कोको, देव कापूस, घायपात, बटाटा, काजू व ताग यासारखी अनेक पिके घेण्यास संस्थानाती शेतकऱ्यांना चालना दिल्याचे दिसून येते.

कृषि प्रदर्शने :

संस्थानातील लोकांना प्रत्यक्षात शेतीची आधुनिक स्वरूप दाखवून देण्यासाठी व विविध देशातील शेतीची झालेली प्रगती दाखवून देण्यासाठी राजर्षी शाहू महाराजांनी शेती प्रदर्शने भरवण्यास सुरुवात केली तसेच ६ फेब्रुवारी १८९६ रोजी पहिले शेती व जनावरांचे प्रदर्शन चिंचली येथे भरवले. तसेच पुढील वर्षीचे प्रदर्शन खासबाग मैदान, कोल्हापुर येथे भरवले. जोतीबा यात्रा तसेच गर्दीच्या ठिकाणी अशी प्रदर्शने प्रतिवर्षी भरवण्यावर महाराजांचे विशेष लक्ष होते.

अशाप्रकारे राजर्षींनी आपल्या कारकिर्दीत शेत शिक्षणास मदत करण्यासाठी जनावरांची जोपासना व पैदास कशी करावी हे समजावून देण्यासाठी, शेतकऱ्यांना आधुनिक खते, अवजारे, बी-बियाणे इत्यादीची माहिती करून देण्यासाठी आणि त्यातून संस्थानचा शेती विकास घडवून आणण्यासाठी संस्थानात शेती प्रदर्शनांचे यशस्वी आयोजन केले होते. आज भारतात मोठमोठी जी शेतीविषयक प्रदर्शने भरवली जात आहेत याची सुरुवात राजर्षींनी कोल्हापूर संस्थानात १२५ वर्षा पुर्वी केल्याचे दिसून येते.

निष्कर्ष :

१. राजर्षीशाहू महाराजांनी स्वातंत्र्यपुर्वी शेतीचा प्रश्न सोडवण्यासाठी राबवलेल्या सुधारणा वर्तमान काळातील कृषिचे प्रश्न सोडवण्यासाठी आजही उपयोगी आहेत.
२. कृषि विकासासाठी या क्षेत्रात नवनवीन प्रयोग करण्याची आवश्यकता असल्याचे दिसून येते यासाठी शेतकऱ्यांना शिक्षण व प्रशिक्षणाची आवश्यकता असल्याचे दिसून येते.
३. कृषि विकासामध्ये कृषि प्रदर्शने महत्वाची भूमिका बजावतात असे दिसून येते.
४. भांडवलाच्या शाश्वत पुरवठ्या शिवाय शेतीचा विकास व आधुनिकीकरण शक्य नाही. कृषि क्षेत्राला शाश्वत विकासासाठी खाजगी क्षेत्रासोबत सहकारी पतपुरवठ्याची गरज असल्याचे दिसून येते.

संदर्भ ग्रंथ :

१. पवार जयसिंगराव (संपा.), (२००७), राजर्षी शाहू स्मारक ग्रंथ, महाराष्ट्र इतिहास प्रबोधिनी, कोल्हापूर
२. रमेश जाधव, (२००९) राजर्षी शाहू गौरव ग्रंथ, महाराष्ट्र शासन राजर्षी शाहू चरित्र साधन प्रकाशन समिती, मुंबई
३. प्रा. रायखेलकर ए. आर. व डॉ. दामजी बी. एन., आर्थिक विचारांचा इतिहास, विद्या बुक पब्लिशर्स, औरंगाबाद.
४. डॉ. विजय कविमंडन, आर्थिक विचारांचा इतिहास, मंगेश प्रकाशन, नागपूर
५. जे. एफ. पाटीज, (२००९), आर्थिक विचारांचा इतिहास, फडके प्रकाशन, कोल्हापुर.

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांचे राजकिय विचार

डॉ.प्रा.लोखंडे बी.बी.

राज्यषास्त्र विभाग प्रमुख ज.भ.षि.प्र.मंडळाचे कला व विज्ञान महाविद्यालय,पाटोदा.

प्रस्तावना :

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर यांचा जन्म १४/०४/१८९१ रोजी झाला. १९०० साली त्यांचे नाव पहिल्या इयत्तेत दाखल करण्यात आले. १९०४ मध्ये वडीलासोबत मुंबईला आगमन व १९०७ मॅट्रिकची परीक्षा पास झाले, महार जातीतला मुलगा मॅट्रिक पास झाला हि कौतुकाची बाब ठरली. मॅट्रिकनंतर त्यांनी एल्फिन्स्टन कॉलेजात प्रवेश घेतला शिक्षणासाठी महाराज सयाजीरावांनी २५ रु महिना शिष्यवृत्ती दिली. १९१३ साली बी.ए.पदवी मिळविली. बडोदा संस्थानात नोकरी पत्करली. परंतु अस्पृश्य असल्यामुळे कार्यालयातील इतर कर्मचारी व वरिष्ठ अधिका—यातर्फे त्यांना वाईट वागणूक मिळू लागली. ही गोष्ट महाराजांच्या कानावर जाताच, त्यांची कोलंबिया विद्यापीठात उच्च शिक्षणासाठी खानगी करण्यात आली. १९१५ मध्ये त्यांना पी.ए.एच.डी.ची पदवी मिळाली १९१७ मध्ये त्यांनी कायद्याच्या अभ्यासाला सुरुवात केली.

राजकिय विचार :

आंबेडकरांनी आपल्या जीवनात राजकारणापेक्षा समाजकरणालाच अधिक महत्व दिल्याचे आढळते. परंतु तिस—या गोलमेज परिशदेनंतर मात्र सामाजिक सुधारणाबरोबर राजकिय सुधारणांचाही जाहिर पुरस्कार करण्यास आंबेडकरांनी सुरुवात केली. १९४० पासून महत्वाच्या राजकीय प्रश्नांकडे त्यांनी आपले लक्ष वळविल्याचे दिसते. त्यात प्रामुख्याने खालील विचारांचा समावेश होतो.

लोकषाही : लोकांचे लोकांसाठी आणि लोकांनी चालविलेले राज्य, अशी सर्व सामान्य लोकषाहीची व्याख्या असून, सरकार सार्वत्रिक मतांच्या आधारेच निर्माण षकेल. असे पाष्चात्य विचारवंतांना वाटे, परंतु आंबेडकरांना प्रौढ मतदानाच्या सहायाने लोकांचे राज्य स्थापन करता येणे षक्य होईल असे वाटत नसे. कारण आंबेडकर म्हणतात. लोकषाहीत सामाजिक परिस्थितीला अत्यंत महत्वाचे स्थान असते आणि पाष्चात्यांसारखी सामाजिक व्यवस्था नसल्यामुळे पाष्चात्यांसारखी लोकषाही या देशात निर्माण होणे कठीण आहे. असे असले तरी लोकषाहीच्या विकासासाठी आंबेडकर तळमळीने विचार करीत. एका माणसाला एक मत असे विचार त्यांनी लोकषाहीच्या संदर्भात विचार केल्यानंतर व्यक्त केले होते. ज्या सरकार पध्दतीत लोकांच्या आर्थिक आणि सामाजिक जीवनात क्रांतिकारक स्थित्यंतरे रक्तपाताषिवाय घडवून आणता येतात ती लोकषाही.

लोकषाहीची तत्त्वे : लोकषाहीच्या यषासाठी लोकषाहीसाठी खालील तत्वांची आवष्यकता असते असे आंबेडकरांचे मत होत. सामाजिक समानता आणि सामाजिक रचनेत षिथिल बंधने निर्माण करण्यात यावीत. मतभेदाचे प्रदर्शन करण्यासाठी विरोधी पक्षाचे अस्तित्व मान्य केले पाहिजे. कायदा व प्रषासनात समानता. जागरुकता निर्माण केली पाहिजे. मानवी समानता, धर्मातील विचारसरणी हा लोकषाहीचा आत्मा असतो. असे ते लोकषाहीला खरा धोका असा समाज रचनेचाच असतो कारण लोकषाही हे फक्त सरकारचे स्वरूप नसून ती एक सामाजिक संघटना असते असे आंबेडकरांचे मत होते. लोकषाहीला अनूकूल समाजरचना निर्माण केल्यानेच लोकषाही यषस्वी होते. नसता ती लोकषाही अधिक काळ टिकत नाही. म्हणून राजकिय क्षेत्रात लोकषाही आणण्यापूर्वी समाजात ती रुजविली पाहिजे नसता राजकिय लोकषाही नश्ट होण्याची फार मोठी षक्यता असते.म्हणजेच सामाजिक ध्येये आणि राजकिय पध्दती यांच्या समन्वयातून निर्माण होणारी लोकषाही असावी असे आंबेडकरांना वाटत असे.

लोकषाही स्वरूप : लोकषाही फक्त षासन पध्दतीच नसून तो एक जीवनाचा मार्ग आहे आणि अषा जीवनासाठी ध्येयभूत समाज असणे अत्यंत आवष्यक आहे. जिवंत माणसांना नियंत्रित करून एकत्र ठेवणे अषी. सामाजिक,आर्थिक आणि राजकिय मूल्ये तयार करण्यासाठी प्रत्येकाने भाग घेण्याची जरूरी असणे अषी कल्पना लोकषाही जीवनातील मार्गांच्या कल्पनेच्या पाठीषी असल्याचे दिसते.

एकाच राजकीय पक्षाच्या हातात सतत सत्ता असणे लोकषाहीच्या विरोधी असते. किंबहुना ते अधिक घातक असते असे षासन लोकषाही षासन होउ षकत नाही असे आंबेडकर म्हणत. असे सरकार म्हणजे लोकषाहीच्या नावाखाली असणारी हूकूमषाही होय. जनतेच्या संमतीने एकच पक्ष सतत

सत्तेवर राहीला, म्हणून त्याचा जुलमीपणा कमी होत नाही, उलट तो वाढण्याचीच अधिक षक्यता असते म्हणून जनतेने व विरोधी पक्षाने अशी लोकषाही उलथून पाडावी कारण एकपक्षीय षासन म्हणजे सर्वकश षासन, ज्यात व्यक्तीच्या स्वातंत्राला स्वतंत्र अस्तित्व नसते समाजहित विरोधी,महानहितविरोधी गोश्टीच अषा वेळी अधिक घडण्याची षक्यता असते.

सांसदीय लोकषाही : समाजहित आणि व्यक्तिहित विरोध न होता सर्व सामान्य जनतेचा विचार करण्यासाठी डॉ.आंबेडकरांनी जगातील सर्व लोकषाही पध्दतीचा अभ्यास करून ब्रिटनची सांसदीय पध्दतीची लोकषाही व्यक्तिहित आणि समानहिताचा जास्तीत जास्त विचार करणारी आहे असे मत व्यक्त केले होते. भारतातही सांसदीय पध्दतीचीच लोकषाही असावी असे त्यांचे मत होते, परंतु त्यासाठी योग्य ती परिस्थिती निर्माण केली पाहिजे. सांसदीय लोकषाहीसाठी आवश्यक सामाजिक समता,राश्ट्रप्रेम,जनतेतील अज्ञान, दारिद्रय, विशमतेवर आधारित सामाजिक व्यवहार, अल्पसंख्याकांचा प्रषण आदी प्रषणाचे स्वरूप भारतीय आहे. त्यामुळे भारतात सांसदीय लोकषाही यषस्वी होईल किंवा नाही सांगता येणार नाही असे आंबेडकर म्हणतात.

लोकषाही टिकविण्याचे मार्ग : लोकषाही समाजविरोधी आणि व्यक्तिविरोधी तत्वाच षिरकाव होउन लोकषाहीला विकृत वळण लागण्याची भीती असते यासाठी आंबेडकरांनी लोकषाहीच्या संरक्षणाचे काही मार्ग सांगितले आहे. लोकषाहीच्या व्यवहारातून हे धोके निर्माण होण्याची भीती असते. या भीतीपासून लोकषाही खालील मार्गाने टिकविली जाउन लोकहितकारी लोकषाही निर्माण होई ते मार्ग खालील.

१. घटनात्मक मार्ग :

रक्तमय क्रांतीचे मार्ग त्यांनी अमान्य केले. एवढेच नव्हे तर महात्मा गांधीच्या असहकार,सविनय कायदेभंग, सत्याग्रह आदींचा अराजकतेचे व्याकरण म्हणून त्याचाही त्याग केला घटनात्मक मार्ग हा सर्व मान्य मार्ग असून त्यात कुणाचेही अहत नसते. घटनात्मक मार्गाचा स्वीकार लोकषाही मजबूत करतो.

२. विभूती पूजेचा त्याग :

राजकारणात व्यक्ती किंवा विभूती पूजा म्हणजे अधःपतन होय, त्यातून हुकूमषाहीच निर्माण होण्याची षक्यता असते. म्हणून व्यक्तीपूजा लोकषाहीसाठी त्याज्य असते. व्यक्तीपूजा लोकषाही तत्वांचा नाष करते.

३. राजकीय लोकषाहीतून सामाजिक लोकषाहीकडे :

लोकषाही टिकविण्यासाठी सामाजिक लोकहिताचा पायाच मजबूत करण्यात आला पाहिजे, तर राजकीय लोकषाहीसुध्दा टिकविता येउ षकेल. समाजातील विशमता नश्ट केली पाहिजे इतकेच नव्हे, तर विशमता नश्ट करणा—या घटकांना प्रोत्साहन द्यावे.

लोकषाही टिकविण्याच्या दृश्टीने भारतीय घटनेतील मार्गदर्षक तत्वांचे त्यांना फर महत्व वाटत असे, प्राथमिक अषा जीवनावष्यक गोश्टी मिळत नसताना, त्यांना माणुसकीच्या दर्जाला आणण्यातच भारतीय लोकषाहीचे यष अवलंबून आहे. भारतीय जनतेला लोकषाहीतील मूलभूत हक्कच प्राप्त झालेले नाहीत म्हणून सांसदीय लोकषाहीबाबत जनतेत असंतोश वाढत चालला असल्याचे दिसते.

राज्य . राज्य म्हणजे अंतर्गत दुरवस्थेविरुध्द व बाह्य आक्रमणाविरुध्द उपाययोजना परंतु राज्य अनियंत्रित आणि निरंकुष असावे असे त्यांना वाटत नसे. कारण आपल्या विचारात आंबेडकरांनी राज्यापेक्षा समाजालाच अधिक महत्व दिले होते. राज्य मानवाच्या जीवनाचे साध्य नसून सधान आहे. सर्वांना सुखासमाधानाने राहता येईल. अषीच समाजव्यवस्था निर्माण करण्याचा प्रयत्न राज्याच्या घटकांनी करावा. राज्याने व्यक्ती अणि समाजाचा मालक असण्याऐवजी नोकर असावे, कारण सर्वकश राज्याची कल्पना आंबेडकरांना मान्य नव्हती.राज्यावर विष्वास आणि व्यक्तिचा सन्मान,व्यक्तिस्वातंत्र यांचे एकत्रीकरणाने जनतेच्या व्यावहारीक गरजा भागवता येउ षकतील कारण मानवाच्या गरजा भागवणे हे राज्याचे आद्यकर्तव्य असते. राज्याला सामाजिक कर्तव्याबरोबर काही नैतिक कर्तव्येही असतात. राज्याचे स्वरूप नैतिक असावे ज्याच्या साहायाने बिनदिक्कत संरक्षणाची हमी राज्याकडून घेतली जाउ षकते. राज्याच्या कोणत्याही क्षेत्रात,कोणत्याही प्रकारचा अत्याचार,हिंसा,अव्यवस्था,संघर्ष असणार नाही. जनतेबरोबर सुसंवाद निर्माण करण्याचा प्रयत्न केला जाईल ते राज्य असे आंबेडकर म्हणत. त्यामुळे मेकाँयव्हेलीने राज्याच्या संदर्भात मांडलेली कल्पना आंबेडकरांना मान्य नव्हती.

राश्ट, राश्टीयत्व : आंबेडकरांनी आपल्या राश्टाबाबतचे विचार हिंदू—मुस्लिमांच्या संदर्भातच मांडले असल्याचे दिसते. अलगपणा मागण्याचा हक्क मागते ते राश्ट असा विचार आंबेडकरांनी

पाकिस्तानाच्या प्रघाच्या वेळी मांडलेला दिसतो. कारण पाकिस्तानच्या मागणीच्या वेळी मुस्लीम हे निराळे राश्ट आहे त्यांना राश्टीय भूमी असावी म्हणून आंबेडकर म्हणतात जर मुसलमान स्वतंत्र राश्ट होते, तर भारत हा राश्ट नव्हताच. राश्टीयत्वाबाबत आंबेडकरांनी वेगळे विचार व्यक्त केले जातीय भावनेचा अभाव म्हणजे राश्टीयत्व बहुसंख्याकांचा अल्पसंख्याकावर बहुसंख्येच्या जोरावर राज्य करण्याच्या दैवी अधिकार म्हणजे राश्टीयत्व त्यांच हा विचार प्रामुख्याने भारतीय संदर्भातच होता.

राश्टवाद : डॉ.आंबेडकर विषुध राश्टवादी होते. भारतीय व्यवस्थेत खरे महत्व राजकारणांस नसून सामाजिक एकतेस आहे आणि सामाजिक एकतेतच राश्टवाद असतो त्यातून सांस्कृतिक एकता निर्माण होते. त्यांच्या मते राश्ट्राधी संबंधित राश्टवाद हा सामाजिक ऐक्याच्या दृढभावनावर आधारित असला पाहिजे. राश्टवाद कोणत्याही जाती जमातीला घातक असता कामा नये. राश्टवाद ही एकीची सामुदायिक भावना आहे. ज्याच्या ठिकाणी ही भावना असते ते परस्पर नातेवाईकच समजतात, ती एक दुधारी भावना आहे. या भावनेत एक षक्ती आहे. ही षक्ती मोठमोठी राज्ये आणि साम्राज्ये उलथून पाडू षकते. ही षक्ती जातीयवादात निर्माण व्हायची आहे.म्हणून जातीयवाद आणि राश्टवाद यातील फरक स्पश्ट करण्याच्या प्रयत्न आंबेडकरांनी केलेला दिसतो. आंबेडकरांनी राजकिय सत्तेत वाटा मागितला की तो जातीयवाद आणि बहुसंख्याकांनी राजकिय सत्ता एकाधिकार पध्दतीने ताब्यात ठेवली की तो राश्टवाद. आंबेडकरांचा राश्टवाद गरीब व समाजातील दलितांच्या हितासाठी निर्माण झाला होता. तसेच परकीय सत्तेचे आणि अंतर्गत जुलूमांचा निशेध हे ही एक कारण राश्टवादाच्य निर्मितीचे आहे असे दिसते. तेव्हा दलीत वर्ग व सर्व साधारण समाज यांच्यातील अंतर कमी करून जर परस्पर सामंजस्य निर्माण झाले की,राश्टीय एकात्मता निर्माण झाली असे म्हणायला हरकत नाही. या राश्टीय एकात्मतेच्या सहायाने सामाजिक,राजकिय,आर्थिक क्षेत्रातील विकासाची गती पाहता येते व त्यातून राश्टवाद सषक्त बनते.

राज्यघटना : घटनेचे षिल्पकार या नात्याने घटनाविशयक आंबेडकरांच्या विचारांना महत्व आहे. आंबेडकर म्हणतात, भारताची घटना जनतेतून निर्माण झाली आहे. जनतेची घटनेला मान्यता आहे आणि जनता ती उचलून धरीत आहे. य संदर्भात बोलताना आंबेडकर पुढे स्पश्ट करतात की, एका पिढीला मान्य असलेली घटना पुढील पिढीला मान्य असेल अथना नाही हे तिच्या अंमलबजावणीवर अवलंबून आहे. जनतेची घटना असल्यामुळे ती घटना वळणसुलभ आहे असे आंबेडकरांना वाटते. षांतता आणि युध्द काळात देशामध्ये आणि आपापल्या षांतता, कार्यक्षमता आदि गुणांचा विचार करण्यासाठी राज्यघटना समितीच्या सभासदाषिवाय इतराचे नियंत्रण त्यावर होते त्यामुळे लोकषाही तत्वास अनूकूल नसणारे घटक त्यात समाविश्ट केले गेले असण्याची षक्यता आहे. घटनेद्वारे नागरिकत्वाबाबत ज्या तरतुदी करून ठेवल्या आहेत, ती ही आंबेडकरांच्या दृश्टीने महत्वाची बाब ठरते आणि भारतीय परिस्थितीचा विचार करता भारताला एकेरी नागरिकत्वच अत्यंत फलदायी आहे. याबाबत तसेच इतर क्षेत्राची केंद्र सरकार अधिक षक्तीषाली असावे असे आंबेडकरांचे मत होते. या बरोबरच भारतीय घटनेचे मूलभूत हक्काबाबत प्रामुख्याने धार्मिक स्वातंत्राबाबत जे विचार व्यक्त केले त्याबाबत आंबेडकर म्हणतात, घटनेत धर्मनिरपेक्ष आणि समाजवादी राज्याच्या निर्मितीचे उद्दिश्ट स्पश्ट करण्यात आलेले असल्यामुळे आपली घटना समाजवादी आहे असे आंबेडकरांना वाटते.

भारताच्या राज्यघटनेसाठी आंबेडकरांनी जी मेहनत घेतली होती.एवढेच नव्हे तर ती राज्यघटना सरस ठरावी, यासाठी आंबेडकरांनी जो चौकसपणा दाखविला होता त्यावरून घटना समितीच्या पुशकळ सभासदांनी त्यांना ' आधुनिक मनु ' संबोधले होते. राज्यात व्यवस्थेसाठी षासनसंस्था आवष्यक असते. ही षासन व्यवस्था विधिमंडळ आणि कार्यकारीणी स्वरूपाबाबत राज्यघटनेत असणा—या तरतुदीवर अवलंबून असते. त्यांच्यामते विधि मंडळ आणि कार्यकारीणी हे दोन महत्वाचे घटक निर्णायक ठरतात. या दोन संस्थात परस्पर कमन्वय असणे अत्यंत आवष्यक आहे. जनतेला कार्याला जाब देण्यासाठी जनतेत सहकार्य स्थापन करण्यासाठी, राज्य आणि जनता तसेच जनतेत परस्पर चांगले संबंध कोणत्या मार्गाने स्थापन करावेत हीच समस्या आंबेडकरांना वाटत होती. या दोन्ही घटकांतील ऐक्य आणि प्रामाणिकपणा हे सहकार्य आणि सुदृढ यावर अवलंबून असतात.

संदर्भ ग्रंथ :

१. भारतीय राजकीय विचारवंत प्रा.किसन चोपडे विद्या बुक्स पब्लिषर्स,औरंगाबाद.

:— :::::::::: —:

महात्मा ज्योतिबा फुले मराठी साहित्यातील क्रांतीयोद्धा

प्रा. डॉ. विशाल प्रकाश लिंगायत

सहायक प्राध्यापक मराठी विभाग श्रीमान भाऊसाहेब झाडबुके महाविद्यालय, बारशी, ता.- बारशी, जि. सोलापूर

vishallingayat28@gmail.com

प्रस्तावना :-

महात्मा ज्योतिबा फुले यांचा जन्म पुणे येथे 11 एप्रिल 1827 रोजी झाला. ज्योतीबांच्या वडिलांचे नाव गोविंदराव आणि आईचे नाव चिमणाबाई. महात्मा ज्योतिबा फुले यांचे पूर्ण नाव ज्योतीराव गोविंदराव फुले हे मराठी लेखक, विचारवंत आणि समाजसुधारक होते. त्यांनी शेतकरी आणि बहुजन समाजाच्या प्रश्नांना केंद्रस्थानी ठेवून पुरोगामी विचारांची मांडणी केली आणि महाराष्ट्रातील स्त्री शिक्षणाची मुहूर्तमेढ रोवली. इ. स. 1888 मध्ये त्यांना मुंबईतील एका सभेत जनतेने महात्मा ही पदवी बहाल केली. महात्मा फुले यांच्यावर 'थॉमस पेन' यांच्या 'राईट ऑफ मॅन' या पुस्तकाचा प्रभाव होता. ज्योतिराव केवळ नऊ महिन्यांचे होते, तेव्हा त्यांच्या आईचे निधन झाले. त्यांचा विवाह वयाच्या बाराव्या वर्षी सावित्रीबाई यांच्याशी झाला. प्राथमिक शिक्षणानंतर काही काळ त्यांनी भाजी विक्रीचा व्यवसाय केला आणि इ. स. 1842 मध्ये माध्यमिक शिक्षणासाठी पुण्याच्या स्कॉटिश मिशन हायस्कूलमध्ये त्यांनी प्रवेश घेतला. अतिशय तल्लख बुद्धी त्यामुळे पाच-सहा वर्षातच त्यांनी आपला अभ्यासक्रम पूर्ण केला. ऑगस्ट 1848 मध्ये महात्मा फुले यांनी पुणे येथील बुधवार पेठेत भिडे यांच्या वाड्यात मुलींची पहिली शाळा सुरू केली. 17 सप्टेंबर 1851 रोजी रास्ता पेठेत मुलींचीच दुसरी शाळा त्यांनी सुरू केली. 15 मार्च 1852 रोजी वेताळ पेठेतील भिडे यांच्याच वाड्यात मुलींची तिसरी शाळा त्यांनी सुरू केली. इ. स. 1852 मध्ये दलिताना शिक्षण देण्यासाठी दलितांची पहिली शाळा त्यांनी सुरू केली. सन 1855 मध्ये रात्रीची शाळा, इ. स. 1863 मध्ये "बालहत्या प्रतिबंधक गृहाची" स्थापना त्यांनी आपल्या घरीच केली. सन 1864 मध्ये पुण्यात एक विधवा पुनर्विवाह त्यांनी घडवून आणला. इ. स. 1868 मध्ये स्वतःच्या घरातील पिण्याच्या पाण्याचा हौद त्यांनी अस्पृश्यांना खुला करून परंपरागत रूढींना धक्का दिला. 'शेतकऱ्यांचा आसूड' या आपल्या ग्रंथात त्यांनी शेतकऱ्यांचे विदारक चित्र रेखाटून शिक्षणा अभावी समाजाची स्थिती किती हलाखीची होते हे दाखवून दिले. यातच त्यांनी शिक्षण, वसतीगृह, सिंचन, धरणे, तलाव, विहिरी यासारखे उपाय सुचवले. सुधारणावादी विचारांचा प्रसार करण्यासाठी कृष्णराव भालेकर यांच्या मदतीने त्यांनी पुण्यातूनच 'दीनबंधू' हे वृत्तपत्र इ. स. 1877 मध्ये सुरू केले. 24 सप्टेंबर 1873 रोजी महात्मा फुले यांनी सत्यशोधक समाजाची स्थापना केली.

महात्मा ज्योतिबा फुले यांचे सामाजिक कार्य :-

महात्मा फुले यांनी हंटर कमिशनपुढे प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षण मोफत व सक्तीचे करावे अशी आग्रहाची मागणी केली. "महात्मा फुले यांनी 'तृतीय रत्न' या नाटकातून अज्ञानी लोकांत ब्राह्मण अंधश्रद्धा रूजवून त्यांना कसे नाडतात यांचे चित्रण ठिकठिकाणी केले आहे." १. महाराष्ट्रातील शूद्रातिशूद्रांच्या उन्नतीकरिता ते रात्रंदिवस झटत होते, त्यासाठी त्यांनी वेगवेगळे उपक्रम हाती घेतले. ते पार पाडतांना जे बरे-वाईट अनुभव आले त्यातून त्यांना एक नवी दृष्टी मिळाली. हिंदू धर्मातील अनेक दैवतांची उपासना, जातिभेद, अस्पृश्यता आणि विधिनिषेध यांचे अवडंबर या गोष्टी त्यांना मनापासून त्याज्य वाटत होत्या, त्यामुळे ख्रिस्तप्रणित ईश्वरनिष्ठ मानवतावादाचा आणि ख्रिस्ती धर्मोपदेशक यांच्या समर्पित जीवनाचा व कार्यपद्धतीचा त्यांच्या मनावर खूप मोठा प्रभाव पडला. "लोकांच्या भावभावनांना कसलाही तडा न जाऊ देता इंग्रजांनी नाना प्रकारच्या सुविधा, सुधारणा केल्या." 2.

ख्रिस्ती धर्मोपदेशक आणि धर्मोपदेशकांशी होणाऱ्या चर्चेमधून जोतीरावांची धर्मजिज्ञासा जागृत झाली. त्याकाळी शहरात राहणाऱ्या काही बहुजन समाजातील विद्यार्थ्यांच्या वाचनात हरिविजय, रामविजय, भक्तिविजय, पांडवप्रताप असे धर्मग्रंथ येत होते. त्यामुळे लहान वयातच त्यांच्यावर जुन्या सनातनी परंपरेचे संस्कार झाले. अशा तऱ्हेचे धार्मिक संस्कार ज्योतीरावांच्या मनावर झाल्याचा उल्लेख त्यांच्या लेखनातून आढळून येत नाही. उलट त्यांच्या आयुष्यातील एका विशिष्ट घटनेमुळे अगदी संस्कारक्षम वयातच त्यांचे लक्ष ख्रिस्तप्रणित मानवतावादाकडे वेधले गेले होते. ज्योतिराव हे एक वर्षाचे होण्यापूर्वीच त्यांची आई कालवश झाली होती, तेव्हापासून त्यांची मावसबहीण सगुनाबाई क्षीरसागर यांनी त्यांना पोटच्या पोराम्राणें सांभाळ करून वाढवले. त्यांनी केवळ त्यांच्या आरोग्याची काळजी घेतली असे नाही, तर त्यांच्या मनावर त्यांनी मानवतावादी धर्माचे संस्कार केले. गोरगरिवांची सेवा हीच ईश्वराची उपासना, हे तत्व त्यांना पटवून दिले. आपल्या ज्योतीवाने ख्रिस्ती फादर सारखे व्हावे आणि त्यांच्या हातून गोरगरीब व महार, मांग समाजाची सेवा व्हावी अशी सगुनाबाईंची मनोमन इच्छा होती. जोतीरावांच्या जडणघडणीतील त्यांचा हा कार्यभाग निश्चितच गौरवास्पद आहे. स्कॉटिश मिशनच्या शाळेत गेल्यावर जोतीरावांच्या धर्मचिंतनाला खरोखर प्रारंभ झाला. 'एकेश्वरवाद' हे येशू ख्रिस्ताच्या शिकवणूकीचे एक प्रमुख अंग आहे. त्यामुळे साहजिकच ख्रिस्ती धर्मोपदेशक यांच्या प्रचार मोहिमेचा तो एक केंद्रबिंदू बनला. ग्रामीण भागातील शिक्षणाविषयी जोतीरावांच्या विशिष्ट अशा काही कल्पना होत्या. ग्रामीण भागातील अभ्यासक्रमात मोडी आणि बाळबोध वाचन विशेषतः इतिहास, भूगोल आणि व्याकरण यांचे सर्वसाधारण ज्ञान असावे, शेतीचे प्राथमिक ज्ञान असावे, नैतिक व आरोग्य विषयक काही पाठ त्यांच्याकरता तयार केलेले असावेत असे त्यांचे मत होते. शहरातील अभ्यासक्रमापेक्षा ग्रामीण भागातील अभ्यासक्रम हा सोपा आणि सुटसुटीत असावा. परंतु त्यांच्या दैनंदिन व्यवहाराला सोडून असता कामा नये. शेती, शेतीविषयक शास्त्रशुद्ध ज्ञान येण्यासाठी एक आदर्श शेताची योजना व्हावी, याचा विशेष फायदा विद्यार्थ्यांना होईल असे त्यांना वाटत होते. शाळांवर देखरेख करणारी व्यवस्था सदोष आणि अपुरी होती असे ज्योतिरावांचे स्पष्ट मत होते. "मानवाच्या भौतिक, सामाजिक, आर्थिक विकासासाठी शिक्षण हाच एकमेव उपाय आहे, नव्हे शिक्षण हा मानवाचा तिसरा डोळा आहे, असे फुले म्हणतात." 3. सामान्य माणसाच्या नवयुगाची ग्वाही देणारा आधुनिक भारतातला पहिला समाज क्रांतिकारक म्हणजे महात्मा ज्योतिबा फुले हेच आहेत. कारण ते सामान्य होते पण विचाराने आणि कर्तृत्वाने असामान्य होते. कार्ल मार्क्सच्याही अगोदर समतेची दृष्टी महात्मा फुले यांनी आपल्याला दिली. सर्वांगीण क्रांतीचे रणशिंग भारतात प्रथम फुले यांनी फुंकले आणि समतेचे वारे खेड्या-खेड्यांतून, घराघरांतून, दऱ्याखोऱ्यांतून, गावागावांतून वाहू लागले.

महात्मा ज्योतिराव फुले हे जातीने माळी होते. त्या अर्थाने जातीय श्रेणीतील ते शूद्रच. स्पृश्यास्पृश्यभेद वगळला तर शूद्र, अतिशूद्र यांच्या सामाजिक दर्जात महाराष्ट्रात तरी फारसा फरक करण्याचे कारण नव्हते. हिंदू धर्माच्या शोषक प्रकृतीचा ब्राह्मणी श्रेष्ठत्व हा एक उत्कट आविष्कार होता. या श्रेष्ठत्वाचा ब्राह्मण इतरांसाठी अवमान, अप्रतिष्ठा, कष्ट, यातना आणि पराकोटीचे शोषण याव्यतिरिक्त काहीच नव्हते. तेव्हा या धर्मावरही हल्ला चढवला पाहिजे असा सिद्धांत फुले यांनी मांडला. धर्माचे किंवा धर्मग्रंथांचे परीक्षण करतांना तर्क, विवेक आणि समता ही तत्वत्रयी फुल्यांनी कठोरपणे अंगिकारली. त्यामुळे हिंदू धर्माचे आणि त्यांच्या सामाजिक परंपरांचे हसे झाले. "जन्माने मनुष्य कोणत्याही धर्माचा असला तरी त्याला सार्वजनिक सत्य धर्माचा अनुयायी होता येते. अशी व्यापक भूमिका फुलेंची होती." 4. महात्मा फुले यांनी हिंदूंच्या प्राचीन ग्रंथांचा भरपूर उपयोग केला असला तरी त्यांच्या समकालीन सुधारकांप्रमाणे सुधारणांची मौलिकता सिद्ध करण्यासाठी नव्हे, तर आजच्या अनिष्ट परंपरा आणि अंधश्रद्धांचा उगम प्राचीन काळी कसा झाला हे समजून घेण्यासाठी या अध्ययनातून त्यांना प्राप्त झालेले निष्कर्ष त्यांच्या जातीयविषयक सिद्धांतात संकलित झालेले दिसतात.

महात्मा फुले यांनी 23 सप्टेंबर 1873 रोजी 'सत्यशोधक समाजाची' स्थापना केली. त्यावेळी न्यायमूर्ती रानडे, लोकहितवादी, गोपाळराव देशमुख, डॉ. भांडारकर, गोवंडे अशी अनेक ब्राह्मण मंडळी त्यांचे साथीदार होते. त्यावरून ब्राह्मणांना वगळून काढलेला किंवा ब्राह्मणांवर म्हणजे ब्राह्मण जातीवर हल्ला करून त्यांचे नाव खाली करण्यासाठी हा समाज स्थापन केला होता असे अजिबात म्हणता येणार नाही. ज्योतिबा फुले यांनीच सत्य धर्माचे

स्वरूप खालीलप्रमाणे स्पष्ट केले आहे. धर्म, राज्यभेद मानवा नसावे, सत्याने वागावे विषासाठी ख्रिस्त, मोहम्मद, मांग, ब्राह्मण असे धरावे पोटाशी बंधू परी निर्मिकाचा धर्म सत्य आहे, एक भांडणे अनेक कशासाठी. मानवी समता व बंधुता यावर आधारित असा हा विश्वधर्म आहे. असे असतांना ब्राह्मणांवर सूड उगवण्यासाठी स्थापन झालेला समाज असा सत्यशोधक समाजावर आरोप करणे गैर आहे. सत्यशोधक समाजाचे संस्थापक जोतीराव गोविंदराव फुले हे कर्ते सुधारक होते. "बोले तैसा चाले त्याची वंदावी पाउले" अशी त्यांची कार्यपद्धती होती. महार, मांगाशी, अस्पृश्यांना अंतरीच्या उमाळ्याने पोटाशी धरणारा, पिढ्यानपिढ्यांची, अस्पृश्यांची, वंचितांची तहान भागविण्यासाठी स्वतःच्या घरची विहीर त्यांना माणुसकीचा गहिवर आला, अस्पृश्यांसाठी शाळा उघडून त्यांना ज्ञानगंगेचा स्पर्श घडविणारा हा पहिला पुरुष. स्त्रियांसाठी स्वतंत्र शाळा काढणारे, महात्मा फुले हे स्त्री शिक्षणाचे आद्य प्रवर्तक. मानवी हक्कांना कृतीने जपणारा हा माणुसकीचा पुजारी." 5.

महात्मा ज्योतीबा फुले यांचे साहित्य :-

महात्मा फुले यांनी लिहिलेला 'सार्वजनिक सत्यधर्म' हा सत्यशोधक समाजाचा प्रमाणग्रंथ मानला जातो. या समाजाचे मुखपत्र म्हणून 'दीनबंधू' हे साप्ताहिक चालविले जात असे. संत तुकारामांच्या अहंगाच्या धर्तीवर त्यांनी अनेक अखंड रचना केल्या. आपला 'गुलामगिरी' हा ग्रंथ अमेरिकेतील कृष्णवर्णीयांना त्यांनी समर्पित केला आहे. 'अस्पृश्यांची कैफियत' हा महात्मा फुलेंचा अप्रकाशित ग्रंथ आहे. "अस्पृश्यांच्या कैफियतीतून महात्मा फुले यांनी अस्पृश्यांची दुःखे, माणूस म्हणून त्यांची होणारी उपेक्षा आणि त्यांच्या अपेक्षा अत्यंत परखडपणे मांडल्या आहेत." 6. 'सार्वजनिक सत्यधर्म' हा त्यांचा ग्रंथ त्यांच्या मृत्यूनंतर इ. स. 1891 मध्ये प्रकाशित झाला. महात्मा फुले यांनी आपले व्यक्तित्व स्वयंप्रेरणेने व आपल्या स्वतःच्या प्रयत्नांनी घडवले होते. त्यांचा पिंड हा कृतिशील क्रांतिकारकाचा होता, आपल्या कार्यास, सिद्धीला पोषक अशी निरनिराळ्या विषयांवरची अनेक लहान-मोठी पुस्तके त्यांनी वाचली असतील, त्यांच्या विचारांना परिपक्वता येण्यास या पुस्तकांचा निश्चितच उपयोग झाला असेल यात शंका नाही.

ज्योतिरावांनी अनेक पुस्तके लिहिलेली आहेत. 'ब्राह्मणांचे कसब', 'इशारा', 'शेतकऱ्यांचा आसुड', 'गुलामगिरी', 'सार्वजनिक सत्यधर्म' या पुस्तकांबरोबरच 'गुलामगिरी' हे पुस्तक त्यांनी अमेरिकेतील निग्रो गुलामांना सहाय्य करणाऱ्या गोऱ्या लोकांना अर्पण केले आहे. त्यांनी अहंगाच्या धर्तीवर अखंडांची रचना केली. शिवाजी महाराजांच्यावर एक पोवाडाही रचला. 'तृतीयरत्न' नावाचे नाटक लिहिले. काही प्रहसने लिहिली. एखादा अनुभवी माळी प्रथम संकट उपटून बागही उठवतो, त्याप्रमाणे फुले यांनी 'गुलामगिरी' सारख्या लेखनातून हिंदू धर्मातील अन्यायी रुढींचे विदारक खंडन केलेले आहे. आणि 'सार्वजनिक सत्यधर्म' हे पुस्तक व अखंडादी रचनेमध्ये मानवता दृष्टीत उच्चतम मूल्यांचे मंडन केलेले आहे. पण हे तणकट हरळीच्या मुलांसारखे दृढमूल झालेले असल्याने ते उखडून टाकण्यावरच भर राहिला. महात्मा ज्योतीबा फुले हे असामान्य पुरुष होते. त्यांनी स्थापन केलेल्या सत्यशोधक समाजाने महाराष्ट्रात ब्राह्मण समाजापेक्षाही अधिक कार्य केले आहे. जन्माने मनुष्य कोणत्याही धर्माचा असला तरी त्याला सार्वजनिक सत्यधर्माचे अनुयायी होता येते, अशी व्यापक भूमिका महात्मा फुले यांनी मांडली होती. 'सार्वजनिक सत्यधर्म' हा फार प्राचीन आहे. तो एका देशापुरता मर्यादित नाही, तर येशूख्रिस्त आणि मोहम्मद पैगंबर हे या धर्माचे अनुयायी होते. ज्योतिरावांनी लिहिलेले 'सत्यधर्म पुस्तक' हे सत्यशोधक समाजाचे बायबल आहे. हे पुस्तक ब्राह्मण समाजाच्या प्रार्थनेच्या वेळी आम्ही घेतो. मी छातीला हात लावून सांगतो की ज्योतिरावांचे चरित्रात महाराष्ट्राचा महत्त्वाचा इतिहास ग्रंथीत झालेला आहे. दार्भिक देशभक्ती यापेक्षा त्यांची देशभक्ती फारच वरच्या दर्जाची आहे. त्यामुळे 'सार्वजनिक सत्यधर्म' या पुस्तकात महात्मा फुले म्हणतात..., निर्मिकाने निर्माण केलेली पृथ्वी एकच आहे ती सर्वांचा आधार सांभाळते. तीच पृथ्वी, गवत आणि वृक्षांची धारणा करते. त्यापासून मानवाला फळे, अन्नधान्य, सावली मिळते. सर्वांच्या सुखसोयीसाठी पृथ्वी स्वतःभोवती आणि सूर्याभोवती फिरते. या फेरीमुळेच

दिवस-रात्र होते. एक पृथ्वी सर्व माणसांना सुखी करते, तर मग मानवाचे धर्म अनेक कशाला. पृथ्वी ही एकच आहे मग मानवाचा धर्म एकच असावा असा असामान्य विचार महात्मा फुले व्यक्त करतात.

संदर्भ टीपा :-

- 1) डॉ. रामटेके हंसराज, "महात्मा फुले यांच्या वाङ्मयातील सामाजिक विचार", चिन्मय प्रकाशन - औरंगाबाद, प्र.आ., ऑगस्ट - 2012, पृष्ठ - 33
- 2) डॉ. शिंदे संजय, "साहित्य विचार आणि परिवर्तन प्रत्यय", प्रबोधन प्रकाशन - सिडको, औरंगाबाद, प्र.आ., एप्रिल- 2015, पृष्ठ - 85
- 3) तत्रैव, पृष्ठ.- 72
- 4) डॉ. वाळके अनिता, "बहुजनांची विचारधारा", लेख - प्रा. चव्हाण बादलशाहा डोमाजी, "महात्मा फुले यांची अखंड रचना", कॉन्फिडन्स फाउंडेशन नागपुर आणि अहमदाबाद, प्रथमावृत्ती, 2015, पृष्ठ- 61.
- 5) प्रा. नरके हरी, (संपा.) "महात्मा फुले साहित्य आणि चळवळ", लेख - सूर्यवंशी कू. गो. "सत्यशोधक समाज महात्मा ज्योतिराव फुले", चरित्र साधने प्रकाशन समिती - मुंबई, आठवी आवृत्ती, 2018, पृष्ठ - 207.
- 6) डॉ. रामटेके हंसराज, उ. नि.1, पृष्ठ - 56

राजर्षी शाहू महाराज : सामाजिक समता व न्यायाचे पुरस्कर्ते

प्रा. डॉ. नवनाथ राजाराम दणाणे

प्राध्यापक व मराठी विभाग प्रमुख श्रीमान भाऊसाहेब झाडबुके महाविद्यालय, बाश्नी

ई.मेल. nrdanane@gmail.com

प्रास्ताविक

भारतातील सामाजिक समता व न्यायाचा पुरस्कार करणारा एक समाजसुधारक राजा म्हणून शाहू महाराजांना ओळखले जाते. भारताच्या इतिहासात अनेक अंगाने क्रांतिकारक ठरलेल्या, विसाव्या शतकाची सुरुवातच शाहू महाराजांनी सुरु केलेल्या सामाजिक सुधारणांपासून झालेली दिसते. शाहू महाराज विसाव्या शतकातील सामाजिक, राजकीय, शैक्षणिक, आर्थिक व प्रशासकीय परिवर्तनाचे जनक ठरतात. त्यांनी आपली संबंध राजवट बहुजनांबरोबरच दलित, भटक्या, विमुक्तांच्या सामाजिक पुर्नस्थानासाठी राबविली. त्यांनी आपल्या संबंध राजकीय कारकीर्दीमध्ये सामाजिक समता व न्यायाचा हिरहिरिने पुरस्कार केला आहे. शाहू महाराजांचे संबंध जीवनकार्यच समता व मानवतेच्या ध्येयाने झपाटलेले होते. शाहू महाराज अनेक प्रकारच्या सामाजिक सुधारणा राबविताना, अस्पृश्यता व जातिभेद नष्ट करण्यासाठी जाणीवपूर्वक प्रयत्न करताना दिसतात. जातिभेद व अस्पृश्यता निवारणाबरोबरच भटक्या व विमुक्त जातीच्या पुर्नस्थानाचीही जबाबदारी जाणीवपूर्वक स्वीकारतात. शाहू महाराज संपूर्ण बहुजन समाजाच्या उन्नतीसाठी निष्ठापूर्वक प्रयत्न करतात. ज्या मानवी जातीसमुहांचे माणूसपण नाकारण्यात आले होते. ज्यांना अस्पृश्यतेसारख्या अमानवी प्रथेच्या माध्यमातून बहिष्कृत केले होते, ज्यांना समाजसमूहाच्या बाहेर ढकलून गुन्हेगार ठरविले होते. अशा भटक्या विमुक्त जाती-जमातींना राजाश्रय देण्याचे महान कार्यही पार पाडतात. हजारो वर्षांपासून शोषित, वंचित ठरलेल्या समाज घटकांना शाहू महाराज मानवी हक्क व अधिकार बहाल करताना दिसतात.

सामाजिक समता व न्यायाच्या तत्वाचा अवलंब

शाहू महाराजांनी भारताची राज्यघटना अंमलात येण्याअगोदर 50 वर्षांपूर्वीच 1902 साली आरक्षणाच्या तत्वाचा अवलंब व पुरस्कार केला होता. आपल्या संस्थानामध्ये प्रशासनातील 50% जागा मागासलेल्या जातीवर्गासाठी आरक्षित करतात. त्याचबरोबर त्यांची शैक्षणिक प्रगती साधण्यासाठी, 1908 साली अस्पृश्यांसाठी खास वसतिगृह स्थापन केले. शाहू महाराज 1918 मध्ये अस्पृश्यता निवारणाचा जाहिरनामा प्रसिध्द करतात. अस्पृश्यता निर्मूलनाचा कार्यक्रम अधिक तीव्र करताना, 28 सप्टेंबर 1919 रोजी एक आद्यादेश काढून अस्पृश्यांसाठी स्वतंत्र असणाऱ्या शाळा बंद करून, त्यांना सार्वजनिक शाळेत प्रवेश देण्याचे जाहिर करतात. शिक्षणामध्ये आर्थिक अडचण येवू नये म्हणून, अस्पृश्य समाजातील मुला-मुलींसाठी शिष्यवृत्त्या सुरु करतात.

अस्पृश्योद्धाराचे कृती कार्य

1918 पासून पुढे शाहू महाराजांचे अस्पृश्योद्धाराचे कार्य अधिकच गतिमान होताना दिसते. अस्पृश्यतेचे समूळ उच्चाटन करण्यासाठी 1 जानेवारी 1919 रोजी शाहू महाराज पुढील आदेश काढतात, "कोल्हापूर इलाख्यातील रेव्हिन्यू ज्युडिशियल आदिकरून सर्व अधिकाऱ्यांनी आमच्या संस्थानात जे अस्पृश्य नोकरी धरतील, त्यांना प्रेमाने व समतेने वागविले पाहिजे. जर कोणा अधिकाऱ्यांची वरीलप्रमाणे अस्पृश्यांना वागविण्याची इच्छा नसेल, त्याने हा हुकूम पोहोचल्यापासून सहा आठवड्यांच्या आत नोटीस देऊन राजीनामा द्यावा. त्याला पेन्शन मिळणार नाही.

आमची इच्छा आहे की, आमच्या राज्यातील कोणाही इसमाला जनावराप्रमाणे न वागविता मनुष्य प्राण्याप्रमाणे वागवावे.¹ अशा प्रकारचा अत्यंत क्रांतीकारी आदेश शाहू महाराज काढतात. महाराजांचा हा आदेश म्हणजे समतेच्या व मानवतेच्या दिशेने उचललेले एक क्रांतिकारी पाऊलच होते. त्याच दिवशी शाहू महाराज आरोग्य खात्याला तसाच आदेश देतात. त्यानंतर लगेच 15 दिवसानंतर विद्याखात्यालाही आदेश देतात. पुढे एक महिन्यानंतर 6 सप्टेंबर 1919 रोजी, आणखी एक आदेश काढून सार्वजनिक ठिकाणी अस्पृश्यता न पाळण्याचा जाहिरनामा प्रसिद्ध करतात. पुढे सोनतळी कॅम्पच्या माध्यमातूनही महाराजांनी अस्पृश्यता निवारणचा कार्यक्रम जाणीवपूर्वक राबविला. आपल्या अस्पृश्यता निवारणाच्या कृतीकार्याचा आदर्श घालून देताना अस्पृश्य समाजातील गंगाराम कांबळे या व्यक्तीस हॉटेल काढण्यास प्रोत्साहन देतात त्याच्या हॉटेलवर स्वतः आपल्या दरबारातील लोकांना घेऊन चहा पिण्यासाठी जातात.

शाहू महाराजांच्या मनात अस्पृश्य समाजाविषयी अतिव आपुलकी व तळमळ दिसते. अस्पृश्य समाजाविषयी सहानुभूती व्यक्त करताना 30 मे 1920 रोजी नागपूर येथे भरलेल्या 'अखिल भारतीय बहिष्कृत समाज परिषदेच्या' अध्यक्ष पदावरून बोलाना शाहू महाराज म्हणतात, "अस्पृश्य हा शब्द कोणत्याही माणसाला लावणे फार निंद्य आहे... तुम्ही अस्पृश्य नाही. तुम्हाला अस्पृश्य मानणाऱ्या पुष्कळ लोकांपेक्षा जास्त बुद्धिमान, जास्त पराक्रमी जास्त सुविचारी, जास्त स्वार्थत्यागी असे तुम्ही हिंदी राष्ट्राचे घटकावयक आहात. मी तुम्हाला अस्पृश्य समजत नाही. आपण निदान बरोबरीची भावंडे आहोत, आपले हक्क समसमान तरी खास आहेत, या भावना धरून आपणास पुढील कामास लागले पाहिजे."² शाहू महाराज येथे समता व मानवतेचा पुरस्कार करतानाच, सामाजिक न्यायाचा जोरदार पुरस्कार करतात. शाहू महाराजांनी केलेल्या या अस्पृश्योद्धारक कार्यामुळेच ते समता व मानवतेचे पुरस्कर्ते ठरतात. त्यांच्या या समता व मानवतावादी कार्याबद्दल गौरोद् काढताना, लंडनवरून पाठविलेल्या एका ऐतिहासिक पत्रात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर म्हणतात, "I hope your Highness is enjoying good health, we need you ever so much for you are the pillar of that great movement towards social, democracy which is making its headway in India,"³ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर येथे शाहू महाराजांना आरोग्य विषयक शुभेच्छा देतानाच, त्यांचा उल्लेख भारतातील सामाजिक लोकशाही चळवळीचे आधारस्तंभ असा करतात. शाहू महाराजांच्या मृत्युनंतर त्यांच्या अस्पृश्योद्धारक कार्याबद्दल कृतज्ञता व्यक्त करतानाही त्यांनी म्हटले आहे की, "शाहू महाराजांसारखा सखा अस्पृश्यांना पूर्वी लाभला नव्हता व पुढे लाभेल की नाही याबद्दल आम्हास शंका आहे."⁴ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी व्यक्त केलेल्या या कृतज्ञतेतून स्पष्ट होते की, शाहू महाराजांनी अस्पृश्योद्धारक म्हणून केलेले कार्य किती महान होते. शाहू महाराजांच्या अस्पृश्योद्धारक कार्याबद्दल फुले, आंबेडकरांचे सुप्रसिद्ध चरित्रकार धनंजय कीर यांनी काढलेले गौरोद् महत्त्वपूर्ण आहेत. ते म्हणतात, "शाहूंच्या हया अलौकिक प्रेमांमुळे व निष्ठेमुळे त्यांना मागासवर्गीय व अस्पृश्य मानलेले वर्ग देवासमान मानीत होते. गौतम बुद्ध, म. फुले व आंबेडकर यांना ते जसे पूजनीय मानती तसेच शाहूंना ते आपला उद्धारकर्ता म्हणून पूजनीय मानीत!"⁵ धनंजय कीर यांचे हे मूल्यमापन अत्यंत यथोचित आहे. शाहू महाराजांच्या मृत्यूसमयी श्रद्धांजली वाहताना 'बहिष्कृत भारत'च्या अग्रलेखात गणेश अक्काजी गवई यांनी व्यक्त केलेल्या भावनाही शाहूंच्या कार्याचा यथोचित गौरव करणाऱ्या आहेत ते लिहितात, "धर्माच्या नावावर ज्यांना अढळ दास्यत्वाची वतनवृत्ती प्राप्त झाली, अविद्येच्या पायी जे मानसिक गुलाम बनले, आणि अस्पृश्यतेच्या खोज्याने जे जनावरांपेक्षा अगतिक झाले, ज्यांची अस्पृश्यता काढण्यास हजारो वर्षांपासून एकाही सत्पुरुषास यश आले नाही, त्या ह्यातभागी वर्गाचा हा कलंक साफ दूर करून त्यास माणसांत आणण्यास ह्या आमच्या भगवान शाहू छत्रपतींचे ठायी परमात्म्याने अजग सामर्थ्य दिले होते."⁶ गणेश अक्काजी गवई यांनी शाहू महाराजांच्या कार्याचे केलेले हे वर्णन म्हणजे त्यांच्या समता व मानवतावादी कार्याची साक्ष देणारे आहे. याच लेखात गवई यांनी शाहू महाराजांचा गौरव करताना, "आमचा

अब्राहम लिंकन⁷ असा उल्लेख केला आहे. अब्राहम लिंकन यांच्या मानवतावादी कार्याची संपूर्ण जगाला ओळख आहे. गवई यांनी शाहू महाराजांचा उल्लेख अब्राहम लिंकन म्हणून केला आहे. त्यातच त्यांचे क्रांतिकारकत्व सामावले आहे.

अस्पृश्यता व जातिभेदाची प्रखर निर्भत्सना

शाहू महाराज अस्पृश्यता व जातिभेदाची प्रखर निर्भत्सना करताना दिसतात. जातिभेद हा राष्ट्रहितास बाधक आहे. त्यामुळे तो लवकरात लवकर नष्ट झाला पाहिजे, अशी त्यांची भूमिका होती. अनेक जातिपरिषदांना उपस्थित राहून, शाहू महाराजांनी अस्पृश्यता व जातिभेदाचा निषेध व निर्भत्सना केली आहे. 16 एप्रिल 1920 रोजी नाशिक येथील 'निराश्रित सोमवंशीय समाजाच्या' सभेस जमलेल्या मागासवर्गीय अस्पृश्य समाजासमोर बोलताना शाहू महाराज म्हणतात, "आमच्या धर्मात जातिभेदांमुळे जो उच्चनीचपणा आला आहे; तशा प्रकारचा जन्मजात भेदभाव जगाच्या पाठीवरील दुसऱ्या कोणत्याही धर्मात नाही. या जातिभेदाचे अत्यंत हिडीस स्वरूप जर कोठे असेल, तर इतर जातींकडून तुम्हाला ज्या रीतीने वागविण्यात येते त्या रीतीत दिसून येते. तुम्ही आमचे बंधू असता, तुम्हाला अस्पृश्य म्हणून लेखून, मांजरे, डुकरे, कुत्री यापेक्षाही तुम्हाला नीचपणाने वागविण्यात येते. ही किती लज्जेची गोष्ट आहे बरे!"⁸ अशा शब्दांत शाहू महाराज अस्पृश्यतेसारख्या अमानवी प्रथेची निर्भत्सना करतात. शाहू महाराजांनी अनेक जाति परिषदांना उपस्थित राहून अध्यक्षपद स्वीकारले असले तरी, आपल्या उपस्थितीमुळे जातिभेदास प्रोत्साहन मिळणार नाही, याची काळजीही ते घेताना दिसतात. अशा जातवार परिषदांमुळे इतर जातीविषयीचा भेदभाव वाढणार नाही, याची काळजी घेण्याचे आवाहन ते सतत उपस्थितांना करतात. 15 एप्रिल 1920 रोजी नाशिक येथे पार पडलेल्या एका सभेत बोलताना शाहू महाराज जातिपरिषदांच्या आयोजक पुढाऱ्यांना इशारा देतात की, "सर्व जातीच्या पुढाऱ्यांना माझे सांगणे आहे की, आपली दृष्टी दूरवर ठेवा. पायापुरतेच पाहू नका. जातिभेद मोडणे इष्ट आहे. जरूर आहे. जातिभेद पाळणे हे पाप आहे. हा दूर करण्याचे प्रयत्न जोराने केले पाहिजेत. ही जाणीव पक्की ध्यानात ठेवून मग या दिशेचा प्रयत्न म्हणून जातिपरिषदा भरवा. जातिबंधने दृढ करणे, जातिभेद तीव्र होणे हा परिणाम अशा परिषदांचा होऊ नये. ही खबरदारी घेतली पाहिजे."⁹ शाहू महाराज अत्यंत तळमळीतून येथे अपेक्षा व्यक्त करतात की, जातवार परिषदांमुळे जातिभेद तीव्र किंवा दृढ न होता, तो दूर झाला पाहिजे, त्याचबरोबर अशा परिषदांचा हेतू हा समता प्रस्थापित करण्याचा असला पाहिजे.

स्वराज्यविषयक बंडखोर भूमिका

भारतीय स्वातंत्र्य लढ्यासंदर्भात समाजसुधारकांमध्ये दोन विचार प्रवाह दिसतात. एक राजकीय स्वातंत्र्यवाद्यांचा आणि दुसरा सामाजिक स्वातंत्र्यवाद्यांचा शाहू महाराज हे प्रथम सामाजिक स्वातंत्र्यवादी विचाराचे होते. जातिव्यवस्थेच्या माध्यमातून ज्या देशबांधवांना आपण अस्पृश्य आणि गुलाम बनविले आहे. त्यांची अस्पृश्यतेसारख्या गुलामगिरीतून मुक्तता केल्याशिवाय आपण इंग्रजांकडून स्वातंत्र्याची मागणी करण्यासाठी लायकच ठरू शकत नाही. अशी स्पष्ट भूमिका शाहू महाराज घेताना दिसतात. 27 डिसेंबर, 1917 रोजी खामगांव येथे भरलेल्या 11 व्या अखिल भारतीय मराठा शिक्षण परिषदेच्या अध्यक्षीय भाषणात स्वराज्यविषयक भूमिका मांडताना शाहू महाराज म्हणतात, "जितक्या लवकर आम्ही आमची जातिबंधने तोडून टाकू तितक्या लवकर आपली स्वराज्याबद्दलची लायकी वाढत जाईल, हे तत्व ज्या दिवशी आमचे मनात बिबेल तोच राष्ट्राचा सुदिन होय!"¹⁰ शाहू महाराज राजकीय स्वातंत्र्यासाठी प्रथम सामाजिक समतेची गरज व्यक्त करतात. सामाजिक समता प्रस्थापित झाल्यास, राजकीय स्वातंत्र्याच्या मागणीस एक नैतिक बळ मिळेल, असे शाहू महाराजांना वाटत होते. जातिभेद नष्ट केल्याशिवाय सामाजिक ऐक्य व समता प्रस्थापित होऊ शकणार नाही आणि सामाजिक ऐक्य व समता प्रस्थापित झाल्याशिवाय स्वातंत्र्याचा मार्ग सुलभ होणार नाही याची पूर्ण जाणीव शाहू महाराजांना झाली होती. याच परिषदेमध्ये स्वराज्याविषयीची सविस्तर भूमिका मांडताना शाहू महाराज म्हणतात, "जोपर्यंत आमच्यामध्ये

जातीजातीतील मतभेद आणि मत्सर जिवंत आहेत, तोपर्यंत आम्ही आपआपसांत झगडत राहणार आणि आमच्या हितवृद्धीस अपाय करून घेणार. आमच्यातील अंतस्थ कलह नाहीसे करण्यास आणि आम्हाला स्वराज्य प्राप्त करून घेण्याकरिता ही अनर्थकारक जातीपद्धती झुगारून देणे आम्हाला अत्यंत आवश्यक आहे.”¹¹ भारतीय समाजामध्ये जातिभेदातून निर्माण झालेली द्वेषभावना व सामाजिक कलह संपुष्टात आल्याशिवाय स्वातंत्र्य लढ्याला वेग येणार नाही, याची स्पष्ट कल्पना शाहू महाराज देशवासियांना देतात. भारतीय समाज दीर्घकाळ गुलामीत राहण्यास येथील जातिभेदच कारणीभूत आहे. हे कटुसत्य शाहू महाराज आपल्या देशवासियांवर विंबवताना दिसतात. 15 एप्रिल 1920 रोजी नाशिक येथील श्री उदाजीराव मराठा विद्यार्थी वसतिगृहाच्या इमारतीच्या पायाभरणी समारंभ प्रसंगी शाहू महाराज म्हणतात, “हिंदुस्थानला हजारो वर्षे ग्रासणाऱ्या गुलामगिरीचे मूळ जातिभेदात असून त्याचा नायनाट झाल्याशिवाय आपल्या समाजाची खरी उन्नती होणार नाही, जातिभेद तसाच राखून जे ब्राम्हण पुढारी समाजसुधारणा करू पाहतात, त्यांच्याकडून समाजात एक प्रकारची धार्मिक ब्युराक्रसी निर्माण होईल तेव्हा समाजसुधारणेचा एकच तोडगा आहे आणि तो म्हणजे जातिभेद मोडून आपण सर्वांनी एक होणे!... हिंदुस्थानला जी गुलामगिरी आज हजारो वर्षे भोगावी लागत आहे. तिचे प्रधान कारण हा जातिभेद आहे.”¹² शाहू महाराज येथे हिंदुस्थानच्या हजारो वर्षांच्या गुलामगिरीचे अचूक निदान करतात; आणि भारतातील जातिव्यवस्था हीच भारताच्या गुलामगिरीचे मूळ कारण असल्याचे स्पष्ट करतात. स्वराज्याविषयीची त्यांची ही भूमिका व युक्तिवाद अगदी बिनतोड आहे. त्यांचा हा समतावादी सामाजिक दृष्टिकोन, त्यांच्या कार्याचे व व्यक्तिमत्वाचे त्यांचे क्रांतिकारकत्व सिद्ध करणारा आहे.

शाहू महाराजांची शैक्षणिक क्रांती

शाहू महाराज शिक्षणाला अनन्य साधारण महत्त्व देताना दिसतात. बहुजन समाजामध्ये शैक्षणिक क्रांती निर्माण करण्याचे श्रेय महात्मा फुलेनंतर शाहू महाराजांना दिले जाते. शाहू महाराज समाजोद्धाराचा एक मार्ग म्हणून शिक्षणाकडे पाहतात. तळागाळातील लोकांपर्यंत शिक्षण प्रसाराची मोहिम ते यशस्वीपणे राबवितात. शाहू महाराजांच्या शिक्षण प्रसारामागे मनुष्यबळ विकास व समाज परिवर्तन हे दोन उदात्त हेतू होते. शैक्षणिक चळवळीला गतिमान करण्यासाठी शाहू महाराज आपल्या संस्थानिकामध्ये प्राथमिक शिक्षण मोफत व सक्तीचे करतात. विद्यार्थ्यांच्या शैक्षणिक विकासामध्ये कोणत्याही गोष्टींची आडकाठी येवू नये म्हणून, प्रत्येक जातीच्या विद्यार्थ्यांसाठी स्वतंत्र वसतिगृहाची स्थापना करतात. सामाजिक व राजकीय क्रांती घडवून आणावयाची असेल तर शिक्षणाशिवाय तरणोपाय नाही याची पुरेपुर जाणीव शाहू महाराजांना झाली होती. 15 एप्रिल 1920 रोजी नाशिक येथील श्री उदाजीराव मराठा विद्यार्थी वसतिगृहाच्या पायाभरणी समारंभाप्रसंगी, बहुजन समाजाच्या शैक्षणिक उन्नतिसंदर्भात बोलताना शाहू महाराज म्हणतात, “खालच्या वर्गाच्या लोकांच्या बुद्धीवर व ज्ञानावर हे जे जड जुलमी जू लादले आहे, ते झुगारून देण्याची शक्ती समाजाच्या अंगी येण्यास सक्तीच्या व मोफत प्राथमिक शिक्षणाची फार जरूरी आहे. असले शिक्षण मी माझ्या रयतेस देण्यास प्रारंभ केला आहे. त्याकरिता सक्तीच्या शिक्षणाचा कायदा करून तो जारीने अंमलात ठेवला आहे.”¹³ शोषित व वंचित समाज घटकांच्या प्रगतीसाठी आणि त्यांच्यावर लादलेल्या गुलामगिरीतून, त्यांना मुक्त करण्यासाठी शाहू महाराज शिक्षणाची प्रभावी अंमलबजावणी करताना दिसतात. शाहू महाराज आपल्या कारकीर्दीच्या सुरुवातीपासून ते अखेरपर्यंत शिक्षण प्रसाराला प्राधान्य देताना दिसतात. समाजोद्धाराची अंतकरणापासून तळमळ असल्यामुळेच शाहू महाराज अत्यंत निष्ठेने शैक्षणिक चळवळ राबविताना दिसतात. त्यामुळे खऱ्या अर्थाने 20 व्या शतकातील शैक्षणिक व सामाजिक क्रांतीचे ते उद् ठरतात.

स्त्री स्वातंत्र्याचा पुरस्कार

सतत समतेचा व मानवतेचा आग्रह धरणारे शाहू महाराज स्त्री स्वातंत्र्याचाही जोरदार पुरस्कार करताना दिसतात. महात्मा फुले यांनी सुरु केलेल्या स्त्री उध्दाराच्या चळवळीस शाहू महाराज अधिक बळ देतात. स्त्रीयांना त्यांचे हक्क व अधिकार प्रदान करण्यासाठी शाहू महाराज आपल्या संस्थानात अनेक कायदे लागू करतात. जुलै 1917 मध्ये त्यांनी विधवांच्या पुनर्विवाहास मान्यता देणारा कायदा लागू केला. तर 12 जुलै 1919 रोजी आंतरजातीय विवाहाचा कायदा संमत केला. त्यानंतर 2 ऑगस्ट 1919 रोजी स्त्रीयांच्या छळास प्रतिबंध करणारा कायदा जारी केला. "एकूण 11 कलमांच्या या कायद्यान्वये स्त्रीला क्रूरपणाची वागणूक देणाऱ्या अपराध्यास सहा महिन्यांचा कारावास व 200 रुपयांपर्यंत दंड अशी शिक्षा देण्याची तरतूद केली गेली होती."¹⁴ स्त्रीयांच्या छळास प्रतिबंध करण्यासाठी व त्यांना समानतेच्या पातळीवर वागविण्यासाठी शाहू महाराजांनी घेतलेला हा निर्णय म्हणजे स्त्री स्वातंत्र्याच्या दिशेने टाकलेले एक क्रांतिकारी पाऊल होते. पुढे घटस्फोट व हिंदू वारशाच्या कायद्याच्या दुरुस्तीचा कायदा मंजूर करून, करवीर सरकारच्या गॅझेटमध्ये 17 जानेवारी 1920 रोजी प्रसिध्द करण्यात आला. त्याचबरोबर देवदासी प्रतिबंधक कायदाही संमत करण्यात आला. तर स्त्री उन्नतीच्या दृष्टीने जाचक ठरणाऱ्या बालविवाह, शिक्षणबंदीसारख्या प्रधानांनाही ते विरोध करतात.

निष्कर्ष / समारोप

वरील महाराजांच्या एकूण सामाजिक समता व न्यायाच्या कार्याचा आढावा घेतल्यानंतर थोडक्यात, आपण अशा निष्कर्षपर्यंत येतो की, शाहू महाराजांनी घडवून आणलेल्या सामाजिक सुधारणा आणि समता व न्यायासाठी त्यांनी केलेले कार्य या सर्व गोष्टींचा विचार केला असता असे दिसते की, शाहू महाराज हे खऱ्या अर्थाने मानवतावादी लोकशाही राजे होते. म्हणूनच भारताच्या सामाजिक व सांस्कृतिक इतिहासाला कलाटणी देणारा एक समाजसुधारक, क्रांतिकारक राजा म्हणून त्यांचा गौरव करणे जास्त उचित ठरते. शाहू महाराजांनी सामाजिक समता व न्यायाच्या तत्वाचा केलेला प्रत्यक्ष अवलंब, अस्पृश्योद्धाराचे केलेले कृतीकार्य, अस्पृश्यता व जातिभेदाची त्यांनी केलेली प्रखर निर्भत्सना, त्यांची स्वराज्य विषयक नैतिक व बंडखोर भूमिका, त्यांनी केलेली शैक्षणिक क्रांती, त्यांनी केलेला स्त्री स्वातंत्र्याचा पुरस्कार आणि एकूणच सामाजिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, आर्थिक आणि प्रशासकीय पातळीवरील प्रत्यक्ष कृती कार्याचा विचार करता, शाहू महाराज सामाजिक समता व न्यायाचे खऱ्या अर्थाने पुरस्कर्ते ठरतात.

संदर्भ सूची :-

1. संपा. डॉ. जयसिंगराव पवार : 'राजर्षी शाहू महाराज स्मारक ग्रंथ'
2. महाराष्ट्र इतिहास प्रबोधिनी कोल्हापूर,
3. द्वितीयावृत्ती : 26 जून 2007 पृ. क्र. 81
4. तत्रैव : प्र. क्र. 859
5. तत्रैव : प्र. क्र. 925
6. तत्रैव : प्र. क्र. 95
7. तत्रैव : प्र. क्र. 95
8. तत्रैव : प्र. क्र. 95
9. तत्रैव : प्र. क्र. 95
10. तत्रैव : प्र. क्र. 855
11. तत्रैव : प्र. क्र. 847
12. तत्रैव : प्र. क्र. 819
13. तत्रैव : प्र. क्र. 818
14. तत्रैव : प्र. क्र. 846, 847
15. तत्रैव : प्र. क्र. 851
16. तत्रैव : प्र. क्र. 114

राजर्षी शाहू महाराज : एक समाजसुधारक

प्रा. नीलेश सर्जेराव साळवे

काँ. गोदावरी शामराव परूळेकर कला वाणिज्य आणि विज्ञान महाविद्यालय तलासरी, ता- तलासरी
जि.- पालघर

प्रस्तावना :

राजर्षी शाहू म्हणून ओळखले जाणारे छत्रपती शाहू महाराज हे खरे लोकशाहीवादी आणि समाजसुधारक मानले जात होते. कोल्हापूर संस्थानाचे ते महाराज होते व महाराष्ट्राच्या इतिहासातील एक अनमोल रत्न होते. समाजसुधारक ज्योतिबा फुले यांच्या योगदानाने खूप प्रभावित झालेले शाहू महाराज हे एक आदर्श नेते आणि सक्षम राज्यकर्ते होते. त्यांच्या राजवटीत अनेक पुरोगामी आणि पथभ्रष्ट कार्यांशी निगडित होते. १८९४ मध्ये त्यांच्या राज्याभिषेकापासून ते १९२२ मध्ये त्यांच्या निधनापर्यंत त्यांनी आपल्या राज्यातील खालच्या समजल्या जाणाऱ्या जातीतील प्रजेसाठी अथक परिश्रम घेतले. जाती-धर्माचा विचार न करता सर्वांना प्राथमिक शिक्षण देणे हे त्यांचे सर्वात महत्त्वाचे प्राधान्य होते.

अभ्यासाची उद्दिष्ट्ये :

राजर्षी शाहू महाराज यांचे जीवन चरित्र अभ्यासले असता, त्यांचे जीवन समजतील सर्व स्तरातील लोकांना प्रेरणादायी आहे असे दिसून येते. 'राजर्षी शाहू महाराज :: एक समाजसुधारक' या संशोधनपर लेखाची उद्दिष्ट्ये पुढील प्रमाणे सांगता येतील.

1. राजर्षी शाहू महाराज यांचा जीवन प्रवास अभ्यासणे.
2. राजर्षी शाहू महाराज यांनी सामाजिक सुधारनांसाठी केलेल्या कार्याचा अभ्यास करणे.

अभ्यासाची गृहीतके :

'राजर्षी शाहू महाराज :: एक समाजसुधारक' या संशोधनपर लेखाचे गृहीतक पुढील प्रमाणे आहे.
राजर्षी शाहू महाराज यांनी अनेक सामाजिक सुधारनांसाठी पुढाकार घेतला.

अभ्यासाची संशोधन पद्धती :

'राजर्षी शाहू महाराज : एक समाजसुधारक' या विषयात संशोधन करण्यासाठी ग्रंथालय पद्धतीचा वापर करण्यात आला आहे. सदर विषयासंबंधी विविध माहिती गोळा करताना वृत्तपत्रे, मासिके, संशोधनपर लेख, प्रबंध, पुस्तके यामधून माहिती गोळा करण्यात आली आहे.

राजर्षी शाहू महाराज यांचे जीवन चरित्र :

राजर्षी शाहू महाराजांचा जन्म कोल्हापूर जिल्ह्यातील कागल गावात घाटगे कुटुंबात यशवंतराव घाटगे म्हणून जयसिंगराव आणि राधाबाई यांच्या घरात २६ जून १८७४ मध्ये झाला. जयसिंगराव घाटगे हे गावप्रमुख होते व त्यांच्या पत्नी राधाबाई मुधोळच्या राजघराण्यातील होत्या. यशवंतराव खूपच लहान असताना म्हणजे केवळ तीन वर्ष वयाचे असताना त्यांच्या आईचे निधन झाले. ते 10 वर्षांचे होईपर्यंत त्यांचे शिक्षण वडिलांच्या देखरेखीखाली होते. त्या वर्षी, त्यांना कोल्हापूर संस्थानातील राजा शिवाजी चौथा यांच्या विधवा राणी आनंदीबाई यांनी दत्तक घेतले. त्यावेळच्या दत्तक नियमानुसार मुलाच्या रक्तवाहिनीत भोसले घराण्याचे रक्त असले पाहिजे, असे असले तरी यशवंतरावांच्या कौटुंबिक पार्श्वभूमीने एक अनोखी प्रथा मांडली. राजकोटमधील राजकुमार महाविद्यालयात त्यांनी औपचारिक शिक्षण पूर्ण केले आणि भारतीय नागरी सेवांचे प्रतिनिधी सर स्टुअर्ट फ्रेझर यांच्याकडून प्रशासकीय कामकाजाचे धडे घेतले. १८९४ मध्ये ते वयात आल्यावर सिंहासनावर आरूढ झाले. त्यापूर्वी ब्रिटीश सरकारने नियुक्त केलेल्या रिजन्सी कौन्सिलने राज्याच्या कारभाराची काळजी घेतली. त्यांच्या राज्यारोहणाच्या वेळी यशवंतरावांचे छत्रपती शाहूजी महाराज असे नामकरण करण्यात आले. छत्रपती शाहूंची उंची पाच फूट नऊ इंचांपेक्षा जास्त होती आणि त्यांचे भव्य आणि भव्य स्वरूप होते. कुस्ती हा त्यांचा अतिशय आवडीचा खेळ होता. १८९१ मध्ये बडोद्यातील एका उच्चभू व्यक्तीची मुलगी लक्ष्मीबाई खानविलकर यांच्याशी त्यांचा विवाह झाला. पुढे त्यांना दोन मुले आणि दोन मुली अशी अपत्ये झाली.

थोर समाजसुधारक छत्रपती शाहूजी महाराज यांचे ६ मे १९२२ रोजी निधन झाले. त्यांच्या पश्चात त्यांचा ज्येष्ठ पुत्र राजाराम तिसरा कोल्हापूरचा महाराजा झाले. छत्रपती शाहूंनीसुरू केलेल्या सुधारणात्यांच्या निधनानंतर हळुहळू बंद पडू लागल्या आणि वारसा पुढे नेण्यासाठी सक्षम नेतृत्वाअभावी धूसर होऊ लागल्या.

थोर समाजसुधारक :

छत्रपती शाहू महाराज यांना जातिभेद बिलकुल मान्य न्हावता. जातिभेद उच्चाटनासाठी त्यांनी पुढाकार घेतला होता. समजतील हा भेदाभेद बंद व्हावा म्हणून त्यांनी सवर्णांची वेगळी व अस्पृष्याची वेगळी शाळा भरवण्याची पद्धत १९१९ साली बंद केली व एकत्र शाळा सुरू केल्या. त्याच बरोबर त्यांनी गावच्या पाटलाने कारभार चांगला चालवावा यासाठी शिक्षण देणाऱ्या पाटील शाळा, प्रत्यक्ष व्यावसायिक शिक्षण देणाऱ्या, तंत्रे व कौशल्ये शिकवणाऱ्या शाळा, बहुजन विद्यार्थ्यांसाठी वैदिक पाठशाळा, संस्कृत भाषेच्या विकासासाठी संस्कृत शाळा असेही उपक्रम त्यांनी राबवले. शाहू महाराजांनी शिक्षणाचे महत्त्व ओळखले होते त्यामुळे त्यांना आपली प्रजा शिकलेली असली पाहिजे असे वाटे. त्यासाठी त्यांनी आपल्या राज्यात सर्वांसाठी सक्तीचे मोफत प्राथमिक शिक्षण सुरू केले. पैशा अभावी गरीब मागास जातीतील मुले शिक्षणापासून वंचित राहू नये याकरिता मागास जातीतील गरीब पण गुणवंत विद्यार्थ्यांसाठी अनेक शिष्यवृत्ती सुरू केल्या. त्यांनी पांचाळ, देवदन्य, नाभिक, शिपी, ढोर-चांभार या विविध जाती आणि धर्मांसाठी तसेच मुस्लिम, जैन आणि ख्रिश्चनांसाठी स्वतंत्रपणे वसतिगृहे स्थापन केली.

छत्रपती चहू महाराज यांनी ब्राम्हण – ब्राम्हणेतर असा भेदाभेद अमान्य होता. ब्राम्हणांनी ब्राम्हणेतरांसाठी धार्मिक विधी करण्यास नकार दिल्याने त्यांनी रॉयल धार्मिक सल्लागारांच्या पदावरून त्यांना काढून टाकले. त्यांनी तरुण मराठा विद्वान पदावर नियुक्त केले आणि त्यांना 'क्षत्र जगद्गुरु' म्हणजेच 'क्षत्रियांचे विश्व शिक्षक' ही पदवी बहाल केली. शाहूंनी ब्राम्हणेतरांना वेद वाचण्यास व पठण करण्यास प्रोत्साहन दिले व सर्व जाती धर्मातील लोकांना शिक्षणाचा व देवाची पुजा करण्याचा हक्क असल्याचे ठासून संगितले. छत्रपतींनीही आपल्या साम्राज्यातील स्त्रियांच्या परिस्थितीच्या सुधारणेसाठी कार्य केले. त्यांनी महिलांना शिक्षण देण्यासाठी शाळांची स्थापना केली आणि स्त्री शिक्षणाच्या विषयावर जोरदार भाषणही केले व जास्तीत जास्त स्त्रियांना शिक्षण घेण्यासाठी प्रेरित केले. देवदासी प्रथेमुळे मुलींची व महिलांचे अतिशयशोषण होत असल्याचे ज्यावेळिल त्यांच्या लक्षात आले त्यावेळी त्यांनी देवदासी प्रथा, देवाला मुली अर्पण करण्याच्या प्रथेवर बंदी घालणारा कायदा आणला व अनेक मुलींचे जीवन धुळीला मिळण्यापासून वाचविले. त्यांनी अनेक प्रकल्प सादर केले ज्यामुळे समजतील कष्टकरी लोकांना त्यांच्या निवडलेल्या व्यवसायात स्वावलंबी राहण्यास मदत झाली. शाहू छत्रपती स्पनिंग अँड विव्हिंग मिल, समर्पित बाजारपेठ, शेतकऱ्यांसाठी सहकारी संस्थांची स्थापना असे अनेक उपक्रम छत्रपतींनी आपल्या प्रजेची व्यापारातील सक्षमता वाढावीण्यासाठी सुरू केले. कृषी पद्धतीचे आधुनिकीकरण करण्यासाठी उपकरणे खरेदी करू पाहणाऱ्या शेतकऱ्यांना त्यांनी क्रेडिट उपलब्ध करून दिले आणि शेतकऱ्यांना पीक उत्पादन आणि संबंधित तंत्रज्ञान वाढवायला शिकवण्यासाठी किंग एडवर्ड अँग्रिकल्चरल इन्स्टिट्यूटची स्थापना केली. १८ फेब्रुवारी १९०७ रोजी त्यांनी राधानगरी धरणाची सुरुवात केली आणि हा प्रकल्प १९३५मध्ये पूर्ण केला. या भव्य अश्या उपक्रमातून छत्रपती शाहू महाराजांचे आपल्या प्रजेच्या कल्याणचा दीर्घकालीन दृष्टीकोण दिसून येतो.

ते कला आणि संस्कृतीचे महान संरक्षक होते आणि त्यांनी संगीत आणि ललित कलांच्या कलाकारांना प्रोत्साहन दिले. त्यांनी लेखक आणि संशोधकांना त्यांच्या प्रयत्नात पाठिंबा दिला. चांगल्या आरोग्याचे महत्त्व ओळखून त्यांनी आपल्या राज्यात अनेक ठिकाणी तरुणांसाठी व्यायामशाळा सुरू केल्या. महाराजांना खेळाची विशेष आवड होती. त्यातही कुस्ती हा त्यांचा विशेष आवडीचा खेळ होता. या खेळाच्या प्रचार प्रसारासाठी त्यांनी राज्यात अनेक कुस्तीच्या खेळपट्ट्या उभारल्या व तरुंना या खेळकडे आकर्षित करण्याचा प्रयत्न केला. यातून त्यांनीतरुणांमध्ये आरोग्य जागृतीचे महत्त्व अधोरेखित केले. छत्रपती शाहू महाराजांच्या सामाजिक, राजकीय, शैक्षणिक, कृषी आणि सांस्कृतिक क्षेत्रातील त्यांच्या महत्त्वपूर्ण योगदानामुळे त्यांना राजर्षी ही पदवी मिळाली, जी त्यांना कानपूरच्या कुर्मी योद्धा समुदायाने बहाल केली.

निष्कर्ष :

'राजर्षी शाहू महाराज : एक समाजसुधारक' या विषयात संशोधन करताना असे आढळून येते की, छत्रपती शाहू महाराज यांचे सामाजिक कार्य अत्यंत मोठे आहे. समाजाला एक वेगळी दिशा देण्यासाठी त्यांनी अनेक वेळा आपली ठाम भूमिका घेतली. ससमाजाच्या हितासाठी समाजातील वाईट रूढी परंपरांना त्यांनी परखडपणे विरोध दर्शविला. नुसताच विरोध न दर्शविता त्यांनी त्यांच्याकडे असलेल्या अधिकारांचा वापर करून त्या वाईट रूढी नष्ट करण्यासाठी प्रत्येक उपाययोजना केल्या. जातिभेद निर्मूलन, स्त्री जीवन रक्षण, खेळ, शेती, सर्वांसाठी शिक्षण अश्या

अनेक क्षेत्रांमध्ये सामाजिक सुधारणा घडऊन आणल्या. त्यामुळे 'राजर्षी शाहू महाराज यांनी अनेक सामाजिक सुधारणांसाठी पुढाकार घेतला' हे गृहीतक येथे खरे ठरते.

ग्रंथ सूची :

1. नाईक तू. बा., छत्रपती राजर्षी शाहू महाराज, पुस्तक, अध्यय पब्लिकशन,दिल्ली.
2. किर धनंजय, लोकरजा शाहू महाराज व्यक्तित्व आणि विचार, पुस्तक.
3. किर धनंजय, राजर्षी शाहू महाराज, पुस्तक.
4. Manju Malik, in *Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education*, 'A Study on Contribution of ChhatrapatiShahuMaharaj In the Development of Maratha Empire'
5. https://mr.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B6%E0%A4%BE%E0%A4%B9%E0%A5%82_%E0%A4%AE%E0%A4%B9%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%
6. <https://www.culturalindia.net/reformers/shalu-chhatrapati.html>
7. <https://countercurrents.org/2017/1/bahujan-revolutionary-king-chhatrapati-shahu-maharaj/>
8. India.com, ChhatrapatiShahuMaharaj: 5 Things To Know About The Great King And Reformer

राजर्षी शाहु महाराजांचे आर्थिक व सामाजिक योगदान

प्रा. डॉ. साबळे बालाजी आनंदा

अर्थशास्त्र विभागप्रमुख, श्री पंडितगुरु पाडीकर महाविद्यालय, सिरसाळा तापरळी 1/4वै 1/2 जि
बीड

balajisable 789@gmail.com

प्रस्तावना :

राजर्षी शाहु महाराज पुरोगामी महाराष्ट्राच्या निर्मितीत महत्वपूर्ण योगदान देणारे समाज क्रांतीकरक राजे म्हणून ओळखले जातात. त्यांनी आपल्या संस्थानात विविध समाजोपयोगाची आर्थिक कार्ये केली. आपल्या अल्प काळात त्यांनी विविध आर्थिक सुधारणा केल्या. समाजातल्या प्रत्येक घटकासाठी त्यांनी कार्य केले. समाजास शिक्षण मिळावे या साठी प्रयत्न केले. शेवटी तर मोफत व सक्तीचे शिक्षण केले. शिक्षण घेणाऱ्या बहुजन वर्गासाठी आरक्षणाद्वारे नौकरीची संधी उपलब्ध करून दिली. त्यांच्या प्रयत्नातुनच शेतकऱ्यांसाठी राधानगरी धरण उभारण्यात आले. अशा प्रकारे त्यांनी आपल्या आर्थिक सामाजिक कार्यातुन बहुजन समाजासाठी प्रगतीची दारे खुली केली. त्यांच्या सामाजिक कार्यामुळेच बहुजन समाजाची प्रगती होवू शकली. या मध्यमातुन पुरोगामी महाराष्ट्र निर्माण करण्यासाठी त्यांचे विचार व कार्य मुलभुत अशा स्वरूपाचे ठरले. या त्यांच्या कार्याचा अढावा घेण्याच्या उद्देशाने हा शोधनिबंध प्रस्तुत करण्यात आला आहे.

शोध निबंधाचे उद्देश :

1. राजर्षी शाहु महाराज यांच्या आर्थिक विचारसरणीचा अभ्यास करणे.
2. राजर्षी शाहु महाराज यांच्या जीवन कार्याचा अढावा घेणे.
3. पुरोगामी महाराष्ट्र निर्मितीतील राजर्षी शाहु महाराज यांचे योगदान अभ्यासणे.

राजर्षी शाहु महाराजांचा जन्म कागलच्या घाटगे घराण्यात झाला. घाटगे घराणे हे छत्रपतींच्या संस्थाना अंतर्गत झार्गीदार होते. त्यांचे वडील अबासाहेब घाटगे हे कर्तबगार होते. त्यांच्या देखरेखी खाली छत्रपतींची गादी सुरक्षित होती. परंतू वारसाचा प्रश्न निर्माण झाला असता त्यांनी शाहु महाराजांना छत्रपतींच्या गादीवर दत्तक वारसा प्रदान केला. त्यांनी त्यानंतर आपल्या राजकीय कारकीर्दीत समाज हिताचेच कार्य केले. व आर्थिक दृष्टिने समाजोध्दाराचे मोठे कार्य केले.

सामाजिक आर्थिक सुधारणा:

तात्कालीन समाज व्यवस्थेत विषमता मोठ्या प्रमाणात पसरली होती. सामाजिक विषमतेमुळे भेदभाव उचनिचता समाजात मोठ्या प्रमाणात होती. त्यातुन सामाजिक संमता निर्माण करणे कठीन कार्य होते. समाजातील जातीभेद नष्ट करण्यासाठी विविध मार्गांचा अवलंब केला. ठिक ठिकाणी सामाजिक विषमते विरुद्ध परिषदा आयोजित केल्या. अनेक ठिकाणी विषमतेचे बंधन तोडुन टाकण्यासाठी व्याख्याने लिहिली त्यांच्या राजवाड्यातील एक कर्मचारी गंगाराम यांने हौद बाटवील्याच्या कारणावरून त्यास मारहान करण्यात आली असता राजर्षी शाहु महाराजांनी त्याला स्वाभिमानाचे जीवन जगण्यासाठी त्याला हॉटेल उघडुन दिले. अशा प्रकारे अस्पृश्योध्दाराचे कार्य त्यांनी केले.

शेतकरी वर्गासाठी आर्थिक सुधारणा :

त्यांनी राज्याची सुत्रे हाती घेतल्यानंतर शेतकरी वर्गासाठी सुधारणा करण्याचे धोरण हाती घेतले. कोल्हापुर संस्थानात रयतेच्या सर्वांगीन विकासासाठी विविध सुधारणा केल्या आपल्या संस्थानात शेती, उद्योगधंदे, व्यापार इ. बाबतीत भरभराट व्हावी या उद्देशाने अनेक उपाययोजना केल्या. विशेषता: त्यांनी शेतकरी वर्गासाठी सिंचनाची सोय करून दिली. कोल्हापुर जवळ राधानगरी धरण बांधण्याचे कार्य हाती घेतले. पंचगंगा नदीवर हे धरण बांधण्यात आहे. राधानगरी धरणातुन शेतीला सिंचनासाठी पाणी पुर्वीच्याचे

कार्य केले. शेतकऱ्याची दुष्काळातून मुक्तता करण्यासाठी हे धरण महत्वाचे ठरले. या बरोबरच शेतकऱ्यांना धान्य, जनावरांना चारा व कुरणे देवून अशा प्रकारे शेतकऱ्यांची दूष्काळात मदत केली.

महिलां विषयक आर्थिक सुधारणा :

राजर्षी शाहु महाराज यांनी महिलांच्या विकासासाठी त्यांना सामाजिक विषमतेतून बाहेर काढण्यासाठी बहुमोल कार्य केले. स्त्री शिक्षणास प्रोत्साहन दिले. त्यांनी आपले स्नुषा, राणी इंदुमती देवी हीला शिक्षण देण्यासाठी व्यवस्था केली. सामाजातील अनिष्ट रूढींचे उच्चाटन करण्यासाठी इ.स.१९१७ मध्ये पुनर्विवाहाचा कायदा पास केला. विधवा विवाहास कायदेशिर मान्यता दिली. अशा प्रकारे महिलांसाठी समाजात सन्मानपूर्वक जीवन जगण्यासाठी हक्क मिळवून दिले.

धार्मिक सुधारणा :

राजर्षी शाहु महाराजांच्या कार्यकाळात धार्मिक स्तोम माजले होते. स्पृश्य – अस्पृश्य, भेदाभेद यांनी समाज ग्रस्त झाला होता. या विरुद्ध त्यांनी लढा उभारला समतेच्या आढ येणाऱ्या अशा बाबी विरुद्ध त्यांनी प्रखर विचार व्यक्त केले. त्यांच्यावर उदभवलेल्या वेदोक्त प्रकरणाच्या माध्यमातून त्यांनी राज्यातील विषमता: अनुभवली. त्यातून बहुजन वर्गाच्या उधरासाठी प्रोत्साहित होवून कार्य केले.

शैक्षणिक कार्य :

बहुजन वर्गाच्या मागसलेपणाचे प्रमुख कारण हे अज्ञान आहे. हे राजर्षी शाहु महाराजांनी जानले होते. त्यातूनच त्यांनी बहुजन समाजाला शिक्षण देण्याचे धोरण आखले. समाजातील समानता प्रस्थापीत करण्यासाठी शिक्षणाच्या माध्यमातून मागासलेल्या वर्गास शिक्षणाची संधी उपलब्ध करून देणे अवश्यक असल्याचे मत मांडले. आपल्या राजपदाच्या माध्यमातून सर्वसामान्यांच्या दारापर्यंत शिक्षणाची गंगा पोहचली. खेड्यातील विद्यार्थ्यांना शहरात शिक्षण घेता यावे म्हणून अनेक वस्तीगृह सुरू केले. बहुजनांच्या मुलासाठी मोफत शिक्षण व सक्तीचे शिक्षण हा कायदा पास केला. शिक्षणा बरोबरच त्यांना समानसंधीच्या माध्यमातून अरक्षण दिले. अरक्षणाद्वारे अनेक लोकांना नौकऱ्या मिळाल्या. शिक्षणाची दारे अशा प्रकारे त्यांनी सर्व सामान्या मानसासाठी उघडली.

समारोप :

महाराष्ट्रातील पुरोगामी सुधारक म्हणून राजर्षी शाहु महाराजांना ओळखले जाते. राजर्षी शाहु महाराज हे केवळ बोलके सुधारक नव्हते तर ते कर्ते सुधारक होते. पुरोगामी विचारसरणी रूजवीण्याच्या दृष्टिने त्यांनी केवळ विचार व्यक्त केले नाही तर ते प्रत्यक्षात उतरविले त्यांच्या कार्यकाळात त्यांनी अनेक सुधारणा केल्या त्यांनी सर्व सामान्य बहुजन वर्गासाठी आपले राजपद पणाला लावले. त्यांनी आपल्या सत्तेचा उपयोग बहुजन हिता साठी केला. जनहितासाठी त्यांनी अनेक कायदे केले. ते कायदे प्रखरपणे राबविले त्यांनी विविध योजनांच्या माध्यमातून प्रजेचे कल्याण साधण्याचा प्रयत्न केला. त्यांनी बहुजन वर्गासाठी शिक्षणाची दारे खुली केली. शिक्षण घेतलेल्या बहुजन वर्गासाठी अरक्षणाच्या माध्यमातून नौकरीची संधी उपलब्ध करून दिली. शेतकरी वर्गाच्या विकासासाठी सिंचनाच्या सोयी करून दिल्या. अस्पृश्य भेदभाव नष्ट करण्याचा प्रयत्न केला. अशा प्रकारची अनेक कार्य त्यांनी केली.

संदर्भ ग्रंथ सुची :

1. दिनेश मोरे : अधुनिक महाराष्ट्रातील परिवर्तनाचा इतिहास
2. एस.एस.गाठाळ : महाराष्ट्रातील समाज सुधारक : विचारधार व कार्य
3. जयसिंगराव पवार : राजर्षी शाहु गौरव ग्रंथ
4. अण्णासाहेब गरड, बि.बी. सावंत : महाराष्ट्रातील समाज सुधारण्याचा इतिहास
5. अनिल शिंगारे, ओमशिवा लिंगाडे : अधुनिक महाराष्ट्राचा इतिहास

राजर्षी शाहू महाराज यांनी केलेल्या प्रशासकीय सुधारणा

श्री. नवथर सोपान लक्ष्मण

संशोधक विद्यार्थी, पिंपरी शहाली ता.नेवासा जि. अहमदनगर

sopannavthar13@gmail.com

प्रस्तावना :

२ एप्रिल १८९४ ला शाहू महाराजांनी कोल्हापुर संस्थानाची अधिकार सुत्रे घेतली. लोकमान्य टिळकांनी कोल्हापुर रयतेसाठी हा कपिलाष्ठीचा अपूर्व योग असल्याचे म्हटले. याच उद्देशाने राज्यकारभाराची सूत्रे आपल्या हाती घेतल्यावर महाराजांनी एक जाहीरनामा काढला त्यामध्ये "आमची सर्व प्रजा सतत तृप्त राहून सुखी असावी, तिचे कल्याणाची सतत वृद्धी व्हावी व आमचे संस्थानची एकप्रकारे सदोदिन भरभराट होत जावी अशी आमची उत्कट इच्छा आहे. हा आमचा हेतू परिपूर्ण करण्यास तमाम प्रजाजन शुद्ध अंतकरणापासून मोठ्या राजनिष्ठेने आम्हास सहाय्य करतील अशी आमची पूर्ण उमेद आहे. ही आमची कारकिर्दीत दीर्घ कालापर्यंत चालवून सफल करावी अशी मी त्या जगन्नियंत्या परमात्म्याची एक भावे प्रार्थना करतो." हा त्याचा आशय महाराजांच्या कार्यकर्तृत्वाचा नियोजनाचा एक भाग आहे. १९व्या शतकाच्या उत्तरार्धात राजांनी कोल्हापूर संस्थानात अमूलाग्र बदल घडवून आणले. प्रशासनाची भक्कम चौकट उभी करून छत्रपती शिवाजी महाराजांचे आपण योग्य वारसदार आहोत याची प्रचिती संपूर्ण भारताला करवून दिली.

उद्दिष्ट्ये :

१. राजर्षी शाहू महाराजांच्या प्रशासकीय कार्याचा आढावा घेणे.
२. तत्कालीन कालखंडात महाराजांनी केलेल्या बदलांचे परीक्षण करणे.
३. दुर्लक्षित प्रशासकीय घटक तपासणे.

गृहीतके :

१. १९ व्या शतकात भारतीय संस्थानिकांचे अधिकार क्षेत्र मर्यादित होते.
२. चैन-विलास आणि ऐष-आरामात संस्थानिक दंग होते.
३. राजर्षी शाहू महाराज यांचे प्रशासकीय कार्य दूरदर्शी होते.
४. सामान्य प्रजा गृहीत धरून प्रशासनाची भक्कम चौकट शाहू महाराजांनी तयार केली.
५. कार्य-क्षमता व तत्परता हे प्रशासनाची वैशिष्ट्ये होती.

महत्व:

ब्रिटिश पारतंत्र्यातल्या कालखंडात संस्थानी मांडलिकत्वाच्या पार्श्वभूमीवर आपले स्वातंत्र्य व अधिकार प्रभावीपणे जोपासणे ही गोष्ट सामान्य नव्हती. महाराजांनी योग्य कुशलतेने कोल्हापूर संस्थानात प्रशासकीयच नव्हे तर सामाजिक आर्थिक बदल घडवून आणले. प्रजाहितदक्ष राज्यव्यवस्थेची कीर्ती संस्थानाला मिळवून दिली. १८५८ च्या राणी व्हिक्टोरियाच्या जाहीरनाम्यानुसार ब्रिटिश सत्ता भारतीय संस्थाने खालसा करणार नव्हती. त्यामुळे ५६२ संस्थाने भारतात स्वातंत्र्यपूर्व कालखंडात अस्तित्वात राहिली. ती जरी स्वतंत्र असली तरी ऐन केन प्रकारे ब्रिटिश साम्राज्याचे वर्चस्व त्यांच्यावरती होते. त्याचप्रमाणे मध्ययुगीन सरंजामशाहीची वैशिष्ट्ये त्या संस्थानांमध्ये

होती. राजे-महाराजे चैन, विलास यामध्ये मग्न असताना बडोद, कोल्हापूर व संस्थानानी केलेले कार्य अतिशय महत्त्वाचे होते.

छत्रपती शाहू महाराजांचा पूर्व परिचय : १७०८ मध्ये कोल्हापूर संस्थानांची स्थापना झाली. २५ डिसेंबर १८८३ रोजी अहमदनगरमध्ये इंग्रजी शिपायांने केलेल्या अमानुष मारहाणीत शिवाजी महाराज चौथे यांचे निधन झाले. राज्याच्या मृत्यूची चौकशी करून त्यांचा पत्नीहा वाढला असे कारण इंग्रजांनी समोर केले. १८८३ पासून संस्थानाचा कारभार दिवान, सरसुभे, सरन्यायाधीश यांचे प्रशासकिय मंडळ संस्थानाचा कारभार पाहत होते. १८८३ मध्ये छत्रपती शिवाजी महाराज चौथे यांचे हृदयद्रावक शेवट अहमदनगर येथे झाला. कागलच्या थोरल्या पातीचे जहागिरदार जयसिंगराव उर्फ आबासाहेब घाडगे हे कोल्हापुरचे रिजंट म्हणून त्याचे काम पाहत होते. आबासाहेबांना दोन पुत्र होती. यशवंत जेष्ठ तर पिराजीराव हे कनिष्ठ पुत्र होते. थोरल्या मुलाला गादिवर बसवावे ही इच्छा आबासाहेबाची होती. विधवा राणीसाहेब आनंदीबाई यांनी यशवंत यांना दत्तक घेतले हे दत्तक विधान १८ मार्च १८८४ रोजी पार पडले आणि यशवंतराव घाडगे यांचे नामकरण शाहू महाराज असे झाले. त्यांचा जन्म २६ जुलै १८७४ रोजी झाला. ते तीन वर्षांचे असताना त्यांच्या आई मुधोळच्या राजकन्या राधाबाई यांचे निधन झाले. त्यांच्या शिक्षणाची उत्तम व्यवस्था करण्यात आली कृष्णाजी भिकाजी गोखले, हरिपंत गोखले यांची शिक्षक म्हणून नेमणूक केली. १८८६ मध्ये राजकोटच्या प्रिन्स कॉलेज मध्ये प्राथमिक शिक्षणासाठी पाठवण्यात आले. २० मार्च १८८६ रोजी आबासाहेब घाडगे यांचे निधन झाले ते त्यावेळी ३० वर्षांचे होते. धारवाडला त्यांचे काही शिक्षण झाले तिथे एस. एम. ला फ्रेजर व केशवराव गोखले यांच्या मार्गदर्शनाखाली १८८९ ते १८९२ अशी तीन वर्षे इंग्रजी, गणित, भूगोल, अर्थशास्त्र इत्यादीचे शिक्षण मिळाले १ एप्रिल १८९१ रोजी त्यांचा विवाह बडोद्याचे सरदार गुणाजीराव खानविलकर यांची कन्या गणपतराव गायकवाड यांची नात लक्ष्मीबाई यांच्याशी झाला.

नोकऱ्यांचे भारतीय करणे : भारतीय पारतंत्र्य कालखंडात संस्थानांमध्ये इंग्रजांचा हस्तक्षेप मोठ्या प्रमाणावर वाढलेला होता. संस्थानातील महत्त्वाच्या पदावर त्यांचीच वर्णी मोठ्याप्रमाणावर लागलेली होती. त्यांचे निर्णय संस्थांनी हिताचे नसून इंग्रज धार्जिनी होते. सामान्य प्रजेचे हित ते जोपासत नव्हते त्यामुळे संस्थानांचे नुकसान होऊन सामान्य प्रजा शोषली जात होती. कोल्हापुर संस्थानात अनेक इंग्रज नोकरदार म्हणून कार्यरत होते. शाहू महाराजांनी त्यांच्यावर वचक निर्माण केला. अधिकारी सूत्रे घेतल्यानंतर दोनच वर्षांत अनेक इंग्रज नोकरी सोडून गेले. त्यामध्ये मिस लिटल, मिसेश शाईक्स, मिस्टर शॅनॉन हे होय. कर्नर रे यांचे विषप्रयोगाचे प्रकरण तर चांगलेच रंगले. मुंबई सरकारने महाराजांचे निरपसधित्व सिद्ध केल्यामुळे महाराजांचा विजय झाला. रिक्त जागेवर महाराजांनी भारतीयांच्या नेमणुका केल्या.

ब्राह्मणी वर्चस्वातून नोकरशाहीची सुटका : पुरोगामी विचाराचा आग्रह महाराजाचा होता प्रशासनामध्ये इंग्रजाबरोबर ब्राह्मण, पारशी यांचे वर्चस्व होते. १८९४ मध्ये दरबाराच्या एकूण ७१ अधिकाऱ्यापैकी ६० ब्राह्मण होते. महाराजांच्या खाजगी नोकर वर्गात ५२ पैकी ४६ ब्राह्मण होते. भास्करराव विठोबाजी जावध यांची महसूल खात्यात सहाय्यक सरसुभे या पदावर नियुक्त केले. तसेच पहील्या दर्जाचे दंडाधिकारी, दुय्यम प्लेग आयुक्त, नंतर सहाय्यक जिल्हाधिकारी म्हणून नेमणूक केली. दाजीराव अमृतराव विचारे यांची सार्वजनिक बांधकाम खात्यामध्ये अभियंता म्हणून नियुक्ती केली. श्रीमती राधाबाई केळकर यांना अहिल्याराणीची सोबतीत म्हणून तर द्वारकाबाई केळकर, कृष्णाताई केळकर यांची पुणे येथील राष्ट्रीय सभेच्या प्रतिनिधीसाठी निवड केली.

सहकाराची सुरुवात :

धनंजयकिर यांनी शाहू महाराजांचा गौरव नवीन युगाच्या आगमनाची घोषणा करणारा आग्रदूत असा केला. तो खऱ्या अर्थाने यथार्थ होता. १९०२ मध्ये त्यांनी पाटबंधाऱ्यांचे धोरण जाहीर केले. स्वतंत्र पाटबंधारे खाते

आणि त्यावर इरिगेशन ऑफिसरची नियुक्ती करण्यात आली. १९०७ साली भोगवती नदीवर धरणाची योजना त्यांनी आखली. १९०७ मध्ये सहकारी तत्वावर कापड गिरणी सुरु केली. १९१६ मध्ये बलभीम को-ऑपरेटिव्ह व अर्बन को ऑपरेटिव्ह या सहकारी सोसायटीची स्थापना केली. १९९२ साली राजांनी सहकार संस्था विषयक कायदा केला. सहकारी संस्थाची नोंदणी करण्यासाठी सहकार निबंधकाची नियुक्ती ही केली. 'द कोल्हापूर अर्बन को ऑपरेटिव्ह सोसायटी लिमिटेड' ही संस्था भास्करराव जाधवांच्या नेतृत्वाखाली सुरु केली. १९२१ सालापर्यंत कोल्हापुर संस्थानात ३७ सहकारी संस्था अस्तित्वात होत्या.

कारकून अधिकाऱ्यावर वचक निर्माण केला :

लाचलुचपतपणा व वशिलेबाजी कामचुकारपणा यामुळे प्रशासनात ढिलाई आली होती. महाराजांनी विविध स्वरूपाच्या योजना या संदर्भामध्ये तयार केल्या. काही नियमावली तयार करून तिची काटेकोर अंमलबजावणी होते की नाही हे अधिकाऱ्यांमार्फत तपासले जात होते. कामात ढिलाई अगर अकार्यक्षमता महाराजांना जाणवल्यास त्यावर महाराज कडक उपाययोजना करत महाराजांनी घालून दिलेले काही नियम पुढील प्रमाणे :

१. प्रत्येक खात्याचा अमलदार त्याच्या हाताखालील नोकरांना दंड आणि शिक्षा करू शकतो.
२. मासिक १२ रु. पगार असणाऱ्या नोकराला कामावरून काढून टाकणे, निलंबित करणे, पगार कपात, दंड इत्यादी शिक्षा त्याचा वरिष्ठ अधिकारी ठोठाऊ शकतो.
३. राजा वाढवण्याच्या संदर्भात वेगळ्या नियमावली तयार केल्या.
४. बढतीसाठी एका गावाहून दुस-या गावी जाण्यास जर नकार दिला तर त्यांना ५ वर्ष बढती दिली जात नव्हती.
५. सरकारी नोकरांनी आर्थिक लेनदेनचे व्यवहार करू नये असा दंडक तयार केला.

यापद्धतीने महाराजांनी कोल्हापूर संस्थानात प्रशासनाची भक्कम चौकट उभी करून संपूर्ण भारतात आपली वेगळी ओळख तयार केली. महाराजांचे कार्य केवळ प्रशासकीयच नव्हते तर सामाजिक धार्मिक आणि आर्थिकही होते. **निष्कर्ष :** राजर्षी शाहू महाराज यांनी १९ व्या शतकात केलेले प्रशासकिय आर्थिक आणि सामाजिक कार्य अतिशय महत्वाचे होते. त्यांच्या कार्याचा गौरव म्हणून १९०२ मध्ये क्रेब्रिज विद्यापीठाने त्यांना मानद L.L.D. पदवी प्रदान केली. त्याच बरोबर कानपूर मधली कुर्मी क्षेत्रीय परीषदेने त्यांना १९१९ मध्ये राजर्षी पदवीने सन्मानित केले. अशा या राजांचा गौरव करताना विठ्ठल रामजी शिंदे म्हणतात " शाहूराजा नुसता मराठा नव्हता, नुसता ब्राह्मणे तर ही नव्हता तो नवयुगातील सर्वांग पूर्ण राष्ट्रपुरुष होता. यशवंतराव मोहित्यांनी तर त्यांना महाराष्ट्राचे गौतम बुद्ध म्हटले. थोर सुधारक आदर्शराजा असलेले बडोद्याचे सयाजीराव गायकवाड यांना शाहू महाराजांना माणसातील राजा व राजातील माणूस म्हणून राजांचा यथोचित गौरव केला. शाहू महाराजांचे चरित्रकार धनंजय किर त्यांना "नवीन युगाच्या आगमनाची घोषणा करणारा आग्रदूत म्हणून त्यांचा गौरव केला."

संदर्भ:

१. भगत रा.तु, राजर्षी शाहू छत्रपती जीवन व शिक्षण कार्य, सिद्धराज प्रकाशन, पुणे.
२. भोले भा. ल. छत्रपती शाहू महाराज, महाराष्ट्र चरित्र ग्रंथमाला.
३. किर धनंजय, छ. शाहू महाराजांचे चरित्र.
४. घोरपडे एकनाथ केशव, कोल्हापुरचे शाहू छत्रपती : चरित्र व कार्य.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे जीवन व कार्य

आवारे प्रतिक चंद्रसेन

संशोधक विद्यार्थी रामनगर, वाशी, ता. वाशी, जि. उस्मानाबाद

प्रास्ताविक : —

डॉ. आंबेडकर हे भारतीय राज्यघटनेचे शिल्पकार व दीन, दलित, शेषित, पिडीत, शेतकरी, शेतमजूर, कामगार, महिला इ. बहुजनांचे कैवरी होते. ही बाब सर्वांनाच ज्ञात आहे. ते इतिहास, राज्यशास्त्र, समाजशास्त्र, कायदे, शिक्षणशास्त्र, कृषिशास्त्र इत्यादी ज्ञानशाखांचे निष्णात पंडीत होते. त्याचबरोबर ते एक कायदेतज्ञ, एक कुशल प्राध्यापक, निर्भिड संपादक, निस्वार्थी अभ्यासू व दूरदृष्टीचे संसदपटू देखील होते. या विविध कार्यक्षेत्रांच्या मंथनातूनच त्यांच्या आर्थिक तत्वज्ञानाची जडणघडण झालेली पहायास मिळते. त्यांच्या जीवनाचे व जगण्याचे एक स्वातंत्र्य, समता, बंधुता, विज्ञाननिष्ठा, धार्मिकता, नैतिकता, शिक्षणप्रसार इ. परस्परवलंबी घटक होत. त्यांच्या या सर्वसमावेशक दृष्टीकोनामुळेच त्यांच्या विचारांची एक जीवनपध्दती अस्तित्वात आलेली आढळते. वास्तविक पहाता प्रत्येक विचार वादाच्या मुळाशी त्यांची स्वतःची एक स्वतंत्र अशी अपेक्षित अर्थ प्रणाली असते व त्या अर्थप्रणालीच्या प्रस्थापणासाठी सामाजिक, आर्थिक, राजकीय, शैक्षणिक व सांस्कृतिक क्षेत्रात सतत संघर्ष करावा लागतो. त्याचप्रमाणे डॉ. आंबेडकरांची स्वतःची एक वेगळी अर्थप्रणाली आहे. त्या अर्थप्रणालीलाच आंबेडकरांचे अर्थशास्त्र किंवा त्यांचे आर्थिक विचार असे म्हटले जाते.

डॉ. आंबेडकरांनी धार्मिक, राजकीय, सामाजिक इ. विचारांबरोबरच आर्थिक स्वरूपांचे हे विचार मांडलेले आहेत. त्यांच्या सामाजिक, धार्मिक व राजकीय विचारांचा ज्याप्रमाणे व्यापक असा प्रभाव आणि प्रसार झालेला आहे त्याप्रमाणात मात्र त्यांचे आर्थिक विचारांचा फारसा प्रसार झालेला पहावयास मिळत नाही. म्हणूनच अर्थशास्त्र म्हणून त्याची ओळख होत नाही असे म्हटल्यास वावगे ठरणार नाही. त्यांनी ज्या विविध अर्थशास्त्रविषयक समस्यावर जी मते व उपाययोजना सुचविल्या त्यास आपण त्यांचे आर्थिक विचार असे म्हणतो. प्रस्तुत शोध निबंधात डॉ. आंबेडकरांच्या आर्थिक विचारांचा आढावा घेण्याचा प्रयत्न करण्यात आलेला आहे. भिमराव रामजी आंबेडकरांचा जन्म महु येथे १४ एप्रिल १८९१ रोजी झाला. त्यांच्या जन्म एका अस्पृश्याच्या घरी झाला त्यामुळे त्यांना शैक्षणिक जीवनात अनेक अडचणी आल्या. त्यांनी हार मानली नाही. १९०७ साली ते मॅट्रीक पास झाले. १९१३ साली पारिशियन व इंग्रजी हे विषय घेवून बी.ए. झाल्यानंतर त्यांच्या वडिलांचे निधन झाले. त्यामुळे त्यांना शिक्षण घेणे कठिण झाले. तरी त्यांनी त्यावर मात करून आपले शिक्षणाचे ध्येय गाठले. त्यासाठी त्यांनी महाराजा सयाजीराव गायकवाडांच्या संस्थानात नौकरी केली. पुढे ते गायकवाड स्कॉलर म्हणून कोलंबिया विद्यापीठात शिक्षणासाठी गेले.

जून १९१५ मध्ये आंबेडकरांना त्यांच्या प्राचिन भारतातील व्यापार या प्रबोधनाबद्दल एम.ए.व्ही. पदवी मिळाली. जून १९१६ मध्ये त्यांना 'नॅशनल डिव्हिडंड ऑफ इंडिया ए हिस्टॉरिक अँड अॅनलिटिकल स्टडी' या प्रबोधनावर पी.एच.डी. ही पदवी मिळाली. लंडन स्कुल इकॉनॉमिक्स अँड पॉलिटीक्स मधून ते अर्थशास्त्र या विषयात एम.एस्सी. झाले. आंबेडकरांनी 'दि प्रॉब्लेम ऑफ स्त्री इटस ओरिजन अँड सोल्युशन' हा प्रबंध सादर केला. त्याबद्दल त्यांना डी.एस्सी. ही लंडनची सर्वोच्च पदवी मिळाली. त्यांनी १९२३ मध्ये बॅरिस्टरची पदवी प्राप्त केली. १९२८ मध्ये त्यांनी लॉ कॉलेजात प्राध्यापक म्हणून काम सुरू केले. भारत स्वतंत्र झाल्यानंतर भारताची राज्यघटना तयार करण्यासाठी जी मसुदा समिती स्थापन केली होती त्या समितीचे ते अध्यक्ष होते. म्हणून त्यांना भारतीय राज्य घटनेचे शिल्पकार असे म्हटले जाते. स्वतंत्र भारताच्या पहिल्या मंत्रीमंडळातील कायदेमंत्री म्हणून काम पाहिले.

शोधनिबंधाचा उद्देश : —

डॉ. बाबासाहेबांचे तत्वज्ञान केवळ दलितांच्याच उध्दारांचे नसून समाजातील सर्व घटकांना सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक आणि राजकीय समानता मिळून देण्याचे आहे. याची जाणीव करून देणे यासाठी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी विविध घटकांना सामाजिक न्याय मिळवून देण्याचे उद्देशाने केलेल्या कार्याचा आढावा घेणे हा या शोधनिबंधाचा उद्देश आहे.

संशोधन पध्दती : —

या शोध निबंधासाठी द्वितीयक साधनांचा वापर केलेला आहे. यामध्ये विविध संदर्भ ग्रंथ, मासिके, साप्ताहिके, वर्तमानपत्रातील लेख याचा आधार घेण्यात आलेला आहे.

शेती आणि शेतकरी विषयक विचार : —

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांना ग्रामीण समाज व्यवस्थेची प्रचंड जाण होती. तितकेच शेतीबद्दलही भान होते. ग्रामीण भागातील विखुरलेला समाज एकसंध करण्याच्या हेतूने शेतीचे चित्र बदलले पाहिजे यासाठी ते आग्रही होते. देशातील शेतकरी व राज्यकर्ते यांच्या उदरनिर्वाहाचे साधन शेती या माणसिकतेस डॉ.

बाबासाहेबांचा विरोध होता. शेती केवळ उदर निर्वाहाचे साधन नसून राष्ट्रीय उत्पन्नाचा एक स्रोत आहे. ग्रामीण भागाच्या आर्थिक विकासाचा केंद्रबिंदू आहे. शेतकऱ्यांसह अनेक शेतमजुरांना रोजगार देण्याचे माध्यम आहे. म्हणून शेतीकडे उद्योग म्हणून बघण्याच्या दृष्टिकोन असावा यासाठी ते आग्रही होते. शेती विकासासमर्थन शेतकरी आर्थिकदृष्ट्या सक्षम बनेल. ग्रामीण भागात आर्थिक परिवर्तन घडेल, राष्ट्राची अर्थव्यवस्था मजबूत बनेल, राजगारासाठीची स्थलांतरे टळतील या स्वरूपात शेतीला महत्व विषद केलेला दिसून येते.

शेतकऱ्यांचे सावकार व इतर माध्यमातून होणाऱ्या शोषणास त्यांना प्रचंड विरोध होता. सावकारी व्यवस्थेस हद्दपार करण्यासाठी शासनाने शेतकऱ्यांना बियाणे, खते, पाणी आणि पिक जोपासना खर्च दिला पाहिजे. शासन महसूल देणाऱ्या शेतीचे आर्थिक उत्तरदायित्व शासनाने उचलावे. शासनाने शेतकऱ्यांचा पोशिंदा म्हणून असलेले ऋण फेडावे असे त्यांना अपेक्षित होते. जातीवर आधारित समाज व्यवस्था बदलण्यासाठी शेतीमध्ये परिवर्तन घडवावे लागेल. शेती उद्योग मानून पायाभूत सुविधा पुरवून शेतकऱ्यांचा आर्थिक विकास साधला पाहिजे. शेतकरी आर्थिकदृष्ट्या समृद्ध झाल्यास शेतमजूर आणि शेतीशी निगडित सर्वच घटकांना या आर्थिक सक्षमतेचा फायदा होईल.

शेतीसाठी जमीन व पाणी हे मुख्य आहेत. पाण्याशिवाय शेतीचा विकास अशक्य आहे. शेतकऱ्याला शाश्वत पाणी मिळणे आवश्यक आहे. पाण्याची उपलब्धतेतून शेतीची उत्पादकता वाढून शेतकऱ्यांचा आर्थिक स्तर उंचावेल. शेतीस शाश्वत पाणी पुरविण्यासाठी नदीच्या पाण्याचे नियोजन झाले पाहिजे. देशात घडणारे दुष्काळ मानव निर्मित आहेत ते हटविण्यासाठी दुष्काळात पाण्याचे नियोजन करावे. कोरडवाहू शेती बागायती करण्याचे प्रयत्न करावेत. शेती व शेतमजूर समृद्ध झाला तरच देश समृद्ध होईल. असे विचार डॉ. बाबासाहेबांनी मांडले. पाण्यासंदर्भात केवळ विचार व्यक्त न करता ब्रिटीश सरकारला नदीखोऱ्यातील नियोजनाची योजना सादर केली. ही योजना 'दामोधर खोरे परियोजना' म्हणून ओळखली जाते. राष्ट्रीयकरण करण्याची सर्वात महत्वाची संकल्पना डॉ. बाबासाहेबांनी मांडली. एका अर्थात सामुदायिक शेतीचाच हा प्रयोग होता. यासाठी शासनाने अधिनियम बदलावेत, पीक पध्दती, पाणी उपलब्धता, बांध बंदिस्थी, उत्पादनवाढ, साठवण व्यवस्था, शेतीमालाची विक्री, शेतमालाचे भाव या संदर्भात स्पष्ट नियम करावेत. यामुळे कोणत्याही एकाच पीकाखाली मोठे क्षेत्र येवून शेतमालाच्या उपलब्धतेत विषमता येणार नाही. मागणी व पुरवठा या अर्थशास्त्रीय नियमानुसार शेतमालाला रास्तभाव मिळेल व त्याचबरोबर अतिरिक्त उत्पादनामुळे होणारे शेतमालाचे नुकसानही टळेल. प्रत्यक्षात आजही शेतकऱ्यांच्या शेतमालाला योग्य भाव मिळावा म्हणून शासनांशी झगडावे लागते. या पार्श्वभूमीवर डॉ. बाबासाहेबांची शेतीसाठी अधिनियम व कायदा असावा ही संकल्पना शेतकऱ्यांसाठी किती मोलाची आहे हे लक्षात येते. बाबासाहेबांच्या संकल्पनेतून कमाल जमीनधारणा कायदा, सावकारी व खती पध्दतीने प्रतिबंध करणारा कायदा, सामुहिक शेतीपध्दतीवर आधारित शेतीमहामंडळ राज्यातील नद्या-खोऱ्यांची विभागणी व विकास जलसंवर्धन योजना अंमलात आणल्या. शासनाने याबाबत कायदे व नियम बनविले. यामागे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या विचारांचा प्रभाव दिसून येतो.

डॉ. बाबासाहेबांचे शेतीबाबतचे विचार राज्यकर्ते, नियोजनकार व शेती तज्ञांनी अभ्यासले पाहिजेत. आजच्या आधुनिक कालखंडात उच्च शिक्षित समाजबांधव शेती व्यवसाय करतात. म्हणून त्यांनाही या विचारांचा अभ्यास करावा. ज्यामधून स्पष्ट होईल डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर शेतकऱ्यांचे कैवरी होते परंतु शासनकर्त्यांनी डॉ. बाबासाहेबांच्या शेतीविषयक विचारांची अंमलबजावणी करण्यासंदर्भात आजपर्यंत उदासिनता दिसून येते. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मानवतेच्या व समाजाच्या कल्याणाचे दर्शन घडविणारे ज्ञानदायी विश्वयात्री होते याची प्रचिती येते. डॉ. बाबासाहेबांचे शेतीविषयक सुचनांची अंमलबजावणी केली तर शेती ग्रामीण भागाचे परिवर्तन घडेल. राज्यात होत असलेल्या शेतकऱ्यांच्या आत्महत्या शेतीसमोरचे प्रश्न यांचा विचार केल्यास बाबासाहेबांचे विचार प्रेरणादायी ठरतील यात शंका नाही.

कामगार विषयक विचार : —

त्या काळात समग्र कामगारांची स्थिती अत्यंत निराशाजनक होती. दुर्बल व असंघटीत कामगारांना मालक, भांडवलदार वर्ग वाटेला तसा राबवित असे. कामगार संघटना मालकधार्जिन्या असल्याने कामगारांचे अस्तित्व गोठवून टाकले होते. एकंदरीत समग्र कामगारांची स्थिती निराशाजनक होती. डॉ. बाबासाहेबांना कामगाराबाबत आस्था, जिवाळा होता. कामगारांनी स्वाभिमान बाळगला पाहिजे. प्रतिकार केल्यानेच शोषणांचे उच्चाटन होईल अन्यथा गुलामीचे जीवन जगावे लागेल.

डॉ. बाबासाहेबांनी १५ ऑगस्ट १९३६ साली स्वतंत्र मजूर पक्षाची स्थापना केली. या पक्षाचा जाहिरनामा कामगारांच्या उत्कर्षाचा आणि उध्दाराच्या ध्येयाने प्रेरित असलेला निःसंदिग्ध व जनहितार्थ, संरक्षणार्थ, दक्षता बाळगणारा होता. बाबासाहेबांनी कामगार हिताला सर्वोच्च प्राधान्य देण्याचा प्रयत्न केला. बाबासाहेबांनी देशी कामगारांना काम मिळवून देण्याचाही प्रयत्न केला. भारतीय खाणीमध्ये भारतातील कामगारांना काम करण्याची फारशी संधी नव्हती म्हणून डॉ. आंबेडकरांनी इंग्लंडमधून होत असलेला कामगार आयातीवर प्रतिबंध लावला. सहाजिकच भारतीय कामगारांना खाणीमध्ये काम करण्याच्या संधी उपलब्ध झाल्या. अस्पृश्यांना डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या कायद्याने खाणीमध्ये काम करता येवू लागले. १३ मार्च १९५४ ला कोळसा उत्पादन आणि स्त्री खाण कामगार या दोनीही बाजूंचा विचार मांडून कामगारांच्या हितासाठी महागाई

भत्ता, नुकसान भरपाई, बेकरीच्या काळातील नुकसान भरपाई, खाण कामगाराचे वेतन व सवलती, कोळशाच्या उत्पादनाचा प्रश्न २९ मार्च १९४५ ला विधेयक आणून स्त्री कामगारांचे हित जोपासले. यात प्रसुतीच्या काळात विश्रांतीची तरतूद किमान चार आठवडे प्रसुती भत्ता, रोख मदत, पगार सुट्ट्या मिळाव्यात यासाठी कायदे केले व सर्वच स्तरावरील कामगार पुरुष महिलांचे हित साधण्याच्या कायदेशीर तरतुदी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी केलेल्या आहेत.

स्त्री विषयक विचार : –

स्वतंत्र भारतात महिला सर्वच स्तरावर म्हणजेच शैक्षणिक, राजकीय, मिडिया, कला आणि संस्कृती, सेवा क्षेत्र, विज्ञान आणि तंत्रज्ञान महिलांचा सहभाग दिसून येतो. भारताच्या संविधानातील परिच्छेद १४ नुसार भारतीय महिलांना समान अधिकार प्राप्त झाला. परिच्छेद १५(१) नुसार कोणत्याही भेदभावास प्रतिबंध करण्यात आला आहे. परिच्छेद क्र. १६(के) नुसार महिलांना समान संधी देण्याची तरतूद ओ.प.रिच्छेद क्र.३९(घ) समान लाभ, समान वेतनाची खात्री दिलेली आहे. परिच्छेद १५(३) नुसार महिला आणि बालकांसाठी राज्याद्वारे विशेष तरतूद करण्याची अनुमती देण्याची व्यवस्था परिच्छेद ५१(ए)(ई) नुसार महिलांच्या सन्मानासाठी अपमानकारक प्रथाचे उच्चाटन करण्याचे आणि त्यांना सुरक्षा देणे. परिच्छेद (४२) नुसार प्रसुती सहाय्यतेसाठी राज्याकडून सवलती बहाल करण्याची अनुमती देण्याच्या तरतूदी आहेत. याबरोबरच महिला सुरक्षेसंबंधी घरेलू हिंसा, हुंडाबंदी कायदा, कन्या भ्रूण हत्या इत्यादी बाबत राज्यघटनेत महिला हिताच्या दृष्टीकोनातून तरतूदी केल्या आहेत. देशाला प्रगतीशील बनविण्यासाठी स्त्री-पुरुष समानता आवश्यक आहे. आणि महिलांच्या हितास अनुसरून साध्य करण्यासाठीच्या तरतूदी घटनेत नमूद करून महिलांना सक्षम बनविण्याचे कार्य डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी केले आहे.

शिक्षण विषयक विचार –

शिक्षणाशिवाय तरणोपाय नाही ही डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची कायम धारणा होती, भारतीय समाजव्यवस्थेतील अस्पृश्य समाजाला गेलेल्या समाजाला शिक्षणाच्या बळावर सन्मानाचा दर्जा मिळवून दिला. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी अशिक्षित, दुर्लक्षित, दलित, अस्पृश्य समाजाला शिक्षणाचे महत्व पटवून सांगितले. शिक्षणाच्या अभावामुळे आपला दर्जा कसा खालावला आहे याची जाणीव करून दिली. गरीब-दलित समाजातील मुलां-मुलींना उच्च शिक्षण घ्यावे यासाठी त्यांनी आयुष्यभर धडपड केली. प्राथमिक शिक्षण सक्तीचे व मोफत मिळावे यासाठी भारतीय राज्य घटनेत कायदा केला. शिक्षण प्रती त्यांनी प्रामाणिक लढा दिला. आपल्या हक्कासाठी 'शिका, संघटीत व्हा आणि संघर्ष करा' त्यामधुनच आपला उध्दार होईल हा मुलमंत्र दिला. डॉ. आंबेडकरांनी शिक्षणात मानवतावादाचा सिध्दांत मांडला. गौतम बुध्दांनी शिक्षण व्यवस्थेची सांगितलेली मूल्ये डॉ. आंबेडकरांनी प्रत्यक्ष कृतीत आणली. भारतीय शिक्षण पध्दतीत नव सिध्दांतांची मांडणी केली. प्रस्तापित शिक्षण व्यवस्थेत स्त्री-पुरुष असा भेद होता. यावर मात करत महात्मा फुलेच्या स्त्री शिक्षणाची कायद्याने सक्ती केली. विविध स्तरावरील मुलांना-मुलींना उच्च शिक्षण मिळावे या हेतूने मुंबई व औरंगाबाद येथे महाविद्यालयाच्या स्थापना करून उच्च शिक्षणाची दारे खुली केली. एकंदरित डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी शिक्षणो सार्वत्रीकरण केले ज्यामधून सर्वच स्तरावरील स्त्री-पुरुष शिक्षण घेवून स्वतःच्या आणि राष्ट्राच्या उभारणीमध्ये यशस्वी झालेल्या आहेत.

निष्कर्ष : –

एकंदरित डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक आणि राजकीय क्षेत्रात सर्वच स्तरावर मांडलेले तत्वज्ञान सर्वसमावेशक आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांचे विचार कोणत्याही विशेष जात, धर्म, वंश किंवा पंतासाठी केंद्रीत नव्हते. शेती, शेतमजूर, कामगार, शिक्षण, स्त्री-पुरुष यास्तरावरील केलेले कार्य, मांडलेले तत्वज्ञान सर्वसमावेशक होते. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या तत्वज्ञानाचा एकच उद्देश दिसून येतो. तो म्हणजे विविध स्तरावरील भेदभाव संपुष्टात आणणे व सामाजिक समानता मिळवून देणे असे मला वाटते. निश्चित या तत्वज्ञानाचा परिणाम सर्वच समाज घटकातील सोशित घटकांना वरदान ठरलेले आहे हे निश्चित.

संदर्भ ग्रंथ : –

- १) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – धनंजय वीर.
- २) तरुण भारत, मुंबई – १६ फेब्रुवारी, २०२०.
- ३) डॉ. प्रल्हाद लुलेकर – अनंत पैलुंचा समाजिक योद्धा.
- ४) दैनिक लोकमत – ०६ डिसेंबर, २०१५.
- ५) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर – गौरव ग्रंथ, १९९९

आधुनिक भारताचे शिल्पकार डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर आणि त्यांचा कुटुंबा संबंधीचा वैज्ञानिक दृष्टिकोन

सा. प्रा. रमेश बापूराव जोगदंड

मत्स्योदरी कला महाविद्यालय, तीर्थपुरी ता.घनसावंगी जि.जालना

प्रस्तावना:- डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांना आधुनिक भारताचे शिल्पकार म्हणतात. नदीजोड प्रकल्प, जल व विद्युत विकास हिंदू कोड वील लोकसंख्या नियंत्रण, शेती, उद्योग कामगार, परराष्ट्र धोरण, भारत - पाकव्याप्त प्रश्न, ३७० कलम या आणि अशा अनेक विषयाची त्यांनी स्वातंत्र्य पुर्व काळातच मांडणी केली होती. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर प्रखर देशभक्त होते. स्वतःच्या जिवनात अनेक दुःखदायक प्रसंगांचा सामना करावा लागला तरी देशाच्या हिता बद्दल नेहमी आग्रही असयाचे. भविष्यातील नव भारता पुढील कोणकोणत्या समस्या असतील याचे अभ्यासपूर्ण विवेचन त्यांनी करून ठेवले एवढेच नाही तत्कालीन भारतात त्याच्या एवढ्या दुरदृष्टीचा एकही नेता नव्हता. सन १९३८ मध्ये संतती नियमनाचा त्यांनी ठराव मांडला होता. डॉ.बाबासाहेबांनी भारतीयांना पुर्वीच वाढत्या लोकसंख्ये बद्दल सावध केले होते. डॉ.आंबेडकर जसे प्रखर राष्ट्रवादी होते. तेवढेच प्रखर विज्ञानवादी होते. वाढत्या लोकसंख्येचा प्रश्न किती गंभीर आहे याची जाणीव फार पूर्वी त्यांनी भारतीयांना करून दिली. देशातील दारिद्र्य, बेकारी, शेतीची तुकडे तुकडे, जंगलजमीन नष्ट होणे, आरोग्याच्या, स्वच्छतेच्या सर्व समस्या केवळ वाढत्या लोकसंख्येतुन निर्माण होतात या लोकसंख्येच्या नियंत्रणासाठी वैद्यकीय साधनाची आवश्यकता आहे. या संशोधनासाठी प्रयत्न केले पाहिजे. अशा उपाय योजना संबंधी सरकारला अवगत केले. याची सदर शोध निबंधात शोध घेण्याचा प्रयत्न केला आहे.

भारताच्या दारिद्र्याला लोकसंख्या कारणीभूत :-

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी भारतातील दारिद्र्य, उपसमार, बेकारी, आरोग्याच्या समस्या या लोकसंख्यावाढीच्या प्रश्नातून निर्माण होतात. डॉ.आंबेडकरांना स्वतःला मोठ्या कुटुंबामुळे दारिद्र्याचे चटके सहन करावे लागले. ते म्हणायचे आमचे कुटुंब जर लहान असते तर आम्हाला चांगले कपडे, शिक्षणाच्या सुविधा मिळाल्या असत्या, अशा प्रकारच्या सुविधा पासून कोणीही वंचित राहू नये यासाठी त्यांनी छोट्या कुटुंबाची संकल्पना मांडली.

भारताच्या दारिद्र्याला वाढतील लोकसंख्या कारणीभूत आहे. त्यामुळे आर्थिक दृष्ट्या कमकुवत दारिद्र्य माणसाला संतती नियमन एक वरदान ठरणार आहे. आगरकर म्हणायचे लेकुरे उदंड झाली, लक्ष्मी निघून गेली, या लक्ष्मीचे जतन आणि संवर्धन करायचे असले तर भारतीयांनी संतती नियमनाचा पुरस्कार कडून हम दो हमारे दो या न्यायाने कुटुंबाची उभारणी करावी.

लोकसंख्येचे दुष्परिणाम:-

डॉ.बाबासाहेबांनी लोकसंख्येचे दुष्परिणाम त्यांच्या भाषणातून वृत्तपत्रातून वेळोवेळी सांगितले आहेत. ज्या काळात या प्रश्नावर बोलणारा कोणीही तयार नव्हते त्याकाळी सरकार दरबारी या भिषण समस्येची जाणीव करून देण्याचे काम त्यांनी केले वाढत्या लोकसंख्येच्या अनेक दुष्परिणामांची जाहिरपणे त्यांनी चर्चा केली ते म्हणायचे, कुटुंब प्रमुखाला कुटुंब पोसण्यासाठी अनेकदा भिक मागण्याची पाळी येते. त्यांना उदर निर्वाह करणे अशक्य होते. ते उपासमारीमुळे आत्महत्येस प्रवृत्त होतात. अशा वेळी सरकार जवळही या बेकारी, दारिद्र्याच्या समस्येवर उपाय राहत नाही. त्यामुळे बेकारीला आळा घालता येईल. शेत जमीनीवर अतिरिक्त लोकसंख्येचा ताण पडणार नाही. जे शेतजमीनीचे छोटे छोटे तुकडे होतात परिणामी शेतकरी दरिद्री बनत जातात.

लोकसंख्या वाढीचा परिणाम:-

लोकसंख्या वाढीचा माणसाच्या जिवनावर, राहणीमानावर प्रभाव पडतो असे नाही तर देशात असणाऱ्या साधन संपत्तीवर त्याचा विपरीत परिणाम होतो. देशातली जंगल जमिनी, कुरणे, लागवडीसाठी आणली गेली. त्याचा परिणाम शेतीला उपयुक्त पशु त्यांचे मिळणारे दुध उत्पादन, शेणासारखे सेंद्रिय खते त्याचा तुटवडा निर्माण झाला. लोकसंख्या वाढीमुळे अन्न धान्यांचे भरमसाठ उत्पादन होण्यासाठी शेतात रासायनिक खताचा वापर सुरु झाला.

त्याचा आरोग्यावर परिणाम झाला, पाण्याचा तुटवडा अशा शेतांच्या दुरावस्थेमुळे ग्रामीण भागात कमालीचे दारिद्र्य निर्माण झाले.

माल्थस यांचा लोकसंख्येच्या वाढीचा सिध्दांत आणि डॉ.आंबेडकर :-

ब्रिटीश अर्थशास्त्रज्ञ ा माल्थस यांच्या लोकसंख्या वाढीच्या सिध्दांताची त्याकाळी बरीच चर्चा झाली त्यांच्या मते उत्पादन सावकाशीने तर लोकसंख्या झपाटयाने वाढते. त्यामुळे अतिरिक्त लोकसंख्येचा प्रश्न निर्माण होतो. दारिद्र्य, बेकारी, दुष्काळ, रोगराई, बालमृत्यू अशा अनेक कारणामुळे लोकसंख्या कमी होते. पुन्हा समतोल साधला जातो. हा माल्थसचा सिध्दांत डॉ. आंबेडकरांना मान्य नाही देशाची लोकसंख्या या पध्दतीने कमी होणे हे म्हणजे मानवी हक्काचे उल्लंघन आहे. एवढेच नाही तर त्यांच्या मृत्युला, उपासमारीला, दारिद्र्याला देश जबाबदार असतो. डॉ.आंबेडकर म्हणतात देशाची आर्थिकस्थिती दारिद्र्य निवारण, उपासमार यामधून मार्ग काढायचा असेल तर, संतती नियमन हा एकच उपाय लोकसंख्या नियंत्रित करण्यासाठी उपयुक्त आहे. कुटुंबातील मुलांचा विकास, स्त्रियांचे आरोग्य, देशाची आर्थिकस्थिती या सर्व गोष्टीतून डॉ.आंबेडकरांनी माल्थसच्या सिध्दांतापेक्षा योग्य आणि मानवी मुल्ये जपणारा पर्याय सांगितला, देशाच्या प्रगतीमध्ये छोट्या कुटुंबाचे योगदान मोठे असते आणि छोटे कुटुंब हे संतती नियमनाची साधने वापरूनच निर्माण होऊ शकते.

नको असणारी संतती टाळण्यासाठी उपाय:-

डॉ.आंबेडकरांनी भारतातील स्त्रियांच्या दुःखाकडे सरकारचे लक्ष वेधण्याचा प्रयत्न केला त्यांच्या या दुःखातून स्त्रियांची मुक्तता व्हावी यासाठी त्यांनी जे विचार मांडले आहेत. ते म्हणतात एका पाठोपाठ मुलांना जन्म द्यावा लागल्यामुळे स्त्रिया मृत्युमुखी पडतात. स्त्रियांना त्यांना नको असलेली संतती टाळण्यासाठी स्त्रिया अघोरी पध्दतीने गर्भपात करतात एखाद्या स्त्रिला मुल होवू देण्याची इच्छा नसेल त्यावेळी तिला गर्भधारणा टाळता येण्याची शक्यता असली पाहिजे. डॉ.आंबेडकर म्हणतात मुलाला जन्म देणे हे पुर्णपणे स्त्रियांच्या इच्छेवर अवलंबून असले पाहिजे बाळांतपणाचा, बाळाचे संगोपण हे सगळे स्त्रिला करावे लागते यासगळ्यांचा परिणाम स्त्रियांच्या आरोग्यावर होतो आपल्याला किती मुले होवू द्यायची हा सर्वस्वी निर्णय स्त्रियांच्या हाती असला पाहिजे म्हणजे डॉ.आंबेडकरांनी १० नोव्हेंबर १९३२ च्या विधेयकात मांडलेले विचार आजच्या स्त्रियुक्ती आंदोलनाच्या विचारांशी मिळते जुळते आहे. तत्कालीन परिस्थितीत भारताच्या भविष्याचा आणि स्त्रियांचा आत्मसन्मानाचा विचार मांडणार डॉ. आंबेडकर हे एकमेव विचारवंत होते. म्हणून त्यांनी कुटुंबात अपत्यासंबंधी स्त्रियांच्या निर्णयाला महत्व दिले.

अध्यात्मवादी भारतीय समाज आणि महात्मा गांधी :-

अमेरिकन बर्थ कंट्रोल लिगच्या सेंगर मॅडम १९३५ मध्ये संतती नियमनाचा प्रचार करण्यासाठी भारतात आल्या होत्या महात्मा गांधीजी बरोबर त्यांची संतती नियमानावर बरीच चर्चा झाला आणि त्यामधून महात्मा गांधीजीने कुटुंब मर्यादीत असणे देशासाठी उपयुक्त आहे असे सांगितले पण कुटुंब मर्यादीत ठेवण्यासाठी त्यांनी कृत्रिम सांधनांचा विरोध केला गांधीजी म्हणतात भारतीय समाज अध्यात्मवादी असल्यामुळे विवाहानंतर ब्रम्हचर्य आणि आत्मसंयमन यांच्या माध्यामातून होणारे मुलांचे जन्म रोखता येतील आणि कुटुंब मर्यादीत करता येईल. या त्यांच्या विचाराशी डॉ. आंबेडकर सहमत नव्हते. ते म्हणतात वासनेला बळी पडणाऱ्या सर्वसामान्य लोकांच्या बाबतीत ब्रम्हचर्य आणि आत्मसंयमन हा उपाय अव्यवहार्य आहे. मानवी स्वभावाला अनुसरून नाही. असे डॉ. आंबेडकरांनी सांगितले कुटुंब मर्यादीत करण्यासाठी वैदयकीय साधनेच निर्माण केली पाहिजेत संतती नियमन नियमन हा एकच उपाय लोकसंख्या नियंत्रित करण्यासाठी उपयुक्त आहे असा ठाम विश्वास डॉ.आंबेडकरांचा होता कुटुंबाचा विकास स्त्रियांचे आरोग्य यावरच देशाची प्रगती निश्चीत होत असते. सशक्त भारत निर्माण करायचा असेल तर कुटुंब मर्यादीत पाहिजे महात्मा गांधीजीच्या विचाराला डॉ.आंबेडकरांनी तर्क आणि विज्ञान आणि मानवी स्वभावाच्या माध्यमातून विरोध केला. आधुनिक भारताच्या इतिहासात म. महात्मा गांधीजींनी संततीनियमनासंबंधी मांडलेल्या विचारांना जगातील कोणत्याही स्त्रिया मान्य करणार नाहीत. तो विचार त्यांना पटण्यासारखा नाही. गांधीजी म्हणतात एक मुल होवू देण्यापुरते विवाहीत स्त्री पुरुषांनी कामसंबंध ठेवावेत एरव्ही आत्मसंयमन करावे आणि विवाहांतर्गत ब्रम्हचर्य पाळावे हाच संतती नियमनाचा एकमेव मार्ग आहे. डॉ. आंबेडकर म्हणतात एकमेकांवर प्रेम करणारे तरुण पतीपत्नी एकत्र राहत असतील तर त्यांना कामवासनेचा मोह टाळणे फारच अवघड आहे तेव्हा अवास्तव नितिकल्पनांच्या आधारे विवाह अंतर्गत ब्रम्हचर्याची अपेक्षा करणे मानवी स्वभावाला धरून नाही, शिवाय सहज प्रेरणांचा कोंडमारा करून अगदी इच्छे विरुद्ध स्त्रिने आत्मसंयमन केले पण पतीला ते शक्य झाले नाही, शिवाय

सहज प्रेरणांचा कोंडमारा करुन अगदी इच्छे विरुद्ध खिने आत्मसंयमन केले पण पतीला ते शक्य झाले नाही तर पत्नीवर लादल्या गेलेल्या शरीर संबंधाचे परिणाम जन्माला येणारी मुले आणि पत्नी यांनाच पाठोपाठची बाळांतपणे, रोग, दारिद्र्य अन्य स्वरूपात भोगावी लागतात त्यामुळे संतती नियमनाची साधने ही ख्रियांसाठी वरदान ठरू शकतील म्हणजे कुटुंब मर्यादीत ठेवण्यासाठी आध्यात्माबरोबर वैज्ञानिक वैद्यकीय साधने अधिक उपयोगाची आहेत असे डॉ. आंबेडकरांचे मत होते.

सारांश

मध्या भारताची लोकसंख्या १३३ कोटीच्या पुढे आहे स्वतंत्र्यपूर्व काळात १० नोव्हेंबर १९३२ मध्ये डॉ. आंबेडकरांनी मांडलेल्या ठरावात भारताच्या दारिद्र्याला, उपासमारीला, बेकारीला वाढती लोकसंख्या जबाबदार आहे या वाढत्या लोकसंख्येमुळे जंगल जमीनी नष्ट होवू लागल्या, शेतीचे तुकडे तुकडे होवून लागले. पशुधन कमी झाले त्याचा विपरीत परिणाम भारतीयांच्या आर्थिक, सामाजिक राजकीय व्यवस्थेवर होवू लागला. वाढत्या लोकसंख्येला नियंत्रणात ठेवण्यासाठी त्यांनी स्वातंत्र्य पूर्व काळात सरकारने वैद्यकीय दृष्ट्या कृत्रीम साधने निर्माण करण्यासाठी संशोधन केले पाहिजे अशा प्रकारची शिफारस केली परंतु त्यानंतर १३ वर्षानंतर १९५१ साली भारत सरकारने डॉ.आंबेडकर यांनी सुचविलेल्या विचारावर कार्यवाही केली आणि ७० लाख रुपयाची तरतुद केली व पुढे सातव्या योजनेत ३,२५६ कोटी रुपयाची तरतुद संतती नियमनासाठी सरकारने केली म्हणजे जो विचार डॉ. आंबेडकरांनी स्वातंत्र्यपूर्व काळात सांगितला त्याची अंमलबजावणी करणे प्रत्येक सरकारला आवश्यक आणि बंधनकारक झाले.

संदर्भ ग्रंथ

१. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर गौरव ग्रंथ संपादक दया पवार
२. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर लेखन आणि भाषणे खंड १८ संपादक हरी नरके
३. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर लेखन आणि भाषणे खंड १९ संपादक हरी नरके
४. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर लेखन आणि भाषणे खंड २० संपादक हरी नरके
५. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर अभिवादन ग्रंथ संपादक गंगाधर पाणतावणे
६. महात्मा गांधी नलीनी पंडीत
७. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर नियोजन, जल व विद्युत विकास भूमिका व योगदान - सुखदेव थोरात

Chief Editor Dr. R. V. Bhole 'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot No-23, Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102	Editor Mr. Shashikant Jadhawar I/C, Principal, Chhatrapati Shivaji Mahavidyalaya, Kalamb, Dist. Osmanabad (MS) India
Executive Editor Dr. Anant Narwade Dr. Raghunath Ghadge Mr. Anil Jagtap	

Editorial Board

Prof. R. J. Varma ,Bhavnagar [Guj]	guyen Kim Anh, [Hanoi] Virtnam	Dr. R. K. Narkhede, Nanded [M.S]
Dr. D. D. Sharma, Shimla [H.P.]	Prof. Andrew Cherepanow, Detroit, Michigan [USA]	Prof. B. P. Mishra, Aizawal [Mizoram]
Dr. Abhinandan Nagraj, Benglore[K]	Prof. S. N. Bharambe, Jalgaon[M.S]	Prin. L. N. Varma ,Raipur [C. G.]
Dr. Venu Trivedi ,Indore[M.P.]	Dr. C. V. Rajeshwari, Pottikona [AP]	Prin. A. S. Kolhe Bhalod[M.S]
Dr. Chitra Ramanan Navi ,Mumbai[M.S]	Dr. S. T. Bhukan, Khiroda[M.S]	Prof.Kaveri Dabholkar Bilaspur [C.G]

Address

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot, No-23,
Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102
